आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य

आधुनिक
हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य

(जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण, पत्र एवं डायरी आदि,

[पंजाब विश्वविद्यालय की पी-एच०डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध]

डॉ० शान्ति खन्ना

एम० ए० पी-एच० डी०

मूल्य : [illegible] , प्रथम सस्करण १९७३ : © डॉ० शान्ति खन्ना
मुद्रक : शुक्ला प्रिंटिंग एजेन्सी द्वारा इण्डिया प्रिंटर्स, दिल्ली-६

चिरसंचित स्नेह और वात्सल्य की करुणमूर्ति

परम पूज्यनीय स्वर्गीय पितृदेव

की

पुनीत स्मृति में

—शान्ति खन्ना

भूमिका

प्रस्तुत शोध का विषय है—

"आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य"

इसमे १८५० सन् से १९६४ सन् तक के हिन्दी साहित्य मे प्राप्त जीवनीपरक साहित्य का विवेचन है। हिन्दी साहित्य के इतिहास एव समीक्षा सम्बन्धी जितनी भी पुस्तके अभी तक प्रकाशित हुई है, उनमे गद्य की इन विधाओ का स्वतन्त्र रूप से उल्लेख नही किया गया है। जो भी थोडा-बहुत विवेचन प्राप्त होता है, उससे इस साहित्य को साहित्य के अन्य भेदो के समान महत्त्वपूर्ण स्थान नही प्राप्त हो सकता। इस साहित्य की आवश्यकता एव महत्त्वपूर्ण विशेषताओ को ध्यान मे रखते हुए मैंने इस विषय को चुना है।

इस विषय का हिन्दी साहित्य मे अपना ही महत्त्व है। सर्वप्रथम महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि यह साहित्य हमे साहित्यिक व्यक्तियों के व्यक्तित्व का तो परिचय करवाता ही है, साहित्येतर व्यक्तियो की भी झाँकी प्रस्तुत करता है। लेखक अपने जीवन-चरित्र मे अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए सम्पर्क मे आए अन्य व्यक्तियो के व्यक्तित्व की भी झलक प्रस्तुत करता है। ये व्यक्ति राजनैतिक, सामाजिक, एवं धार्मिक भी हो सकते हैं। यही नही, इन सभी प्रकार के व्यक्तियों के जीवन-चरित्र स्वतन्त्र रूप से भी प्राप्त होते हैं। इससे स्पष्ट है कि इस साहित्य में साहित्यिक व्यक्तियो की अपेक्षा साहित्येतर व्यक्तियों के व्यक्तित्व की झाँकी भी प्राप्त होती है।

इसके अतिरिक्त साहित्यकार के अपने हाथो से लिखा हुआ, उसके अपने व्यक्तित्व का विवेचन समीक्षक एवं पाठक दोनो के लिए अधिक लाभप्रद होता है। आलोचक अत्यन्त सुविधा से साहित्यकार की कृतियों की आलोचना कर सकता है। इससे साहित्यिक आलोचना मे अधिक मनोवैज्ञानिक गहराई, सामाजिक गहनता, कृतियो की प्रामाणिकता तथा यथार्थता का स्वस्थ विकास हो सकता है।

इस प्रकार के साहित्य मे साहित्यकार के व्यक्तित्व की सभी विशेषताओ का, उसके स्वभाव रुचियो एव प्रेरणा स्रोतो का स्पष्ट रूप से विश्लेषण होता है जिसके अनुशीलन से पाठक उन सभी विशेषताओ की तुलना करके तादात्म्य या विश्लेषण करता है। इससे साहित्यकार और पाठक मे अधिक रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। उसे उस व्यक्तित्व का अध्ययन कुछ और ही आनन्द देता है। ऐसे साहित्य के अनुशीलन से हम साहित्यकार के मानसिक एवं भावात्मक जीवन के और अधिक समीप पहुँच जाते हैं।

इस प्रकार के साहित्य के अनुसधान, अनुशीलन और सचयन के पश्चात् जो "साहित्य के इतिहास" प्रकाशित होगे उनकी प्रामाणिकता के विषय मे किसी भी व्यक्ति को सन्देह नही उत्पन्न हो सकेगा। इन सभी विशेषताओ को दृष्टि मे रखते हुए मैंने इस विषय पर शोध कार्य किया, और निस्सन्देह इन सभी विशेषताओ का दिग्दर्शन मुझे इस साहित्य मे हुआ है।

इस विषय से सम्बन्धित एक ग्रन्थ डॉ० चन्द्रावती सिह द्वारा लिखित "हिन्दी साहित्य मे जीवन-चरित का विकास" प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त डॉ० कृष्णलाल, डॉ० लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय एव डॉ० भोलानाथ तिवारी के इतिहासो मे इस विषय का जो भी वर्णन है वह साधारण-सा है। चन्द्रावती सिह के ग्रन्थ मे इस विषय का जो विवेचन है वह अनेक सीमाओ से बँधा हुआ है। इस ग्रन्थ मे विशेषरूप से जीवनी साहित्य की ओर ही ध्यान दिया गया है। जीवनीपरक साहित्य की अन्य विधाओ को इस विषय के भीतर ही समेट लिया गया है तथा किसी को भी स्वतन्त्र विधा नही माना गया है। रेखाचित्र साहित्य का तो वर्णन ही नही है, केवल रेखाचित्र परक कुछ पुस्तको का नामोल्लेख लेखिका ने अपनी पुस्तको की सूची मे कर दिया है। इस ग्रन्थ मे सन् १९५० तक के जीवनी साहित्य का उल्लेख है। लेखिका ने जीवनीपरक साहित्य के अन्तर्गत कल्पनात्मक सृजनपरक साहित्य भी समेट लिया है जिससे इसके यथार्थ एव कल्पना—दोनो पक्षो का गड्ड-मड्ड-सा हो गया है।

जीवनी-साहित्य के प्रकारो का वर्णन करते हुए लेखिका ने जहाँ उसके सैद्धान्तिक पक्षो का निरूपण किया है वह भी अपूर्ण ही है। ग्रन्थ मे विषय और शैली तत्त्व पर ही अधिक विवेचन है। अन्य तत्त्वो का नगण्य-सा वर्णन है। अन्य किसी भी विधा के सैद्धान्तिक पक्षों का उल्लेख नही है। सभी पक्षो के उन्ही तत्त्वो को स्वीकार किया गया है। इससे स्पष्ट है कि सैद्धान्तिक पक्ष की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ अधूरा-सा लक्षित होता है।

इसके अतिरिक्त जहाँ उन्होने जीवनीपरक साहित्य के इतिहास का वर्णन किया है वहाँ विशेष युगो के प्रतिनिधि लेखको का तो वर्णन विस्तृत रूप से किया है अर्थात् उनके द्वारा लिखित जीवनियो का तो लेखिका द्वारा विवेचन हुआ है, परन्तु अन्य लेखको एव उनकी कृतियो की एक सूचीमात्र दे दी गई है। यह रुचिकर प्रतीत नही होता। लेखिका ने उन जीवनियो एवं उनके लेखको का कुछ भी विवेचन नही किया। इसके अतिरिक्त विषयानुसार जहाँ भी जीवनी साहित्य का विवेचन किया गया है वह पृथक् रूप से नही प्राप्त होता, बल्कि प्रत्येक लेखक के जीवन-चरित्रो के विषयों को पृथक्-पृथक् रूप से विभाजित करके लेखिका ने समस्त ग्रथ मे कई बार विषय की दृष्टि से विभाजन किया है जो कि इतिहास-वर्णन मे समीचीन नही मालूम होता।

लेखिका ने आत्मकथा साहित्य को जीवनी साहित्य का अन्य प्रकार माना है। इसका स्वतन्त्र अस्तित्व इस ग्रथ मे दृष्टिगोचर नही होता। सैद्धान्तिक पक्ष का तो

वर्णन ही नही है, इतिहास को भी क्रमानुसार सम्यक् रीति से नही रखा गया है। प्रकाशित पुस्तको के आधार पर किसी भी साहित्य की विधा का विकास वर्णित करना कठिन बात नही है। इसलिए लेखिका के ग्रन्थ मे इतिहास वर्णन में कोई विशेष अन्वेषण दृष्टिगोचर नही होता है। पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित आत्मकथा साहित्य का कही नामोल्लेख तक नही है।

इसी प्रकार रेखाचित्र, संस्मरण, पत्र एव डायरी साहित्य के विषय मे कहा जा सकता है। इस ग्रन्थ मे केवल इन विधाओ की प्रकाशित पुस्तको का नामोल्लेख ही मिला है कोई विशेष अन्वेषण सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक पक्ष दृष्टिगोचर नही होता। वर्णित ग्रन्थ की इन त्रुटियो का इस प्रबन्ध मे विसर्जन हुआ है। जहाँ तक हो सका है मैंने इसमे नवीनता लाने का प्रयास पूर्णरूप से किया है। मैंने जीवनीपरक साहित्य की सीमा को प्रामाणिक इतिहास से बाँधा है। अत लेखक द्वारा लिखे गए पत्र, डायरी, सस्मरण, रेखाचित्र, आत्मकथादि, अथवा अन्य लेखक द्वारा लिखी गई जीवनी, सस्मरण, रिपोर्ताज आदि ही शामिल किए गए हैं। हमारी कसौटी यथार्थता एव प्रामाणिकता की ओर रही है। अत. हमने इनके कल्पित रूपो को यथासम्भव पृथक् रखा है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के **प्रथम अध्याय** मे लेखक और उल्लेख्य के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए इस विषय के अनेक प्रकारों का वर्णन किया गया है। इसके साथ ही यह सिद्ध किया गया है कि जीवनीपरक साहित्य के जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र संस्मरण पत्र और डायरी आदि प्रमुख भेद हैं। इसके पश्चात् (ख) भाग मे जीवनी से सम्बन्धित तत्त्वो का वर्णन ही नही अपितु उनके महत्त्व पर भी प्रकाश डाला गया है। जीवन से सम्बन्धित किन-किन तत्त्वो का विवेचन लेखक को जीवन-चरित्र के अन्तर्गत करना पडता है, इसका सम्यक् रूप से वर्णन है। जीवनी से सम्बन्धित तत्त्वो मे अन्तर्गत मैंने शारीरिक रचना, व्यक्तित्त्व, वातावरण के भीतर उसके जीवन का तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव साहित्यिक परिस्थितियो मे योगदान, एव उन परिस्थितियो का उसके जीवन मे महत्त्व आदि का विवेचन किया है। इससे नायक के जीवन का समाज, धर्म, साहित्य एव राजनीति से क्या तथा कैसे सम्बन्ध रहे हैं, इनका स्पष्ट रूप से ज्ञान हो जाता है। इसके पश्चात् (ग) भाग मे जीवनीपरक साहित्य और इतिहास का तुलनात्मक विवेचन है। इस भाग मे मैंने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि दोनो विधाओ मे भिन्नता अधिक है और समानता कम है। विषय, शैली और उद्देश्य सभी दृष्टियो से दोनो विधाओ मे भिन्नता है। यदि समानता है तो वह इसी बात मे है कि दोनो मे जिन घटनाओ का वर्णन होता है वे पूर्णतया सत्य होती है।

इसके बाद (घ) भाग मे मैंने इन जीवनीपरक तथ्यो की रचना शैलियो का विवेचन किया है। जीवन-चरित शैली, आत्मकथा शैली, रेखाचित्र शैली, सस्मरण

शैली, पत्र शैली एव डायरी शैली का स्वतन्त्र रूप से वर्णन है। इन सभी शैलियो मे प्राप्त विशेषताओ का सक्षिप्त उल्लेख भी किया गया है

द्वितीय अध्याय मे सर्वप्रथम तो जीवनीपरक साहित्य की सभी विधाओ, यथा जीवनी आत्मकथा, रेखाचित्र सस्मरण, डायरी एव पत्र साहित्य के सैद्धान्तिक पक्षो का सम्यक् रूप से विवेचन है। सर्वप्रथम 'जीवनी' के अन्तर्गत विभिन्न विद्वानो द्वारा दी गई परिभाषाओ का उल्लेख करते हुए उत्कृष्ट परिभाषा की रचना की गई है। इसके पश्चात् जीवनी साहित्य के वर्ण्य-विषय, चरित्रचित्रण, देशकाल, उद्देश्य एव शैली तत्त्वो का सम्यक् रूप से विवेचन हुआ है। जिसके अन्तर्गत प्रत्येक तत्त्व की विशेषताओ का स्पष्ट उल्लेख किया गया है। फिर इस साहित्य के विभाजन के आधारो का भी उल्लेख है। विभाजन मे मैंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि वर्ण्य चरित्र के आधार पर साहित्यिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक एवं धार्मिक पुरुषो की जीवनियाँ हो सकती हैं। इसके पश्चात् शैली के आधार पर संस्मरणात्मक शैली मे, निबन्धात्मक शैली मे एवं कथात्मक शैली मे भी जीवनियाँ लिखी जा सकने की सम्भावना है।

'आत्मकथा' के अन्तर्गत भी प्रमुख विद्वानो द्वारा दी गई परिभाषाओ का विवेचन एवं विश्लेषण करते हुए उत्कृष्ट परिभाषा दी गई है जिसमे आत्मकथा साहित्य की सभी विशेषताओ का सक्षिप्त रूप से वर्णन हो जाता है। आत्मकथा साहित्य के सैद्धान्तिक तत्त्वो के अन्तर्गत मैंने वर्ण्य विषय, चरित्र-चित्रण, देशकाल, उद्देश्य एवं शैली तत्त्व को लिया है, इन तत्त्वो की पृथक् विशेषताओ का विवेचन किया है और यह स्पष्ट करने का पूरा प्रयास किया है कि आत्मकथा साहित्य का स्वतन्त्र अस्तित्व है। इस प्रकार के साहित्य की समीक्षा के लिए किन-किन तत्त्वो की आवश्यकता पडती है और क्या उन तत्त्वो के द्वारा किसी व्यक्ति द्वारा लिखी हुई आत्मकथा का विश्लेषण हो सकता है यदि हो सकता है तो किन वर्णित तत्त्वो द्वारा इन समस्याओ को भी इस प्रसग मे लिया गया है। विभाजन के अन्तर्गत यह भी स्पष्ट किया गया है कि आत्मकथा साहित्य का विभाजन दो प्रकार से किया जा सकता है—

(क) लेखको के आधार पर—इसमे कवि तथा लेखक, आलोचक एव राजनैतिक और धार्मिक पुरुषो को लिया है, तथा

(ख) शैली के आधार पर—निबन्धात्मक शैली के भीतर लिखो हुई आत्मकथाएँ, संस्मरणात्मक शैली एवं डायरी शैली मे लिखी हुई आत्मकथाएँ ली गई है।

'रेखाचित्र' के अतर्गत सर्वप्रथम विभिन्न विद्वानो द्वारा दी गई परिभाषाओ का विश्लेषण कर एक नवीन परिभाषा का उल्लेख किया गया है, फिर रेखाचित्र साहित्य के सैद्धान्तिक तत्त्वो का विवेचन स्पष्ट रूप से किया गया है। तत्त्वो के भीतर वर्ण्य विषय, चरित्रोद्घाटन, देशकाल, वातावरण, उद्देश्य एव शैली तत्त्व को लिया है। इन सभी तत्त्वो मे से रेखाचित्रकार किन किन विशेषताओ का उल्लेख कर सकता है इसका वर्णन हुआ है। इसके पश्चात् विभाजन के आधारो का वर्णन किया गया है।

इस वर्णित सैद्धान्तिक पक्ष मे मैंने यह सिद्ध करने का पूरा प्रयत्न किया है कि रेखाचित्र साहित्य के तत्वों के भीतर जो विशेषताएँ पाई जाती हैं वे अन्य विधाओ के तत्त्वो से भिन्न है। यही कारण है कि यह साहित्य हिन्दी जीवनीपरक, साहित्य मे अपना विशेष स्थान रखता है।

'सस्मरण' के अन्तर्गत भी प्रसिद्ध समीक्षको की परिभाषाओ का उल्लेख करते हुए एक सशोधित परिभाषा दी गई है। तत्वो के भीतर वर्ण्य विषय, चरित्र-चित्रण, देशकाल, उद्देश्य एव शैली तत्त्व का वर्णन है। वर्ण्य विषय के अन्तर्गत, विषय सम्बन्धी विशेषताओं की रोचकता, स्वाभाविकता, स्पष्टता एव सुसगठितता आदि का विवेचन करते हुए वर्ण्य विषय के प्रकारो का उल्लेख हुआ है। चरित्र-चित्रण के वर्णन मे चारित्रिक विशेषताओ एव उसकोवर्णन करने के प्रकारो का उल्लेख हुआ है। देश-काल एव वातावरण के सन्दर्भ मे यह स्पष्ट किया गया है कि प्रत्येक लेखक आव-श्यकतानुसार अपते व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए देशकाल एव वातावरण का वर्णन करता है। उद्देश्य के साथ-साथ शैली तत्त्व के अन्तर्गत सस्मरण शैली की सभी विशेषताओं का वर्णन है जिनसे यह शैली परिपक्व एव पुष्ट बनती है। इसके पश्चात् सस्मरणात्मक साहित्य का विभाजन कितने प्रकार से हो सकता है, इसका भी उल्लेख है।

'पत्र साहित्य' के अन्तर्गत प्रसिद्ध समीक्षको की पत्र सम्बन्धी विचारधारा का विश्लेषण करते हुए पत्र लेखक एवं भावग्राहक के सम्बन्ध को स्पष्ट किया है। इसके पश्चात् व्यक्तिगत परिभाषा का उल्लेख है। यह परिभाषा सभी विद्वानो द्वारा दी गई परिभाषाओ के विश्लेषण के पश्चात् दी गई है। पत्र साहित्य के तत्त्वो का विवेचन भी किया गया है। वर्ण्य विषय के अन्तर्गत यह स्पष्ट किया गया है कि विषय की दृष्टि से पत्र कई प्रकार के हो सकते हैं। वर्ण्य विषय को उत्कृष्ट बनाने के लिए जिन विशेषताओ का पत्र मे होना आवश्वक है उनका भी वर्णन है। अन्य तत्त्व 'पात्रो और घटनाओ से सम्बद्ध और उनके प्रति प्रतिक्रिया' के प्रसग मे यह स्पष्ट किया गया है कि पत्र में लेखक किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का केवल वर्णन ही नही करता अपितु आवश्यकतानुसार टीका टिप्पणी भी करता है। उद्देश्य एव देशकाल वातावरण के साथ-साथ शैली तत्त्व के अन्तर्गत पत्र शैली की विशेषताओ का वर्णन है। शैली सम्बन्धी विशेषताओ मे से आत्मीयता, सक्षिप्तता, स्पष्टता, स्वाभाविकता एव भाव-ग्राहकानुकूलता का स्पष्ट रूप से विवेचन किया गया है। इन विशेषताओ के महत्त्व को भी स्पष्ट किया गया है। वर्गीकरण के प्रसग मे साहित्यिक, आत्मकथात्मक, अन्य चरित्रमूलक, वर्णनात्मक एव विचारात्मक पत्रो का विवेचन है।

प्रसिद्ध समीक्षको द्वारा दी गई डायरी साहित्य की परिभाषाओ का विश्लेषण करते हुए एक सशोधित परिभाषा देने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त डायरी साहित्य के सैद्धान्तिक पक्ष का स्वतन्त्र रूप से वि-चन किया गया है। तत्वों के अन्तर्गत विषयवस्तु का विस्तार, सम्पर्क मे आए हुए व्यक्तियो एवं घटनाओ से

लेखक का सम्बन्ध और उनकी प्रतिक्रियाएँ, देशकाल-वातावरण, उद्देश्य एव शैली तत्त्व को लिया गया है। प्रत्येक तत्त्व की पृथक्-पृथक् विशेषताओ का वर्णन स्पष्ट रूप से किया गया है। डायरी साहित्य के वर्गीकरण के आधारो का भी स्पष्ट रूप से उल्लेख है।

जीवनीपरक साहित्य के रूपो के अन्तर्बन्धो के अन्तर्गत मैंने आत्मकथा जीवनी, आत्मकथा डायरी, आत्मकथा सस्मरण एवं रेखाचित्र और सस्मरण का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट करने का पूर्णतया प्रयास किया है कि इन विधाओ मे पारस्परिक सम्बन्ध होते हुए भी कुछ असमानताएँ है जिनसे जीवनीपरक साहित्य में इनका पृथक्-पृथक् अस्तित्व है।

इन जीवनीपरक साहित्य की विधाओ द्वारा जिन विशिष्ट शैलियो का अवधारण हिन्दी साहित्य मे हुआ है उन सभी शैलियो की विशेषताओ का स्पष्ट रूप से विवेचन किया गया है। इसके पश्चात् इस जीवनीपरक साहित्य का गद्य की अन्य विधाओ से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। बीच मे गद्य की उस विधा को रखा गया है जिसका सम्बन्ध अन्य वर्णित दोनो विधाओ से है। यहाँ नाटक, उपन्यास और जीवनी, जीवनी सस्मरण और आत्मकथा, पत्र, रेखाचित्र तथा डायरी, नाटक, काव्य तथा गद्यगीत एव रिपोर्ताज और पत्रकारिता के सम्बन्ध को स्पष्ट करने का प्रयत्न हुआ है। इन विधाओ के पारस्परिक सम्बन्ध को स्पष्ट करने के लिए अनेक भारतीय एव पाश्चात्य आलोचको के मतो को भी आवश्यकतानुसार प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय में सर्वप्रथम जीवनीसाहित्य के तत्त्वों का जो विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया था उनमे से प्राप्त विशेषताओ को सोदाहरण देने का प्रयत्न किया गया है। इससे यह स्पष्ट हो गया है कि ये सभी तत्त्व किसी भी जीवन-चरित्र का विश्लेषण सम्यक् रूप से करने मे पूर्णतया सहायक सिद्ध होते हैं। इसके पश्चात् १८५० से लेकर १९६४ तक के जीवनी साहित्य के इतिहास का उल्लेख किया गया है। इस समस्त विकास को भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग एवं वर्तमानकाल—तीन भागो मे विभाजित किया गया है। इस विकास को मैंने प्रकाशित जीवनी साहित्य के आधार पर लिखा है। जिन जीवन-चरित्र एव उनके लेखको का साहित्य एव इतिहासपरक महत्त्व है, पूर्णरूपेण उनका विवेचन मैंने कर दिया है। प्रकाशित जीवनी साहित्य मे अमृतराय द्वारा लिखित 'प्रेमचन्द कलम का सिपाही' जीवनी विशेष रूप से महत्तम कृति कही जा सकती है। इसके पश्चात् मैंने सर्वप्रथम उत्कृष्ट साहित्यिक जीवनी लेखक बाबू शिवनन्दन सहाय को माना है जो द्विवेदी युग के प्रसिद्ध लेखक थे। इन्हीं के द्वारा हिन्दी जीवनी साहित्य का विशेष रूप से प्रारम्भिक विकास हुआ है। सर्वप्रथम नवीन प्रयोग इस दिशा मे इन्ही का लक्षित होता है 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' एव 'गोस्वामी तुलसीदास' शीर्षक जीवनियाँ हिन्दी साहित्य मे अपना अद्वितीय स्थान रखती हैं। अन्य प्रसिद्ध साहित्यिक जीवनियाँ इनके पश्चात् लिखी गई है। 'विभाजन' मैंने

प्रकाशित जीवनी साहित्य के आधार पर विभाजन खण्ड के अन्तर्गत किया है। यह विभाजन वर्ण्य-चरित्र के आधार पर किया गया है जिसमे साहित्यिक, राजनीतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक पुरुषो की जीवनियो को लिया गया है। इन सभी प्रकार की जीवनियो की विशेषताएँ दिखलाने का पूरा प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त शैली के आधार पर इसका विभाजन किया गया है जिसमे यह सिद्ध किया गया है कि हिन्दी जीवनी साहित्य अनेक प्रकार से लिखा गया है। निबन्धात्मक एव औपन्यासिक शैली मे लिखी हुई जो जीवनियाँ प्राप्त होती हैं उनका वर्णन भी हुआ है। साथ-ही-साथ शैली सम्बन्धी गुणो का वर्णन भी यथास्थान किया गया है।

'आत्मकथा साहित्य' सम्बन्धी अध्याय मे उन तत्त्वो का सोदाहरण विवेचन किया गया है जिनका विवेचन द्वितीय अध्याय में किया गया है। इस सैद्धातिक पक्ष को सोदाहरण वर्णन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस साहित्य का भी अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है, और इसके तत्त्वो की विशेषताएँ साहित्य के अन्य तत्त्वो से भिन्न हैं। आत्मकथा साहित्य के विकास का जहाँ विवेचन किया गया है उस समस्त विकास को मैंने भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग एव वर्तमानकाल भागों मे विभाजित किया है। भारतेन्दु युग के अन्तर्गत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, राधाचरण गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र, अम्बिकादत्त व्यास एवं श्रीधर पाठक प्रभृति लेखको का वर्णन है। इन सभी लेखकों ने आत्मचरित लिखने का बहुत कुछ यत्न किया है परन्तु वे अपने इन प्रयासो में सफल नहीं हो सके हैं। द्विवेदी युग के अन्तर्गत आत्मकथा साहित्य का विश्लेषण करने के उपरान्त मैंने यह स्पष्ट कर दिया है कि इस युग मे आत्मकथा साहित्य का विकास पूर्णगति से हुआ। तब अच्छे लेखको के आत्मचरित प्राप्त होते हैं। इस युग मे मौलिक आत्मकथाओ के साथ-साथ अनूदित आत्मकथाओ की भी कमी नहीं रही। इसके अतिरिक्त वर्तमान काल मे आत्मकथा साहित्य का विश्लेषण करते हुए मैंने साहित्यिक आत्मकथाओ मे से आचार्य चतुर्सेनशास्त्री की 'मेरी आत्मकहानी' को सप्रमाण उत्कृष्ट आत्मकथा माना है। इसके पश्चात् पत्र-पत्रिकाओं एवं स्वतन्त्र रूप से प्रकाशित आत्मकथा साहित्य के आधार पर विभाजन किया गया है। लेखकों के आधार पर जो वर्गीकरण किया गया है उसमे कवि, कथा, लेखक आलोचक एवं राजनैतिक धार्मिक पुरुषों को लिया गया है। शैली के आधार पर जो वर्गीकरण है उसमें निबन्धात्मक शैली, सस्मरणात्मक शैली, डायरी शैली एवं आत्मकथात्मक जीवन-चरित शैली पर लिखी हुई आत्मकथाओ का वर्णन है। इन विभिन्न शैलियो की विशेषताओ का भी साथ-साथ उल्लेख किया गया है।

रेखाचित्र साहित्य के भी उन सैद्धान्तिक तत्त्वो का सोदाहरण विश्लेषण किया गया है जिनका सैद्धान्तिक निरूपण द्वितीय अध्याय मे हो चुका है इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वह बताई गई तत्त्वो सम्बन्धी विशेषताएँ रेखाचित्र साहित्य पर पूर्ण रूप से लागू होती हैं। रेखाचित्र साहित्य का आरम्भ मैंने १९२४ सन् मे स्वीकार किया है और पद्मसिंह शर्मा को सर्वप्रथम लेखक माना है। इसके पश्चात् जितना भी

रेखाचित्र साहित्य पत्र-पत्रिकाओ एव स्वतन्त्र पुस्तक रूप मे प्रकाशित हुआ, उस सभी का विश्लेषण 'विकास खण्ड' मे किया गया है। इसके साथ मैंने यह स्पष्ट किया है कि इस साहित्य की उन्नति विशेषतया पत्र-पत्रिकाओ के सहयोग से हुई हैं। रेखाचित्र साहित्य का विभाजन मैंने समस्त साहित्य को दृष्टि मे रखते हुए किया है। वर्ण्य-विषय के अनुसार—साहित्यिक लेखको के रेखाचित्र, मानवीय गुणो से सम्पन्न साधारण पुरुषो के रेखाचित्र, राजनैतिक पुरुषो के रेखाचित्र एवं मानवेतर जड़ या चेतन सम्बन्धी रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। इन सभी प्रकार के रेखाचित्रों की विशेषताओ का उल्लेख भी किया गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी में रेखाचित्र साहित्य कई प्रकार से लिखा गया है। कथात्मक शैली मे लिखा हुआ रेखाचित्र साहित्य, संस्मरणात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्र एवं प्रतीकात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। इन सभी प्रकार की शैलियो की विशिष्टता का उल्लेख भी किया गया है।

इसी प्रकार संस्मरणात्मक साहित्य की भी आरम्भ मे परिभाषा देते हुए उसके वर्णित तत्त्वों का विवेचन स्पष्ट रूप से किया गया है। प्रत्येक तत्त्व की विशेषता को सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है। संस्मरण साहित्य के विकास मे मैंने यह स्पष्ट किया है कि हिन्दी साहित्य मे यह सन् १९२० ई० के पश्चात् हुआ है और इसके सर्वप्रथम लेखक बालमुकुन्द गुप्त हैं। हिन्दी सस्मरण साहित्य का विकास मैंने प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओ एवं प्रकाशित पुस्तको के आधार पर अंकित किया है। इसके अतिरिक्त सभी संस्मरण लेखको की कृतियो का सम्यक् रूप से विश्लेषण भी किया गया है। इस समस्त साहित्य का विभाजन विषय वस्तु के आधार पर, वर्ण्य के आधार पर, लेखक एवं शैली के आधार पर किया गया है। इस प्रकार समस्त संस्मरणात्मक साहित्य का विवेचन पूर्णरूपेण किया गया है। सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक दृष्टियों को यथासम्भव पूर्णरूपेण लिया गया है और जितना भी अधिक-से-अधिक साहित्य मिल सका है उसका विवेचन इस अध्याय मे किया गया है।

पत्र साहित्य के सैद्धान्तिक पक्ष का स्वतन्त्ररूप से निरूपण किया है। तत्त्वों के अन्तर्गत वर्ण्य विषय, पात्रो और घटनाओं से सम्बन्ध और उनके प्रति प्रतिक्रिया, उद्देश्य, देशकाल, वातावरण एव शैली तत्त्व का विवेचन किया गया है। प्रत्येक तत्त्व की विशेषताओ का वर्णन उदाहरण सहित किया गया है। इन तत्त्वो के विश्लेषण द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि पत्र साहित्य की अपनी एक स्वतन्त्र सत्ता है। इसके साथ ही इस साहित्य के सैद्धान्तिक पक्ष का भी अपना ही महत्त्व है। समस्त पत्र साहित्य के विकास को भारतेन्दु कालीन साहित्य, द्विवेदी कालीन पत्र-साहित्य, आधुनिक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित पत्र साहित्य एवं अनूदित पत्र साहित्य के अन्तर्गत बाँटा गया है। समस्त पत्र-साहित्य के विकास का विवेचन करते हुए यह सिद्ध किया गया है कि भारतेन्दुकालीन पत्र साहित्य का विषय साहित्यिक ही रहा है। द्विवेदी युग मे इसकी प्रगति होने की सम्भावना है। इस साहित्य के विकास मे

प्रमुख रूप से पत्र-पत्रिकाओ का ही सहयोग रहा है। विभाजन करते समय समस्त पत्र साहित्य का अवलोकन करते हुए इसको साहित्यिक, आत्मकथात्मक अन्य चरित्र-मूलक वर्णनात्मक एव विचार प्रधान पत्रो की श्रेणी मे बाँटा गया है। इन सभी प्रकार के पत्र लेखको एव उनकी इस साहित्य से सम्बन्धित विशेषताओ का वर्णन करने का पूर्ण प्रयत्न किया गया है।

डायरी-साहित्य के सैद्धान्तिक पक्ष का भी उदाहरण सहित स्पष्ट वर्णन किया गया है। हिन्दी साहित्य मे डायरी साहित्य के प्रारम्भिक लेखक के रूप में बालमुकुन्द गुप्त को स्वीकार किया गया है। इसके पश्चात् हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ की छानबीन से जो भी इस विषय मे सामग्री प्राप्त हुई है उसका क्रमिक विकास दिया गया है। इसके साथ ही प्रकाशित डायरियो एवं डायरी सम्बन्धी पन्नो को भी लिया गया है। डायरी साहित्य की पर्याप्त सामग्री मुझे हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्राप्त हुई है जिनके नाम मैंने यथास्थान दिए हैं। पडित सुन्दरलाल त्रिपाठी और डा० धीरेन्द्र वर्मा को हिन्दी डायरी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट लेखक माना जा सकता है। डा० धीरेन्द्र वर्मा की डायरी यद्यपि उनके सम्पूर्ण जीवन का परिचय नहीं देती परन्तु उसमे जो विशेषताएँ प्राप्त होती हैं वे किसी भी डायरी मे नहीं पाई जाती। उक्त विशेषताओ को देने का प्रयास किया गया है। समस्त डायरी साहित्य का विभाजन लेखको के अनुसार, विषय-वस्तु के अनुसार एवं स्थानहेतुकादि के आधार पर किया गया है।

इस समस्त जीवनीपरक साहित्य के विवेचन के पश्चात् अष्टम अध्याय मे मैंने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि अमुक-अमुक काल मे किस-किस विधा की विशेषरूप से प्रगति हुई और क्यो हुई ? जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, पत्र एव डायरी साहित्य का किस काल मे इन विभिन्न विधाओ का विशेष रूप से प्रादुर्भाव हुआ क्योकि इनका विकास या विशेष प्रगति तात्कालीन परिस्थितियो के अनुकूल थी। भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग एव वर्तमानकाल की समस्त परिस्थितियो का विवेचन करते हुए एवं लेखको पर इन परिस्थितियो का प्रभाव दिखाते हुए इन जीवनीपरक साहित्य की विधाओ की विशेष प्रगति का भी वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् साहित्येतिहासो के आलोक मे जीवनीपरक साहित्य का क्या महत्व है इसका सर्वप्रथम मौलिक विवेचन किया गया है। गार्सां द तासी से डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी तक के इतिहासो तक सभी साहित्य के इतिहासो के विश्लेषण के द्वारा यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है कि इन इतिहासकारो ने किसी भी लेखक के जीवनीपरक तत्त्वो की भूमिका का पूर्णतया निवेश नही किया है। इनकी जीवनीपरक ऐतिहासिकता की सीमा वश जन्म-तिथि जन्म स्थान आदि तक ही सीमित रही है। इतिहासकार तो देश की परिस्थितियो का वर्णन करके उनका प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर दिखलाता है। वह किसी विशेष व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विश्लेषण नही करता। उपर्युक्त विवेचन के उपरान्त जीवनीपरक साहित्य की महत्ता को सक्षेप मे वर्णन किया गया है।

उपसहार के अन्तर्गत इस समस्त जीवनीपरक साहित्य के अनुशीलन एवं विश्लेषण से मुझे क्या उपलब्ध हुआ है उसका आलोचन किया गया है। इसके साथ ही इस साहित्य के द्वारा हिन्दी साहित्य के इतिहास मे क्या-क्या परिवर्तन आ सकते हैं, इनका भी समावेश किया गया है।

यदि इस ग्रन्थ मे मैं कुछ नवीनता ला सकी हूँ तो मेरा परिश्रम सार्थक माना जाएगा। इस प्रबन्ध के निर्देशक डॉ० रमेश कुन्तल मेघ ने अपने निर्देशन द्वारा मेरे इस कार्य को आगे बढाया है। इस विषय पर कार्य करने की प्रेरणा मुझे गुरुवार डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी से मिली जिन्होने मुझ हतोत्साहित को प्रेरित किया। इस कार्य को सम्पन्न करने मे मुझे इतने लोगो से उपकृत होना पडा है कि उनका उल्लेखमात्र तो अकृतज्ञता होगी लेकिन फिर भी मैं इतना कह देना चाहती हूँ कि परिवार के सदस्यो मे से इस कार्य को करने की प्रेरणा मुझे अपने पिता आदरणीय विद्यारत्न विद्यालंकारजी एव भैया डा० अमरजीवन से मिली है। उन सभी लोगो के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होने मुझे सहायता पहुँचाई है।

इसके अतिरिक्त मैं काशी नागरी प्रचारिणी सभा के अध्यक्ष, मारवाड़ी पुस्तकालय दिल्ली के अध्यक्ष, दिल्ली विश्वविद्यालय एवं पजाब विश्वविद्यालयो के पुस्तकालयों के व्यवस्थापकों का भी धन्यवाद करती हूँ जिनके सहयोग से मैं इस कार्य को सम्पन्न कर सकी हूँ।

सन्मार्ग प्रकाशन के व्यवस्थापक श्री सुरेन्द्रजी का भी हार्दिक धन्यवाद करती हूँ जिन्होने बहुत ही अल्प समय मे इस शोध ग्रन्थ को हिन्दी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है।

—शान्ति खन्ना

विषय-सूची

1 जीवनीपरक साहित्य में लेखक और उल्लेख्य के सम्बन्ध

जीवन और साहित्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है। साहित्य के अभाव मे जीवन नीरस लगता है और जीवन के अभाव मे साहित्य एकागी बन जाता है। जीवन की प्रतिच्छाया होने के कारण साहित्य भी विविध भावनाओ और मनोविकारो से अनुप्राणित रहता है। साहित्य को जीवन से पृथक नही रखा जा सकता। साहित्य और जीवन मे बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव का सम्बन्ध है। जीवन की प्रेरणाएँ ही साहित्य की प्रेरणाएँ होती हैं। जीवन का जटिल इतिहास ही साहित्य का मुख्य विषय होता है। इससे स्पष्ट है कि साहित्य जीवन से भिन्न नही है वरन् वह उसका ही मुखरित रूप है। वह जीवन के महासागर से उठी हुई उच्चतम तरग है। मानव जाति के भावो विचारों और सकल्पो की आत्मकथा साहित्य के रूप मे प्रसारित होती है। साहित्य जीवन विटप का मधुमय सुमन है। वह जीवन का चरम विकास है किन्तु जीवन के बाहर उसका अस्तित्व नही। उसमे पाचन (Assimilation), वृद्धि (Growth), गति और पुनरुत्पादन (Reproduction) आदि जीवन की सभी क्रियाए मिलती है। अग अगी से भिन्न गुण वाला नही होता, इसलिए जीवन की मूल प्रेरणाए ही साहित्य की मूल प्रेरक शक्तियाँ है। जो वृत्तियाँ जीवन की और सब क्रियाओ की मूल स्रोत हैं वे ही साहित्य को भी जन्म देती हैं।[1] इस प्रकार साहित्य मे जीवन की विशाल रूप से विवेचना होती है। जीवन का ऐसा कोई भाग नही जिसका साहित्य मे उल्लेख न हो, जिसे स्पष्ट और व्यक्त न किया गया हो। जिस भी साहित्य मे जीवन के तत्वो का विवेचन नही होता वह महत्वपूर्ण स्थान नही रखता। अत. जीवन और साहित्य का अविच्छिन्न एव अटूट सम्बन्ध है।

प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना अस्तित्व होता है। वह अपने व्यक्तिगत मानवीय गुणो के कारण समाज में अपना स्थान रखता है। उस व्यक्तित्व का अध्ययन अत्यन्त रोचक एव आकर्षक होता है। पाठक उसके जीवन की गूढ एव गुह्य समस्याओ से परिचित हो जाता है जो उसे अन्य व्यक्तियो के जीवन से पृथक् रखती है। इस जीवनीपरक साहित्य मे हमे उन व्यक्तियो के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है जो साधारण होते हुए भी साधारण नही हैं एव जो अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं के कारण असाधारण बन पडे है।

---

१. सिद्धान्त और अध्ययन, ले० गुलाबराय, द्वितीय सस्करण, पृ० ६६

जीवनीपरक साहित्य मे लेखक किसी विशेष व्यक्ति को, घटना को, चित्र एवं यात्रा-वर्णन के साथ व्यक्तिगत जीवन को अपना विषय स्वतन्त्र एव पृथक् रूप से अपना सकता है। जब वह किसी व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन का चित्र कुछ वास्तविक घटनाओ के आधार पर वर्णन करता है तब वह जीवनी साहित्य के अन्तर्गत आता है। लेखक उसी व्यक्ति को अपनी लेखनी का आधार बनाता है जिससे वह स्वय प्रभावित होता है और साथ मे उसको यह विश्वास हो जाता है कि अमुक व्यक्ति के जीवन चरित्र से पाठकगण प्रभावित हो सकते है। यह कोई आवश्यक नही कि वह व्यक्ति साहित्यिक ही हो, राजनैतिक, सामाजिक या धार्मिक किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का विश्लेषण एव विवेचन कर सकता है। जीवन चरित्र लेखक अपने चरित्र नायक के जीवन के व्यक्तित्व से प्रभावित अवश्य होता है और उसके चरित्र-चित्रण से उसे मानसिक सतोष होता है। इस प्रकार जीवनीपरक साहित्य मे लेखक का विषय किसी श्रद्धेय व्यक्ति का जीवन चरित्र लिखना भी होता है जिसको 'जीवनी' कहा जाता है। इस प्रकार जीवनीपरक साहित्य का प्रथम प्रकार 'जीवन चरित्र, हुआ।

जब लेखक किसी अन्य व्यक्ति के जीवन चरित्र को चित्रित करने की अपेक्षा अपने ही व्यक्तित्व का विश्लेषण-विवेचन पूर्ण रूप से करता है तब वह 'आत्मकथा' कहलाती है। आत्मकथा का नायक लेखक स्वय होता है। इसमे लेखक अपने जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओ का तो वर्णन करता ही है इसके साथ अपनी मानसिक क्रिया-प्रतिक्रियाओ का भी उल्लेख करता है। आत्मकथा, लेखक आत्म-विवेचन, आत्म-विश्लेषण के दृष्टिकोण से तो लिखता ही है इसके साथ वह आत्मप्रचार की भावना से भी व्यक्तिगत जीवन का विवेचन करता है। वह चाहता है कि उसके अनुभवो का लाभ अन्य लोग भी उठा सकें। इस प्रकार गद्य साहित्य की इस विधा का महत्व-पूर्ण स्थान है। अत स्पष्ट है कि जब लेखक अपने जीवन का विश्लेषण, विवेचन स्पष्ट रूप से करता है तब वह 'आत्मकथा' कहलाती है। जीवनीपरक साहित्य का यह अन्य भेद है। आत्मकथा लेखक साहित्यिक, राजनैतिक, धार्मिक कोई भी व्यक्ति हो सकता है, परन्तु लेखक का सर्वप्रतिष्ठित एव सर्वमान्य होना आवश्यक है।

जब लेखक किसी वस्तु, व्यक्ति या घटना का सम्पूर्ण चित्र अपनी शब्दरेखाओ से कुछ पृष्ठो मे प्रस्तुत करता है तो वह 'रेखाचित्र' कहलाती है। इसमे लेखक का विषय कोई वस्तु, घटना, व्यक्ति हो सकता है परन्तु ये सभी लेखक के व्यक्तित्व मे अपना ही स्थान रखते हैं वह इन सब से प्रमुख रूप से प्रभावित होता है। इस विधा में लेखक का कार्य चित्रकार सा होता है। रेखाचित्रकार कम से कम शब्दो मे कलात्मक ढग से किसी वस्तु, व्यक्ति, घटना या भाव का अकन करता है। यहाँ लेखक नायक के चरित्र को उद्घाटित करता है विश्लेषण नही, विश्लेषण तो स्वय हो जाता है। इन सभी के चित्रण मे लेखक अपने जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से समाविष्ट कर जाता है। इस प्रकार **'रेखाचित्र साहित्य'** का समावेश भी जीवनीपरक साहित्य मे हो गया है।

जीवनीपरक साहित्य मे **'संस्मरण साहित्य'** का भी अपना विशिष्ट स्थान है। जब लेखक अनन्त स्मृतियो मे से कुछ रमणीय अनुभूतियो को अपनी कोमल कल्पना से अनुरजित कर व्यजनामूलक सकेत शैली मे अपने व्यक्तित्व की विशेषताओ से विशिष्ट कर रमणीय एवं प्रभावशाली रूप से वर्णन करता है तब उसे 'सस्मरण' कहते हैं। सस्मरण मे लेखक केवल उन्ही घटनाओ का उल्लेख करता है जिनसे लेखक के जीवन मे घटित होने वाले परिवर्तनो का सकेत मिलता है और जो अन्य जनो के कौतूहल को शान्त करने मे सहायक होते हैं। इन घटनाओ का उल्लेख वह इसलिए करता है कि ये समय-समय पर उसे प्रेरणा देती रहे और साथ ही इनके वर्णन से उसे मानसिक संतोष प्राप्त होता है। सस्मरण भी प्रसिद्ध व्यक्ति लिख सकता है।

जब लेखक अपने प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओ का वर्णन ही नही इसके साथ-साथ मानसिक प्रतिक्रियाओ का वर्णन भी जिस पुस्तक मे सक्षिप्त एवं सुसंगठित रूप से करता है उसे **डायरी** कहते हैं। इसमे लेखक जीवन में अनुभव की हुई कोई ऐसी घटना, नई अनुभूति, विचित्र वस्तु का वर्णन करता है जो सामान्यत मानव समाज के लिए भी शिक्षाप्रद नवीन एव लाभदायक होती है। डायरी मे लेखक व्यक्तिगत जीवन की गुह्य गुत्थियो का विवेचन करता है इस प्रकार साहित्य की यह विधा जीवनीपरक साहित्य मे अपना स्थान रखती है।

पत्र-साहित्य भी जीवनीपरक साहित्य के अन्तर्गत ही जाता है। पत्र वह लेख है जो दूरस्थ व्यक्ति को प्रेषित किया जाता है और जिसमे लेखक अपनी भावनाओ को उसकी रुचि, समझ एव योग्यता के अनुसार वर्णन करता है। इसमे लेखक व्यक्तिगत जीवन के विषय मे एव अन्य व्यक्ति के विषय में अपने विचार प्रकट कर सकता है। जीवन चरित्र लेखक के लिए पत्र विशेष रूप से सहायक होते हैं।

इस प्रकार जीवनीपरक साहित्य के जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, सस्मरण पत्र एव डायरी आदि भेद हैं। विषय एव शैली की दृष्टि से इनका अपना-अपना महत्व है।

जीवनी से सम्बन्धित तत्त्वों का कथन और उनकी विशिष्टता

प्रत्येक जीवन चरित्र लेखक अपने नायक के जीवन की विशेष प्रकार की विशेषताओ एव विशिष्ट प्रकार के जीवन सम्बन्धी तत्त्वो के चुन लेने से ही जीवन चरित्र लिखने मे सफल हो सकता है। यही बात आत्मकथा लेखक के विषय मे कही जा सकती है। इस प्रकार प्रत्येक लेखक को जीवन सम्बन्धी तत्त्वो का चयन करना पडता है और इसके साथ ही उसके जीवन से उन तत्त्वो का क्या सम्बन्ध है यह भी दिखलाना पडता है।

प्रत्येक लेखक जिस भी व्यक्ति को अपना नायक चुनता है सर्वप्रथम उसके सम्मुख उसकी आकृति और शारीरिक रचना आती है। लेखक अपने पाठकों को अपने

नायक के शारीरिक गठन के विषय मे अवश्य ज्ञान करवाता है। जीवनी के इस तत्त्व का वर्णन ही अपने जीवन चरित्र मे नही करता प्रत्युत उसका जो भी प्रभाव उसके जीवन पर पडता है उसको दिखलाता है। शारीरिक रचना मे शरीर के सभी अवयवो का वर्णन तो होता ही है इसके साथ लेखक नायक के व्यक्तित्व को इन अवयवो से प्रभावित दिखलाता है। प्रत्येक व्यक्ति के अवयव एक जैसे होने पर भी उनमे भिन्नता होती है इसीलिए जीवनी लेखक को उन अवयवो का ज्ञान पाठक को करवाना पडता है। इन शारीरिक अवयवो के आकार-प्रकार एव विशिष्टता का वर्णन न करने से पाठक को उस व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का ज्ञान नही हो सकता। जिस प्रकार किसी भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए हमे उसके शब्दो का अध्ययन करना आवश्यक है इसी प्रकार किसी व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन को समझने के लिए हमे सर्वप्रथम उसके शारीरिक अवयवो की विशिष्टता को देखना पडता है।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता जिस का ध्यान लेखक को पूर्णतया रखना पडता है वह नायक का 'व्यक्तित्व' (Personality) है। मनुष्य का समस्त स्वरूप ही वस्तुतः उसका व्यक्तित्व है। उसके गुण-अवगुण, उसका चरित्र, उसके आचार-व्यवहार, उसका आन्तरिक मन, उसकी सस्कृति तथा सास्कृतिक उपार्जन इन सबकी एक रसायन प्रस्तुत करती है।[1] व्यक्तित्व मनुष्य की सभी आन्तरिक और बाह्य विशेषताओ का सामजस्य होता है। इस प्रकार व्यक्तित्व से अभिप्राय है सोचना, अनुभव करना, व्यक्तियो से आचार-व्यवहार जो कि एक आवश्यक भाग है जिससे वह अपने आप का खूब विचार करता है एव जो एक व्यक्ति को अन्य व्यक्तियो से पृथक् करता है।[2]

We mean by personality the thinking, feeling, acting human being, who for the most part conceives of himself as an individual separate from other individuals and objects

इससे स्पष्ट है कि व्यक्तित्व मे मनुष्य की सभी क्रियाएँ आ जाती है। जीवनी लेखक नायक के व्यक्तित्व को भली प्रकार अध्ययन करता है उसके व्यक्तिगत गुण दोषो का विवेचन वह अपने जीवन चरित्र मे करता है। व्यक्तित्व सम्बन्धी गुणो का विवेचन तो बडी सुविधा से लेखक कर सकता है। परन्तु आन्तरिक दोषो का विवेचन करने मे उसे कठिनाई प्रतीत होती है। दोषो के विवेचन मे वह नायक के व्यक्तिगत पत्रों एवं दैनन्दिनी से विशेष रूप से सहायता लेता है। ऐसा करने से ही वह व्यक्तित्व की सभी विशेषताओ को पाठक के सम्मुख प्रस्तुत कर सकता है। प्रत्येक विशेषता को वह तभी वर्णन करता है जब कि उसके पास प्रमाण होते है। अन्धाधुन्ध व्यक्तित्व का विश्लेषण नही होता। इन सभी के अतिरिक्त कुछ अन्य विशेषताएँ भी है जिनसे

---

१. समीक्षा के सिद्धात, लेखक प्रो० सत्येन्द्र, पृ० ३४

२. The Making of a Healthy Personality P. 3, by Heleyn Leland Witmer Ruth Kotinsty.

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को आँका जाता है। व्यक्तित्व की नम्र और क्रूर एवं शक्तिशाली विशेषताओ को नायक की शारीरिक रचना व शारीरिक गठन से भी आका जाता है। व्यक्तित्व को पहचानने के लिए शारीरिक गठन का अपना ही स्थान है। जिसका व्यक्तित्व शक्तिशाली, सख्त एवं क्रियाशील होता है वह अपनी इन चारित्रिक विशेषताओ को जीवन के आवश्यक प्रथम स्तर पर ही अपनी शक्ति और स्वभाव के सख्त होने को अपनी गिडगिड़ाती हुई आवाज से, सख्त हड्डियो से और भारी चाल से दिखा सकता है जिसका सम्बन्ध वास्तविक बनावट से ही नही अपितु प्रतिवचन की प्रधानता से भी है।[1]

इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि मनुष्य की आन्तरिक एव वाक्य विशेषताओ का प्रभाव उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर पडता है। अत' जीवन चरित्र लेखक के लिए व्यक्तित्व का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

अन्य महत्वपूर्ण तत्व जिसका जीवनी लेखक को ध्यान रखना पडता है वह वातावरण है। वातावरण से अभिप्राय उन परिस्थितियो से है जिनमे नायक का व्यक्तित्व निखरता है। लेखक को नायक के जीवन से सम्बन्धित सभी परिस्थितियो का वर्णन करना पडता है। राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव साहित्यिक परिस्थितियो के निरीक्षण के बिना कोई भी लेखक सफल जीवन चरित्र नही लिख सकता। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन पर अपने समय की परिस्थितियो का प्रभाव पडता है। साधारण व्यक्ति तो परिस्थितियो से प्रभावित ही होते है परन्तु प्रतिष्ठित व्यक्ति अपने व्यक्तित्व मे जनता को भी प्रभावित करते हैं और अन्य व्यक्तियो के व्यक्तित्व से भी प्रभावित होते है। यहाँ कहने का अभिप्राय यह है कि विशिष्ट प्रकार के व्यक्ति जिनका जीवन चरित्र लिखा जाता है वह परिस्थितियो से प्रभावित भी होते हैं और अपनी इच्छानुसार उन परिस्थितियो को ढाल भी सकते हैं उनमे इतनी विशाल शक्ति होती है। किसी भी राजनैतिक पुरुष की जीवनी लिखने के लिए लेखक को तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन तो करना ही पडता है परन्तु उसको यह भी दिखलाना पडता है कि उसका नायक उन परिस्थितियो से कितना प्रभावित हुआ है और उनको अपनी योग्यतानुसार सफल बनाने मे कहाँ तक उसका व्यक्तित्व निखरा है। राजनैतिक पुरुप का व्यक्तित्व तो निखरता ही राजनैतिक परिस्थितियो से है इसलिए लेखक के लिए उनका वर्णन करना आवश्यक है। जहाँ तक अन्य व्यक्तियो का प्रश्न है साहित्यिक पुरुष भी अपनी परिस्थितियो से प्रभावित होते है। प्रत्येक लेखक समयानुसार ही रचना करते है। इसलिए राजनैतिक परिस्थितियो का प्रभाव

1 There is also a place for the recognition of structure...A very strong or tough or active individual...these characteristics lie for the most part at the first level may show his strength or toughness in ablooming voice tight muscles structed but only generality of response, is involved.

साहित्यिक व्यक्तियो पर भी पडता है परन्तु जहाँ वह उनमे परिवर्तन लाना चाहते है वहाँ वह वैसी ही प्रकार का साहित्य जनता के सम्मुख प्रस्तुत करते है। यही बात धार्मिक एव सामाजिक व्यक्तियो के विषय मे कही जा सकती है।

प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व जहाँ अपने समय की राजनैतिक परिस्थितियो से प्रभावित होता है वहाँ उन पर सामाजिक व्यवस्था का प्रभाव भी कोई कम नही पडता। जीवन चरित्र लिखने के समय लेखक को यह देखना पडता है कि नायक का सम्पूर्ण व्यक्तित्व कहाँ तक समाज के नियमो पर चलने के लिए सफल हुआ है, कहाँ तक उन बनाये हुए नियमो का उल्लघन किया है एव किन-किन नियमो का आवश्य-कतानुसार उसने सशोधन किया है। कई सामाजिक व्यक्ति जिनका समाज मे प्रतिष्ठित स्थान होता है अपना सारा ही जीवन समाज की सेवा मे व्यतीत कर देते हैं तो उनके जीवन मे हमे समाज सुधार आन्दोलनो का वर्णन करना पडेगा। ऐसे लोग समाज के बने हुए नियमो पर चलने का उपदेश देते है और आवश्यकतानुसार अन्य व्यक्तियो के बनाए हुए नियमो का खडन करते है। साधारण व्यक्ति के जीवन चरित्र मे तो कोई विशेष बात दृष्टिगोचर नही होती लेकिन जिस भी सर्वप्रतिष्ठित एव सर्वमान्य व्यक्ति के जीवन का उल्लेख लेखक करता है वहाँ वह अवश्य ही समाज से सम्बन्धित नियमो की ओर दृष्टिपात करते हुए यह देखता है कि वह इन्हे निभाने मे कहाँ तक सफल हुआ है। लेखक को यह देखना पडता है कि उसका जीवन परिवार के प्रति, माता-पिता के प्रति, बहन-भाइयो के प्रति, पत्नी के प्रति एव अन्य सम्बन्धियो के प्रति कहाँ तक अपने कर्त्तव्य को निभा सकता है। कुछ व्यक्ति तो इन सामाजिक बन्धनो से दूर हो जाते है और कुछ इनके अनुसार ही अपना जीवन व्यतीत कर लेते हैं। इस प्रकार जीवन के इस भाग का वर्णन करना भी लेखक का कर्त्तव्य हो जाता है। जीवन का यह भाग अर्थात् जीवनी सम्बन्धी इस तत्त्व का उल्लेख करना लेखक के लिए इसलिए भी आवश्यक है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज मे फैले हुए इस चतुर्दिक वातावरण का प्रभाव उस पर पडता है। इस समाज मे ही उसका व्यक्तित्व प्रफुल्लित होता है। सामाजिक व्यक्ति होने के कारण समाज से तो वह प्रभावित होता ही है साथ मे अपने व्यक्तित्व के गुणो से वह समाज को भी प्रभावित करता है। कुछ सामाजिक नियमो को भी वह इच्छानुसार बदल देता है। जब वह इन नियमो का उल्लघन करता है तब उसका व्यक्तित्व समाज मे अपना विशिष्ट स्थान रखता है, इसलिए लेखक के लिए यह आवश्यक है कि वह नायक के सामाजिक जीवन सम्बन्धी तत्व का अवश्य चयन करे वरन् जीवन चरित्र अधूरा रह जाता है।

प्राय देखा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति का कोई न कोई विशेष धर्म होता है चाहे वह ईश्वर को सगुण रूप मे मान ले चाहे निर्गुण रूप मे। बिना धर्म के कोई भी व्यक्ति अभी तक देखने मे नही आया। यदि कोई ईश्वर के इन दोनो ही रूपो को नही मानता तो जिन विशेष प्रकार के नियमो के अनुसार वह जीवन व्यतीत करता है वह उसका धर्म कहलाते हैं। जीवन मे धर्म का महत्वपूर्ण स्थान है। धार्मिक

व्यक्ति का जीवन अपने ही ढग का होता है। कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनका समस्त जीवन अपने धर्मप्रचार मे ही व्यतीत हो जाता है। ऐसे व्यक्तियो का जीवन आदर्श जीवन कहलाता है। जो लेखक ऐसे व्यक्तियो को अपना नायक बनाते हैं वह उपदेश कथन के उद्देश्य से ही उनको ग्रहण करते हैं। लेखक को अपने नायक के जीवन मे यह देखना होता है कि कहाँ तक उसने अपने जीवन मे पाप या पुण्य कर्म किए हैं, कहाँ तक वह धार्मिक नियमो पर चला है और कहाँ तक उनका उल्लघन किया है। इन सभी बातो का वर्णन, चाहे वह अपने जीवन का उल्लेख करे चाहे अन्य व्यक्ति के व्यक्तित्व के विवेचन करे, अवश्य ही करता है। इस प्रकार लेखक को नायक के सम्पूर्ण मस्तिष्क के विकास का अपनी जीवनी मे वर्णन करने के लिए उसके चतुर्दिक फैले हुए राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक वातावरण का वर्णन करते हुए उसके व्यक्तित्व का इनमे स्थान निर्धारित करना पडता है। इससे स्पष्ट है कि लेखक नायक के जीवन सम्बन्धी सभी तत्वो का चयन करके जीवन चरित्र लिखता है।

साहित्यिक व्यक्ति का जीवन चरित्र लिखने के लिए लेखक को जहाँ उपरिलिखित जीवन सम्बन्धी तत्वो का चयन करना पडता है वहाँ उसे तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो का वर्णन करते हुए यह सिद्ध करना पडता है कि इनके अनुसार चलने मे कहाँ तक उसका व्यक्तित्व सफल हुआ है और कहाँ तक उसका व्यक्तित्व सफल हुआ है और कहाँ तक इसने परिस्थितियो के प्रतिकूल होकर साहित्यिक रचना की है। कुछ साहित्यिक व्यक्ति परिस्थितियो से प्रभावित ही रहते हैं और कुछ आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर लेते है। वे अपने को परम्परावादी मानने से इनकार कर देते हैं और अपने ही व्यक्तित्व के अनुसार साहित्य को लिखते हैं। साहित्यिक व्यक्ति का जीवन चरित्र लिखने मे तो उसकी कृतियाँ भी विशेष रूप से सहायक हो जाती हैं। लेखक को उन कृतियो को पढना आवश्यक हो जाता है क्योकि उन्ही से उसके मस्तिष्क के विकास का ज्ञान हो जाता है। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि लेखक को जीवन चरित्र लिखने के लिए जीवन सम्बन्धी किन तत्वो का चयन करना पडता है और वे तत्व उसके व्यक्तित्व मे कितना स्थान रखते हैं। इसके साथ ही लेखक को यह वर्णन करना पडता है कि व्यक्ति जिसका वह जीवन चरित्र लिख रहा है उसके व्यक्तित्व मे अर्थात् उसके जीवन मे किस तत्व की अधिकता है और कहाँ तक वह अन्य तत्वो को सफल बना सका है।

जीवनीपरक तथ्य और इतिहास की प्रवृत्तियाँ

जीवनीपरक साहित्य और इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि जीवन चरित्रकार और इतिहासकार मे समानता कम है और विषमताएँ अधिक हैं। समानता तो केवल इस बात की है कि दोनो लेखको मे सत्य का आग्रह रहता है, लेखक अपनी इच्छानुसार घटनाचक्र मे परिवर्तन नहीं कर सकता। जीवनीपरक साहित्य के लेखक को भी उन्ही घटनाओ का वर्णन करना पडता है जो कि सत्य पर आधारित होती

हैं। उसके अपने जीवन सम्बन्धी घटनाएँ तो होती ही सत्य है परन्तु यदि वह अन्य व्यक्ति के जीवन का वर्णन करता है तो उसके जीवन सम्बन्धी घटनाओ का वह तभी वर्णन कर सकता है यदि उनकी सत्यता के विषय मे उसके पास प्रमाण होते हैं। इतिहासकार भी इतिहास वर्णन मे कल्पना का प्रयोग नही कर सकता। इस समानता को विभिन्न आलोचको ने भी स्वीकार किया है। जीवनी साहित्य और इतिहास की सत्यता शत प्रतिशत अनिवार्य है। किसी बाह्य कल्पना और व्याख्या का स्थान जीवनी साहित्य मे नही हो सकता है।[1]

जीवनीपरक साहित्य मे लेखक का उद्देश्य किसी एक व्यक्ति के जीवन को चित्रित करना होता है। इसमे प्रधानता व्यक्ति को मिलती है। जीवन चरित्र के पीछे कोई न कोई व्यक्ति रहता है। इतिहास मे प्रधानता देश को मिलती है। इतिहासकार देश की पृष्ठभूमि पर घटनाओ का चरित्र चित्रण करना चाहता है अथवा दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि अगी देश रहता है, व्यक्ति तो उसका अग होकर ही जाता है, ठीक इसके विपरीत जीवनी मे प्रधानता व्यक्ति को मिलती है, देश का घटनाएँ उसकी अनुवर्तिनी होकर आती है। यह सम्भव है कि जीवनी से जुड कर किसी सस्था अथवा देश का इतिहास गौण रूप से भले ही आ जाये किन्तु मुख्य लक्ष्य नायक का कार्य-कलाप होता है, देश या संस्था का इतिहास नही।[2] इससे स्पष्ट है कि जीवनीपरक साहित्य मे मुख्य स्थान व्यक्तित्व का होता है और इतिहास मे देश का। जीवनीपरक साहित्य लेखक जिन भी देश की परिस्थितियो का वर्णन करता है वह अपने नायक के व्यक्तित्व को अधिक स्पष्ट करने के लिए करता है, इस बात को गुलाबराय ने भी पूर्णतया स्पष्ट कर दिया है। इतिहास मे सत्य का आग्रह अवश्य रहता है किन्तु उसमे व्यक्ति देश का अग होकर आता है। अगी देश ही रहता है। जीवनी मे मुख्यता व्यक्ति को मिलती है उसके सहारे किसी देश या जनता का इतिहास भले ही आ जाये।[3]

किसी भी व्यक्ति की जो बातें इतिहासकार के लिए अनावश्यक है वही बाते एक जीवन चरित्रकार के लिए आवश्यक हैं। जीवन चरित्रकार यह बतलाता है कि उसके नायक के व्यक्तित्व मे क्या-क्या दुर्बलताएँ है और कौन-कौन सी दृढताएँ। उन छोटी-छोटी बातो को जो चरित नायक के व्यक्तित्व के उद्घाटन मे सहायता पहुँचाती हैं जीवन चित्रकार कभी छोड नही सकता। इससे स्पष्ट है कि जीवनी लेखक के लिए चरित्र नायक की सामान्य से सामान्य बाते भी महत्व रखती है। वह चरित्र नायक के खाने-पहनने की रुचि, प्रात.काल ईश्वर-वन्दना या भ्रमण आदि का वर्णन उतने ही उल्लास के साथ करता है जितने उत्साह के साथ इतिहासकार किसी बडे युद्ध या

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित्र का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० ८
२. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १९८
३. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय पृ० २३७

राजपरिवर्तन का वर्णन करता है। इतिहासकार के लिए ऐसी बातें अनावश्यक प्रतीत होती हैं किन्तु जीवनीकार के लिए वे अत्यावश्यक हैं।[1] इससे स्पष्ट है कि किसी भी व्यक्ति का जीवन इतिहास को समृद्ध करने का सहायक बन सकता है परन्तु स्वय इतिहास नही कहला सकता। इसीलिए जीवनीपरक साहित्य और इतिहास मे भिन्नता है। इतिहास उन घटनाओ के क्रम का वर्णन करता है, राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक उत्थान-पतन का उल्लेख करता है जिसमे असंख्य व्यक्ति एक साथ भाग लेते हुए या सधि करते हुए या अन्य अनेक कार्यों मे सम्मिलित होकर भी उसका 'स्वि' अलग और परे रह सकता है। इतिहास की असम्बद्ध घटनाओ मे उसका अपनापन बहुत ही नगण्य सा-होता है। जन्म से मृत्यु तक व्यक्ति का जो क्रम बनता है जिसमे उसकी भावनाएँ, मुद्राए, उसके कार्य और अपनेपन की छाप होती है जिसमे उसकी जीवनी शैली होती है, जिसमे उसकी आत्मा होती है और जिसमे उसके व्यक्तित्व का चित्र देख पडता है इतिहास का विषय नही बन सकता है, परन्तु यही जीवनी साहित्य का विषय बनता है और इसीलिए दोनो इतिहास और जीवन चरित्र के अलग-अलग क्षेत्र हैं, दोनो अलग-अलग दो वस्तुएँ है।[2]

यद्यपि जीवनीपरक साहित्य मे और इतिहास मे घटनाओ का वर्णन होता है परन्तु वर्णन में भी भिन्नता होती है। इतिहासकार तो इतिहास मे किसी भी प्रमुख व्यक्ति के किए हुए कार्यों का वर्णन ही कर देता है और वह वर्णन भी कुछ पक्तियो मे ही होता है परन्तु जीवन चरित्र लेखक या आत्मकथा लेखक जीवन सम्बन्धी घटनाओ का वर्णन ही नही करता अपितु विश्लेपण भी करता है। इस प्रकार व्यक्तित्व का जो विवेचन एव विश्लेपण हम जीवनीपरक साहित्य मे देखते हैं वह इतिहास मे नही। अतः विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि जीवनीपरक साहित्य मे इतिहास का क्या स्थान है।

जीवनीपरक तथ्यों की रचना शैलियाँ

जीवनीपरक साहित्य के अन्तर्गत जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, सस्मरण पत्र एव दैनन्दिनी गद्य की ये सभी विधाएँ स्वतन्त्र रूप से आती हैं। गद्य की ये विधाएँ पृथक्-पृथक् ढग से लिखी जाती है। इस प्रकार इनकी रचना शैलियाँ भी पृथक्-पृथक् है। जीवनी लेखक की शैली आत्मकथा लेखक की शैली मे पृथक् होनी है। इसी प्रकार सस्मरण भी अपने ही ढग से लिखे जाते है। रेखाचित्र शैली का भी साहित्य मे अपना ही स्थान है। पत्र एव डायरी शैली तो है ही इनसे बिल्कुल भिन्न। इस प्रकार जीवन सम्बन्धी इन तथ्यो की भिन्न-भिन्न शैलियाँ है।

जीवन चरित लिखने की 'शैली' इन विधाओ की पृथक्-पृथक् शैलियो मे अपना ही स्थान रखती है। जीवनी लेखक को अपने नायक के समस्त जीवन का वर्णन करना होता है इसलिए वह अपनी जीवनी मे विभिन्न शैलियो का प्रयोग भी कर

---

१. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १६८

२, 'हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास' ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० ६

सकता है। जीवन चरित शैली मे सुसगठितता, रोचकता, सत्यता, स्वाभाविकता आदि विशेषताएँ होती है। इन गुणो से युक्त होने पर ही जीवनचरित शैली प्रभावोत्पादक बन सकती है। इसके अतिरिक्त लेखक आवश्यकतानुसार अपने नायक के जीवन को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए अन्य शैलियो का प्रयोग भी कर सकता है। लेखक का मुख्य उद्देश्य नायक के व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण-दोषो का विवेचन ही नही अपितु विश्लेषण भी करना होता है। इसलिए नायक के जीवन के प्रति अपने विचारो को भी प्रकट करना होता है। इसीलिए जीवन चरित शैली मे वर्णनात्मक, कथात्मक एव औपन्यासिक शैली का कही-कही प्रयोग लक्षित होता है।

आत्मचरित शैली मे लेखक स्वय नायक होता है। उसे अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण स्वय करना होता है। यह कोई सुगम कार्य नही है। ऐसे कार्य के लिए लेखक को स्पष्ट एव नि.सकोच रूप से कार्य करना पडता है। यही कारण है कि आत्मकथा वही लेखक लिख सकता है जिसका व्यक्तित्व साधारण व्यक्तियो जैसा नही होता। उसके व्यक्तित्व मे ईमानदारी और सत्यता होती है तभी वह अपने गुण-दोषो का विवेचन स्वय करता है। इस प्रकार आत्मकथा शैली मे स्पष्टता, स्वाभाविकता एव सम्बद्धता आदि गुणो का समावेश होता है। अपने व्यक्तित्व को अधिक विकसित करने के लिए अर्थात् स्पष्ट रूप से गुण-दोषो का विवेचन करने के लिए वह आवश्यकतानुसार अन्य शैलियो की सहायता भी ले सकता है।

रेखाचित्र शैली इन दोनो ही शैलियो से पृथक् है, इस शैली का लेखक तो चित्रकार की तरह समस्त व्यक्तित्व का चित्रण करता है। रेखाचित्रकार का कार्य चरित्र को उद्घाटित करना ही है विश्लेषण करना नही। विश्लेषण तो स्वय ही हो जाता है। रेखाचित्र लेखक को तो सीमित क्षेत्र मे समस्त चित्र चित्रित करना होता है। इसलिए इस प्रकार की शैली मे सक्षिप्तता, प्रभावोत्पादकता चित्रात्मकता आदि विशेषताएँ होती हैं। इस शैली मे भी गौण रूप से लेखक अन्य शैलियो की सहायता ले सकता है। रेखाचित्र लेखक को तो शैली का विशेष ध्यान रखना पडता है। उसकी सफलता तो शैली पर ही निर्भर होती है।

सस्मरण शैली का जहाँ तक प्रश्न है इसमे भी वे सभी विशेषताएँ होती है जो अन्य शैलियो मे पाई जाती हैं। सस्मरण आत्मकथात्मक शैली मे भी लिखे जाते हैं और जीवन चरित शैली मे भी परन्तु फिर भी इस शैली की अपनी ही विशेषताएँ हैं जो इसे अन्य शलियो से पृथक् करती हैं। सस्मरण चाहे लेखक के अपने जीवन से सम्बन्धित हो चाहे किसी और व्यक्ति के, दोनो मे ही लेखक का व्यक्तित्व मुख्य रूप से लक्षित होता है। इसलिए इस शैली मे आत्मीयता का गुण विशेष रूप से पाया जाता है। प्रत्येक घटना का वर्णन जो भी लेखक करता है जिस भी व्यक्ति के विषय मे वह इस शैली मे लिखता है अवश्य ही उसका सम्बन्ध इसके व्यक्तित्व के साथ होगा। यही कारण है कि सस्मरण रोचक एवं प्रभावोत्पादक होते हैं। सस्मरण लेखक को भी अपनी शैली को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए उसमे सक्षिप्तता, सुसगठितता

एव रोचकता आदि गुणो का समावेश करना पडता है। अपनी इन प्रमुख विशेषताओ के कारण ही यह शैली अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

पत्र साहित्य की शैली तो इन सभी शैलियो से पृथक् होती है। पत्र शैली मे आत्मीयता का गुण प्रमुख रूप से पाया जाता है। लेखक का सम्बन्ध अपने व्यक्तित्व से तो होता ही है, दूरस्थ व्यक्ति के साथ भी होता है। यही कारण है कि लेखक को पत्र का विषय भावग्राहक के अनुकूल ही चुनना पडता है। इस शैली की सबसे बडी महत्ता इसलिए है कि लेखक का जो व्यक्तित्व हम पत्रो मे प्राप्त करते है वह अन्यत्र नही। लेखक अपने जीवन की गोपनीय घटनाओ का वर्णन अपने पत्रो मे ही करता है, इसलिए उसके व्यक्तित्व का निखरा हुआ जो रूप हमे पत्रो मे मिलता है वह अन्यत्र नही। लेखक जिस भी घटना, स्थान व दृश्य का वर्णन पत्रो मे करता है वे समस्त उसके व्यक्तित्व से सम्बन्धित होते हैं। जिन पत्रो मे हम किसी व्यक्ति के जीवन के विषय मे झाँकी प्राप्त करते हैं उनमे जीवन चरित शैली का प्रयोग होता है। इसी प्रकार लेखक विषयानुसार शैलियो का प्रयोग कर सकता है परन्तु फिर भी प्रधानता लेखक के अपने व्यक्तित्व की होती है। इस शैली का आकार भी सीमित होता है। लेखक को अपने विचार का वर्णन समास शैली मे करना होता है।

डायरी लेखक की शैली भी अपने ही ढग की है। इसमे लेखक को अपने समस्त जीवन की घटनाओ को दिन, तिथि, समय और स्थान के अनुसार करना पडता है। इस शैली मे स्वाभाविकता, सत्यता एव सुसम्बद्धता आदि विशेषताएँ होती हैं। डायरी मे लेखक अपने जीवन की सभी घटनाओ को स्पष्ट रूप से लिखता है। जिन जीवन सम्बन्धी तत्वो का किसी भी व्यक्ति को पता नही होता वह उस व्यक्ति की डायरी मे देखे जा सकते है। इस प्रकार इस शैली मे निसकोचशीलता का जो गुण प्राप्त होता है वह अन्यत्र नही पाया जाता। इस शैली का लेखक भी आवश्यकतानुसार विभिन्न शैलियो का प्रयोग कर सकता है।

जीवनीपरक साहित्य की विधाएँ एवं उनके अन्तबन्ध

जीवनीपरक साहित्य की विधाएँ

१. **जीवनी**—साहित्य मे जीवन का विस्तृत वर्णन होता है, जीवन की गूढतम समस्याओ एल उलझनो का उसके सौदर्य और विभूतियो का साहित्य मे स्पष्ट रूप से विवेचन होता है। इसीलिए जीवन और साहित्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है। साहित्य का मूल प्रेरणा स्रोत मनुष्य जीवन है और साहित्य जीवन को व्यक्त करने का साधन है। इसलिए वह साहित्य जिसमे जीवन के गूढतम तत्वो का विवेचन नही होता कोई महत्व का स्थान और आकर्षण नही रखता है। इसीलिए जीवन और साहित्य का अटूट सम्बन्व है।

वैसे तो साहित्य के सब रूपो मे किसी न किसी रूप मे मानव जीवन का उल्लेख होता है। अत. सारा ही साहित्य जीवनी है। यहाँ हमारा अभिप्राय 'जीवनी' के सामान्य अर्थ से नही है प्रत्युत व्यक्ति विशेष की जीवनी से है। इसके लिए सामान्य मानव समाज मे से किसी विशिष्ट व्यक्ति को चुन लिया जाता है और अधिक गहराई तथा वास्तविकता से उसके जीवन की घटनाओ एव परिस्थितियो का अध्ययन किया जाता है। जब लेखक इस अध्ययन के परिणामस्वरूप अपनी प्रतिक्रियाओ को इतिहास रूप मे वर्णित करता है तब वह एक प्रकार के साहित्य का निर्माण करता है अपने अर्थ मे जीवनी शब्द इसी साहित्यिक रूप का परिचायक है।

वास्तव मे जीवनी घटनाओ का अकन नही वरन् चित्रण है। वह साहित्य की विधा है और उसमे साहित्य और काव्य के सभी गुण हैं। वह एक मनुष्य के अन्तर और बाह्य स्वरूप का कलात्मक निरूपण है। जिस प्रकार चित्रकार अपने विषय का एक ऐसा पक्ष पहचान लेता है जो विभिन्न पक्षों मे ओतप्रोत रहता है और जिसमे नायक की सभी कलाएँ और छटाएँ समन्वित हो जाती है उसी प्रकार जीवनीकार अपने नायक के आपे की कुञ्जी समझकर उसके आलोक मे सभी घटनाओ का चित्रण करता है।[१] इस परिभाषा के अनुसार 'जीवनी' मे लेखक के आन्तरिक और बाह्य स्वरूप का विवेचन कलात्मक रूप से होता है। 'कलात्मक' शब्द के प्रयुक्त होने से ही यह परिभाषा अधिक उपयुक्त जान पडती है। इस शब्द के प्रयोग करने से

---

१. काव्य के रूप लेखक गुलाबराय पृ० २३८

लेखक का अभिप्राय है कि 'जीवनी' मे वे सभी गुण होने चाहिए जोकि साहित्यिक कृति मे होते हैं।

जीवन चरित्र जीवन की ऐतिहासिक घटनाओ का स्थूल साहित्यिक उल्लेख भी नही है, जीवनी साहित्य एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन है। मनुष्य की मुद्रा और भावना उसके मन की क्रिया-प्रतिक्रियाएँ और जीवन के क्रम मे उसके मस्तिष्क के विकास का अध्ययन एक अत्यन्त गूढ विषय है। मनुष्य का व्यक्तित्व मानसिक क्रियाओ का परिणाम है। इन मानसिक क्रियाओ का अध्ययन और उनका सफल चित्रण जीवनी साहित्य का अनिवार्य विषय है।[1]

इस परिभाषा मे लेखिका ने जीवनी साहित्य को एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन माना है जिसमे मनुष्य के मस्तिष्क के विकास क्रम को स्पष्ट रूप से लिखा जाता है। जहाँ इन्होंने मानसिक क्रियाओ के 'सफल चित्रण' का उल्लेख किया है उससे स्पष्ट है कि यह जीवनी मे उन सभी विशेषताओ का समावेश रखने के पक्ष मे है जो कि इनको एक उत्कृष्ट साहित्यिक जीवनी बना सकती हैं।

जीवनी शब्दो मे सगृहीत ज्ञात प्रमाण है। इसमे मानवीय स्वभाव एव भावनाओं का ऐसा प्रवाहित रूप से दृढ वर्णन होता है जैसे किसी पारे जैसा तरल पदार्थ के बहाव का होता है।[2]

A biography is a record, in words of something that is as mercurial and as flowing, as compact of temperament and emotion as the human spirit itself

इससे स्पष्ट है कि जीवनी मे मनुष्य जीवन के उत्थान पतन, सभी पक्षो का धारावाहिक रूप से वर्णन होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जीवनी मे लेखक व्यक्ति के आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व का स्पष्ट रूप से विवेचन करता है, उसके वर्णन मे एक विशेष प्रकार की कलात्मकता होती है, जो उसे गद्य की अन्य विधाओ से पृथक करती है। इतिहास की अपेक्षा इसमे अधिक वैयक्तिकता होती है और साहित्य के अन्य रूपो की अपेक्षा इसमे वास्तविकता होती है। अत जीवनी की परिभाषा इस प्रकार हो सकती है—जब कोई लेखक कुछ वास्तविक घटनाओ के आधार पर श्रद्धेय व्यक्ति की जीवनी कलात्मक रूप मे प्रस्तुत करता है तो साहित्य का वह रूप 'जीवनी' कहलाता है।

तत्व

वर्ण्य विषय—जीवनी साहित्य का यह महत्वपूर्ण तत्व है। इसमे नायक के

---

१ हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, लेखिका चन्द्रावती सिंह पृ० ११

२. Literary Biography by Leon Edel Page I.

सम्पूर्ण जीवन का विश्लेषण होता है। नायक के जीवन का यह विश्लेषण लेखक वास्तविक घटनाओ के आधार पर करता है। जहाँ तक नायक का प्रश्न है वह साहित्यिक, राजनैतिक, सामाजिक एव ऐतिहासिक कोई भी हो सकता है परन्तु उसका जनता मे यथेष्ट स्थान होना आवश्यक है जिसके चरित्र को पढ कर पाठक कुछ प्रेरणा एव विशिष्ट ज्ञान ग्रहण कर सके।

वर्ण्य विषय को उत्कृष्ट एवं सफल बनाने के लिए उसमे कुछ गुणो का होना आवश्यक है। सर्वप्रथम वर्ण्य विषय मे सत्यता का होना है। जॉनसन ने भी इसको स्वीकार किया है। जहाँ इन्होने अपनी पुस्तक 'One Mighty Torrent' मे एक उत्कृष्ट जीवनी के गुणो के विषय मे वर्णन किया है वहाँ इस गुण को इन्होने सर्वप्रथम स्वीकार किया है—"सर्वप्रथम मेरे विचार मे जिसको कि हम कह सकते है सचाई है—चित्रित मानव जीवन के चरित्र की सचाई। बिल्कुल निष्पक्ष —जोकि न तो उसके पतन का दमन करे न ही उपेक्षा करे जो भी स्पष्ट रूप से समझता हो उसका वर्णन करे। ऐसे उद्देश्य के लिए विश्लेषण एव समीक्षा की आवश्यकता है। केवल सीधे तत्त्व ही आवश्यक नही अर्थात् वे ही कार्य को पूरा नही कर सकते। विश्लेषण कार्य को पूरा करने के लिए अवश्य किया जाता है। कभी-कभी केवल एक चारित्रिक विशेषता की सचाई को व्यक्त करने के लिए सारी सामाजिक एव ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि देनी आवश्यक हो जाती है और इससे कभी-कभी आत्मा की अत्यन्त कपटी समस्याओ को भी खोजा जाता है। इससे स्पष्ट है कि जीवनी एक मनोवैज्ञानिक प्रमाण पुस्तक ही नही है प्रत्युत एक कला है।"[1]

(Primarily, I think we must say truth—truth to the character of the human life it portrays. An absolutec andouy, seeking neither to blacken nor to palliate, but as clearly as man be, to understand. Such an aim necessarily involves interpretation for a mere recital of fact will not do. Analysis must coml to the aid of the deed. Sometimes an entire background of socia and historical color may be needed to reveal the truth about a single characteristic, and sometimes a delving into the most elusive problems of the soul. In saying these things it becomes clear that a biography is not a psychological casebook but a work of art)

इससे स्पष्ट है कि वर्ण्य विषय मे सत्यता का होना नितान्त आवश्यक है। 'सत्यता' से यहाँ अभिप्राय घटनाओ की सचाई है। लेखक वास्तविक घटनाओ के आधार पर ही नायक के जीवन का चरित्र चित्रित कर सकता है। नायक के चरित्र सम्बन्धी गुण-दोषों का स्पष्ट एवं विस्तृत रूप से वर्णन करने से ही लेखक द्वारा

१. One Mighty Torrent by Edger Johnson, P. 40.

लिखी हुई जीवनी सफल कही जा सकती है। 'जीवनीकार सत्य पथ से कभी विचलित नही होता। यह हो सकता है कि दोष-दर्शन मे उसके हृदय मे सहृदयता की भावना ऐसी हो कि वह यथार्थता की रक्षा करता हुआ चरित्र नायक की दुर्बलताओ का परिहास न करे। जीवनीकार सत्य का पल्ला कभी नही छोडता। वह इस मर्यादा की रक्षा के लिए सब कुछ त्याग करने को तैयार रहता है।'[1] इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि वर्ण्य विषय मे वास्तविकता एव सत्यता का होना आवश्यक है।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता जो कि वर्ण्य विषय को उत्कृष्ट बना सकती है वह है—प्रासादात्मकता व रोचकता। लेखक को नायक के सम्पूर्ण चरित्र का विश्लेषण इस ढग से करना चाहिए जोकि पाठक को सरस एव रोचक प्रतीत हो। नीरस जीवनी पढने के लिए कोई भी पाठक नही तैयार होता है। इस प्रकार रोचकता का विषय मे होना अत्यन्त आवश्यक है।

तीसरा महत्वपूर्ण गुण वर्ण्य विषय मे वैज्ञानिकता का होना है। वही जीवनी सफल कही जा सकती है जिसमे नायक के सम्पूर्ण जीवन का मनोवैज्ञानिक रूप से विश्लेषण होना है। इस वैज्ञानिकता मे त्रुटि आने से जीवन चरित्र भी दूषित हो जाता है। मनुष्य जीवन का क्रमिक विकास वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत करना ही जीवनी मे लेखक का उद्देश्य होता है। यदि वैज्ञानिकता मे कुछ कमी रह जाएगी तो वह जीवन चरित्र काल्पनिक हो जाएगा, इसलिए विषय-वर्णन मे वैज्ञानिकता का होना आवश्यक है।

वर्ण्य विषय मे सक्षिप्तता एव सुसगठितता का होना भी अत्यन्त आवश्यक है। लेखक को समस्त जीवन की घटनाओ का क्रमानुसार वर्णन करना चाहिए। ऐसा न हो कि उनमें एकसूत्रता का अभाव हो। घटना को इस ढंग से वर्णन करना चाहिए कि वह सम्पूर्ण जीवन पर प्रकाश भी डाले और साथ मे सक्षिप्त रूप से भी कही गई हो।

अतः वही जीवनी सफल कही जा सकती है जिसके वर्ण्य विषय मे उपर्युक्त गुणों का समावेश होगा।

चरित्र-चित्रण

जीवनी साहित्य का यह विधायक तत्त्व है। इसमे लेखक अपने नायक का चरित्र चित्रित ही नही करता अपितु उसका सश्लेषण-विश्लेषण एव विवेचन भी करता है। नायक के आन्तरिक एव बाह्य व्यक्तित्व का विश्लेषण चरित्र-चित्रण मे किया जाता है।

जहाँ तक नायक के आन्तरिक विश्लेषण का प्रश्न है उसमे गुण भी होते हैं और दोष भी। गुणों का वर्णन तो सभी कर सकते हैं पर दोषो का वर्णन कोई ही

---

1. समीक्षाशास्त्र, ले० दशरथ ओझा, पृ० १६६, द्वितीय संस्करण जुलाई, १६५१

व्यक्ति कलात्मक रूप से कर सकता है। चारित्रिक त्रुटियो का वर्णन लेखक को इस ढंग से करना चाहिए कि पाठक को यह भी अनुभव न हो कि स्पष्ट एवं कडवे रूप से नायक की दुर्बलताओ को ही वर्णन करना लेखक का लक्ष्य है। इसमे लेखक को अपनी सहानुभूतिशीलता का प्रयोग करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति मे गुण-दोष होते है, यह अन्य बात है कि किसी मे गुण अधिक हो और दोष कम पर दोनो का अवश्य समावेश होता है। वही जीवनी उत्कृष्ट कही जाएगी जिसमे नायक के चारित्रिक गुण-दोषो का विवेचन हो। यदि लेखक नायक के केवल गुणो का उल्लेख ही अपनी जीवनी मे कर पाएगा तो वह एक आदर्श जीवनी बन जाएगी जिसका अनुसरण पाठक भी नही कर सकेगे। इस मत का समर्थन ब्रजरत्नदास ने भी किया है—

"मनुष्य तभी मनुष्य रहेगा जब उसके दोष आदि भी प्रकट कर दिए जाएँगे। मनुष्य देवता नही है उसमे दोष रहेगे, किसी मे एक है तो किसी मे कुछ और है। यदि एक महात्मा की जीवनी से हम दोषो को निकाल देते है तो हम एक ऐसा निर्दोष आदर्श उपस्थित कर देते है जिसको अनुमान करने का लोग साहस छोड बैठेगे।—तात्पर्य यह है कि जीवन चरित्र मे गुणो का विवेचन करते हुए दोषों को भी, यदि हो, तो विश्लेषण अवश्य कर देना चाहिए।"[1]

जहाँ तक बाह्य व्यक्तित्व का प्रश्न है लेखक को नायक की बाह्य वेशभूषा का ज्ञान भी पाठक को करवा देना चाहिए। उसके शारीरिक अवयवो का लेखक को अवश्य वर्णन करना चाहिए। बाह्य वेशभूषा के वर्णन से सबसे बडा लाभ यह होता है कि पाठक नायक के समस्त व्यक्तित्व का अनुमान उसकी वेशभूषा से ही लगा लेता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जीवनी मे लेखक नायक के आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व का विश्लेषण स्पष्ट रूप से करता है।

देशकाल

जीवनी साहित्य का यह भी एक महत्वपूर्ण तत्त्व है। वर्ण्य चरित्र किसी देश या काल मे ही अपना जीवन व्यतीत करता है। इसलिए उसके समस्त जीवन की घटनाएँ देश और काल से सम्बन्धित होती है। परन्तु अन्य प्रकथनात्मक साहित्य की भाँति जीवनी साहित्य मे देश काल का चित्रण मुख्य रूप से नही किया जाता। जीवन साहित्य मे तो व्यंग रूप से ही इसका चित्रण किया जाता है। जो भी चित्रण किया जाता है अर्थात् जिन भी परिस्थितियो का वर्णन लेखक जीवनी मे कर पाते है वह नायक के व्यक्तित्व के अनुसार ही होता है।

अतः स्पष्ट है कि नायक के व्यक्तित्व को उभारने के लिए ही लेखक तत्कालीन परिस्थितियाँ का वर्णन करता है। यदि नायक कोई साहित्यिक व्यक्ति है तो उसकी जीवनी मे हमे तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो का अवश्य ही पाठक को

---

१. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० ब्रजरत्नदास, पृ० १५०

ज्ञान होता। यदि नायक राजनैतिक व्यक्ति होगा तो हमे तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का ज्ञान हो जाएगा। इस प्रकार यहाँ देशकाल वातावरण से यही अभिप्राय है कि किन-किन परिस्थितियो का सामना करते हुए लेखक का नायक अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट करता है।

उद्देश्य

जीवनी साहित्य का यह भी एक महत्वपूर्ण तत्व है। प्रत्येक लेखक का कुछ न कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। वह कोई भी रचना निरुद्देश्य नही लिखता। इस प्रकार जीवनीकार का उद्देश्य भी उसकी रचना मे प्रकारान्तर से समाविष्ट हो जाता है।

जीवन चरित हमे चरित नायक के शरीर और आत्मा मे प्रवेश कराकर एक ऐसे सुरक्षित स्थान पर बैठा देना है जहाँ से हम निष्पक्ष दृष्टि से अधिकार के साथ व्यक्ति के कार्य व्यापार, विचारधारा और इन दोनो के समन्वय को ध्यान मे देखकर किसी निर्णय पर पहुँच सकते हैं। व्यक्ति का हृदय और मस्तिष्क एक व्यवच्छेद अथवा अगच्छेद की भाँति स्फटिक की तरह स्पष्ट दिखाई देता है। किसी ने कविता ही क्यो लिखी ? अथवा उपन्यास ही क्यो लिखा ? कोई राजनैतिक नेता ही क्यों बना ? किसी ने दर्शन क्षेत्र मे ही क्यो विजय प्राप्त की ? कोई भक्त ही क्यो बना ? आदि असंख्य प्रश्नो के उत्तर मिल जाएँगे। अतएव मनुष्य को समझने के लिए उसके जीवन चरित्र का अध्ययन आवश्यक है।[1]

इससे स्पष्ट है कि जीवनीकार नायक के बाह्य एव आन्तरिक व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से वर्णन करता है। नायक के चरित्र का सश्लेषण विश्लेषण एव विवेचन करना ही लेखक का उद्देश्य है।

जीवन की घटनाओ के विवरण का नाम जीवनी नही है। लेखक जहाँ नायक के जीवन मे छिपे उसके विकास को, उसके व्यक्तित्व के रहस्य को, उसकी मुख्य जीवन धारा को खोलकर पाठको के सामने रख देता है वहाँ जीवनी लेखक की कला सार्थक होती है। ऊपर से मनुष्य के दिखाई पडने वाले रूप को दिखाकर ही जीवनी लेखन कला सतुष्ट नही होती। वह उस आवरण को भेदकर अन्त.स्वरूप और आन्तरिक सत्य को प्रत्यक्ष करती है।[2]

इस प्रकार जीवनीकार का उद्देश्य निरपेक्ष रूप से श्रद्धेय व्यक्ति के चरित्र को चित्रित करने का यह है कि पाठकगण इसके पढने से कुछ विशिष्ट ज्ञान ग्रहण कर सकें। वह जैसा व्यक्ति होता है उसका स्पष्ट रूप से वैसा ही चित्रण करता है। उसमे किसी प्रकार की अतिशयोक्ति की भावना नही दृष्टिगोचर होती। जीवनीकार का

१- आलोचना के सिद्धात, ले० डॉ० सोमनाथ गुप्त, पृ० २२२

२ हमारे नेता, ले० रामनाथ सुमन, पृ० १२

उद्देश्य अपने चरित्र नायक का व्यक्तित्व अभिव्यक्त करना होता है किन्तु विरूद् वखानवे वाले चारण का उद्देश्य चरित्रनायक के राई समान गुण को सुमेरु के समान विशाल दिखाकर उसकी कृपा का भाजन बनना होता है। जीवनीकार एक चित्रकार के सदृश अपने नायक के व्यक्तित्व को कुञ्जी समझकर उसके आलोक मे सभी घटनाओ का चित्रण करता है।[1]

इस प्रकार जीवन चरित्र लिखने का एक उद्देश्य तो यह हुआ कि हम मनुष्य के बाह्य व्यक्तित्व के साथ-साथ उसके आन्तरिक व्यक्तित्व को भी जान जाते है। दूसरी बात यह है कि दुनिया मे विशाल स्मारक भवन एव मदिर आदि तो नष्ट हो जाते है, केवल अमर ग्रन्थ ही रह जाते है। किसी भी श्रद्धेय व्यक्ति की जीवनी अमरत्व की भावना को लेकर ही लिखी जाती है।

भाषा शैली

शैली अनुभूत विषय-वस्तु के सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषय-वस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाता है। जीवनी लेखन एक अत्यन्त दुरूह कला है। सम्पूर्ण व्यक्ति को शब्दो मे चित्रित करना असाधारण कौशल का कार्य है। जीवन चरित्र लिखने की कला इसलिए भी अत्यन्त दुष्कर है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक अलग शैली होती है वह प्रत्येक दूसरे व्यक्ति से भिन्न होती है और प्रत्येक व्यक्ति का चरित्र चित्रण एक गूढ विषय होता है। प्रत्येक व्यक्ति का जीवन चरित्र लिखना एक लम्बे समय के अध्ययन और मनन के पश्चात् ही सम्भव है। जीवन सम्बन्धी बातो की छानबीन विवेकपूर्ण परिश्रम का कार्य है। उत्कृष्ट जीवन चरित्र लम्बे और विवेकपूर्ण परिश्रम से ही तैयार हो सकता है। एक व्यक्ति के जीवन भर के वृत्तान्त को ऐसी रूप-रेखा मे उपस्थित करना कि पाठक उस व्यक्ति को पहचान और समझ सके, सरल कार्य नही है। इसलिए जीवनी लेखन एक उत्कृष्ट और असाधारण कला है।[2] इस प्रकार जीवनी शैली मे कुछ विशेषताओ एव गुणो का होना आवश्यक है जिससे वह उत्कृष्ट शैली कहला सकती है।

जीवनी शैली मे सर्वप्रथम सुसगठितता का होना आवश्यक है। जीवनीकार को नायक के जीवन की समस्त घटनाओ को इस ढग से वर्णन करना चाहिए जिससे उनमे एकसूत्रता रहे। चरित्र लेखक को नायक की घटनाओ के पुज मे से अपेक्षित तथ्य को ग्रहण करने और अनपेक्षित को त्यागने मे ऐसी बुद्धिमत्ता से काम लेना पडता है कि सामजस्य कही भी बिगडने न पाये और सर्वत्र एकसूत्रता भी बनी रहे।[3] इस प्रकार सुसगठित शैली का होना अत्यन्त आवश्यक है। अन्य महत्वपूर्ण विशेषता जिसका जीवनी शैली मे होना अत्यन्त आवश्यक है वह है – निरपेक्षता। जीवन चरित लेखक

---

१. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १६६

२. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, लेखिका चन्द्रावती सिंह, पृ० १२

३. समीक्षा शास्त्र, ले० डॉ० दशरथ ओझा, पृ० २००

को बडे संतुलन की आवश्यकता होती है। उसका प्रत्येक विवरण पाठक के मन मे सत्यासत्य धारणा बनाता है। यदि यह धारणा सत्य पर अवलम्बित न रही तो असत्य के समर्थन से जो हानि समाज मे हो सकती है उसका डर सदैव बना रहेगा। अतएव जीवनीकार को निष्पक्ष, अनुभवी, वर्गहीन दृष्टिकोण धारक, स्पष्ट और सहनशील तथा सहानुभूतिपूर्ण होना चाहिए।[1] इस प्रकार शैली मे लेखक के मस्तिष्क की तटस्थता का होना अत्यन्त आवश्यक है। जीवनीकार को इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वह नायक के चारित्रिक गुण-दोषो का वर्णन तटस्थ एव निरपेक्ष रूप से करे। जीवनी की कृति मे उसके चरित्र नायक का 'आपा' या उसकी स्वरूपता (Personality) उभर आती है वह न भलाइयो को राजदरबार के कवीन्द्रो की भाँति राई को सुमेरु कर के दिखाता है और न बुराइयो को चबाई लोगो की भाँति तिल का ताड रूप देता है। वह अनुपात का सदा ध्यान रखता है।[2] ऐसा करने से ही जीवनी शैली उत्कृष्ट बन सकती है।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता सहृदयता का होना है। केवल यही एक ऐसा गुण है जिसके द्वारा हम अन्य व्यक्ति के व्यक्तित्व को समझ सकते हैं। कुछ भी हो हमे यह पूरी तरह से विश्वास है कि लेखक के वास्तविक चरित्र को हम तब तक नही समझ सकते जब तक कि लेखक मे काफी मात्रा मे सहानुभूतिशीलता नही है। जीवन मे साहित्य को ऊँचा स्थान प्राप्त करवाने के लिए सहानुभूति सर्वप्रथम तत्व है। केवल सहानुभूति से ही हम दूसरी आत्मा को समझ सकते हैं।[3]

In any event, we may rest assured that without some amount of initial sympathy we shall never understand an author's real character. To reach the best in literature as in life, sympathy is a preliminary condition Only through sympathy can we ever get into living touch with another soul.

जीवनीकार को यह ध्यान रखना चाहिए कि चद्रमा मे कलक है अवश्य किन्तु वे साधारण हैं। सहानुभूति अधभक्ति से भिन्न है। अधभक्ति दोषो को भी गुण समझती है, सहानुभूति दोष को दोष ही समझती है किन्तु उसके कारण दोष की हँसी नही उडायी जाती। जीवनीकार छोटे-मोटे दोषो को अर्थात् गुणो के समूह या बाहुल्य मे इस प्रकार छिपा जाता है जैसे चन्द्रमा की किरणो मे उसका कलक—दोषो के वर्णन मे सहृदयता का पल्ला नही छोडना चाहिए।[4] इस प्रकार जीवनी शैली मे लेखक की सहृदयता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है। विषयानुकूल एव भावानुकूल भाषा ही उत्कृष्ट होती है। भाषा मे प्रसाद गुण का होना आव-

१. आलोचना के सिद्धात, ले० डॉ० सोमनाथ गुप्त, पृ० २२५

२ काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २३९

३ वही, पृ० २३९

४. वही, पृ० ३३९

श्यक है। जीवनी को आकर्षक एव रुचिकर बनाने के लिए उत्कृष्ट भाषा का प्रयोग आवश्यक है। भाषा ही एक ऐसा साधन है जिससे चरित्र के वास्तविक स्वरूप का पता चलता है। इस प्रकार जीवन चरित्र लिखने मे सरल, सुबोध, आकर्षक और रुचिकर भाषा का प्रयोग आवश्यक है।

विभाजन

वर्ण्य चरित्र क्षेत्र के आधार पर जीवनी साहित्य को चार भागो मे विभाजित किया जा सकता है—

१. **साहित्यिक पुरुषो की जीवनियाँ**—साहित्यिक पुरुषो से अभिप्राय है जिन व्यक्तियो ने कुछ लिखकर हिन्दी साहित्य की प्रगति मे सहयोग दिया है, इनमे कवि, कथा लेखक एव आलोचकगण आते है। इस प्रकार की जीवनियो मे हमे तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो के साथ इनका हिन्दी साहित्य मे जो स्थान है उसका भी अनुमान हो जाता है। कुछ साहित्यिको की जीवनियाँ तो लिखी ही इस उद्देश्य से जाती है कि उनका हिन्दी साहित्य मे स्थान अमर रहे।

२ **राजनैतिक पुरुषो की जीवनियाँ**—इस श्रेणी मे उन लोगो की जीवनियाँ आती है जो कि अपना समस्त जीवन अपनी मातृभूमि के लिए न्योछावर कर देते हैं। ऐसे पुरुषो का जीवन तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो मे जूझा हुआ होता है। लेखक को नायक के व्यक्तित्व का पूरा चित्र उपस्थित करने के लिए उन परिस्थितियो का पाठक को परिचय करवाना ही पडता है। इसलिए ऐसी जीवनियाँ एक तो विशेष व्यक्ति के जीवन का परिचय देती हैं और दूसरे देश की तत्कालीन परिस्थितियो के विषय मे पाठकगण को परिचय देती हैं।

३. **ऐतिहासिक वीर पुरुषो की जीवनियाँ**—कुछ जीवन चरित्र इस उद्देश्य से लिखे जाते हैं कि जनता उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर सके और साथ मे हमारा मृत इतिहास पुनर्जीवित हो जाए तो ऐतिहासिक वीर पुरुषो की जीवनियाँ भी इस उद्देश्य से लिखी जा सकती हैं। ऐसी जीवनियो मे वीर पुरुषो की वीरता एव साहस का अधिकतर वर्णन होता है। ऐसी जीवनियो के पढने से हमे अपने इतिहास का विशेष रूप से ज्ञान हो जाता है।

४ **धार्मिक पुरुषो की जीवनियाँ**—धार्मिक पुरुषो की जीवनियाँ भी लिखी जा सकती हैं। जिन पुरुषो ने अपने समय मे प्रचलित धर्म मे जो त्रुटियाँ देखी और उनका जो भी विरोध किया और साथ मे मानव धर्म का प्रचार जनता मे किया उन पुरुषो की जीवनियाँ अवश्य लिखी जानी चाहिए। ऐसे पुरुषो की जीवनियो मे धार्मिक विषयो पर अधिक चर्चा होती है। धर्म के विषय मे जो भी उनकी मान्यताएँ होती हैं उनका उनकी जीवनियो मे उल्लेख होता है। ऐसी जीवनियो मे भी लेखक केवल उनके गुणों का ही वर्णन नही करता अपितु आरम्भ से अन्त तक उनके जीवन मे जो भी गुण-दोष होते हैं उनका पूरी तरह से उल्लेख करता है। वे व्यक्ति भी तो एक तरह से साधारण पुरुष ही होते है कोई काल्पनिक व्यक्ति नही। इस प्रकार ऐसी जीवनियो मे न तो

कल्पना का आधार लिया जाता है और न अप्रामाणिक बातें कही जातीं हैं। जीवनी का मानवीय चित्र उपस्थित किया जाता है जिसको लोग ग्रहण कर सके।

शैली के आधार पर

जीवन चरित जैसे कई प्रकार के हो सकते हैं अर्थात् कई प्रकार के व्यक्तियों के हो सकते हैं तो उनके लिखने के भी ढंग कई हो सकते हैं। जहाँ तक शैली का सम्बन्ध है जीवन चरित सस्मरणात्मक शैली मे भी लिखे जा सकते हैं। इस प्रकार की शैली मे लेखक किसी अन्य व्यक्ति का जीवन सस्मरणो मे ही लिख डालता है। ऐसी शैली मे रोचकता एव प्रभावोत्पादकता अधिक होती है।

कुछ इस प्रकार के जीवन चरित भी हो सकते हैं जो कि निबन्धात्मक शैली में लिखे जाते हो। ऐसे जीवन चरित स्फुट निबन्धो के रूप मे लिखे जाते हैं। कुछ जीवन चरित इस ढग से भी लिखे जाते हैं जिनका लिखने का ढंग उपन्यास की शैली के समान हो अर्थात् जिनको पढते हुए ऐसा अनुभव हो कि हम किसी वास्तविक जीवन चरित्र को पढ रहे हैं। ऐसी शैली मे लेखक उपन्यास की तरह से जीवनी मे वार्तालाप आदि का समावेश भी करता है। नायक के जीवन की समस्त घटनाओ को क्रमानुसार बड़े ही रोचक ढग से प्रस्तुत करता है। जीवनी मे किसी प्रकार की असम्भवता नही आने देता। काल्पनिक घटनाओ का प्रयोग वह किंचित् रूप से भी नहीं करता। ऐसी शैली मे लेखक नायक के जीवन की छोटी से छोटी घटना का वर्णन भी करता है परन्तु इस ढग से करता है कि उसमे तनिक भी विस्तार नहीं होता।

आत्मकथा

आधुनिक गद्य की नवीनतम विधाओ मे आत्मकथा भी गद्य की नवीनतम विधा है। आत्मचरित्र जीवनी साहित्य का उन्नतिशील अग है जैसे इस शब्द से ही स्पष्ट है। आत्मचरित्र वह है जिसमे चरित्रनायक ने स्वय अपनी जीवनी लिखी हो लेखक स्वय अपना जीवन चरित्र लिखता है। विभिन्न देशो मे जब से मनुष्य ने चेतना की अवस्था प्राप्त की उसी समय से अपनी मनोभावनाओ को, अपने को और अपने व्यक्तित्व को व्यक्त करने लगा, उसी समय से आत्मचरित्र जीवनी साहित्य का अग हो गया। परन्तु कुछ लोग आत्मचरित्र की विशालता और महानता का क्षेत्र असीम कहने मे सकोच नही करते। आत्मचरित मे लेखक जीवन की घटनाओ की महत्ता और विशेषता को, मनोभावो की क्रिया-प्रतिक्रिया को पहचानता है।[1] इमसे स्पष्ट है कि आत्मकथा मे लेखक अपने जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओ को एव अपनी मानसिक क्रिया-प्रतिक्रियाओ को स्वय लिखना है।

आत्मकथा जीवन की या उसके किसी एक भाग की वास्तविक घटनाओ को

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ०१४

जिस समय मे वह घटित हुई उन समस्त चेष्टाओ को पुनर्गठित करती है। इसका मुख्य सम्बन्ध आत्मविवेचन से होता है, बाह्य विश्व से नही यद्यपि व्यक्तित्व को अद्वितीय बनाने के लिए बाह्य विश्व को भी लिया जा सकता है और अनावश्यकतानुसार छोडा भी जा सकता है। जीवन को पुनर्गठित करना एक असम्भव कार्य है। एक ही दिन के आगे-पीछे का अनुभव असीम होता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आत्मकथा बीती हुई घटनाओ से बनती है। यह वैयक्तिक जीवन की कुछ स्थितियाँ बना देती है। उनमे सम्बन्ध स्थापित करती है और उनकी व्याख्या करती है। इसके साथ ही वह नि सदेह और स्पष्ट रूप से अपने और बाह्य विश्व के निश्चित दृढ सम्बन्ध को प्रदर्शित करती है।[१]

It involves the reconstruction of the movement of life, or part of a life, in the actual circumstances in which it was lived, its centre of interest is the self, not the outside world, though necessarily the outside world must appear so that, in give and take with it, the personality finds its peculiar shape But "reconstruction of a life" is an impossible task. A single day's experience is limitless in its radition backward and forward so that we have to hurry to qualify the above assertions by adding that autobiography is a shaping of the past It imposes a pattern on a life, constructs out of it a coherent story It establishes certain stages in an individual life, makes links between them, and defines implicitly or explicitly a certain consistency of relationship between the self and the outside world

इससे स्पष्ट है कि गद्य के बहुत से प्रकारो मे आत्मकथा ही केवल एक ऐसा ढग है जिसमे लेखक अपने विषय मे एव अपने व्यक्तिगत अनुभवो के विषय मे कहता है।[२]

Autobiography is only one form among many in which a writer speaks of himself and the incidents of his personal experiences.

इस प्रकार आत्मकथा मे लेखक अपने ही व्यक्तित्व का निरीक्षण करता है। इसमे लेखक अपने बीते हुए जीवन का सिंहावलोकन और एक व्यापक पृष्ठभूमि मे अपने जीवन का महत्व दिखलाता है। इसमे लेखक का उद्देश्य आत्मनिरीक्षण, आत्म-विश्लेषण एवं आत्मकथन ही है। अतः एक व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन का इतिहास है, इतिहास ही नही बल्कि इसमे वर्णित घटनाओ की क्रिया-प्रतिक्रियाओ का भी उल्लेख है। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा अपने ही ढग का पुनर्कथित इतिहास है और इसके साथ ही व्यक्ति के बाह्य विश्व के साथ सम्बन्धित आत्मनिरीक्षण

---

१. Design and Truth in Autobiography by Roy Pascal, P.6.

२ Design and Truth in Autobiography by Roy Pascal, P. 2.

का प्रतिरूप है ।[1]

Autobiography is on the contrary historical in its method and at the same time the representation of the self in and through its relations with the outer world

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा गद्य का वह रूप है जिसमे लेखक व्यक्तिगत जीवन का विवेचन-विश्लेषण नि सकोच रूप से प्रस्तुत करता है । इसके साथ ही वह वाह्य विश्व से सम्वन्धित मानसिक क्रियाओ-प्रतिक्रियाओ का विवेचन भी कलात्मक रूप से करता है ।

आत्मकथा का लेखक सामान्यतः सामान्य व्यक्ति नही होता । समाज में प्रतिष्ठा-प्राप्त व्यक्ति ही आत्मकथा लिखने मे प्रवृत्त हो सकता है । सामान्यत मानव अपने से उच्च एव महान व्यक्ति के प्रति ही कुतूहल अनुभव करता है । जाति मे, राष्ट्र मे अथवा सम्प्रदाय विशेष मे जो व्यक्ति अपने उदात्त चरित्र के कारण प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेता है, पार्श्ववर्ती जनसमुदाय इसके इतिवृत्त को जानने के लिए उत्सुक हो उठता है । ऐसी स्थिति मे वह सम्मानित व्यक्ति अपने अनुयायिओ के सतत अनुरोध से प्रेरित होकर अपने जीवन के सम्बन्ध मे उत्सुकता को शान्त करने के लिए 'आत्मकथा' लिखता है । जिस व्यक्ति का अपने धर्म मे, समाज मे, सम्प्रदाय मे, जाति मे, राष्ट्र मे कोई विशेष स्थान नही वह व्यक्ति अपने हृदय मे आत्मकथा लिखने की प्रेरणा ही नही अनुभव करता । इससे स्पष्ट है कि 'आत्मकथा' का लेखक प्रतिष्ठित व्यक्ति ही होता है ।[2]

इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा का लेखक सर्वमान्य एव प्रतिष्ठित होना चाहिए । ऐसे व्यक्तियो द्वारा लिखा हुआ जीवन ही जनता को प्रेरणादायक एव उत्साहवर्द्धक हो सकता है ।

तत्व

वर्ण्य विषय—आत्मकथा साहित्य का यह महत्वपूर्ण तत्व है । जैसा कि आत्मकथा शब्द से ही स्पष्ट है इसमे लेखक अपने सम्पूर्ण जीवन का वर्णन नही करता अपितु विश्लेषण भी करता है । इस प्रकार आत्मकथा का विषय आत्मविवेचन, आत्मविश्लेषण के साथ-साथ विश्व की वाह्य घटनाओ की क्रिया-प्रतिक्रियाओ का वर्णन है । उसी व्यक्ति द्वारा लिखी हुई आत्मकथा प्रभावित करती है अर्थात् पाठक उसमे प्रेरणा ग्रहण कर सकता है जिसका लेखक प्रतिष्ठित व्यक्ति हो । इस प्रकार लेखक का जनता मे प्रसिद्ध होना आवश्यक है ।

वर्ण्य-विषय को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए उसमे कुछ गुणो का होना आवश्यक है । सर्वप्रथम विषय मे सत्यता एव यथार्थता का होना आवश्यक है । सत्यता से

---

१. Design and Truth in Autobiography by Roy Pascal, P 9

२ सिद्धान्तालोचन, ले० हमचन्द सन्त बलदेव कृष्ण, पृ० २०६

अभिप्राय है लेखक अपने जीवन का विवेचन इस ढग से करे कि उसमे किसी भी प्रकार कृत्रिमता न आने पाए। वैसे तो आत्मकथा का विषय ही अनुभूत्यात्मक होता है काल्पनिक नही, इसलिए इसमे यथार्थता होती है। आत्मकथा मे सत्य से अभिप्राय विषयगत सत्य से नही कुछ सीमित विषय तक का सत्य है जिससे लेखक का जीवन बढता है एव जिसके विशेष गुण एव घटनाओ के परिपक्व होने की दृढता एव व्यावहारिक गुण एव आकृति स्पष्ट होती है।[1]

It will not be an objective truth but the truth in the con fines of a limited purpose—a purpose that grows out of the aufhor's life and imposes itself on him as his specific quality and thus determines his choice of events and the manner of his treatment and expression.

आत्मकथा लेखक को पूर्ण ईमानदारी और सचाई के साथ अपने जीवन का वर्णन करना चाहिए। उसको यह भी नही करना चाहिए कि वह केवल गुणो का ही वर्णन करे। ऐसा करने से विषय दोषपूर्ण हो जाता है। आत्मकथा लेखक की यही विशेषता है कि वह अपने विषय को जितना वास्तविक बना सकता है उतना अन्य लेखक नही। आत्मकथा लेखक जितना अपने बारे मे जान सकता है उतना लाख प्रयत्न करने पर भी कोई दूसरा नही जान सकता। इसमे कही तो स्वाभाविक आत्मश्लाघा की प्रवृत्ति बाधक होती है और किसी के साथ शीलसकोच आत्मप्रकाश मे रुकावट डालता है। यद्यपि सत्य के आदेश से दोनो ही प्रवृतियाँ निन्द्य है। तथापि अनावश्यक आत्म-विस्तार कुछ अधिक अवाछनीय है। शीलसंकोच के कारण पाठक को सत्य और उनके अनुकरण के लाभ से वचित रखना भी वाछनीय नही कहा जा सकता। साधारण जीवनी लेखक की अपेक्षा आत्मकथा लेखक को ऊब से बचाने और अनुपात का अधिक ध्यान रखना पडता है। उसे अपने गुणो के उद्घाटन मे आत्मश्लाघा या अपने मुह मियाँ मिट्ठू बनने की दूषित प्रवृत्ति से भी बचना चाहिए।[2] इससे स्पष्ट है कि विषय तभी उत्कृष्ट एव परिपक्व बन सकता है यदि लेखक पूर्ण सचाई एव ईमानदारी से अपने विषय मे वर्णन करता है।

अन्य महत्त्वपूर्ण गुण जोकि विषय वर्णन को रोचक बनाता है वह है सक्षिप्तता। आवश्यकता से अधिक विस्तार विषय को नीरस बना देता है। इससे स्पष्ट है कि आत्मकथा लेखक को इस बात का भी ध्यान रखना पडता है कि वह अनावश्यक घटनाओ का विस्तार न करे, केवल उन्ही घटनाओ का उल्लेख करे जिनसे उसके व्यक्तित्व के विश्लेषण मे सहायता मिले तथा पाठको के सम्मुख मानव जीवन के यथार्थ सत्य को

---

१ Design and Truth in Autobiography by Roy Pascal, P 83.

२. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २४६

उद्घाटित करने मे उनकी उपयोगिता हो।[1]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विषय वर्णन मे सत्यता, यथार्थता स्पष्टवादिता, रोचकता के साथ-साथ स्वाभाविकता आदि गुणो का होना आवश्यक है।

चरित्र-चित्रण

आत्मकथा मे लेखक का उद्देश्य अपने ही व्यक्तित्व का विश्लेषण करना होता है। आत्मचरित्र आत्मपरिचय का साधन है। लेखक आत्मचरित्र मे अपने मस्तिष्क के विकास का क्रम लिखता है। वह स्वय अपने मस्तिष्क का अध्ययन करता है, आत्म-निरीक्षण और आत्मविवेचन करता है।[2] इससे स्पष्ट है कि आत्मकथा मे लेखक अपने ही चरित्र का चित्रण करता है। चरित्र के सभी पक्षो का विवेचन ही नही अपितु विश्लेषण भी आत्मकथा मे होता है।

प्रत्येक व्यक्ति के चरित्र मे गुण भी होते हैं और दोष भी। इसलिए यदि किसी आत्मकथा के लेखक ने अपनी प्रशसा करवाने के लिए केवल गुणो का वर्णन अपनी आत्मकथा मे किया तो वह दोषपूर्ण माना जाएगा। उसको मानवीय चरित्र न कहकर एक काल्पनिक एव आदर्श चरित्र कहा जाएगा। यह ठीक है कि आत्मचरित्र मे अहं-कार और आत्मश्लाघा के दोष से बच सकना कठिन है लेकिन फिर भी आत्मचरित्र 'स्व' के उद्गारो, अहकार, छिछोरी प्रवृत्तियो, व्यक्तिगत ख्याति और क्षमायाचना या उसके सम्बन्ध मे सफाई देने की भावना का उल्लेख मात्र नही है, यह इनसे भिन्न ऊँचा साहित्य है।[3]

चरित्र चित्रण मे जहाँ लेखक अपने चरित्र की सभी न्यूनताओ का वर्णन करता है वहाँ वह अपनी सद्भावनाओ से पाठक को अच्छी प्रकार से परिचित करवाता है। अपने समस्त जीवन के विकास का वह बडी ईमानदारी से वर्णन करता है। ऐसे व्यक्तियो के चरित्र जिनमे उनके जीवन के उत्थान-पतन का वर्णन स्पष्ट रूप से होता है पाठक के लिए अधिक प्रेरणादायक हो सकते हैं।

जहाँ आत्मकथा मे हमे लेखक के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है वहाँ उसमे वर्णित कुछ अन्य व्यक्तियो के विषय मे भी पाठक को अनुमान हो जाता है। आत्मकथा मे लेखक अपने मे सम्बन्धित सभी व्यक्तियो का वर्णन करता है। इसके दो लाभ होते हैं—एक तो पाठक को लेखक का व्यक्तित्व और भी स्पष्ट हो जाता है दूसरे उस व्यक्ति के विषय मे भी पता चल जाता है। लेकिन यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है कि उन सभी व्यक्तियो का वर्णन लेखक अपने व्यक्तित्व को उभारने के लिए करता है।

---

१ सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द सत, पृ० २९९

२ हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, पृ० १६, ले० चन्द्रावती सिंह

३ हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० १६

देशकाल

वातावरण उन समस्त परिस्थितियो का नाम है जिनसे पात्रो को सघर्ष करना पडता है। देशकाल वातावरण का बाह्य स्वरूप है। वातावरण आन्तरिक भी हो सकता है। आदमी जिस प्रकार के समाज मे रहता है वैसा तो कार्य करता ही है परन्तु उसके भाव-भावना और विचार भी उसकी अनुकूलता मे सहायक होते है।[1]

देश और काल परिस्थितियो का प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति पर पडता है, इसी प्रकार वर्ण्य चरित्र पर भी पडना आवश्यक है। जिस भी प्रकार का चरित्र होगा उस पर वैसा ही प्रभाव पडेगा। यहाँ कहने का तात्पर्य यह है कि यदि लेखक साहित्यक है तो उस पर तत्कालीन परिस्थितियो का विशेषतया साहित्यिक परिस्थितियो का अवश्य प्रभाव पड़ेगा। तब हमे उसकी आत्मकथा मे अवश्य ही तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो का परिचय मिलेगा। इन परिस्थितियो के वर्णन के बिना उनका व्यक्तित्व उभर नही सकता। इस प्रकार गौण रूप से हमे तत्कालीन परिस्थितियो का ज्ञान हो जाता है।

यदि किसी राजनैतिक व्यक्ति की आत्मकथा दृष्टिपात करे तो उनमे विशेषतया राजनैतिक तत्कालीन परिस्थितियो का अवश्य वर्णन होगा। सामाजिक व्यक्ति की आत्मकथा मे तत्कालीन सामाजिक एव धार्मिक परिस्थितियो का अवश्यमेव वर्णन होगा। इसके अतिरिक्त कई ऐसे व्यक्ति होते है जिन्होने अपने जीवन मे बहुत यात्रा की होती है तो उनकी आत्मकथा मे हमे किसी विशेष स्थान एव देश का वर्णन अवश्य प्राप्त होगा।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा साहित्य मे देशकाल का चित्रण व्यंग्य रूप से होता है। इसमे तो लेखक ही मुख्य होता है। वह अगी होता है और देशकाल अगभूत होकर रहता है।

उद्देश्य

प्रत्येक लेखक अपनी कृति की रचना किसी न किसी उद्देश्य से करता है निरुद्देश्य रचना कोई भी लेखक नही करता। यदि वह अपने उद्देश्य को स्पष्ट रूप से पाठक के सम्मुख नही रख सकता तो वह परोक्ष रूप मे अवश्य ही सकेत कर देता है। आत्मकथा लेखक के उद्देश्य का जहाँ प्रश्न है उसका उद्देश्य अन्य कृतियो से भिन्न होता है। आत्मकथा लेखक का उद्देश्य आत्मविवेचन-आत्मविश्लेषण तो होता ही है परन्तु इसके साथ-साथ वह ख्याति एव आत्मप्रचार भी चाहता है। इसी उद्देश्य से वह आत्मकथा को लिखता है। इस विषय मे चन्द्रावती सिंह ने भी अपने मत का समर्थन किया है। आत्मचरित्र लिखने मे अपनी ख्याति, आत्मप्रशसा और आत्मप्रचार की भावना भी निहित है। यद्यपि अत्यन्त प्राचीन काल से मनुष्य ने अपने को व्यक्त

---

१. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १६१

करने के अनेक मार्ग अपनाये हैं और इस प्रकार अपने जीवन के विशेष अगो के विज्ञापन के सर्वदा अनेक प्रयत्न किए हैं किन्तु आधुनिक युग मे आत्मचरित्र लिखने की प्रथा सम्य ससार का आविष्कार है। इसमे मदेह नही कि आत्मचरित्र लिखने की इच्छा प्राकृतिक है। अपने को व्यक्त करने और अपने प्रति दूसरो की सहृदय सद्भावना प्राप्त करने का आनन्द अत्यन्त स्वाभाविक है। यही आत्मचरित्र लिखने का प्राकृतिक मूल-कारण है।[1]

इसके अतिरिक्त आत्मकथा साहित्य का उद्देश्य होता है आत्मनिर्माण, आत्म-परीक्षण या आत्मसमर्थन, अतीत की स्मृतियो को पुनर्जीवित करने का मोह या जटिल विश्व की उलझनो मे अपने आपको अन्वेषित करने का सात्विक प्रयास। इस प्रकार के आत्मकथात्मक साहित्य के पाठको मे सर्वप्रमुख स्वत लेखक होता है जो आत्माकन द्वारा आत्मपरिष्कार एव आत्मोन्नति चाहता है।

आत्म सम्बन्धी साहित्य लिखने का एक दूसरा उद्देश्य यह भी है कि लेखक के अनुभवो का लाभ अन्य लोग उठा सकें। इन दोनो स्वतःसिद्ध उपयोगो के अतिरिक्त आत्मकथा लेखक के मूल मे कलात्मक अभिव्यक्ति की प्रेरणा भी हो सकती है। और अपनी मर्यादा अथवा ख्याति से लाभ उठाने की शुद्ध व्यावसायिक इच्छा भी।[2]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा लेखक का उद्देश्य आत्मविश्लेषण एव आत्मविवेचन के साथ-साथ बाह्य विश्व के साथ अपने सम्बन्ध को वर्णन करना है।

शैली

भावाभिव्यक्ति की कला को शैली कहते हैं। इसमे अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के ढग होते हैं जिनसे विषयवस्तु की अभिव्यक्ति सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनती है। इसलिए लेखक का शैली पर पूर्ण अधिकार होना आवश्यक है। आत्मकथा लेखक को भी शैली सम्बन्धी सभी विशेपताओ से सतर्क होना पडता है। आत्मकथा शैली की कुछ अपनी ही विशेपताएँ होती हैं।

सर्वप्रथम इस शैली में प्रभावोत्पादकता का होना आवश्यक है। प्रभावोत्पादकता तभी हो सकती है यदि लेखक अपने जीवन का वर्णन नि.सकोच रूप से करता है। अमानवीय चरित्रो का कभी भी प्रभाव पाठको पर नही पड सकता। वे ही चरित्र प्रभावशाली हो सकते है जिनमे मानवीयता है अर्थात् जिनमे जीवन के उत्थान-पतन एव गुण-दोषो का विवेचन हो। लेखक को यह विवेचन इस ढग से करना चाहिए कि वह पाठक को रुचिकर प्रतीत हो, तभी वह शैली प्रभावोत्पादक बन सकती है। इस प्रकार नि.सकोच आत्मविश्लेषण शैली को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए आवश्यक है।

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह पृ० १५
२. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ६६

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता सुसंगठितता एवं लाघवता है। लेखक को अपने समस्त जीवन का वर्णन इस ढग से करना चाहिए जिससे अनावश्यक विस्तार भी न हो और साथ मे गठित भी हो। क्रमानुसार वर्णन अधिक रोचक होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रभावोत्पादकता, लाघवता, नि सकोच आत्मविश्लेषण, सुसगठितता आदि गुणो से युक्त ही आत्मकथात्मक शैली श्रेष्ठ एव परिपक्व हो सकती है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक लेखक कई ढग से अपनी आत्मकथा लिख सकता है। अपनी इच्छानुसार वह निबन्धात्मक शैली को भी अपना सकता है और सस्मरणात्मक शैली को भी। जो भी उसे उपयुक्त लगे उसी को वह ग्रहण कर सकता है।

जहाँ प्रश्न भाषा का है वह तो है ही भावाभिव्यक्ति का साधन। भाषा का भावानुकूल एवं विषयानुकूल होना आवश्यक है। माधुर्य और प्रसाद गुण का भाषा मे होना आवश्यक है। शुद्ध एव परिपक्व भाषा द्वारा ही लेखक अपने विचारो का प्रभाव पाठको पर डाल सकता है। भाषा को श्रेष्ठ बनाने के लिए शब्दचयन का भी विषय एव भावानुकूल होना आवश्यक है।

वर्गीकरण

आत्मकथा साहित्य का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जा सकता है। सर्वप्रथम लेखको के आधार पर—इसमे कवि, कथालेखको, आलोचको एव राजनैतिक एव धार्मिक पुरुषो की आत्मकथाएँ आती हैं। द्वितीय शैली के आधार पर—इसमे निबन्धात्मक शैली मे लिखी हुई आत्मकथा, सस्मरणात्मक शैली मे लिखी हुई आत्मकथाएँ एव डायरी शैली मे लिखी हुई सभी आत्मकथाएँ आती हैं। इस प्रकार आत्मकथा साहित्य के विभाजन के दो ही आधार हो सकते है।

रेखाचित्र

हिन्दी साहित्य मे गद्य की अनेक नूतन विधाओ का विकास हुआ है जिनमे रेखाचित्र भी एक नया कला रूप है। रेखाचित्र कहानी से मिलता-जुलता साहित्य रूप है। यह नाम अंग्रेजी के स्केच शब्द की नाप-तौल पर गढा गया है। स्केच चित्रकला का अंग है। इसमे चित्रकार कुछ इनी-गिनी रेखाओ द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति या दृश्य को अकित कर देता है—स्केच रेखाओ की बहुलता और रगो की विविधता मे अकित कोई चित्र नही है, न वह एक फोटो ही जिसमे नन्ही से नन्ही और साधारण से साधारण वस्तु भी खिच जाती है। साहित्य मे जिसे रेखाचित्र कहते हैं उसमे भी कम से कम शब्दो मे कलात्मक ढग से किसी वस्तु व्यक्ति या दृश्य का अकन किया जाता है। इसमे साधन शब्द हैं रेखाएँ नही। इसीलिये इसे शब्द-चित्र भी कहते हैं। रेखाचित्र किसी वस्तु, व्यक्ति, घटना या भाव का कम से कम शब्दो में मर्मस्पर्शी,

भावपूर्ण एव सजीव अकन है।[1] इससे स्पष्ट है कि रेखाचित्र में किसी भी व्यक्ति का, घटना का एव भाव का चित्रण कम से कम शब्दो मे कलात्मक ढग से किया जाता है जिससे वह सजीव, भावपूर्ण एव मर्मस्पर्शी हो। रेखाचित्र के अकन मे संक्षिप्तता एवं लाघवता का होना आवश्यक है।

रेखाचित्र चित्रकला और साहित्य के सुन्दर सुहाग से उद्भूत एक अभिनव कला रूप है। रेखाचित्रकार साहित्यकार के साथ ही साथ चित्रकार भी होता है। जिस प्रकार चित्रकार अपनी तूलिका के कलामय स्पर्श से चित्रपटल पर अकित विशृ-खला रेखाओ मे से कुछ अधिक उभरी हुई रेखाओ को सँवारकर एक सजीव रूप प्रदान कर देता है, उसी प्रकार रेखाचित्रकार मन पटल पर विशृखला रूप मे बिखरी हुई शतशत स्मृति रेखाओ में से उभरी हुई रमणीय रेखाओ को अपनी कला की तूलिका से स्वानुभूति के रग मे रजित कर जीते-जागते शब्द-चित्र मे परिणत कर देता है। यही शब्द-चित्र रेखाचित्र कहलाता है।[2] इस परिभाषा से स्पष्ट है कि रेखाचित्रकार चित्रकार की भाँति असख्य घटनाओ मे से कुछ प्रभावशाली घटनाओ का वर्णन ही ऐसे ढग से करता है जिससे वे सजीव एव प्रभावोत्पादक हो और उनके वर्णन से भावो एव विचारो का स्पष्ट चित्रण हो।

साहित्य मे रेखाचित्रकार को अत्यन्त कठोर साधना का पथ अपनाने की आवश्यकता है। वह ही एक मात्र ऐसा कलाकार है जो अपने चारो ओर फैले हुए विस्तृत समाज के किसी भी अग तथा पक्ष का चित्रण अपनी लेखनी तूलिका से ऐसा सजीव करता है कि पाठक यह अनुभव करने लगता है कि मैं वर्ण्यवस्तु के अत्यन्त सान्निध्य में हूँ।[3] इससे स्पष्ट है कि रेखाचित्रकार का विषय कुछ भी हो सकता है। वह किसी भी व्यक्ति, घटना एव स्थान का चित्रण कर सकता है, पर वह चित्रण ऐसा होता है जिससे पाठक प्रभावित होता है।

वह प्रकृति की जड अथवा चेतन किसी भी वस्तु को अपने शब्द शिल्प से सजीव कर देता है। जिस आदमी को जीवन के विविध अनुभव प्राप्त नही हुए, जिसने आँखें खोलकर दुनिया को नही देखा, जिसे कभी जीवन सग्राम मे जूझने का अवसर नही मिला, जो ससार के भले बुरे आदमियो के ससर्ग मे नही आया और जिसने एकात मे बैठकर जिन्दगी के भिन्न-भिन्न प्रश्नो पर विचार नही किया, भला वह क्या सजीव चित्रण कर सकता है।[4] बनारसीदास चतुर्वेदी के अनुसार रेखाचित्रकार वही हो सकता है जिसे जीवन का अधिक से अधिक अनुभव हो, इसके साथ ही जिस व्यक्ति ने जीवन के अनेक उतराव-चढाव देखे हो, विद्वान एव अनुभवी व्यक्ति ही

१. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ७३१
२ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात, ले० गोबिन्द त्रिगुणायत, पृ० ४६०
३ साहित्य विवेचन, ले० क्षेमेन्द्र सुमन
४. रेखाचित्र, ले० बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० ७

रेखाचित्रकार बन सकता है क्योंकि ऐसा योग्य व्यक्ति ही विचारो एव भावो का स्पष्ट चित्रण कर सकता है।

जिस प्रकार रेखाचित्र की दृष्टि जितनी पैनी होगी तथा उसकी अनुभूति जितनी चित्रित सत्य के निकट होगी उतना ही उसके द्वारा अकित किया गया रेखा-चित्र सजीव और प्रभावोत्पादक होगा।[१]

अत उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्र न कहानी है और न गद्यगीत, न निबन्ध है और न सस्मरण, रेखाओ मे जीवन के विविध रूपो का आकार देने की प्रणाली की विशेषता को अपनाकर ही शब्द द्वारा जीवन के विविध रूपो को साकार करने वाले शब्द चित्रो को रेखाचित्र की सज्ञा प्रदान की गई है। इस प्रकार 'रेखाचित्र साहित्य का वह गद्यात्मक रूप है जिसमे एकात्मक विषय विशेष का शब्द-रेखाओ से सवेदनशील चित्र प्रस्तुत किया जाता है।'

तत्व

वर्ण्य विषय—यह रेखाचित्र साहित्य का प्रमुख तत्व है। रेखाचित्र वस्तु, व्यक्ति अथवा घटना का शब्दो द्वारा विनिर्मित वह मर्मस्पर्शी और भावमय रूप-विधान है जिसमे कलाकार का सवेदनशील हृदय और उसकी सूक्ष्म पर्यवेक्षण दृष्टि अपना निजीपन उँडेलकर प्राण-प्रतिष्ठा कर देती है।[२] इससे स्पष्ट होता है कि रेखाचित्र-कार का विषय कोई भी व्यक्ति घटना अथवा वस्तु जिसका कि उससे जीवनभर अधिक प्रभाव हो जाता है। जहाँ तक व्यक्ति का प्रश्न है इसमे यह कोई आवश्यक नही कि वह किसी महान् पुरुष की रेखा ही चित्रित करता है वह तो साधारण से साधारण व्यक्ति के विषय मे भी लिख सकता है। यह तभी हो सकता है यदि उस व्यक्ति मे कुछ ऐसे गुण हो जिनसे लेखक विशेष रूप से प्रभावित हुआ हो। ऐसे ही घटना के विषय मे है। वह किसी भी ऐसी घटना का चित्रण करता है जिससे कि वह अधिक प्रभावित हो। वह किसी विशेष स्थल का चित्रण भी कर सकता है। इस प्रकार रेखाचित्रकार का विषय जड भी हो सकता है और चेतन भी।

विषय चुनाव के पश्चात् वर्ण्य विषय मे कुछ ऐसे गुणो का होना आवश्यक है जो कि रेखाचित्र को सफल बनाते हैं। वर्ण्य विषय मे सर्वप्रथम सत्यता एव यथार्थता का होना आवश्यक है। प्रत्येक रेखाचित्र का विषय अनुभूत्यात्मक होता है काल्पनिक नही। इसलिए इसमे वास्तविकता होती है। रेखाचित्र मे जितनी वास्तविकता होगी उतना ही वह सफल माना जायेगा। पाठकगण पर जितना प्रभाव वास्तविक घटनाओ का पडता है उतना काल्पनिक घटनाओ का नही। रेखाचित्र जितना सत्य के निकट हो उतना अच्छा है। इसमे थोडी अतिरजना विनोद की सामग्री अवश्य उपस्थित कर

---

१. सिद्धान्तालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त पृ० १७६
२. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, ले० गोविन्द त्रिगुणायत, पृ० ४९०

देती है किन्तु विनोद चुटीला न होना चाहिए। रेखाचित्र मे भी 'सत्यं शिव सुन्दरम' का आदर्श पालन करना पडता है।[1]

अन्य महत्वपूर्ण गुण जिसका विषय मे होना आवश्यक है वह है रोचकता। लेखक को अपने जीवन की अनुभूतियो का इस ढग से वर्णन करना चाहिए जिससे वह पाठक को रुचिकर प्रतीत हो। न तो स्केच इतना काल्पनिक ही होना चाहिए कि हमारी कल्पना तक ही सीमित रहे, और न इतना वास्तविक ही कि केवल हमारी दृष्टि तक ही सीमित रहे। 'स्कैच' का साहित्यिक मूल्य और सुन्दरता केवल सामयिक अथवा स्थानीय ही न हो वरन् प्रत्येक युग मे और प्रत्येक जगह उसकी रोचकता बनी रहे और वह नीरस न हो जाए।[2] इस प्रकार वर्ण्य विषय मे रेखाचित्रकार को रोचकता लाने के लिए उचित कल्पना का भी प्रयोग करना पडता है।

अन्य महत्वपूर्ण गुण जिसका विषय वर्णन मे होना आवश्यक है वह है सक्षिप्तता। रेखाचित्रकार की सीमाएँ निश्चित हैं। उसे कम से कम शब्दो मे सजीव से सजीव रूप विधान और छोटे से छोटे वाक्य से अधिक तीव्र और मर्मस्पर्शी भाव व्यजना करनी पडती है।[3] रेखाचित्र की विशेषता विस्तार मे नही तीव्रता मे होती है।[4] इससे स्पष्ट है कि वर्ण्य विषय मे सक्षिप्तता का होना आवश्यक है। आवश्यक विस्तार विषय को नीरस बना देता है।

इस प्रकार वही विषय उत्कृष्ट कोटि का माना जाएगा जिसमे वास्तविकता, स्पष्टता, रोचकता एव सक्षिप्तता आदि गुणो का समावेश हो।

चरित्रोद्घाटन

रेखाचित्र साहित्य का यह अन्य महत्वपूर्ण तत्व है। रेखाचित्रकार का उद्देश्य किसी भी व्यक्ति के चरित्र का विश्लेषण करना नही है वरन् चरित्रोद्घाटन करना है। रेखाचित्रकार का कार्य तो प्रभावित व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धित प्रमुख घटनाओं का वर्णन करना ही है उसी से पाठक को उसके व्यक्तित्व का अनुमान हो जाता है। पाठक को प्रभावित करने के लिए वह नायक के व्यक्तित्व से सम्बन्धित घटनाओ का ऐसा चित्रण करता है कि वह उसके चरित्र को स्वय स्पष्ट कर देती हैं। उसका कारण यह है कि रेखाचित्र मे प्रधानता सकेतो की होती है इसमे खुलकर बात बहुत कम की जाती है। इस प्रकार थोडी सी रेखाओ द्वारा एक सजीव चित्र बना देना किसी कुशल कलाकार का ही काम हो सकता है·· थोडे से शब्दो मे किसी घटनाओ को चित्रित कर देना अथवा किसी व्यक्ति का सजीव चित्र उपस्थित कर देना अत्यन्त

---

१ काव्य के रूप, ले० गुलाबराय पृ० २४८

२. स्केच 'एक अध्ययन', घनश्यामदास सेठी, अजन्ता, जनवरी, १९५२

३. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, ले० गोविन्द त्रिगुणायत

४. हिन्दी साहित्य कोष

कठिन कार्य है। इसके लिए लेखक को कठोर साधनो की जरूरत है। जहाँ रंग के थोडे गहरे या किंचित हलके होने से ही तस्वीर बिगड सकती है, वहाँ तूलिका को कितनी सफाई कितने चातुर्य के साथ चलाना चाहिए, इसका अन्दाज किसी विशेषज्ञ चित्रकार को ही हो सकता है। इसके लिए सरस्वती मदिर की आराधना तो अनिवार्य है ही पर साथ ही साथ अपने व्यक्तित्व को सजीव तथा उन्मुक्त बनाये रखना भी अत्यन्त आवश्यक है।[१] इस प्रकार उत्कृष्ट चरित्रोद्घाटन के लिए लेखक के व्यक्तित्व का भी उत्कृष्ट होना आवश्यक है। अनुभवी लेखक ही चरित्र सम्बन्धी उत्कृष्ट रेखाएँ प्रस्तुत कर सकता है।

इसके अतिरिक्त स्केचो मे साहित्यकार व्यक्ति विशेष के आचरण एव आकृति मात्र की ही अभिव्यक्ति नही करता वरन् उसके व्यक्तित्व के कुछ विशेष तत्वो को उभारता भी है। साधारण शब्दो मे चरित्र-चित्रण एव चरित्र विश्लेषण का अधिक दखल नही है। उच्च स्तर का स्केच वही होता है जिसमे व्यक्ति विशेष की रचना होती है। चरित्र-चित्रण से दूर हटकर केवल व्यक्तित्व का विश्लेषण करना निश्चय ही बडा कठिन कार्य है। ' वहाँ कलाकार छोटी-छोटी घटनाओ से सहायता लेता है।' Anecdots से शब्द चित्र लेखक व्यक्ति विशेष का व्यक्तित्व खडा करता है इनसे कभी वह उसके व्यक्तित्व की नोक पलक सँवारता है और कभी तेवर की झलक दिखलाता है और कभी कृश भावनाओ के खेल का उल्लेख करके बाद के चेष्टित व्यवहार का विश्लेषण कर देता है। माडल की सूरत, उसके चेहरे का उतार चढाव, तेवरो का अन्दाज, स्वभाव की मृदुता कोमलता कठोरता अथवा कटुता आदि और फिर इन Anecdots मे सम्बन्ध क्रम का पूरा-पूरा ध्यान रखना पडता है। इनके परस्पर गठन सम्बन्ध और अनुरूपता से कुल की रचना होती है।[२]

इससे स्पष्ट है कि रेखाचित्रकार किसी भी व्यक्ति के चरित्र का चित्रण नही अपितु उद्घाटन करता है। चरित्रोद्घाटन के लिए उसका अपना व्यक्तित्व भी प्रभावशाली होना आवश्यक है।

देश-काल वातावरण

रेखाचित्र का सम्बन्ध अधिकतर देश से होता है काल से नही। क्योकि वर्ण्य विषय किसी स्थान विशेष मे विद्यमान रहता है उसके आस-पास की कुछ परिस्थितियाँ होती हैं। ये पार्श्ववर्ती भाग गतिशील नही होते है और वर्ण्य विषय के साथ नित्य सपृक्त रहते हैं। उनके बिना पात्र या व तु का अस्तित्व गोचर नही हो सकता। रेखाचित्रकार उन स्थायी सम्बन्ध रखने वाले अगो का वर्णन करता है।[3] इस प्रकार

---

१. रेखाचित्र, ले० बनारसी दास चतुर्वेदी, पृ० १

२ रेखाचित्र एक अध्ययन, ले० घनश्यामदास सेठी, अजन्वा, १९५५

३ सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त, पृ० १७१

देश व किसी विशेष स्थल का चित्रण करना रेखाचित्रकार के लिए आवश्यक है।

प्रत्येक घटना के घटित होने का कोई न कोई विशेष स्थल होता है। जब लेखक उस घटना का वर्णन करता है तो उसके लिए उस स्थान विशेष का वर्णन करना भी आवश्यक हो जाता है जहाँ वह घटित हुई हो। इसलिए देश का चित्रण रेखाचित्र मे होता है। कई यात्रा सम्बन्धी रेखाचित्रो मे इसका प्रमुख रूप से वर्णन होता है।

जहाँ तक वातावरण का प्रश्न है लेखक साकेतिक रूप से पाठक को तत्कालीन परिस्थितियो का ज्ञान करवा देता है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्र साहित्य मे प्रमुखता देश-चित्रण की ही होती है वातावरण का वर्णन तो गौण रूप से होता है।

उद्देश्य

यह रेखाचित्र साहित्य का प्रमुख तत्व है। इसमे लेखक का जीवन दर्शन अथवा उसकी जीवन दृष्टि, जीवन की व्याख्या या जीवन की आलोचना होती है। कोई भी लेखक निरुद्देश्य रचना नही करता बिना उद्देश्य के साहित्यिक कृति प्रयोजनहीन एव व्यर्थ होती है। रेखाचित्रकार का प्रमुख उद्देश्य होता है चरित्र विशेष के बाह्य और आभ्यान्तर दोनो ही के मार्मिक एव सवेदनशील तत्वो को उभारकर पाठको के सम्मुख प्रस्तुत कर देना।[1] इससे स्पष्ट है कि रेखाचित्रकार का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति के बाह्य और आन्तरिक दोनो स्वरूपो का चित्रण करना है। बाह्यरूप का चित्रण तो किसी भी साहित्यकार को करना कठिन है परन्तु आन्तरिक मस्तिष्क का विश्लेषण रेखाचित्रकार स्पष्ट रूप से न करके अपनी रेखाओ से साकेतिक रूप से करता है। यहाँ लेखक काउद्देश्य नायक के चरित्र का उद्घाटन करना है विश्लेषण नही, विश्लेषण तो स्वय हो जाता है। यहाँ पर लेखक उस व्यक्ति के चित्रण मे ही अपनी मानसिक प्रतिक्रियायो, मान्यताओ एव आदर्शों को पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करता है इस प्रकार वह व्यक्ति के माध्यम से ही अपने आदर्शों की अभिव्यक्ति करता है। मानवेतर रेखा-चित्र भी किसी न किसी सत्प्रेरणा को लेकर लिखे जाते है।

अत स्पष्ट है कि रेखाचित्रो मे लेखक का दृष्टिकोण, उसका जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समाविष्ट हो जाता है।

भाषा शैली

शैली अनुभूत विपयवस्तु को सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषय वस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते है। रेखाचित्र शैली की कुछ अपनी ही विशेपताएँ हैं जिनका होना इसमे आवश्यक है।

सर्वप्रथम रेखाचित्र शैली मे चित्रात्मकता का होना आवश्यक है। स्केच

---

१. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात, ले० गोविन्द त्रिगुणायत, पृ० ४६२

चित्रकला का अग है। जिस प्रकार चित्रकार कुछ इनी-गिनी रेखाओ द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति के दृश्य को अकित कर देता है इसी प्रकार रेखाचित्रकार भी शब्दो से चित्र को बनाता है। इस तरह चित्रात्मकता का इस शैली मे होना आवश्यक है। चित्रात्मकता का गुण तो इस शैली मे ऐसा है कि वह अर्थात् लेखक नायक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का चित्रण शब्दो द्वारा ऐसे ढग से करता है कि उसका स्पष्ट अनुमान पाठक को हो जाता है।

शैली वही उत्कृष्ट मानी जाती है जिसका प्रभाव पाठको पर स्थायी रूप से रहे। इसलिए शैली मे प्रभावोत्पादकता का होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रभावपूर्ण शैली तभी हो सकती है यदि लेखक नायक का वर्णन रोचकपूर्ण ढग से करे। इस प्रकार शैली मे प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करने के लिए रोचकता का होना भी आवश्यक है।

सक्षिप्तता का गुण भी इस शैली मे आवश्यक है। लेखक को सीमित परिधि मे शब्दो से रेखाओ का काम लेकर कोण को सम्पूर्ण बनाना होता है जो विशेषलाघव सक्षिप्तता स्फूर्ति का काम है। इस प्रकार लाघवता का होना इस शैली मे अन्यन्त आवश्यक है। इसके साथ ही शैली मे आत्मीयता का होना भी आवश्यक है। इससे वर्ण्य विषय पर लेखक के व्यक्तित्व की छाप पडती है। इस विशेषता से शैली अधिक प्रभावपूर्ण बन जाती है और इसे गद्य की अन्य विधाओ से पृथक् करती है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्र शैली मे चित्रात्मकता, प्रभावोत्पादकता, रोचकता, लाघवता, एवं आत्मीयता आदि गुणो का होना आवश्यक है। इन्ही से युक्त शैली परिपक्व शैली बनती है।

भाषा का जहाँ तक प्रश्न है, भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है। भावानुकूल एव विषयानुकूल भाषा का प्रयोग कृति को अधिक प्रभावपूर्ण बना देता है। रेखाचित्र मे शब्द-विन्यास तथा वाक्य-विन्यास की विशिष्टता होती है। एक शब्द का एक वाक्य तथा अपने मे चित्र हो सकता है। रेखाचित्र में यथार्थ के लिए ध्वन्यात्मक शब्दो से ध्वनि चित्र रंगो का उल्लेख कर वर्ण चित्र अकित किए जाते हैं। मिलते-जुलते शब्दो मे से प्रभाववर्द्धन किया जाता है। चुभते चित्रोपम विशेषण, साम्यमूलक अलकार, लक्षणात्व्यजना आदि कवित्वपूर्ण प्रसाधनो से चित्र को सजीव किया जाता है। इस प्रकार भावानुकूल एव विषयानुकूल भाषा का प्रयोग ही इस शैली मे अत्यन्त आवश्यक है।

वर्गीकरण

वर्ण्य विषय के अनुसार रेखाचित्र चार प्रकार के होते हैं—

१. साहित्यिक लेखको के रेखाचित्र।

२. मानवीय गुणो से सम्पन्न साधारण पुरुषो के रेखाचित्र।

३. राजनैतिक पुरुषो के रेखाचित्र।

४. मानवेतर जड या चेतन सम्बन्धी।

इसमे पशु-पक्षी एव खण्डहरों-इमारतो के रेखाचित्र आते हैं। शैली के अनुसार रेखाचित्र तीन प्रकार से लिखे जा सकते हैं—कथात्मक शैली, सस्मरणात्मक शैली एव प्रतीकात्मक शैली। इस प्रकार शैली की दृष्टि से रेखाचित्र तीन प्रकार के हो सकते हैं।

सस्मरण

हिन्दी साहित्य मे गद्य की अन्य नवीनतम विधाओ मे सस्मरण साहित्य का भी विशेष स्थान है। सस्मरण कुछ असम्बद्ध घटनाओ का नोट हो सकता है जो लेखक के जीवन से सम्बन्ध रखता है और जिसे या तो चरित्रनायक स्वय लिखे अथवा उसे अन्य व्यक्ति लिखे। जीवन की बहुत-सी बातो मे ससार की हलचलो मे दफ्तर की किसी कार्यवाही मे या किसी सभा मे जो समय-समय पर बातें घटी हैं उनका अलग-अलग वर्णन सस्मरण कहा जा सकता है। इसमे आत्मचरित्र की एकता नही हो सकती है और न व्यक्तित्व का कोई चित्र उपस्थित हो सकता है। उसमे मनुष्य की कुछ मुख्य-मुख्य प्रसिद्ध बातें जानी जा सकती हैं। लेकिन मनुष्य की आत्मा, उसका मस्तिष्क नही पहचाना जा सकता है। किसी का सस्मरण उसका जीवन-चरित्र लिखने वाले लेखक के लिए सामग्री का काम दे सकता है, और निस्सन्देह जीवनी लेखक को इससे बडी सहायता मिल सकती है। सस्मरण जीवन सम्बन्धी घटनाओ का केवल ऐतिहासिक उल्लेख कहा जा सकता है।[1] इससे स्पष्ट है कि सस्मरण साहित्य जीवनी साहित्य का एक अंग है इसमे मनुष्य की कुछ प्रमुख घटनाओ का जिनसे लेखक प्रभावित होता है उल्लेख होता है, व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन का वर्णन नहीं होता।

स्मरण और 'संस्मरण' शब्द विषय और प्रकृति की अव्यवस्थता को सूचित करते हैं, लेखक लिखते समय जो भी याद कर सकता है, उन्ही का इनमे वर्णन होता है।[2]

The very words reminiscence and memoirs, imply a certain informality of nature and purpose, they are what the writer can remember at the time of writing.

इस परिभाषा मे सस्मरण की अव्यवस्थता पर अधिक लिखा है। इसमे सस्मरण का अर्थ लेखक की स्मरण शक्ति को लक्षित करता है। याद की हुई घटनाओ का जिसमे वर्णन हो उन्ही को सस्मरण साहित्य मे लिया है।

संस्मरण मे सम्पूर्ण जीवन के कुछ विशिष्ट अगो का प्रकाशन किया जाता है। संस्मरण मे केवल उन्ही घटनाओ का उल्लेख रहता है जिनसे लेखक के जीवन मे घटित होने वाले परिवर्तनो का सकेत मिलता है और जो अन्य जनो के कौतूहल को

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० १९-२०

२. One Mighty Torrent by Edgar Johnson, P. 125.

शान्त करने मे सहायक हो सकती हैं।—संस्मरण सामान्यत प्रसिद्ध व्यक्ति ही लिख सकता है। अपने कार्य क्षेत्र मे सामान्य प्रसिद्धि प्राप्त करके लेखक अपने जीवन के कुछ खड जिनमे अन्य जनो की सहज रुचि हो सकती है सस्मरण के रूप मे प्रस्तुत करता है। इस स्थिति मे वह लेखक आकर्षण का कारण नही होता अपितु उसके सस्मरण मे वर्णित वृत्त मे आकर्षण रहता है।[1]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सस्मरण प्रसिद्ध व्यक्ति ही लिख सकता है। इसके साथ ही वह अपने जीवन से सम्बन्धित सस्मरण भी लिख सकता है और अन्य व्यक्तियो के सम्बन्ध मे भी। कुछ भी हो चाहे वह अपने जीवन के विषय मे लिखे चाहे अन्य व्यक्ति के विषय मे ये सभी सस्मरण उसके व्यक्तित्व से अवश्य प्रभावित होगे वर्णन शैली मे लेखक अपनी कोमल कल्पना की सहायता ले सकता है तभी वह अपने सस्मरणो को प्रभावशाली बना सकता है इन सभी विशेषताओ को एकत्रित रूप से यदि वर्णित किया जाय तो सस्मरण की परिभाषा यह हो सकती है—जब लेखक अतीत की अनन्त स्मृतियो मे से कुछ रमणीय अनुभूतियो को अपनी कोमल कल्पना से अनुरजित कर व्यजनामूलक सकेत शैली मे अपने व्यक्तित्व की विशेषताओ से विशिष्ट कर रमणीय एव प्रभावशाली रूप से वर्णन करता है तब उसे सस्मरण कहते हैं।

तत्व

वर्ण्य विषय—सस्मरण साहित्य का यह प्रमुख तत्व है। इसमे लेखक अपने या अन्य व्यक्ति के जीवन से म्बन्धित विशिष्ट या रमणीय घटनाओ का वर्णन करता है। घटनाओ मे उन्ही का वर्णन होता है जिनसे लेखक स्वय प्रभावित होता है और यह अनुभव करता है कि अन्य व्यक्ति भी प्रभावित होंगे। सस्मरण किसी विशेष व्यक्ति के ही लिखे जाते हैं। जिस भी व्यक्ति के सस्मरण लेखक लिखे उसे जनता में अवश्य प्रतिष्ठित होना चाहिए। ऐसे प्रतिष्ठित व्यक्तियो के सस्मरण ही जनता के लिए प्रेरणादायक सिद्ध हो सकते है। प्रतिष्ठित व्यक्ति राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव साहित्यिक कोई भी हो सकता है।

वर्ण्य विषय की कुछ विशेषताएँ होनी हैं जोकि उसे उत्कृष्ट बनाती हैं। उनमे सर्वप्रथम रोचकता है। लेखक को अपने विषय का वर्णन इस ढग से करना चाहिए जिससे कि वह पाठक को सरस प्र..त हो। नीरस विषय को पढने के लिए कोई भी व्यक्ति तैयार नही होता। इस प्रकार रोचकता का विषयवर्णन मे होना अत्यन्त आवश्यक है।

अन्य महत्वपूर्ण गुण जिसका वर्ण्य विषय मे होना आवश्यक है वह है स्पष्टता। यदि लेखक अपने या किसी अन्य व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धित घटनाओ का वर्णन

---

१. सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त, पृ० २१२

पूर्ण ईमानदारी से करता है तभी वह सफल संस्मरण लेखक हो सकता है। किसी भी व्यक्ति का संस्मरण तभी सच्चा उतर सकता है जबकि लेखक का संस्मरण-नायक से निकट सम्पर्क रहा हो और उसको उसने हर पहलुओ से देखा और समझा हो। ऐसा न होने से परिणाम यह होता है कि मनुष्य कुछ है और उसका चित्रण उसके बिल्कुल विपरीत होता है।[1]

इसके पश्चात् वर्ण्य विषय मे सुसगठितता का होना भी आवश्यक है। लेखक जिस भी घटना का वर्णन करना चाहे उसमे भावो और विचारो का तारतम्य होना आवँश्यक है। जीवन की समस्त अनुभूतियों का वर्णन क्रमबद्ध रूप से करना आवश्यक है। ये सभी विशेषताएँ वर्ण्य विषय को रोचक एव प्रभावशाली बनाती हैं। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वर्ण्य विषय को दो प्रकार से वर्णन किया जा सकता है यदि संस्मरण लेखक अपने सम्बन्ध मे लिखे तो उसकी रचना आत्मकथा के निकट होगी यदि अन्य व्यक्ति के विषय मे लिखे तो जीवनी के निकट।[2]

चरित्र-चित्रण

यदि लेखक अपने जीवन से सम्बन्धित घटनाओ का वर्णन संस्मरणात्मक शैली मे करता है तो वह उसकी संस्मरणो मे लिखी आत्मकथा बन जाती है। यदि वह अन्य व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धित घटनाओ का वर्णन करता है तो वह जीवनी संस्मरणो मे लिखी हुई मानी जाती है इन दोनो मे लेखक केवल उन्हीं घटनाओ का उल्लेख करता है जिनका प्रभाव जनता पर स्पष्ट रूप से पड सकता है। वे सभी घटनाएँ केवल उसके चरित्र के गुणो को ही स्पष्ट करने के लिए नही लिखी जातीं उनमें कुछ ऐसी घटनाओं का वर्णन भी होता है जोकि उसकी चारित्रिक दुर्बलताओं की ओर संकेत करती है। इस प्रकार संस्मरणो मे चरित्र सम्बन्धी गुण-दोषो का वर्णन स्पष्ट रूप से किया जाता है।

लेखक द्वारा लिखा हुआ प्रत्येक पृष्ठ उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होता है। लेखक के व्यक्तित्व का प्रभाव उसकी प्रत्येक कृति मे स्पष्ट रूप से लक्षित होता है। यदि लेखक मनोविज्ञानकार है तो वह अपने नायक का चरित्र मनोवैज्ञानिक ढग से लिखेगा उसके चरित्र का विश्लेषण मनोवैज्ञानिक ढग से प्रस्तुत करेगा। ऐसे लेखक अपने नायक के चरित्र का चित्रण तो करते ही है इसके साथ उसके मस्तिष्क मे छिपी हुई उनकी भावनाओ एव उलझनो का भी स्पष्ट रूप से विश्लेषण करते हैं। कुछ ऐसे संस्मरण भी लिखे जा सकते है जोकि नायक के जीवन की कुछ घटनाओ को ही व्यक्त करते हैं। ऐसे संस्मरण यद्यपि नायक के सम्पूर्ण जीवन को नहीं स्पष्ट करते

---

१. बालकृष्ण भट्ट (संस्मरणो मे जीवन), ले० ब्रजमोहन व्यास, पृ० १० आमुख

२. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ८७०

प्रत्युत फिर भी उन कुछ वर्णित पृष्ठो का वर्णन ही ऐसे ढग से लेखक करता है कि नायक के सम्पूर्ण चरित्र का अनायास ज्ञान हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि सस्मरण साहित्य मे भी लेखक नायक के चारित्रिक गुण-दोषो का वर्णन स्पष्ट रूप से करता है जिससे कि उसका चरित्र स्पष्ट हो जाता है।

देशकाल वातावरण

वातावरण उन समस्त परिस्थितियो का सकुल नाम है जिनसे पात्रों को संघर्ष करना पडता है। सस्मरण साहित्य को वास्तविकता का भान देने की कसौटियों मे वातावरण मुख्य उपकरण है। संस्मरण लेखक भी देश और काल की जजीर मे जकड़े हुए होते है। नायक के व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए देशकाल का चित्रण आवश्यक है। नायक के व्यक्तित्व के अनुसार ही वातावरण एवं परिस्थितियो का चित्रण लेखक करता है। यदि लेखक का नायक साहित्यिक है तो उसके संस्मरणो मे लेखक जहाँ उसके साहित्यिक व्यक्तित्व को स्पष्ट करेगा वहाँ उसका स्थान निर्धारित करने के लिए उसे तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो का अवश्य वर्णन करना पडेगा।

यदि नायक राजनैतिक व्यक्ति है तो उसमे पाठक को तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का ज्ञान होगा। क्योकि उनके नायक का व्यक्तित्व इन्ही परिस्थितियों मे निखरता है इसलिए ये सभी वर्णन उसके लिए आवश्यक हो जाते है। यही नही कुछ राजनैतिक व्यक्ति अच्छे लेखक भी होते हैं। इसलिए उनके जीवन मे दोनो ही प्रकार की परिस्थितियो का वर्णन होता है। धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का ज्ञान हमे ऐसे पुरुषो के जीवन से मिलता है जिनका सम्पूर्ण जीवन इन्ही मे व्यतीत हुआ हो। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि परिस्थितियो का वर्णन केवल नायक के व्यक्तित्व को उभारने के लिए ही किया जाता है प्रमुख रूप से नही।

देश और काल मे वास्तविकता लाने के लिए स्थानीय ज्ञान आवश्यक है। इसलिए चरित्र को और उज्ज्वल एव प्रभावशाली बनाने के लिए जहाँ लेखक तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन करते हैं वहाँ विशेष स्थान का वर्णन भी करते है जहाँ ये सभी घटनाएँ घटित होती हैं। कई सस्मरण तो लिखे ही इसी दृष्टिकोण से जाते हैं। यात्रा सम्बन्धी सस्मरणो मे नगरों एवं विशेष स्थलो का चित्रण होता है। इस प्रकार सस्मरणो मे वास्तविकता एवं प्रभावोत्पादकता लाने के लिए देशकाल वातावरण का चित्रण आवश्यक है।

उद्देश्य

यह सस्मरण साहित्य का प्रमुख तत्व है। इसमे लेखक की जीवन दृष्टि का विवेचन होता है। इसे लेखक का जीवन-दर्शन अथवा उसकी जीवन दृष्टि या जीवन की व्याख्या कह सकते हैं। निरुद्देश्य रचना प्रयोजनहीन एवं व्यर्थ होती है। संस्मरण साहित्य का उद्देश्य अन्य विधाओ से पृथक् है। इसमे लेखक अपने समय के इतिहास को लिखना चाहता है परन्तु इतिहासकार के वस्तुपरक रूप से वह बिल्कुल अलग

है। सस्मरण लेखक जो स्वय देखता है जिसका वह स्वय अनुभव करता है उसी का वर्णन करता है। उसके वर्णन मे उसकी अपनी अनुभूतियाँ, सवेदनाएँ भी रहती हैं। इस दृष्टि से शैली मे वह निबन्धकार के समीप है। वह वास्तव मे अपने चतुर्दिक के जीवन का सर्जन करता है, सम्पूर्ण भावना और जीवन के साथ, इतिहासकार के समान वह विवरण प्रस्तुत करने वाला नही।[1] इससे स्पष्ट है कि सस्मरणो मे लेखक केवल उन्ही घटनाओ का चित्रण करता है जिनसे वह प्रभावित होता है और उसके सम्मुख घटित हुई होती हैं। लेखक केवल उन घटनाओ का वर्णन ही नही करता अपितु उनके विषय मे अपनी विचारधाराओ का भी वर्णन करता है जिससे हमे लेखक के विचारो का भी आभास हो जाता है।

सस्मरणो मे लेखक केवल उन्ही घटनाओ का चित्रण करता है जिनसे वह स्वय प्रभावित होता है। अपने अतीत की स्मृतियो को साकार रूप देने का उसका अवश्य कोई न कोई उद्देश्य होता है। एक तो लेखक इस उद्देश्य से इनका वर्णन करता है कि ये वर्णित घटनाएँ समय-समय पर उसे प्रेरणा देती रहे। जब भी जीवन मे प्रेरणा की आवश्यकता पडे पाठक इनको पढ सके। अन्य बात यह है कि कुछ सस्मरण इस उद्देश्य से लिखे जाते हैं कि उनको लिखकर लेखक को मानसिक सतोष प्राप्त होता है।

लेखक अपने जीवन के अनुभवो का वर्णन इसी दृष्टिकोण से करता है कि शायद इनके पढने से कुछ लोग प्रेरणा ग्रहण कर सके क्योकि सस्मरण मे तो लेखक केवल उन्ही घटनाओ का उल्लेख करता है जिनसे लेखक के जीवन मे घटित होने वाले परिवर्तनो का सकेत मिलता है और जो अन्य जनो के कौतूहल को शान्त करने मे सहायक हो सकते है।[2] इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि सस्मरण लेखक का उद्देश्य जहाँ स्वान्त सुखाय रचना करना है वहाँ प्रभावशाली अतीत की स्मृतियो का चित्रण करना भी है जिससे उसे एव पाठकगण को प्रेरणा मिलती रहे।

भाषा शैली

शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते है। सस्मरण शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ है जो इसको सम्पन्न एव प्रभावोत्पादक बनाती है। सर्वप्रथम इस शैली मे प्रभावोत्पादकता का होना आवश्यक है। सस्मरण इस ढग से लिखने चाहिए जिससे वे पाठक पर अपना प्रभाव स्थायी रूप से डाल सके। यह प्रभाव तभी डाल सकते है जबकि इनका रोचकता से वर्णन हो। उत्तम ढग से कही हुई बात ही अधिक प्रभाव डाल सकती है इस प्रकार रोचक शैली का होना भी आवश्यक है।

---

१. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ८७०

२. सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त

जब तक प्रत्येक भाव एव विचार का वर्णन सुसगठित रूप से न किया गया हो तब वह पाठक को रुचिकर न प्रतीत होगी और प्रभावित करने के लिए असमर्थ प्रतीत होगी। इसलिए शैली मे रोचकता, सुसगठितता एव प्रभावोत्पादकता आदि गुणो का होना आवश्यक है।

सस्मरण लिखने के कई ढग हो सकते है। ये निबन्धात्मक शैमी ली मे लिखे जा सकते है। जब लेखक अपने जीवन से सम्बन्धित सस्मरणो का वर्णन करता है तब वे आत्मकथा शैली मे लिखे जाते है। कई बार लेखक अपने सस्मरणो का विवेचन पत्रात्मक एव डायरी शैली मे भी करता है। इस प्रकार सस्मरण लिखने की कई शैलियाँ है।

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है। यदि भाषा शुद्ध परिमार्जित एव भावानुकूल होगी तभी वह पाठक को प्रभावित कर सकती है। स्वाभाविक एवं प्रसाद गुण का भाषा मे होना अत्यन्त आवश्यक है। शब्दचयन भी विषयानुकूल होना चाहिए।

वर्गीकरण

सस्मरण लेखको के आधार पर सस्मरण साहित्य का विभाजन यदि किया जाय तो सस्मरण साहित्यिक व्यक्ति एव राजनैतिक व्यक्ति भी लिख सकते है। साहित्यिक व्यक्ति से अभिप्राय है जिस व्यक्ति ने अपनी रचना द्वारा हिन्दी साहित्य की प्रगति मे सहयोग दिया हो। इसमे कवि, कथा-लेखक, आलोचक आते है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सस्मरण केवल साहित्यिक व्यक्ति ही नही लिख सकते राजनैतिक व्यक्ति भी लिख सकते हैं।

यदि विषयवस्तु के आधार पर सस्मरण साहित्य का विभाजन किया जाय तो हमे ज्ञात होता है कि सस्मरण केवल साहिन्यिक व्यक्तियो पर ही नही लिखे जा सकते अपितु राजनैतिक व्यक्तियो पर भी लिखे जा सकते हैं। कई सस्मरण लेखक जिनको यात्रा का शौक होता है यात्रा सम्बन्धी सस्मरण भी लिख सकते है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे व्यक्तियो पर भी सस्मरण लिखे जा सकते है जो होते तो साधारण है परन्तु अपने मानवीय गुणो के कारण वे असाधारण होते है।

शैली के आधार पर भी सस्मरण कई प्रकार के होते हैं। सस्मरण आत्म-कथात्मक शैली, निबन्धात्मक शैली, पत्रात्मक एव डायरी शैली मे भी लिखे जा सकते हैं।

पत्र

आधुनिक काल मे गद्य की अन्य विधाओ के साथ पत्र साहित्य की भी प्रगति हुई है। गद्य की यह विधा गोपनीय आत्मकथा का रूप है। आत्मकथा मे व्यक्ति का इतिहास सम्बद्ध होता है। पत्रो मे कुछ असम्बद्ध-सा रहता है। पत्रो से हमे लेखक के सहज व्यक्तित्व का पता चलता है। इसमे हमको बने-ठने सजे-सजाये मनुष्य का चित्र

नही, वरन् एक चलते-फिरते मनुष्य का 'स्नेप शॉट' मिल जाता है। लेखक के वैयक्तिक सम्बन्ध उसके मानसिक और बाह्य सघर्ष तथा उसकी रुचि तथा उस पर पडने वाले प्रभावो का हमको पता चल जाता है। पत्रो मे कभी-कभी तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक व साहित्यिक इतिहास की झलक भी मिल जाती है।[1] इसके अनुसार पत्र साहित्य मे लेखक का व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से लक्षित होता है। जहाँ हमे लेखक के व्यक्तित्व का अनुमान होता है वहाँ उस पर पडने वाले सभी प्रभावो का एव तत्कालीन परिस्थितियो का भी ज्ञान होता है। इस प्रकार किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से समझने के लिए उसके लिखे पत्रो का पढना आवश्यक है।

वास्तव मे पत्र जीवन का दर्पण है जिसमे उसका निखरा हुआ चित्र स्पष्ट रूप से दिखलाई देता है। दर्पण मे से लेखक की मनोवृत्तियाँ, उसकी आकाक्षाएँ उसके जीवन की कठिनाइयाँ, उसकी विचारधाराएँ उसकी प्रगतियाँ उसके जीवन का मानसिक विकास तथा कार्यक्रम चित्रित हो उठते हैं। किसी भी व्यक्ति का यह निखरा हुआ चित्र उसके पत्रो के अतिरिक्त उसकी अन्य किसी रचना अथवा मौखिक वार्तालाप से प्राप्त नही होता।[2] इससे स्पष्ट है कि किसी भी व्यक्ति के वास्तविक व्यक्तित्व से परिचित होने के लिए उसके पत्रों को पढना आवश्यक है। व्यक्ति के व्यक्तित्व का जो स्पष्ट चित्रण हम पत्रो मे पाते हैं वह अन्यत्र नही।

पत्र वह लेख है जो किसी दूर रहने वाले व्यक्ति विशेष को प्रेषित किया जाता है और जिसमे उस दूरस्थ व्यक्ति के प्रति अपनी भावनाओ का प्रकाशन रहता है। अग्रेजी मे इस रूप को Letter कहते हैं। अग्रेजी कोष मे भी इसकी यही परिभाषा अकित है—

A writing directed or sent communicating intelligence to a distant person.

अर्थात् एक दूरस्थ व्यक्ति को निजी वृत्तान्त जब लिखकर प्रेषित किया जाता है तब वह पत्र कहलाता है।

आत्मकथा की भाँति कुछ पत्रो का महत्व उनके विषय पर निर्भर रहता है, कुछ का शैली पर। जिन पत्रो के विषय और शैली दोनो ही महत्वपूर्ण हो वे साहित्य की स्थायी सम्पत्ति बन जाते है।[3] इस प्रकार पत्र का विषय और शैली दोनो दृष्टिकोणो से महत्वपूर्ण होना आवश्यक है।

पत्र लेखक अपने विचारो और भावो को पत्र मे भावग्राहक के अनुकूल ही लिखता है। पत्र जनता के प्रयोग के लिए नही होते। यह एक ही व्यक्ति को लिखे जाते है पर लिखे छोटे-छोटे समूहो म जाते हैं। यह भाव ग्राहक अर्थात् पाने वाले

१ काव्य के रूप, ले० गुलाबराय
२ आदर्श पत्रलेखन, ले० यज्ञदत शर्मा
३. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय

व्यक्ति के स्वाद, समझ और सहानुभूति के अनुसार ही लिखे जाने चाहिएँ।[१]

A letter is not a public performance Letters are written to single persons, or, at most, to small groups, they should be fitted to the tastes, understandings and sympathies of their recipients

इस प्रकार पत्र पाने वाले व्यक्ति के व्यक्तित्व अनुसार ही होने चाहिए। इसके अतिरिक्त पत्र लेखक जिस व्यक्ति के लिए पत्र लिखता है उस व्यक्ति का ध्यान रखता है। सामान्यत. साहित्यकार अपने भावो के प्रकाशन के लिए प्रवृत्त होता है। उस समय उसके सम्मुख भावग्राहक उपस्थित नही रहता है। पत्र लेखक की स्थिति इससे कुछ भिन्न होती है। लेखन काल मे भावग्राहक उसकी आँखो से ओझल नही होता है, वह लिखता ही उसके लिए है। साहित्य के अन्य रूपो मे लेखक अपने भावो के प्रकाशन के उद्देश्य से प्रवृत्त होता है परन्तु वह लेख जनसाधारण की रुचि का विषय बन जाता है। पत्र लेखक अपने भावो को एक व्यक्ति विशेष के उद्देश्य से लिपिबद्ध करता है परतु जनसाधारण भी उसे आत्म-सतुष्टि का साधन बना सकता है। इस प्रकार पत्र साहित्य द्विमुखी होता है, उसमे भावो और भावग्राहक दोनो की ओर दृष्टि रहती है।[२]

अत उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पत्र वह लेख है जो किसी दूर रहने वाले व्यक्ति विशेष को प्रेषित किया जाता है और जिसमे उस दूरस्थ व्यक्ति के प्रति अपनी भावनाओ का उसकी रुचि, समझ एव योग्यता के अनुसार, कलात्मक ढंग से प्रकाशन किया जाता है।

तत्त्व

वर्ण्य विषय—किसी भी साहित्यिक व्यक्ति के व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से समझने के लिए उसके वैयक्तिक पत्रो का अध्ययन करना आवश्यक है। इनके अध्ययन से ही पाठक लेखक के व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से समझ जाता है। इसलिए पत्रो का प्रमुख विषय लेखक स्वय है। यह ठीक है कि कुछ पत्र ऐसे भी लिखे जाते है जिनमे रोजमर्रा के काम-काज का, जीवन की जटिल समस्याओ का, व्यावसायिक धधो का एव साहित्यिक राजनैतिक पहलुओ का वर्णन होता है परन्तु इन सभी मे उसका व्यक्तित्व झलका करता है। पत्रो का प्रमुख-विषय लेखक के व्यक्तित्व का दिव्यदर्शन ही होता है।

वर्ण्य विषय को उत्कृष्ट बनाने के लिए उसमे स्वाभाविकता, रोचकता, स्पष्टता एवं संक्षिप्तता आदि गुणो का होना आवश्यक है। पत्र मे लेखक को अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण रोचकपूर्ण ढग से करना चाहिए। पाठक को किसी भी प्रकार की कृत्रिमता का आभास नही होना चाहिए। लेखक को चाहिए कि वह अपने विषय को

---

१. One Mighty Torrent by Edgar Johnson, P. 159.

२. सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द सत

परिपक्व करने के लिए इन विशेषताओ का ध्यान रक्खे। अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए उसे चारो ओर के वातावरण से परिचित होना आवश्यक है। उन सभी परिस्थितियो का वर्णन आवश्यक है जिनमे उसका व्यक्तित्व उभरा हो।[1] पत्र लेखक को कुछ निश्चित सुविधाओ की आवश्यकता है, शिष्टाचार मे हल्कापन भी हो सकता है। कुछ अपने को एवं अपने चारो ओर से घिरे हुए वातावरण को वास्तविकता से देखने की योग्यता होनी आवश्यक है परन्तु यह कोई आवश्यक नही कि वह सस्कृति की गहराई मे या पूर्ण प्रभावित शक्तियो से परिचित हो परन्तु उसमे इतनी सामर्थ्य का होना आवश्यक है जो उसे दुनिया की हलचल से परे ले जाए और वह अपने बीते हुए अनुभवो को सोच सके।[1]

Letter writing requires a certain ease a tinge of urbanity, some ability really to see yourself and things around you not necessarily great depths of culture or profound reflective powers but a little of the capacity to stand aside for a while from the heat and rush of activity and realise imaginatively what your experiences has been.

इन सुविधाओ के होने से ही उसके पत्र मे स्वाभाविकता का समावेश हो सकता है। शान्त वातावरण मे ही वह अपने जीवन के अनुभवो को लिख सकता है। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि पत्रो का प्रमुख विषय व्यक्तित्व को स्पष्ट करना है। यदि वह किसी अन्य विषय के सम्बन्ध मे पत्र लिखता है तो उससे भी परोक्ष रूप से उसका व्यक्तित्व ही झलकता है।

पात्रो और घटनाओं से सम्बन्ध और उनके प्रति प्रतिक्रिया—प्रत्येक पत्र लेखक जिन घटनाओ का वर्णन अपने पत्रो मे करता है उनका उससे विशेष सम्बन्ध होता है। यदि वह किसी व्यक्ति का वर्णन अपने पत्र मे करता है तो अवश्य रूप से उस व्यक्ति के व्यक्तित्व का उससे सम्बन्ध होगा। या तो उसका व्यक्तित्व लेखक को प्रभावित करता होगा या उससे उसको कष्ट होगा। लेखक उसके व्यक्तित्व का वर्णन ही नही करता अपितु उस पर टीका-टिप्पणी भी करता है। उसके व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण-दोषो का विवेचन वह स्पष्ट रूप से करता है। यही बात घटनाओ के विषय मे कही जा सकती है जहाँ लेखक अपने जीवन मे घटित घटनाओ का वर्णन करता है वहाँ पर उन घटनाओ का प्रभाव भी दिखलाता है। उसके जीवन मे जो भी घटना घटती है उसका उससे सीधा सम्बन्ध होता है। यही नही कई बार किसी अन्य व्यक्ति जिससे कि उसका सम्बन्ध होता है उसके जीवन मे घटित घटना का प्रभाव भी लेखक पर पड जाता है तो उसका विवेचन भी लेखक अपने पत्रो मे करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि पत्र लेखक अपने पत्रो मे घटनाओ एव पात्रो का वर्णन ही नही करता अपितु उनके प्रति मन मे उठी हुई प्रतिक्रियाओ का उल्लेख भी करता है।

---

१. One Mighty Torrent by Edgar Johnson, P.156

उद्देश्य

पत्र लेखक का उद्देश्य आत्मजीवन की व्याख्या होती है। पत्र व्यक्तिगत व्यवहार होता है। इसलिए इसमे व्यक्तित्व की सुगन्धि का होना आवश्यक है। पत्र का विषय लेखक एवं उसका व्यक्तित्व होता है जिसे सर्वत्र ऐसा वर्णन करने का अधिकार होता है। उसके पृष्ठो मे यह प्रधान रूप से होता है कि वह क्या करता है और क्या अनुभव करता है। यहाँ तक कि उसके फैले हुए व्यक्तित्व का जो कि प्रत्येक मुहावरे और विशेषण से युक्त होता है उसका भी हम आनन्द लेते है। लेखक अपने व्यक्तित्व का सीधा सम्बन्ध हमारे सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए जो भी जादूभरे आकर्षण का प्रयोग कर सकता है अपनी भावनाओ को उस जादूभरे आकर्षण से रग कर हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। यही उसका मानसिक साहस होता है। अस्पष्ट विचारो की श्रेणी के स्वभाव मे, सहानुभूति के शब्दों मे, व्यक्तिगत व्यक्तित्व कथन मे या अनर्थ वार्तालाप मे, प्रभावित विष्कम्भक के रूप मे एक चरित्र का निर्माण हमारे सम्मुख होता है उस व्यक्ति का चरित्र जोकि लेखक होता है।[1]

Letters are personal communications. Therefore they should have the flavor of personality .. ..The subject of the letter is the writer, and his personality has every where the right to appear In his pages who speaks and what he feels about things is central, part of our pleasure is tasting and suffusion of personality even in every phrase and turn of epithet. The direct presence of the writer's personality, by whatever magical touches he can use to conjure his breathing self up before us the very aim and heart of the enterprise. In glimining sequence of moods, in gossip or abmonition or nonsense, in news or words of sympathy, in personal narration or reflective interludes, a character should take place before us the character of the man who wrote there.

इससे स्पष्ट है कि पत्र लेखक का उद्देश्य आत्मीय जीवन की व्याख्या ही होती है। प्रसगानुसार वह अन्य विषयो का ज्ञान पाठक को करवा सकता है। उद्देश्य की दृष्टि से पत्र साहित्य गद्य के अन्य रूपो से भिन्न होता है। जहाँ यह निर्दिष्ट व्यक्ति को किसी विशिष्ट विषय का ज्ञान मात्र देना चाहता है तब उसका उद्देश्य अन्य साहित्यिको के सदृश होता है। उसमे आत्मीयता की मात्रा कम रहने से निबन्ध रूप के समीप हो जाता है। जब वह अपना वृतान्त ही प्रेषित करना चाहता है तब उसमे मानसिक प्रतिक्रियाओं की बहुलता से आत्मीयता बढ जाती है। इस स्थिति में लेखक का उद्देश्य सामान्य मानव जीवन की व्याख्या न होकर आत्मजीवन की

---

1. One Mighty Torrent by Edgar Johnson, P. 160-161.

व्याख्या होती है ।[1]

इससे पूर्णतया स्पष्ट है कि पत्र लेखक का प्रमुख उद्देश्य आत्मजीवन की व्याख्या होता है । प्रसगानुसार वह अन्य विषयो के सम्बन्ध मे लिख सकता है पर प्रमुख रूप से व्याख्या वह अपने जीवन की ही करता है ।

देशकाल वातावरण

प्रत्येक लेखक व कलाकार अपने समय की परिस्थितियो से प्रभावित होता है । वह प्रसगानुसार अवश्य ही उन परिस्थितियो का उल्लेख करता है । यही बात पत्र लेखक मे भी पाई जाती है । यह ठीक है कि उसका उद्देश्य आत्मजीवन की व्याख्या है पर अपने व्यक्तित्व को निखारने के लिए वह उन परिस्थितियो का उल्लेख भी करता है जिनमे उसका सहयोग होता है । राजनैतिक व्यक्ति का सम्बन्ध अपने समय की राजनैतिक परिस्थितियो से प्रमुख रूप से होगा । तो उसके द्वारा लिखे हुए पत्रों मे हमे प्रमुख रूप से तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन मिल जाएगा । साहित्यिक व्यक्ति के पत्रो मे भी तत्कालीन साहित्यिक राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन परोक्ष रूप से अवश्य मिलेगा । प्रत्येक लेखक अपने समय से अवश्य प्रभावित होता है वह कहीं न कहीं अवश्य ही इन परिस्थितियो का वर्णन कर देता है ।

कई पत्र लेखक ऐसे होते है जिनको घूमने-फिरने का अधिक शौक होता है । वह अपने मित्रो को सम्बन्धियो को उन स्थानो का वर्णन भी लिख देते हैं तो ऐसे पत्रो मे प्रधानता विषय की होती है । इनमे विषय-वर्णन के साथ-साथ लेखक के व्यक्तिगत विचार भी होते हैं तो इस प्रकार वे पत्र भी उनके व्यक्तित्व का दिग्दर्शन करवाते है ।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पत्र लेखक अपने समय की परिस्थितियो से प्रभावित होकर उनका स्वाभाविक रूप से वर्णन अपने पत्रों मे करता है ।

शैली

पत्र लेखक की शैली गद्य की अन्य विधाओ से पृथक् होती है । इसमे लेखक का मुख्य उद्देश्य आत्माख्यान ही होता है । इसलिए इस शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जिनका इसमे होना अत्यन्त आवश्यक है ।

सर्वप्रथम इस शैली मे आत्मीयता का होना आवश्यक है । पत्र मे लेखक की आत्मीयता प्रकट होनी चाहिए । वर्ण्य विषय की दृष्टि से जब लेखक लिखता है तब उसका अपनापन दबा रहता है वह सीधे रूप मे सम्मुख नही आता । पत्र साहित्य में आत्मीयता अर्थात् सापेक्ष दृष्टि की अत्यन्त आवश्यकता होती है । आत्मीयता का

---

१. सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द

सम्बन्ध लेखक के अपने व्यक्तित्व के साथ भी है और दूरस्थ व्यक्ति के साथ भी।[१] इस प्रकार शैली मे आत्मीयता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता जिसका पत्र शैली मे होना आवश्यक है वह है सक्षिप्तता। मुक्तक काव्य की तरह पत्र का आकार छोटा होता है इसलिए लेखक को अपनी विचारधारा सक्षिप्त रूप से प्रकट करनी चाहिए। अधिक लम्बे आकार का पत्र, पत्र नही बल्कि निबन्ध कहलाता है। अपने विषय एव शैली को रोचक एवं प्रभावशाली बनाने के लिए लेखक को पत्र सक्षिप्त लिखना चाहिए।

बात को थोडे शब्दो मे अधिक से अधिक स्पष्टता देना पत्र की सबसे बडी माग है। पत्रो मे कुछ लोग तो अपना सारा व्यक्तित्व उँडेल देना चाहते है और कुछ उनको निर्वैयक्तिक तथा रगीनी से खाली रखना चाहते है। इस सम्बन्ध मे मध्यम मार्ग का अनुसरण करना श्रेयस्कर है।[२]

पत्र शैली मे स्वाभाविकता का होना आवश्यक है। लेखक को व्यक्तिगत विवेचन इस ढग से करना चाहिए जिससे पाठक को यह न प्रतीत हो कि इसमे कुछ कृत्रिमता या बनावटीपन है। स्वाभाविक रूप से किया गया वर्णन अधिक प्रभावशाली होता है।

इसकी शैली भावग्राहक के अनुकूल होनी चाहिए। भावग्राहक की योग्यता अनुसार लिखा हुआ पत्र ही सार्थक होता है। भावग्राहक की योग्यता से अधिक लिखा हुआ पत्र प्रभावहीन हो जाता है।

इन सब विशेषताओ से युक्त पत्र शैली ही पाठक को प्रभावित कर सकती है। भाषा का भी भावानुकूल एव विषयानुकूल होना आवश्यक है। भाषा मे माधुर्य एवं प्रसाद गुण का होना आवश्यक है। भाषा को उत्कृष्ट बनाने के लिए शब्दचयन सजीव एवं सशक्त होना चाहिए।

वर्गीकरण

पत्र कई प्रकार के होते हैं—

१. साहित्यिक पत्र—ऐसे पत्रो का विषय साहित्य से सम्बन्धित होता है। किसी भी साहित्यिक कृति के विषय मे, भाषा, व्याकरण एवं शैली के विषय मे लेखक जिन पत्रो मे अपने विचार प्रस्तुत करते हैं उनको साहित्यिक पत्र कहा जाता है। ऐसे पत्रो मे प्रधानता विषय की होती है परन्तु उनमे लेखक के व्यक्तिगत विचारो का ब्यौरा अधिक होता है। ऐसे पत्रो मे लेखक किसी भी कृति एवं साहित्यिक योजना के विषय का वर्णन तो करता ही है परन्तु नि.सकोच रूप से अपने सुझाव भी प्रस्तुत करता है।

२. आत्मकथात्मक-पत्र—जिन पत्रों मे लेखक अपने जीवन की व्याख्या प्रमुख

---

१. सिद्धांतालोचन, ले० धर्मचन्द संत

२. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय

रूप से करता है उनको आत्मकथात्मक पत्र कहा जाता है। स्वाभाविकता, स्पष्टता एवं आत्मीयता आदि विशेषताएँ इन पत्रों मे विशेष रूप से पाई जाती हैं। ऐसे पत्र आत्म-कथा एवं जीवनी के लिए सहायक होते हैं। गोपनीय घटनाओ का वर्णन होने से ये हृदय का दर्पण होते है।

३. **अन्य चरित्रमूलक पत्र**—जिन पत्रो मे लेखक किसी व्यक्ति के चरित्र पर प्रकाश डालता है उनको अन्य चरित्रमूलक पत्र कहा जाता है। प्राय ऐसे पत्र भी लिखे जाते हैं। इन पत्रों का सबसे बडा लाभ यह है कि हमे लेखक से सम्बन्धित कुछ व्यक्तियो के जीवन के विषय मे पता चल जाता है। इनके वर्णन से हम लेखक का व्यक्तित्व और स्पष्ट रूप से समझ सकते है।

४. **वर्णनात्मक पत्र**—जिन पत्रो मे लेखक किसी भवन, स्थान या नगर विशेष का वर्णन करता है उनको वर्णनात्मक पत्र कहा जाता है। ऐसे पत्रो की शैली सजीव एव प्रभावोत्पादक होती है।

५ **विचार-प्रधान पत्र**—जिन पत्रो मे किसी विशेष समस्या एव उलझन पर प्रकाश डाला जाता है वे विचारप्रधान पत्र कहलाते हैं। यह समस्या राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक कुछ भी हो सकती है। इन पत्रो मे उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति अधिक होती है।

डायरी

आधुनिक काल मे जहाँ गद्य की नाटक, उपन्यास एव कहानी विधाओ का पूर्ण रूप से विकास हुआ है वहाँ डायरी साहित्य भी कम नही रहा। योरोपीय साहित्य के प्रभाव से ही हिन्दी मे इसका आविर्भाव हुआ। हिन्दी साहित्य मे अभी हमे उतनी पूर्ण और विकसित डायरियाँ नही देखने मे आतीं जितनी कि आंग्ल भाषा के साहित्य मे हैं डायरी जीवनी साहित्य का एक रूप है। यह आत्मकथा का आरम्भिक रूप कहा जा सकता है।

डायरी के माध्यम से लेखक के सद्य स्फुरित भावों तथा विचारो की अभिव्यक्ति मिलती है। डायरी के रोजनामचा, दैनिकी, दैनन्दिनी पर्याय हैं और ये पयार्य इस दृष्टि से सार्थक भी हैं कि वे डायरी के इस प्रमुख ध्येय की ओर सकेत करते हैं कि डायरी मे लेखक का अनुभव उसके सबसे अधिक निकट रहकर अकित होता है। डायरी मे लेखक के मन पर पड़े प्रभाव उसी दिन लिखित रूप पाते हैं। इस प्रकार लेखक के व्यक्तित्व प्रकाशन का सर्वाधिक प्रामाणिक माध्यम डायरी है। प्रामाणिक इस अर्थ मे कि प्राय: डायरियाँ अपने निजी भावों-विचारो को नोट कर लेने के उद्देश्य से लिखी गई हैं, पुस्तक प्रकाशन के उद्देश्य से नही। विशुद्ध डायरी सम्भवत: इस दृष्टि से कभी नहीं लिखी जाती कि कालान्तर मे वह पुस्तक रूप मे प्रकाशित होगी।

डायरी लेखक के अत्यधिक निकट होती है। इसलिये ऐसा भी सम्भव है कि उसमे कलात्मक तटस्थता का अभाव रह जाय। अत. यह कहा जा सकता है कि डायरी

कोई विशेष कलापूर्ण साहित्य रूप नही है पर डायरी अपने मूल अभिप्राय मे कदाचित साहित्य रूप है ही नही। साहित्यिक दृष्टि से डायरी मे सम्बद्धता या सगति और शिल्प-गत कलात्मकता की कमी हो सकती है पर स्पष्ट कथन, आत्मीयता और निकटता आदि विशेषताएँ डायरी की उक्त कमी को पूरा कर देती है।[1]

इससे स्पष्ट है कि डायरी मे लेखक अपनी नित्यप्रति घटित घटनाओ का, भावो और विचारो का वर्णन नि सकोच रूप से करता है।

जीवनी साहित्य मे डायरी का भी एक विशेष स्थान है। डायरी मे मनुष्य अपना कच्चा चिट्ठा लिखता है। अपने को खोलकर व्यक्त करता है। प्रतिदिन छोटी-बड़ी गुप्त और प्रकट सभी बाते डायरी मे लिखी जाती है। निर्भीकता से व्यक्ति डायरी मे उन घटनाओ का उल्लेख करता है जिसे वह और कही लिखने मे सकोच करेगा। इस प्रकार डायरी व्यक्ति का वास्तविक रूप प्रकट करने का श्रेष्ठ साधन कही जा सकती है। लेकिन यदि डायरी मे लेखक इस विचार से प्रभावित है कि उसका प्रकाशन होगा तो उसमे भी वास्तविकता के छिपाने और बाते घटा-बढा कर कहने का भय है।

एक बात विशेष रूप से डायरी के सम्बन्ध मे खटकने योग्य है—यदि एक व्यक्ति ८० वर्ष तक जीवित रहता है तो एक लम्बे समय की दैनिक चर्चा मे लेखक का इतना विशाल समूह होगा कि उस व्यक्ति के पूर्ण व्यक्तित्व को समझने के लिए और उसका चित्र उपस्थित करने के लिए एक दूसरी पुस्तक तैयार करनी पडेगी जो उस व्यक्ति का जीवन चरित्र बन जायेगी ····· डायरी के सम्बन्ध मे एक बात और ध्यान देने योग्य है—यदि पूरे जीवन काल की डायरी मिली तब तो व्यक्ति का पूरा जीवन चरित्र मिल सकता है अन्यथा जिस काल की डायरी मिली उसी समय का रूप जाना जा सकता है। ऐसी परिस्थिति मे व्यक्ति के पूरे चित्र को समझने मे कोई सहायता नही मिल सकती है ······ इसलिए पूरे काल की डायरी न होने से न केवल जीवन के एक भाग का चित्र उपस्थित होगा वरन् भ्रमपूर्ण जीवन उपस्थित करने की भी अधिक सम्भावना है। इसमे सन्देह नही कि जीवन चरित्र लिखने मे डायरी से सर्वाधिक सहायता मिली है। डायरी भी जीवनी साहित्य का एक महत्वपूर्ण भाग है।[2] इस प्रकार डायरी व्यक्तित्व प्रकाशन का एक साधन है। इससे मनुष्य के वास्तविक रूप का ज्ञान होता है।

इंसाईक्लोपीडिया ब्रिटानिका मे डायरी की परिभाषा इस प्रकार दी है—

The book in which are preserved the daily memoranda regarding events and actions which come under the writer's personal observation or are related to him by others.

---

१. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ३४६

२. हिन्दी साहित्य में जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० २०-२१

अर्थात् डायरी वह पुस्तक है जिसमे लेखक के प्रतिदिन स्मरण लेख, घटनाएँ, एव साहसिक क्रियाएँ जिसमे उसका व्यक्तिगत निरीक्षण होता है या अन्य व्यक्तियो द्वारा वर्णित घटनाएँ होती हैं।

आत्मकथाकार की भाँति डायरी लेखक भी सर्वविदित, सर्वप्रिय एव प्रतिष्ठित व्यक्ति होना चाहिए[1] क्योकि इस दिनचर्या मे केवल सोने, उठने, भोजन आदि का विवरण न देकर अपने जीवन मे अनुभव की हुई कोई ऐमी घटना, नई अनुभूति, विचित्र वस्तु, आदि का विवरण हो जो सामान्यत मानव समाज के लिए भी शिक्षाप्रद नवीन अद्भुत रुचिकर तथा लाभकर हो।[2] इस प्रकार वही डायरी साहित्य मे अपना स्थान निर्धारित कर सकती है जिसका लेखक प्रतिष्ठित एव सर्वप्रिय व्यक्ति होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी वह आत्मीय पुस्तक है जिसमे लेखक प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओ का ही वर्णन नही करता अपितु इसके साथ ही साथ मानसिक प्रतिक्रियाओ का वर्णन भी सक्षिप्त, रोचक एव सुसगठित रूप से करता है।

तत्व

विषयवस्तु का विस्तार—डायरी मे विषयवस्तु से अभिप्राय लेखक के केवल खाने, पीने, सोने एव उठने से नही है प्रत्युत जीवन मे अनुभव की हुई कोई ऐसी घटना, नई अनुभूति विचित्र वस्तु आदि का विवरण हो जो सामान्यतः मानव समाज के लिए भी शिक्षाप्रद, नवीन, अद्भुत, रुचिकर तथा लाभकर हो।[3] इससे स्पष्ट है डायरी मे लेखक को केवल उन घटनाओ का वर्णन नही करना चाहिए जिनके पढने से पाठक को कोई लाभ न हो। छोटी-छोटी घटनाओ का वर्णन डायरी को नीरस बना देता है। इसलिए लेखक को अपने जीवन के प्रमुख अगो का वर्णन विशेष रूप से करना चाहिए।

विषय को उत्कृष्ट बनाने के लिए लेखक को अपने जीवन का वृत्तान्त इस ढंग से वर्णन करना चाहिए जिससे वह सरस एव रोचक प्रतीत हो। एक घटना पढने के पश्चात् पाठक के मन मे यह कौतूहल उत्पन्न हो कि आगे क्या होगा? इस प्रकार रोचकता का डायरी मे होना नितान्त आवश्यक है।

अनावश्यक विस्तार विषय को नीरस बना देता है। इसलिए लेखक को अपने जीवन की प्रत्येक घटना का वर्णन इस ढग से करना चाहिए कि बात भी स्पष्ट हो जाए और अधिक विस्तार भी न हो। सक्षिप्तता का विषय मे होना अत्यन्त आवश्यक है।

---

१. सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द बलदेव कृष्ण
२. शैली और कौशल, ले० सीताराम चतुर्वेदी
३. वही

डायरी मे लेखक को अपने जीवन की घटनाओ का वर्णन स्पष्ट रूप से करना चाहिए। डायरी लेखक अपने जीवन या जीवन के किसी महत्वपूर्ण प्रसग को लेकर डायरी लिखता है। डायरी लेखन मे वह यथार्थ घटनाओ को इस प्रकार सक्षेप मे व्यक्त करता है कि सारी बात भी स्पष्ट हो जाये और विस्तार भी न हो।[1]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वही डायरी उत्कृष्ट मानी जा सकती है जिसके विषय मे रोचकता, स्पष्टता, सक्षिप्तता एव सुसगठितता आदि गुण हो। डायरी लेखक विषयवस्तु को दो प्रकार से लिख सकता है। जब व्यक्ति स्वय अपनी डायरी लिखता है तो वह आत्मचरित्र का रूप हो जाता है। जब कोई अन्य व्यक्ति डायरी अन्य व्यक्ति के सम्बन्ध मे लिखता है तो वह जीवन चरित्र की श्रेणी मे आ जाता है।[2] इस प्रकार विषयवस्तु को लिखने के दो ढंग हो सकते है।

सम्पर्क में आए हुए व्यक्तियों एवं घटनाओं से लेखक का सम्बन्ध और उनके प्रति प्रतिक्रियाएँ

डायरी मे लेखक केवल अपने जीवन का ही विश्लेषण नही करता अपितु अपने से सम्बन्धित सभी व्यक्तियो एव घटनाओ का विवेचन भी करता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन मे कुछ ऐसे व्यक्ति आते है जिनका उन पर पूर्ण रूप से प्रभाव पडता है तब वे व्यक्ति अवश्य ही उनका वर्णन अपनी डायरी मे करते है। डायरी लेखक उन व्यक्तियो का वर्णन ही नही अपितु आवश्यकतानुसार टीका-टिप्पणी भी करते हैं।

जहाँ तक घटनाओ का प्रश्न है लेखक जिस भी वातावरण मे रहता है उसका वर्णन वह आवश्यकतानुसार अपनी कृति मे करता है। इसी प्रकार डायरी लेखक भी अपनी डायरी मे तत्कालीन परिस्थितियो का अवश्य ही वर्णन करता है। यदि लेखक राजनैतिक व्यक्ति है तो वह अपनी डायरी मे प्रमुख रूप से उन परिस्थितियो का अवश्य वर्णन करेगा जिनसे उसका व्यक्तित्व उभरता है। यही बात साहित्यिक एव सामाजिक व्यक्ति के विषय मे भी कही जा सकती है। राजनैतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक परिस्थितियो का वर्णन डायरी लेखक के व्यक्तित्व के अनुसार ही होता है। इन सभी के वर्णन के साथ-साथ उनका प्रभाव भी वर्णित होता है।

इस प्रकार डायरी मे लेखक अपने से सम्बन्धित व्यक्ति एवं घटनाओ का वर्णन ही नही करते बल्कि आवश्यकतानुसार उन पर टीका-टिप्पणी भी करते हैं।

देशकाल वातावरण

अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए लेखक को तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन करना आवश्यक है। इसलिएँ

१ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, ले० गोविन्द त्रिगुणायत

२. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित्र का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ०२१

वातावरण का वर्णन करना अत्यन्त आवश्यक है। यदि लेखक साहित्यिक है तो वह अवश्य ही उन साहित्यिक परिस्थितियो का वर्णन करेगा जिनका प्रभाव उस पर पडा होगा। इसके साथ ही उन परिस्थितियो के वर्णन मे वह अपना स्थान भी निर्धारित करेगा। परोक्ष रूप से वह देश की राजनैतिक परिस्थितियो का तत्कालीन साहित्य पर भी प्रभाव बताएगा। इसलिए वातावरण का किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व-निर्माण मे प्रमुख हाथ है। यह तो हुई देश की एव साहित्यिक परिस्थितियो की बात जहाँ तक पारिवारिक परिस्थितियो का प्रश्न है लेखक उन सभी परिवार की घटनाओ का वर्णन भी करता है जिनका प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पडता है। ये सभी वर्णन लेखक व्यक्तित्व प्रकाशन के उद्देश्य से ही करता है।

कई लेखक ऐसे होते हैं जिनको घूमने-फिरने का विशेष शौक होता है तो उनकी कृति मे विशेष रूप से देश का चित्रण होता है। किसी विशेष स्थान नगर एव भवन का वर्णन उनकी डायरी मे अवश्य रूप से पाया जाएगा। इस प्रकार देश-काल एव वातावरण का चित्रण डायरी मे लेखक अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए करता है।

उद्देश्य

डायरी लेखक का प्रमुख उद्देश्य आत्मविश्लेषण है। डायरी मे लेखक अपने जीवन की विवेचना ही करता है। जीवन के सभी उतराव-चढावो का वर्णन डायरी मे ही होता है। इसलिए डायरी आत्मविवेचन के उद्देश्य से ही लिखी जाती है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति अन्य व्यक्ति के जीवन से कुछ न कुछ अवश्य प्रेरणा ग्रहण करता है जिससे उसकी आत्मा व मन को शान्ति प्राप्त होती है। इसी भावना से प्रेरित होकर लेखक अपनी डायरी लिखते हैं। किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की डायरी से ही लेखक प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं। डायरियाँ स्वान्तः सुखाय के उद्देश्य से भी लिखी जाती हैं। इस प्रकार डायरी लेखक का उद्देश्य आत्मविश्लेषण आत्मविवेचन तो है ही लेखक डायरी इस उद्देश्य से भी लिखता है कि लोग इससे कुछ लाभ व प्रेरणा ग्रहण कर सकें।

भाषा शैली

डायरी मे लेखक दिनचर्या के रूप मे ही जीवन की घटनाओं और मानसिक विचारो का लेखा-जोखा करता है। इसकी शैली गद्य की अन्य विधाओ की अपेक्षा पृथक होती है। इस शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जिनका इसमे होना अत्यन्त आवश्यक है—सर्वप्रथम विशेषता नि.सकोच आत्मविश्लेषण है। दिनचर्या के रूप मे लेखक अपने जीवन की घटनाओ और मानसिक विचारो का लेखा रखता जाता है यद्यपि इन सबका विवरण भी वह बिलकुल तटस्थ होकर नही कर सकता परन्तु आत्मचरित्र की अपेक्षा उसका सकोच इस शैली की व्याख्या मे कम रहता है। लेखक

जानता है कि उसके विवरण दूसरो के काम आएँगे अतएव वहाँ अपने मर्म को विशेष कर अवाँछित प्रसग को ज्यादा ठकता नही। उसका आवरणहीन वर्णन सत्यवर्णन की तरह अकित होता रहता है। घटनाओ एव विचारो मे असम्बद्धता भी उसे अपने चेतन को काम मे लाने से रोक लेती है। प्राय. देखा जाता है कि सकोच का उद्‌भव तभी होता है जब घटनाओ का सामूहिक प्रभाव दिखाया जाय। डायरी शैली मे यह स्थिति होने नही पाती परिणामतः तटस्थ रूप से लेखक अपेक्षाकृत अधिक आत्मविश्लेषण करता है।[1] डायरी शैली मे नि सकोच आत्मविश्लेषण के साथ-साथ घटनाओ की सम्बद्धता, स्पष्टता, सजीवता, मानसिक प्रतिक्रियाओ का सक्षिप्त विवरण पर्याप्त सत्यता एव स्वाभाविकता आदि गुणो का होना आवश्यक है। माधुर्य और प्रसाद गुण का भाषा मे होना भी अत्यन्त आवश्यक है। इसके अतिरिक्त शब्दचयन भी विषयानुकूल होना चाहिए।

वर्गीकरण

यदि डायरी साहित्य का विभाजन लेखक अनुसार किया जाये तो डायरियाँ कवि, कथालेखक, आलोचक, राजनैतिक एवं सामाजिक व्यक्ति भी लिख सकते हैं। विषय अनुसार भी डायरी साहित्य का विभाजन हो सकता है। कई डायरियो में प्रकृति चित्रण प्रधान रूप से होता है ऐसे विषय को कवि ही लिख सकते है। कई लेखको की डायरियो मे किसी भी साहित्यिक विषय का वर्णन होता है। कई ऐसी भी डायरियाँ होती है जिनमे सामाजिक एव सास्कृतिक विषय को लिया जाता है। इसी प्रकार कई डायरियो मे किसी विशेष स्थल व नगर का वर्णन होता है।

जीवनीपरक साहित्यरूपों के अंतर्बन्ध

आत्मकथा और जीवनी—जब कोई लेखक कुछ वास्तविक घटनाओ के आधार पर श्रद्धेय व्यक्ति की जीवनी कलात्मक रूप से प्रस्तुत करता है तो साहिय का वह रूप जीवनी कहलाता है। इससे स्पष्ट है कि जीवनी कोई दूसरा व्यक्ति लिखता है। आत्मकथा गद्य का वह रूप है जिसमे लेखक व्यक्तिगत जीवन का विवेचन नि सकोच रूप से करता है और इसके साथ ही वह बाह्य विश्व से सम्बन्धित मानसिक क्रियाओं प्रतिक्रियाओ का विवेचन भी करता है। आत्मकथा लेखक स्वय लिखता है। जीवनी और आत्मकथा दोनो ही ऐसे व्यक्तियो की लिखी जाती हैं जिनका जनता मे सम्मान होता है। वही व्यक्ति आत्मकथा लिखता है जिसका जीवन साधारण पुरुषो के जीवन से ऊँचा होता है। यही बात जीवनी के विषय मे कही जाती है। आत्मकथा का लेखक स्वय होता है इसलिए यह अधिक प्रामाणिक कही जा सकती है। इसमे लेखक अपने ही जीवन का विश्लेषण निःसकोच रूप से करता है। इसलिए इसमे किसी भी प्रकार का सदेह उत्पन्न नही हो सकता। लेखक पूर्ण ईमानदारी से अपने जीवन एव मस्तिष्क का विकास पाठक के सम्मुख रखता है। इस प्रकार सत्यवादिता एव स्पष्टता का

१. आलोचना : उसके सिद्धान्त, ले० डा० सोमनाथ गुप्त

लेखक मे होना अत्यन्त आवश्यक है। आत्मकथा मे सत्य से अभिप्राय विषयगत सत्य से नही कुछ सीमित विषय तक का सत्य है जिससे लेखक का जीवन बढता है एवं जिससे उसके विशेष गुण एव घटनाओ के परिपक्व होने की दृढता एव व्यावहारिक गुण एव आकृति स्पष्ट होती है। [1]

It will not be an objective truth but the truth in the confines of a limited purpose, a purpose that brows out of the author's life and imposes itself on him as his specific quality and thus determines his choice of events and the manners of his treatment and expression.

जीवनीकार भी अपने नायक के जीवन की प्रत्येक घटना का वर्णन तभी करता है जबकि उसके पास उसके विषय मे कोई प्रमाण हो। वह भी अपने नायक के समस्त जीवन का नि सकोच रूप से वर्णन करता है। जीवनीकार भी सत्यपथ से कभी विचलित नही होता। यह हो सकता है,कि दोष दर्शन मे उसके हृदय मे सहृदयता की भावना ऐसी हो कि वह यथार्थता की रक्षा करता हुआ चरित्र नायक की दुर्बलताओ का परिहास न करे। जीवनीकार सत्य का पल्ला कभी नही छोडता। वह इसमे मर्यादा की रक्षा के लिए सब कुछ त्याग करने को तैयार रहता है।[2] इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा एवं जीवनी मे जो कुछ भी वर्णित होता है वह सत्य होता है परन्तु जीवनी मे कई बार ऐसा देखा जाता है कि लेखक कभी-कभी श्रद्धा और प्रेम के अतिरेक मे आकर नायक के गुणो का आवश्यकता से अधिक वर्णन कर जाता है परन्तु इसका यह अर्थ नही कि उसके दोषो का वर्णन नही करता वह भी करता है लेकिन अन्तर केवल यही है कि उन दोषो का वर्णन वह ऐसे ढग से करता है जिनका प्रभाव पाठक पर बुरा न पडे। इस प्रकार जीवनीकार अपने नायक के गुण-दोषो का वर्णन सहृदयतापूर्वक करता है।

आत्मकथा लेखक का उद्देश्य आत्मनिर्माण आत्मपरीक्षण के साथ-साथ अतीत की स्मृतियो को पुनर्जीवित करने का मोह होता है। आत्मकथा लेखक आत्माकन द्वारा आत्मपरिष्कार एव आत्मोन्नति करना चाहता है इसके अतिरिक्त अन्य उद्देश्य यह भी हो सकता है कि लेखक के अनुभवो का लाभ अन्य लोग भी उठा सके। यही बात जीवनीकार के उद्देश्य के विषय मे भी कही जा सकती है। वही जीवनी उत्कृष्ट कही जा सकती है जिसको पढकर पाठक कुछ प्रेरणा ग्रहण कर सके इस प्रकार आत्मकथा एव जीवनी लेखक का उतरदायित्व बडा गहन है। उन्हे यह देखना पडता है कि जो कुछ वे कह रहे हैं, वास्तव मे वह कथनीय है और उसमे कुछ भी अनर्गल नही है। उन्हें यह भी देखना पडता है कि जो कुछ वह दे रहे हैं वह सामान्य से ऊँचा है कि

1. Design And Truth in Autobiography by Prof. Roy Pascal, P. 83
२. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १९९

विषय मे क्या याद कर सकता है। यह वर्तमान काल मे भूत का निर्णय है जिसे एक बहुमूल्य पत्र या वाक्य कहा जा सकता है।

There is further essential difference between autobiography and biography. We are the only authority for the 'chain of feeling' in our lives, and we establish this chain mainly through memory. The biographer depends on recorded data and as far as possible checks all subjective memories against records often in fact rectifying faulty recollections —Memory can be trusted because autobigraphy is not just reconstruction of the past, but interpretations, the significant thing is what the man can remember of his past. It is a judgment on the past within the framework of the present, a document in the case as well as a sentence. [1]

इससे स्पष्ट है कि आत्मकथा और जीवनी मे सम्बन्ध भी है और अन्तर भी हैं। गद्य की दोनो ही विधाएँ साहित्य मे अपना विशेष स्थान रखती हैं।

आत्मकथा और डायरी

डायरी वह आत्मीय पुस्तक है जिसमे लेखक अपने जीवन मे घटने वाली घटनाओं का वर्णन तो करता ही है परन्तु इसके साथ मानसिक प्रतिक्रियाओं का भी सक्षिप्त एव रोचक ढग से वर्णन करना है। यह आत्मकथा की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय होती है। इसमे जिस समय घटना घटित हो रही होती है उस समय जो मन की स्थिति होती है उसका भी विवेचन होता है इसलिए इसमे किसी भी प्रकार का बनावटीपन नही होता। आत्मकथा मे भी लेखक जहाँ अपने जीवन सम्बन्धी घटनाओ का वर्णन करता है वहाँ उनके प्रति मानसिक प्रतिक्रियाओ का भी विश्लेषण करता है। इसकी दोनो ही विधाओ मे लेखक आत्म-विश्लेषण एव आत्मविवेचन करता है।

गद्य की इन दोनो ही विधाओ मे लेखक अपने व्यक्तित्व के गुण दोषो का विवेचन करता है अन्तर केवल इतना है कि आत्मकथा मे इन घटनाओ का वर्णन सक्षिप्त होता है। डायरी मे थोडा विस्तारपूर्वक होना है क्योकि उसमे दिन प्रतिदिन का ब्यौरा होता है। इसके अतिरिक्त आत्मनिरीक्षण तो इनमे होना है, कुछ अन्य व्यक्तियो के चरित्र पर भी प्रकाश डाला हुआ होता है जिनका प्रभाव लेखक के व्यक्तित्व पर पडा हुआ होता है। दोनो ही विधाओ मे तत्कालीन प्रसिद्ध व्यक्तियो के विषय मे लेखक के व्यक्तित्व के साथ-साथ पाठक को पता चल जाता है।

आत्मकथा एव डायरी लेखक का सर्वप्रिय एवं सर्वप्रतिष्ठित होना आवश्यक है। प्रसिद्ध व्यक्ति ही अपनी डायरी एव आत्मकथा लिखते हैं। साधारण व्यक्ति के जीवन चरित्र का प्रभाव पाठको पर नही पड सकता। इन लोगो के डायरी एवं

---

1. Design And Truth in Autobiography by Roy Pascal, P. 18-19

आत्मकथा लिखने का उद्देश्य यह होता है कि उनके जीवन से लोग कुछ प्रेरणा ग्रहण कर सकें। इसके साथ ही यह आवश्यक बात है कि कुछ ऐसे प्रतिष्ठित व्यक्ति होते हैं जिनके विषय मे अनेक भ्रातियाँ उत्पन्न हो जाती है। उनके दुराव के लिए इनको प्राय लिखा जाता है जिसमे उनके वास्तविक व्यक्तित्व की जानकारी लोगो को हो जाय।

इन समानताओ के होते हुए भी इन दोनो मे कुछ भेद भी है जिनसे इनको पृथक्-पृथक् रक्खा गया है। डायरी मे प्रत्येक घटना का जब वर्णन किया जाता है तब उसमे लेखक उसके घटित होने का स्थान, विशेष समय और सन् का विशेष रूप से ध्यान रखता है और उनका उल्लेख करता है। इसके साथ ही जिस दिन वह घटना घटती है उस विशेष दिन का भी नाम लिखा हुआ होता है। आत्मकथा मे ऐसा नही होता। इसमे किसी विशेष घटना का जिसका प्रभाव लेखक के जीवन पर आवश्यकता से अधिक पड़ता हो उसका ही विस्तारपूर्वक उल्लेख होता है वरन् तो उल्लेख मात्र ही होता है।

इसके अतिरिक्त आत्मकथा मे जो सुसंगठितता एव सुसम्बद्धता पाई जाती है वह डायरी मे प्राय नही होती। आत्मकथा मे तो लेखक अपने जीवन का क्रमबद्ध इतिहास लिखता है। यदि उसमे कुछ टेढापन आ जाये तो उसे तो समझना ही कठिन हो जाये। इसलिए जितनी सुसम्बद्धता का ध्यान आत्मकथा लेखक रखता है उतना डायरी लेखक नही। इसमे प्राय. असम्बद्धता पाई ही जाती है।

आत्मकथा और डायरी दोनो का अन्तर प्रायः स्पष्ट ही है। आत्मकथा तो किसी विशेष समय और क्षण के जीवन की झाँकी होती है जबकि डायरी चाहे वह कितना ही प्रभावदायक क्यो न हो उसमे एक समय के क्षण मे घटित अनेक घटनाओ का वर्णन क्रमानुसार होता है। डायरी लेखक उस समय मे घटित घटनाओ मे से महत्वपूर्ण घटनाओ को नोट कर लेता है जबकि उसके अन्त को और विस्तृत अर्थ को वह नही उसमे सकलित कर सकता।[1]

The formal difference between diary and autobiography is obvious. The letter is a review of a life from a particular moment in time, while the diary, however reflective it may be, moves through a series of moments in time. The diarist notes down what at that moment, seems of importance to him, its ultimate long range significance cannot be assessed.

कुछ भी हो डायरी और आत्मकथा का सम्बन्ध भी है। आत्मकथा लेखक अपने विचारो और व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए डायरी की पक्तियो को अवश्य लिखता है जिससे उसकी रचना अधिक प्रामाणिक बन जाये। डायरी और आत्मकथा मे अन्तर केवल इतना ही है कि डायरी मे घटनाओ का वर्णन होता है और उस समय की

---

१. Design And Autobiography by Roy Pascal, P. 3.

मानसिक एव अन्य परिस्थितियो का वर्णन होता है परन्तु आत्मकथा में लेखक उन घटनाओ का वर्णन कर उनके अन्तिम परिणाम का एव उनके प्रभाव का वर्णन कर आवश्यकतानुसार टीका-टिप्पणी करता है। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी और आत्मकथा मे जहाँ परस्पर समानताएँ है वहाँ कुछ अन्तर भी है, दोनो का परस्पर सम्बन्ध भी है।

आत्मकथा और संस्मरण

जब लेखक अतीत की अनन्त स्मृतियो मे से कुछ रमणीय अनुभूतियो को अपनी कोमल कल्पना से अनुरजित कर व्यजनामूलक सकेत शैली मे अपने व्यक्तित्व की विशेषताओ से विशिष्ट कर रमणीय एव प्रभावशाली रूप से वर्णन करता है तो उसे 'सस्मरण' कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि सस्मरण मे लेखक केवल अपने जीवन के उल्लेखनीय क्षणो का उल्लेख करता है। इसके साथ ही केवल उन्ही घटनाओ का उल्लेख होता है जिनसे लेखक के जीवन मे घटित होने वाले परिवर्तनो का सकेत मिलता है और जो अन्य लोगो के कौतूहल को शान्त करने मे सहायक होती है इसके अतिरिक्त आत्मकथा मे जीवन का आद्योपान्त सुसम्बद्ध विवरण प्रस्तुत किया जाता है। आत्मकथा मे लेखक अपने जीवन की प्राय: आद्योपान्त कहानी लिखता है किन्तु आत्मसंस्मरण मे जीवन के एक खड के सस्मरण लिखता है। आत्मसस्मरण मे जीवन को नई दिशा मे मोडने वाली या औरो को सुनने वाली घटनाओ का उल्लेख किया जाता है। इस प्रकार का कार्य आत्मकथा से सरल है। आत्मकथा मे अपने जीवन से सम्बन्ध रखने वाले अनेक व्यक्ति जीवित रहते हैं। उनके साथ सभी प्रकार का प्रिय-अप्रिय व्यवहार समयानुकूल करना पडता है। अत· उन सबको बचाते हुए राग-द्वेष से पृथक् होकर अपनी जीवनी लिखना अत्यन्त दुष्कर हो जाता है किन्तु आत्मसस्मरण मे उन्ही घटनाओ का उल्लेख करना होता है जिनको आसानी के साथ सबके सामने रखा जा सकता है।[1]

आत्मकथा लेखक का सम्बन्ध अन्तर्जगत् से अधिक रहता है जबकि सस्मरण लेखक का बाह्य जगत् से। आत्मकथा मे लेखक प्राय उन्ही स्थलो का वर्णन अधिक मात्रा मे करता है जिनसे उसका आन्तरिक विश्लेषण होता है। इसीलिए आत्मकथा मे देशकाल कुछ गौण रहता है। सस्मरणो मे भी कुछ स्थल ऐसे आते है जिनमे लेखक आत्मविश्लेषण करता है परन्तु इसमे कई स्थल ऐसे आते हैं जिनमे लेखक को बाह्य जगत का विश्लेषण करना अनिवार्य हो जाता है। यात्रा सम्बन्धी सस्मरणो मे बाह्य जगत् का विश्लेषण प्रमुख रूप से होता है।

शैली की दृष्टि से आत्मकथा एव सस्मरण मे समानता है। आत्मीयता, स्पष्टवादिता, सुसगठितता एव स्वाभाविकता आदि गुण दोनो की ही शैली मे होते हैं जोकि कृति को प्रभावोत्पादक बनाते है।

---

१. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० २०२-२०३

संस्मरण और आत्मकथा दोनो ही प्रसिद्ध व्यक्ति लिख सकते है। दोनो लेखको का उद्देश्य समान होता है। इस प्रकार कोई भी आत्मकथा ऐसी नही जिसे किसी-न-किसी रूप से सस्मरण न कहा जा सकता हो और कोई भी सस्मरण ऐसा नही है जिसमे आत्मकथात्मक सूचनाएँ न हो। दोनो ही काल क्रमानुसार, प्रभावदायक, व्यक्तिगत अनुभवो पर आधारित है। परन्तु लेखक के ध्यान मे एक साधारण अन्तर होता है। आत्मकथा मे लेखक का ध्यान उसके अपने तक सीमित होता है परन्तु सस्मरण मे दूसरो की ओर होता है।[1]

There is no autobiography that is not in some respect a memoir and no memoir that is without autobiographical information, both are based on personal experience, chronological and reflectivo But there is a general difference in the direction of the author's attention In the autobiography proper attention is focused on the self in the memoir on others.

रेखाचित्र और संस्मरण

रेखाचित्र साहित्य का वह गद्यात्मक रूप है जिसमे एकात्मक विषय विशेष का शब्द रेखाओ से सवेदनशील चित्र प्रस्तुत किया जाता है। इससे स्पष्ट है कि रेखाचित्र व्यक्ति के सम्पूर्ण चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। यह सस्मरणो की भाँति जीवन के किसी एक पक्ष का विवरण न देकर उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का दृश्य-सा उपस्थित कर देते हैं। यह दृश्य इस ढग का होता है कि उससे व्यक्ति के बाह्य और आन्तरिक व्यक्तित्व की झाँकी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। सस्मरण लेखक तो अपने नायक का विश्लेषण स्वय करता है परन्तु रेखाचित्र लेखक तो पाठक के सम्मुख शब्द रेखाओ द्वारा एक चित्र-सा रख देता है जिससे पाठक को उस चित्रित व्यक्ति के व्यक्तित्व का स्वय अनुभव हो जाता है। इस प्रकार रेखाचित्रकार चित्रकार की भाँति होता है। वह तो चित्रकार की तरह चित्र खीच कर पाठको के सम्मुख रख देता है। अब यह पाठको का कर्तव्य हो जाता है कि वे उसके व्यक्तित्व का विश्लेषण करें। सस्मरण लेखक की भाँति वह स्वय नायक के चरित्र का विश्लेषण नही करता। सस्मरण चरित्र के किसी एक पहलू की झाँकी देते हैं किन्तु रेखाचित्र व्यक्ति के व्यापक व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हैं। उनमे व्यक्ति का भीतरी और बाहरी आपा या स्वल्पता कुछ स्पष्ट रेखाओ मे व्यक्त हो जाती है। उसमे कुछ-कुछ व्यग्य चित्रकार की सी प्रवृत्ति रहती है। उसमे व्यक्ति की प्रवृत्तिगत विशेषताएँ कुछ बढा-चढाकर दिखाई जाती हैं जिससे वह सहज मे आकषण का विषय बन सकें।[2]

सस्मरण और रेखाचित्र मे एक प्रमुख भेद यह है कि सस्मरण मे लेखक पर

1. Design and Truth in Autobiography by Roy pascal, P. 5.
२. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २५०

शब्द-योजना और वाक्य-विन्यास सम्बन्धी कोई नियन्त्रण नही होता किन्तु रेखाचित्र के विषय मे ऐसा नही है। रेखाचित्रकार की सीमाए निश्चित है उसे तो कम-से-कम शब्दो मे सजीव रूप-विधान और छोटे-से-छोटे वाक्य से अधिक-से-अधिक तीव्र और मर्म-स्पर्शी भाव व्यजना करनी पडती है। अपने इस कार्य मे वही कलाकार सफल हो सकता है जिसका हृदय अधिक सवेदनशील और जिसकी दृष्टि सूक्ष्मपर्यवेक्षण, निपुण एव मर्म-भेदी होती है।[1] रेखाचित्र वर्णनात्मक अधिक होते है और सस्मरण विवरणात्मक अधिक होते हैं। सस्मरण जीवनी साहित्य के अन्तर्गत आते हैं। ये प्राय. घटनात्मक होते हैं किन्तु वे घटनाएँ सत्य होती हैं और चरित्र की परिचायक भी। रेखाचित्र में वर्णन का प्राधान्य होता है किन्तु इनके विषय काल्पनिक नही होते हैं। ये सजीव और निर्जीव दोनो ही व्यक्तियो के होते हैं।[2]

इससे स्पष्ट है कि रेखाचित्र और सस्मरण मे यद्यपि निषय और शैली की दृष्टि से भेद है फिर भी इन दोनो का घनिष्ठ सम्बन्ध है। रेखाचित्र मे जिन घटनाओ का वर्णन किया जाता है वे सस्मरण पर आधरित होती हैं और सस्मरण मे जिस घटना व व्यक्ति के जीवन के जिस भी भाग का चित्रण किया जाता है उस चित्रण मे अवश्य ही रेखाचित्र की शैली का प्रयोग किया हुआ होता है। यद्यपि वह चित्रण उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झलक नही देता पर जितना भी वह होता है उतना ही बहुत तीव्र एवं स्पर्शदायक होता है।

इन विधाओं द्वारा विशिष्ट शैलियों का अवधारण

गद्य की इन विधाओ द्वारा कुछ विशिष्ट शैलियो का हिन्दी साहित्य मे अव-धारण हुआ है जो इस प्रकार है—

जीवन चरित शैली

शैली अनुभूत विषय-वस्तु को सजाने के उन तरीकों का नाम है जो उस विषय-वस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते हैं।

जीवन चरित्र लेखक को अपने नायक के काल्पनिक रूप की सृष्टि नहीं करती पडती उसे तो केवल साचा तैयार करना पडता है। यह साचा शैली के नाम से पुकारा जा सकता है।[3] चरित्र नायक के व्यक्तित्व को लेखक इस ढग से वर्णन करता है जिससे वह पाठको को प्रभावोत्पादक प्रतीत हो। उसके व्यक्तित्व को ही प्रेरणादायक एव आकर्षक बनाने के लिए लेखक को अपनी शैनी का बहुत ध्यान रखना पडता है।

नायक के समस्त जीवन को क्रमानुसार वर्णन करना पडता है जिससे वह असम्बद्ध प्रतीत न हो। इसके लिए उसे अनावश्यक घटनाओ का निवारण करना पडता है। अन्य प्रमुख बात यह है कि उसे तटस्थ होकर नायक के व्यक्तित्व के गुण-दोषो

१ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात, ले० त्रिगुणायत पृ० ४६०

२ काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २५२

३. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १६६

का ब्यौरा करना पडता है। आवश्यकता से अधिक गुणों का वर्णन हानिकारक होता है। इसी प्रकार दोषो के वर्णन मे कहा जा सकता है। इस कार्य मे लेखक का सहृदय होना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार जीवन चरित शैली मे सुसगठितता, सम्बद्धता निरपेक्षता, तटस्थता एव स्वाभाविकता आदि गुणो का समावेश होता है।

जीवन चरित लिखने मे लेखक कई प्रकार की शैलियो का प्रयोग करता है जिनके सम्मिश्रण से वह अपने भावो को व्यक्त करता है। जब लेखक नायक के नख-शिख एवं वेशभूषा का वर्णन करता है तब वहाँ हमे वर्णनात्मक शैली दृष्टिगोचर होती है। जहाँ वह उसके जीवन से सम्बन्धित घटनाओ का विवरण प्रस्तुत करता है वहाँ विवरणात्मक शैली का प्रयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त जीवनियो मे कही-कही औपन्यासिक शैली का भी आभास होता है। लेखक नायक के जीवन को और भी स्पष्ट करने के लिए कही-कही उसके वार्तालाप को ज्यो का त्यो स्पष्ट रूप से रख देता है जो कि इस शैली का एक विशिष्ट गुण है। इस कथात्मक शैली का प्रयोग नायक के जीवन सम्बन्धी घटनाओ, यात्राओ और तथ्यो आदि के वर्णन मे करता है। जीवनी लिखने मे लेखक संस्मरणो का प्रयोग भी करता है इसलिए जिन भी सस्मरणो का समावेश जीवनी मे होता है वे प्रभावोत्पादक होने के साथ-साथ नायक की प्रामाणिकता की ओर सकेत करते है। इन सभी के सम्मिश्रण को ही 'जीवन चरित शैली' कहा जा सकता है। आवश्यकतानुसार इन सभी शैलियो का प्रयोग 'जीवन चरित शैली' मे किया जाता है।

आत्म-चरित शैली

इस शैली की जीवनियो का लेखक स्वयं चरितनायक होता है। लेखक के लिए, अपने चरित्र का विश्लेषण सुगम काम नही है, सब ओर से साइस बटोरकर लेखक आत्मविश्लेषण करने बैठता है। ऐसा करने से पहले उसे अपनी आत्मा को उज्ज्वल और गर्वहीन बनाने की आवश्यकता होती है। अपनी कमजोरियो को पहचानना और सब के सामने उन्हे स्वीकार करना साधारण आत्मा का कार्य नही है।[1] इसलिए लेखक को आत्म-चरित लिखने में नि.संकोच आत्मविश्लेषण करना पडता है। आत्मकथा को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए लेखक को अपनी शैली सुदृढ बनानी पड़ती है। शैली को सुदृढ बनाने के लिए उसमे वह सुसम्बद्धता, स्पष्टता, सक्षिप्तता एवं स्वाभाविकता, आदि गुणो का समावेश करता है। इन गुणो से युक्त होने पर ही आत्मकथा शैली को उत्कृष्ट एवं परिपक्व कहा जा सकता है।

आत्मचरित शैली मे भी हमे अनेक शैलियो का प्रयोग लक्षित होता है जिनके सम्मिश्रण से यह शैली परिपक्व बनती है। आत्मकथा मे लेखक अपने जीवन के विभिन्न पहलूओ को स्पष्ट करने के लिए डायरी के कुछ अंशो का समावेश अवश्य करता है।

---

१. आलोचना के सिद्धात, ले० डा० सोमनाथ गुप्त, पृ० २२६

इसके अतिरिक्त कही-कही वह अन्य व्यक्ति से सम्बन्ध दिखाने के लिए या अन्य व्यक्ति के व्यक्तित्व के विषय मे कुछ कहने के लिए पत्रो का भी समावेश करता है। कही-कही सस्मरणो के रूप मे भी आत्म-विवेचन होता है। जब लेखक सम्पर्क मे आए अन्य व्यक्ति की वेशभूषा व नख-शिख का वर्णन करता है तब वर्णनात्मक शैली का भी दिग्दर्शन होता है। जब वह अपना सम्बन्ध किसी अन्य पुरुष से या किसी विषय सम्बन्धी विवाद को ज्यो का त्यो अपनी आत्मकथा मे रखता है वहाँ कथात्मक शैला की झलक दिखाई पडती है। मेरा यहाँ यह कहने का अभिप्राय नही कि इन सभी शैलियो का प्रयोग करना उसका उद्देश्य है बल्कि अपनी कृति को अधिक स्पष्ट एव प्रामाणिक बनाने के लिए उसे ऐसा करना पडता है। इस प्रकार आत्मचरित शैली मे आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की शैलियो का प्रयोग लेखक कर सकता है। इन सभी का प्रयोग तो वह गौण रूप से करता है, प्रधानता तो आत्मकथात्मक जीवन चरित शैली की ही होती है।

रेखाचित्र शैली

रेखाचित्र की कला बहुत कुछ फोटोग्राफी की कला की तरह है। रेखाचित्रकार विश्व की किसी भी चेतन अथवा अचेतन वस्तु का चित्र अपने शब्दो द्वारा बना लेता है। वह जैसा चित्र होता है वैसा ही अकित करता है इसलिए रेखाचित्र शैली मे चित्रात्मकता की प्रधानता होती है।

रेखाचित्रकार सीमित क्षेत्र मे ही भावाभिव्यक्ति कर सकता है। इसलिए इस शैली मे सक्षिप्तता होती है। प्रत्येक चित्र जो भी लेखक खीचता है उस पर उसके व्यक्तित्व का अवश्य ही प्रभाव पडा हुआ होता है। प्रत्येक व्यक्तित्व का चित्रण इस ढग से होता है जो कि प्रत्येक पाठक को आकर्षक, प्रेरणादायक एवं प्रभावोत्पादक प्रतीत होता है। इस प्रकार रेखाचित्र शैली मे चित्रात्मकता, सक्षिप्तता, स्वाभाविकता एव प्रभावोत्पादकता आदि विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

कही-कही लेखक अपने विभिन्न विचारो और भावो को स्पष्ट रूप से वर्णन करने के लिए विभिन्न शैलियो का प्रयोग अपनी इस शैली के भीतर करता है। जब लेखक ऐतिहासिक, पौराणिक वस्तुओ और घटनाओ के रेखाचित्र प्रस्तुत करता है वहाँ कथात्मक शैली का प्रयोग करता है क्योकि ऐसे रेखाचित्रो मे उसकी चित्रण शैली वस्तुपरक अधिक होती है। इस शैली मे लेखक अपने विषय एव वर्णन को स्पष्ट करने के लिए कथोपकथन का भी प्रयोग कर लेता है। कई रेखाचित्रो मे लेखक सस्मरण शैली का प्रयोग करता है। जब लेखक किसी वस्तु, घटना या व्यक्ति का स्मृतिमूलक अकन करता है तब वह इस शैली का प्रयोग करता है। कही-कही लेखक किसी वस्तु एव घटनाओ के चित्रण से कोई लाक्षणिक अर्थ या सदेश व्यजित करता है तो वहाँ वह प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग करता है। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्रकार अपनी शैली मे इन विभिन्न शैलियो का प्रयोग कर सकता है। इन

शैलियो का आवश्यकतानुसार प्रयोग करके वह अपनी रेखाचित्र शैली को परिपक्व बनाता है।

संस्मरण शैली

'संस्मरण' लेखक अपने जीवन से सम्बन्धित भी लिख सकता है और अन्य व्यक्ति के जीवन के विषय मे भी, पर दोनो मे उसके व्यक्तिगत जीवन का प्रभाव पडा हुआ होता है। इस शैली मे प्रभावोत्पादकता, रोचकता, स्पष्टता, आत्मीयता आदि विशेषताएँ होती है।

जब लेखक व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित सस्मरण लिखता है तो उसमे आत्मकथात्मक शैली की विशेषताएँ पायी जाती है। जब लेखक कुछ घटनाओ एवं यात्राओ का वर्णन सस्मरणो मे प्रकट करता है तो इसमे वर्णनात्मक एवं विवरणात्मक शैलियाँ दृष्टिगोचर होती है। कुछ लेखक निबन्धात्मक शैली मे सस्मरण लिखते हैं उनके जीवन का प्रत्येक सस्मरण निबन्धो की भाँति स्वतत्र होता है। परन्तु इन सभी शैलियो के वर्णन मे वह 'सस्मरण शैली' की विशेषताओ को नही भूलता जो कि उसे परिपक्व बनाती हैं। विषय की आवश्यकतानुसार इन सभी शैलियो का प्रयोग वह कर सकता है। इस शैली की विशेषता यह है कि इसमे लेखक चरित्र के चित्रण के साथ-साथ उसका विश्लेषण भी करता हैं। सस्मरण शैली मे चरित्र नायक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विश्लेषण नही होता यह तो जीवन की किसी एक झाकी का वर्णन विश्लेषणात्मक ढग से करता है। प्रत्येक वर्णित विषय अपने मे स्वतत्र होता है।

पत्र एव डायरी शैली

पत्र शैली—पत्रात्मक शैली गद्य की अन्य विधाओ की शैलियो से पृथक होती है। इस शैली में सर्वप्रमुख विशेषता आत्मीयता है। पत्र साहित्य मे लेखक का अपनापन स्वतत्र रूप से प्रकट होता है। इस आत्मीयता का सम्बन्ध लेखक के अपने व्यक्तित्व के साथ तो होता ही है दूरस्थ व्यक्ति से भी होता है। अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि पत्र लेखक पत्र भाव ग्राहक के अनुकूल लिखता है। इन दोनो विशेषताओ से सम्बद्ध होने पर ही यह पत्र शैली प्रभावोत्पादक हो सकती है।

कुछ पत्र ऐसे होते हैं जिनमे लेखक किसी विषय का वर्णन करता है। यह विषय साहित्यिक राजनैतिक कोई भी हो सकता है। ऐसे पत्रो मे लेखक का व्यक्तित्व गौण होता है और विषय प्रधान होता है। ऐसे पत्रो मे व्यास शैली और समास शैली दोनों का ही प्रयोग होता है। जो आत्मकथात्मक पत्र होते हैं उनमे आत्मकथा शैली की विशेषताएँ पाई जाती हैं। जो पत्र किसी अन्य व्यक्ति के चरित्र को स्पष्ट करने के लिए लिखे जाते हैं उनमे जीवन चरित शैली का दिग्दर्शन होता है। वर्णनात्मक शैली का प्रयोग पत्रो में वहाँ पाया जाता है जहाँ किसी विशेष स्थान नगर का वर्णन होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि पत्र शैली में भी अन्य शैलियो का प्रयोग आवश्यकता-

नुसार होता है, परन्तु इनके मूल मे पत्र शैली की प्रमुख विशेषताएँ सुदृढता से रहती है इसलिए यह परिपक्व शैली बन जाती है।

डायरी शैली—डायरी शैली भी गद्य की अन्य शैलियो से पृथक है। इस शैली की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमे लेखक अपने प्रतिदिन का वर्णन समय, तिथि एव स्थान के आधार पर करता है। नि सकोच आत्मविश्लेषण, घटनाओ मे सम्बद्धता, सजीवता, पर्याप्त सत्यता, स्वाभाविकता आदि विशेषताएँ इस शैली मे होती है। इस शैली मे कुछ ऐसी घटनाओ का वर्णन करता है जो सस्मरण-प्रधान होती है इसलिए उनमे सस्मरण शैली की विशेषताएँ प्राप्त होती है। जिन डायरियो का विषय सामाजिक एव सास्कृतिक होता है उनकी शैली चिन्तनात्मक होती है। कई स्थानो पर लेखक किसी विशेष नगर व स्थान का वर्णन करता है वहाँ वर्णनात्मक शैली का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। कवि लोगो द्वारा लिखी हुई डायरियो मे भावात्मक शैली का पुट होता है। इस प्रकार ज्ञात होता है कि डायरी शैली मे आवश्यकतानुसार विभिन्न शैलियो का प्रयोग हो सकता है परन्तु इसके मूल मे वे सभी गुण विद्यमान होते हैं जो कि डायरी शैली मे बताए गये है।

इन विधाओं में अन्य विधाओ का पारस्परिक संयोग तथा इनके अंतर्बन्ध

नाटक, उपन्यास और जीवनी—उपन्यास गद्य की वह विधा है जिसमे लेखक नायक के समस्त जीवन का चित्रण, आद्योपान्त करता है परन्तु नाटक की स्थिति इससे कुछ भिन्न है। इसमे नाटककार नायक के जीवन के कुछ विशेष स्थल एव समय का चित्रण करता है।

नाटक यद्यपि दृश्यकाव्य के भीतर आता है पर उपन्यास मे भी कुछ विशेष स्थल ऐसे होते है जिनमे नाटकीय शैली का प्रयोग होता है। इससे प्रतीत होता है कि नाटक उपन्यास मे से ही निकला हुआ एक टुकड़ा है जो कि जीवन के किसी विशेष भाग का चित्रण नाटकीय ढग से प्रस्तुत करता है।

नाटककार अपने पात्रो का एव नायक का व्यक्तित्व अन्य पात्रो के वार्तालाप एव हावभाव क्रियाओ से ही व्यक्त कर सकता है। वह पाठको के सम्मुख नही आ सकता परन्तु उपन्यास मे ऐसा नही होता। उपन्यासकार के लिए इस प्रकार की कोई पाबन्दी नही है। उसे इस बात की स्वतन्त्रता रहती है कि वह पाठकों तक अपने पात्रो के माध्यम से पहुँचे या सीधा ही उनके सामने आ जाए। वह उपन्यास मे प्रत्यक्ष (Direct) या नाटकीय (Indirect) दोनो प्रणालियो मे से जब जिसकी आवश्यकता हो उसका प्रयोग कर सकता है। जब वह देखता है कि नाटकीय प्रणाली द्वारा उसके पात्र पाठको पर पूरी तरह नहीं खुल पाए तो वह उपन्यास मे प्रकट होकर उनके क्रियाकलापो के पीछे काम करने वाले आन्तरिक प्रेरकों पर प्रकाश डालता हुआ उनमे सामंजस्य ला देता है। नाटककार को यह स्वतन्त्रता उपलब्ध नहीं है। उसके पात्र नाटकीय प्रणाली से जितना खुल पाएँ दर्शकों को उतने मे ही सन्तोष करना पड़ता

है। यह नाटककार की लाचारी है। इसलिए नाटककार के पात्रो का चारित्र बहुधा स्पष्ट नही हो पाता।[१] उपन्यास मे कल्पना का पूरा सयम और व्यायाम रहता है। उपन्यासकार विश्वामित्र की सी सृष्टि बनाता है किन्तु ब्रह्मा की सृष्टि के नियमो से भी बँधा रहता है। उपन्यास मे सुख, दु ख, प्रेम, ईर्ष्या, द्वेष, आशा, अभिलाषा, महत्वाकाक्षाओ, चरित्र के उत्थान-पतन आदि जीवन के सभी दृश्यो का समावेश रहता है। उपन्यास मे नाटक की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता है किन्तु नाटक के मूर्त साधनो के अभाव मे उपन्यासकार उस सभी को शब्द चित्रो द्वारा करता है। नाटक मे पात्र कुछ शब्दो द्वारा व्यजित करते है कुछ भाव-भगी द्वारा। दर्शक को कल्पना पर अधिक जोर नही देना पडता।····· उपन्यासकार को नाटककार की भाँति समय और आकार का भी प्रतिबन्ध नही है····· नाटककार ईश्वर की भाँति अपनी सृष्टि मे अवव्यक्त ही रहता है, वह प्रत्यक्षरूप से स्वय कुछ नही कहता जो कुछ कहना होता है पात्रो द्वारा ही कहलाता है।[२] इससे स्पष्ट है कि नाटक और उपन्यास मे अन्तर होते हुए भी सम्बन्ध है। उपन्यास मे से ही निकला हुआ एक टुकडा है। इस नाटकीय शैली का प्रयोग उपन्यासकार आवश्यकतानुसार अपनी कृति मे करता है। अगर उसको अथवा उस विशेष स्थल को जिसमे इस शैली का प्रयोग हो, निकाल कर रख दिया जाए तो कुछ आवश्यक परिवर्तनो के पश्चात् उसे नाटकीय शैली से सम्बद्ध जीवन का वर्णन कहा जा सकता है।

उपन्यास और जीवन चरित्र मे भी जहाँ कुछ समानताएँ है वहाँ अन्तर भी हैं। यद्यपि इन दोनो विधाओ मे किसी व्यक्ति के जीवन का चित्रण होता है परन्तु अन्तर इतना है कि उपन्यास का नायक कल्पित होते हुए भी समाज मे दृष्टिगोचर होते हुए व्यक्तियो मे से एक होता है और जीवनी लेखक का नायक कोई विशिष्ट एव श्रद्धेय व्यक्ति होता है।

नायक के जीवन चरित्र को स्पष्ट करने के लिए दोनो ही लेखक कल्पना का प्रयोग करते हैं। उपन्यास मे रचनात्मक कल्पना का कुछ अधिक पुट रहता है। जीवनीकार भी कल्पना का प्रयोग करता है किन्तु वह सामग्री के सयोजन और प्रकाशन की विधि मे उससे काम लेता है। फिर भी उसकी कल्पना वास्तविकता से सीमित रहती है वह कल्पना के अलकारो से अपने चरित्र नायक की इतनी ही साज-सम्भाल कर सकता है जितनी मे कि उसका आकार-प्रकार न बदलने पाए। वह उस माँ की भाँति है जो अपने बालक को नहला-धुलाकर, बाल सम्हालकर तथा धुले कपडे पहना कर समाज मे भेजती है। कपडो के चुनाव मे वह अपनी रुचि और कल्पना से काम लेती है किन्तु वह आकृति की असलियत को बदलने वाले पाउडर पेंट का कम प्रयोग

---

१. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, ले० गोविन्द त्रिगुणायत, पृ० ४१५
२. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय पृ० १५८

करती है।[1] इससे यह प्रतीत होता है कि दोनो ही विधाओ मे कल्पना का प्रयोग होता है परन्तु जीवनी मे लेखक वास्तविकता का अधिक सहारा लेता है। जीवनी मे कल्पना और अत्युक्ति की इतनी कम व अल्पमात्रा मिलती है जितनी आटे मे नमक की होती है। उपन्यासकार अपनी कला के बल से ऐसी रचना करता है जिसे पढकर सोचना पडता है कि यह चरित नायक कौन हो सकता है। उपन्यासकार का मुख्य उद्देश्य नायक के चरित को कल्पना से अलकृत कर आकर्षक रूप मे पाठको के सामने रखने का होता है और इसके लिए वह जीवन की घटनाओ पर कई ऐसे झीने आवरण चढाता है जिनसे नायक का रूप सुन्दरतर होकर झाँकता रहता है किन्तु जीवनी लेखक इस मोह मे अधिक नही फँसता, वह आकृति को सुन्दरतर करने के लिए मस्तक को बिन्दी से, वक्षस्थल को चदन से, केशो को पुष्प से भले ही सजा दे किन्तु वास्तविक रूप को आवरण से ढकता नही।[2]

उपन्यासकार अपने पात्रो की नस-नस से परिचित होता है, उनके बाह्यान्तर को भली प्रकार जानता होता है इसलिए उपन्यास मे उन पात्रो के व्यक्त और अव्यक्त दोनों ही रूपों का चित्रण मिल जाता है। उनके बारे मे कुछ अज्ञान नही रहता। जीवनीकार अपने पात्रो को उतना ही जान पाता है जितना उसके सामने वे खुले हुए होते हैं। शेष उसके लिए रहस्य रहता है। इसलिए जीवनी मे पात्रो का व्यक्त रूप ही चित्रित हो पाता है और पाठको की उनका अधूरा परिचय ही मिल पाता है। उपन्यास के पात्रों की तरह वे जीवनी के पात्रो के मन की अतल गहराइयो मे गोता नही लगा पाते और उनका वह रूप पाठको के लिए अज्ञेय ही रह जाता है।[3] इस प्रकार उपन्यासकार अपने चरित नायक के व्यक्तित्व को जीवनीकार की अपेक्षा अधिक जानता है। जीवनीकार तो उपन्यासकार की भाँति सर्वज्ञता का भी दावा नही कर सकता है। वह द्रष्टा के रूप मे रहता है। वह अपने चरित्र नायक के बहुत से रहस्यो को जानता है किन्तु फिर भी वह उसके मन की सब बातो को पूरी दृढता के साथ नही कह सकता है। अज्ञात विषयो के सम्बन्ध मे वह अनुभव ही से काम लेता है।[4] इसी बात को डा० दशरथ ओझा ने भी पूर्ण रूप से स्वीकार किया है। वह लिखते है कि उपन्यासकार को अपरिचित होते हुए भी यह गर्व है कि वह चरित्र नायक की नस-नस को पहचानता है किन्तु जीवनी लेखक सब भेदो और रहस्यो को जानते हुए भी सर्वज्ञता का दावा नही करता। जीवनीकार चरित्र नायक की बाह्य और आभ्यान्तर स्थितियो का सामजस्य करता हुआ कहता चलता है क्योंकि उपन्यासकार

---

१. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय पृ० २३७

२. समीक्षा शास्त्र, ले० दशरथ ओझा, पृ० १९८

३. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात, ले० गोविन्द त्रिगुणायत, पृ० ४१६

४ काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २३७

की तरह बाह्य स्थितियो को परिवर्तित करने का अधिकार उसे नही प्राप्त है।[1]

गद्य की इन दोनो ही विधाओ मे लेखक नायक के व्यक्तित्व को उभारने के लिए उसके जीवन सम्बन्धी छोटी-छोटी घटनाओ का वर्णन भी करते है। उपन्यास मे जिस प्रकार लेखक प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष शैली का प्रयोग आवश्यकतानुसार कर सकता है उसी प्रकार जीवनी लेखक भी नायक के व्यक्तित्व को स्पष्ट करने के लिए किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति से सम्बन्धित वार्तालाप को ज्यो का त्यो अपनी कृति मे रख सकता है। इस विषय म वह आवश्यकतानुसार अपने विचारो को भी प्रकट कर सकता है। नायक के गुण-दोषो के विवेचन मे दोनो ही लेखक सहृदयता से काम करते है। अन्तर केवल यही है कि उपन्यासकार अपने नायक के गुण एव दोषो को खूब अच्छी तरह से जानता होता है इसलिए वह जरा स्पष्ट रूप से इनका वर्णन कर देता है परन्तु जीवनी लेखक केवल उन्ही का वर्णन कर सकता है जिनको वह स्वयं जानता है या उनके विषय मे उसके पास कुछ प्रमाण हो।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि गद्य की इन तीन विधाओ का पारस्परिक सम्बन्ध है। इनमे से उपन्यास इनके बीच की कडी है। इन दोनो की जहाँ विशेषताएँ प्राप्त होती है वहाँ इनमे भेद भी है। नाटक उपन्यास से निकला हुआ एक टुकडा है जोकि व्यक्ति के किसी विशेष स्थल एव समय का चित्रण है और जीवनी उपन्यास के सदृश किसी विशेष व्यक्ति के जीवन का चित्रण है। अन्तर इतना ही है कि जीवनीकार का नायक सर्वप्रतिष्ठित होता है और उपन्यासकार समाज मे से किसी भी व्यक्ति का चित्रण कर सकता है। इस प्रकार नाटक उपन्यास और जीवनी तीनो ही एक दूसरे पर आश्रित है।

जीवनी, संस्मरण और आत्मकथा

जीवनी, सस्मरण एव आत्मकथा तीनो ही आत्म-अभिव्यक्ति से सम्बन्धित हैं। जीवनी और सस्मरण दोनो ही गद्य की स्वतत्र विधाएँ हैं दोनो के ही तत्व एक-दूसरे से मिले हुए होने पर भी कुछ मौलिक अन्तर है। पहली बात तो यह है कि जीवनी-कार का लक्ष्य व्यक्ति विशेष के जीवन की प्रमुख घटनाओ और परिस्थितियों आदि का सही और व्यवस्थित चित्र प्रस्तुत करना होता है किन्तु सस्मरण लेखक केवल उन बातो का ही चित्रण करता है जिनसे वह स्वय प्रभावित होता है। जीवनी लेखक के लिए यह आवश्यक नही होता कि वह जिस व्यक्ति की जीवनी लिख रहा है उससे व्यक्तिगत रूप से बहुत अधिक परिचित ही हो। कभी-कभी महापुरुषो की जीवनियाँ श्रद्धाभाव से प्रेरित होकर प्राचीन उपलब्ध विवरणो के आधार पर भी लिख डालता है किन्तु सस्मरण के लिए यह नितान्त आवश्यक होता है कि लेखक ने उस व्यक्ति

१. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० वशरथ ओझा, पृ० १६८

या वस्तु का साक्षात्कार प्राप्त किया हो जिसका संस्मरण वह लिख रहा है।[1] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवनी मे तो नायक के समस्त जीवन का वर्णन होता है और संस्मरण लेखक केवल उन्ही घटनाओ का वर्णन करता है जोकि उसे विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। सस्मरण जिस भी व्यक्ति के विषय मे लिखे जाते हैं लेखक को उसका जानना अत्यन्त आवश्यक है जबकि जीवनी मे यह बात नहीं।

सस्मरणो मे लेखक विषय वर्णन के साथ अपने मानसिक विचारो की क्रिया का व्यौरा भी दे सकता है। इसके साथ ही अन्य प्रभावित व्यक्ति के व्यक्तित्व की भी छान-बीनकर सकता है। जबकि जीवनीकार केवल उन्ही घटनाओ का यथातथ्य वर्णन करता है जिनके विषय मे उसके पास प्रमाण हैं या उसके अपने जीवन मे घटी हो। वह किसी अन्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का विश्लेषण नहीं कर सकता। यह बात केवल आत्मसस्मरणों में ही पाई जाती है। सस्मरण किसी प्रसिद्ध व्यक्ति के ही लिखे जा सकते हैं और जीवनी भी किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की ही लिखी जाती है। इस प्रकार जीवनी और सस्मरण का पारस्परिक सम्बन्ध है। कोई भी जीवनी ऐसी नहीं होती जिसमे लेखक व्यक्तिगत संस्मरणों का प्रयोग न करता हो और कोई भी ऐसा संस्मरण नहीं होता जिसका सम्बन्ध किसी अन्य व्यक्ति के जीवन से न रहता हो।

जहाँ तक आत्मकथा और सस्मरण का प्रश्न है इसके विषय मे यह कहा जा सकता है कि कोई भी आत्मकथा ऐसी नही जिसमें किसी न किसी रूप मे सस्मरण का प्रयोग न हो और कोई भी सस्मरण ऐसा नही जिससे आत्मकथात्मक तत्वो का ज्ञान न हो। इस प्रकार इन दोनो विधाओ का आपस मे सम्बन्ध है। इन विशेष-ताओ के होते हुए भी इन दोनो मे कुछ भेद हैं जिससे इन्हे गद्य की स्वतन्त्र विधा माना जाता है। आत्मकथा मे लेखक अपने जीवन का आद्योपान्त विवेचन करता है और सस्मरण मे तो केवल प्रभावित घटनाओ का ही उल्लेख होता है। प्रत्येक सस्मरण अपने मे स्वतन्त्र होता है जबकि आत्मकथा मे से किसी भी अश को स्वतन्त्र नही कहा जा सकता। इसकी प्रत्येक घटना का एक-दूसरे से सम्बन्ध होता है। जबकि सस्मरण ऐसे भी होते हैं जिनमे लेखक को बाह्य जगत् का विश्लेषण करना अनिवार्य हो जाता है।

इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि सस्मरणो का प्रयोग जीवनी और आत्म-कथा दोनो मे किया जाना है अत इन गद्य की विधाओ का पारस्परिक सम्बन्ध है। सस्मरण को जीवनी और आत्मकथा के बीच की कड़ी माना जा सकता है।

पत्र, रेखाचित्र तथा डायरी

प्रत्येक पत्र का विषय स्वतन्त्र होता है और वह जिस भी विषय से सम्बन्ध

---

1. समीक्षा शास्त्र, ले० दशरथ ओझा

रखता है उसमे उसका पूर्णतया वर्णन होने पर भी आकार सीमित होता है। इसी प्रकार रेखाचित्र का भी सीमित ही आकार होता है।

रेखाचित्र मे जीवन के किसी एक भाग का वर्णन नही होता, वह तो समस्त जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते है। इनमे सबसे मुख्य बात यह देखी जाती है कि इनमे वर्णन के अतिरिक्त विश्लेषण नही होता, ऐसे रेखाचित्रो की झाँकी अन्य चरित्रमूलक पत्रो मे पाई जाती है। जिन पत्रो का उद्देश्य किसी अन्य व्यक्ति के चरित्र का वर्णन होता है उनमे पत्र लेखक रेखाचित्रकार की भाति नायक के चरित्र का वर्णन करता है। आकार सीमित होने के कारण रेखाचित्र की झलक दिखाई देने लगती है।

जिस प्रकार रेखाचित्रो का विषय चेतन और अचेतन दोनो मे होता है उसी प्रकार पत्र भी दोनो विषयो से सम्बन्धित होते है। जिन पत्रो मे किसी स्थान एव नगर का वर्णन होता है वे उन रेखाचित्रो जैसे होते हैं जिनमे निर्जीव पदार्थो का चित्रण होता है। विषय एक होते हुए भी पत्र और रेखाचित्र मे अन्तर यह है कि पत्र लेखक अपने व्यक्तित्व की विद्वत्ता के अनुसार साथ-साथ कही टीका-टिप्पणी भी सक्षिप्त रूप से कर सकता है परन्तु रेखाचित्र तो चित्रकार की तरह चित्र ही खीच देता है।

जिस प्रकार आत्मकथात्मक पत्रो मे लेखक का व्यक्तित्व झलकता दृष्टिगोचर होता है उसी प्रकार सस्मरणात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्रो मे जिनमे किसी वस्तु घटना या व्यक्ति का वर्णन होता है लेखक का व्यक्तित्व उभरता है ये समस्त रेखा-चित्र वर्णनात्मक होते हैं। इन सबका चित्रण लेखक तटस्थ भाव से नहीं कर पाता वे उसकी अनुभूति और आस्थाओ से प्रभावित हुए बिना नही रहते। इन सबका सम्बन्ध लेखक के साथ होता है इसलिए आत्मानुभूति का स्वर साथ-साथ मुखरित हो जाता है।

डायरी किसी व्यक्ति के समस्त जीवन का प्रतिबिम्ब होती है। इसमे लेखक अपने जीवन मे घटित घटनाओ का वर्णन समय व स्थान के अनुसार करता है। रेखा-चित्रकार भी जिस भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का चित्रण करता है वह उसके समस्त व्यक्तित्व की झाँकी होती है वह अपनी शब्द रेखाओ से ऐसा चित्रण करता है कि स्वय ही उसका बाह्य और आन्तरिक रूप स्पष्ट हो जाता है। इसका उद्देश्य तो चित्रण करना ही होता है। इसी प्रकार डायरी लेखक भी अपनी घटनाओ का वर्णन इस प्रकार करता है कि उसके व्यक्तित्व का विश्लेषण स्वयं ही हो जाता है।

डायरी मे जब लेखक किसी विशेष स्थान या नगर का चित्रण करता है तब उसकी शैली रेखाचित्रकार की सी हो जाती है जिस प्रकार रेखाचित्रकार शब्द रेखाओ से ऐसा चित्र खीचता है जोकि आकार मे सीमित होते हुए भी आकर्षक प्रतीत होता है। ठीक इसी प्रकार डायरी लेखक भी किसी स्थान या नगर के चित्रण मे करते हैं। अतः स्पष्ट है जब डायरी लेखक किसी वस्तु, स्थान या घटना का वर्णन करते हैं वहाँ रेखाचित्रकार की शैली को अपनाते हैं अन्तर केवल इतना है कि डायरी मे सभी घट-नाओ का वर्णन समय एवं स्थान के अनुसार होता है परन्तु रेखाचित्र मे इस ओर कोई

विशेष ध्यान नही दिया जाता। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्र का सम्बन्ध डायरी और पत्र दोनो से ही है।

नाटक, काव्य तथा गद्यगीत

'काव्य' एक व्यापक शब्द है इसमें गद्य और पद्य दोनो का ही विस्तृत समावेश हो जाता है। इसलिए नाटक का समावेश काव्य के भीतर ही हो जाता है। नाटक की उत्पत्ति ही नृत्य, सगीत और काव्य से हुई है। इसलिए काव्य और नाटक का घनिष्ठ सम्बन्ध है।

नाटक समय और स्थान की सीमाओ से बँधा हुआ होता है और यह दृश्य काव्य के भीतर आया है। नाटक मे जीवन के किसी भी भाग का सीमित चित्रण होता है। काव्य मे लेखक सम्पूर्ण जीवन का चित्रण भी कर सकता है और एकागी जीवन का भी अन्तर केवल इतना है कि नाटक गद्यमयी रचना है और काव्य गद्य-पद्यमयी।

काव्य मे लेखक अपने नायक एवं पात्रो की भावनाओ और अनुभूतियो का अलकृत शैली में वर्णन करता है परन्तु नाटको मे यह बात केवल काव्य नाटको मे ही पायी जाती है। काव्य नाटक काव्यत्व और रूपकत्व का सगम स्थल है। काव्यत्व और नाटक तत्व आकर इसमे ऐसे स्वरूप विधान की सृष्टि कर देते हैं जिसमे काव्यत्व के कारण मानव जीवन के रागतत्व बडी स्पष्टता से उभर कर आते हैं व भावनाएँ और अनुभूतियाँ अपनी तीव्र और वेगवती धारा मे हमे अपने साथ बहा ले जाते हैं। आवेगो की तीव्रता के कारण काव्य नाटक मे छन्दोबद्ध लयपूर्ण और अलंकृत भाषा का व्यवहार किया जाता है।[1]

काव्य मे लेखक अपने व्यक्तित्व को प्रत्यक्ष एव परोक्ष दोनो ही प्रकार से व्यक्त कर सकता है। कवि की कृति मे उसका व्यक्तित्व नायक नायिका के रूप मे अभिव्यक्त होता है। कवि का उद्देश्य है अपने कवि जीवन के अनुभव को अभिव्यक्त करना। कवि की कल्पना एव उसके अनुभव मे जीवन की जो मूर्ति झलकती है उसी की प्रतिमूर्ति उसके नायक नायिका मे प्रस्फुटित होती है—कवि का व्यक्तितत्व उसकी कृतियो मे नायक नायिका की प्रतिमूर्ति बनकर पाठक के सामने उपस्थित होता है। कवि के व्यक्तित्व और उसके काव्य का यही अविच्छिन्न सम्बन्ध है।[2] गीतिकाव्य मे तो कवि का व्यक्तितत्व प्रत्यक्ष रूप मे ही देखने मे आता है। नाटक मे लेखक अपने व्यक्तितत्व एव विचारो को परोक्ष रूप से उनमे वर्णित पात्रों के सवाद द्वारा व्यक्त करता है।

दोनो ही विधाओ का उद्देश्य रस की उत्पत्ति करना है। प्रसादात्मकता और मनोरंजन के उद्देश्य से ही इनकी रचना की जाती है। अतः स्पष्ट है कि काव्य और नाटक का घनिष्ठ सम्बन्ध होते हुए भी दोनो मे अन्तर है।

---

१. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० २५५

२. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह,

गद्यकाव्य एवं काव्य का भी पारस्परिक सम्बन्ध है। गद्यकाव्य गद्य और पद्य के मध्य की वस्तु है। इसमे पद्य के अनुरूप भावना और अनुभूति की प्रधानता रहती है साथ ही गद्य की स्वच्छन्दता भी रहती है। उसमे छन्द के बन्धन नही होते पर उनकी-सी लय अवश्य रहती है। दूसरे शब्दो मे छन्द का आनन्द इसमे विद्यमान रहता है।[1] गद्यकाव्य जिसे दूसरे शब्दो मे गद्यगीत कहा जा सकता है इसका सम्बन्ध गीतिकाव्य से है। दोनो मे अन्तर इतना है कि गीतिकाव्य मे छन्द का बन्धन होता है परन्तु गद्यगीतो मे नही।

गद्यकाव्य की भाषा गद्य की होती है किन्तु भाव प्रगीत काव्यो मे से। गद्य के शरीर मे से पद्य की सी आत्मा बोलती हुई दिखाई देती है। भाषा का प्रवाह भी साधारण गद्य की अपेक्षा कुछ अधिक सरस और सगीतमय होता है। गद्यकाव्य मे रूपको और अन्योक्तियों का प्राधान्य रहता है। इसमे कहानी की भाँति एक ही सवेदना रहती है किन्तु जहाँ वह प्रलाप शैली का अनुकरण करता है वहां अन्विति का अभाव भी भावातिरेक का द्योतक होता है—गद्यकाव्य की अपेक्षा कुछ गद्यगीत भी लिखे गए हैं। उनमे साधारण गद्यकाव्य की अपेक्षा गति और लय कुछ अधिक होती है और पंक्तियो का विन्यास भी कुछ-कुछ गीतो का सा होता है। अपेक्षाकृत आकार भी छोटा होता है।

इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि गद्यगीत गीतिकाव्य से समता रखते है। इस प्रकार काव्य और गद्यगीत का पारस्परिक सम्बन्ध है। काव्य की एक विशिष्ट धारा गीतिकाव्य में जो विशेषताएँ पाई जाती हैं वे सभी गद्यगीतो मे हैं अन्तर केवल छन्दोबद्ध होने का है। फिर भी इस प्रकार के गद्य मे भावावेश के कारण एक प्रकार की लययुक्त झकार होती है जो सहृदय पाठक के चित को भावग्रहण के अनुकूल बनाती है।

उपर्युक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि काव्य का सम्बन्ध नाटक और गद्य दोनो से ही है।

रिपोर्ताज़ और पत्रकारिता

जब किसी घटना या वृत्त का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि उस वृत्त का सक्षिप्त रूप पाठक के समक्ष उपस्थित हो जाता है, साथ ही उससे वह प्रभावित हो जाता है तब वह रूप 'रिपोर्ताज़' कहलाता है। किसी घटना का ऐसा वर्णन करना कि वस्तुगत सत्य पाठक के हृदय को प्रभावित कर सके रिपोर्ताज़ कह-लायेगा। कल्पना के आधार पर रिपोर्ताज़ नही लिखा जा सकता। इससे स्पष्ट है कि रिपोर्ताज़ लेखक केवल उन्ही घटनाओं का वर्णन करता है जोकि उसने आखों देखी और कानो सुनी हुई होती हैं। रिपोर्ट के कलात्मक और साहित्यिक रूप को ही

---

१. हमारा हिन्दी साहित्य, ले० भवानी शंकर त्रिवेदी, पृ० ४२२

रिपोर्ताज कहते है वस्तुगत तथ्य को रेखाचित्र की शैली मे प्रभावोत्पादक ढग से अकित करने मे ही रिपोर्ताज़ की सफलता है। आँखो देखी और कानो सुनी हुई घटनाओ पर रिपोर्ताज़ लिखा जा सकता है, कल्पना के आधार पर नही।[1] पत्रकार भी उन्ही घटनाओ का वर्णन करता है जोकि सत्य पर आधारित होती हैं। पत्रकार के लिए यह आवश्यक नही है कि वह उन्ही घटनाओ का वर्णन करे जोकि आँखो देखी हुई हो, वह भी सुनी हुई घटनाओ का वर्णन कर सकता है।

रिपोर्ताज़ लेखक छोटी से छोटी घटना का वर्णन इस प्रकार से करता है कि वह पाठक के व्यक्तित्व पर सामूहिक प्रभाव डालती है। रिपोर्ट की भाँति वह घटना या घटनाओ का वर्णन तो अवश्य होना है किन्तु इसमे लेखक के हृदय का निजी उत्साह रहता है जो वस्तुगत सत्य पर बिना किसी प्रकार का आवरण डाले उसको प्रभावमय बना देता है। इसमे लेखक छोटी-छोटी घटनाओ को देकर पाठक के मन पर एक सामूहिक प्रभाव डालने का प्रयत्न करता है। इनका सम्बन्ध वर्तमान से होता है। ये घटनाएँ कल्पनाप्रसूत नही होती हैं इन घटनाओ के वर्णन द्वारा वह चरित्र को भी प्रकाश में लाता है। इसका लेखक घटनास्थल पर उपस्थित होता है और वह प्राय आँखो देखी बातें ही लिखता है। वह कलम का शूर तो होना ही है साथ ही चन्दवरदाई की भाँति साहसी तथा वीर भी होता है।[2] इधर पत्रकारिता मे लेखक जैसी घटनाएँ देखता या सुनता है उनका वैसा ही विवरण प्रस्तुत कर देता है। उसके वर्णन मे किसी भी प्रकार की साहित्यिकता नही होती।

रिपोर्ताज़ की गणना स्थायी साहित्य मे की जाती है और पत्रकारिता की अस्थायी साहित्य मे। पत्रकारिता साहित्य का बडा ही प्रतिष्ठित और दायित्वपूर्ण अग है यद्यपि पत्र-पत्रिकाओ का अधिकाश साहित्य स्थायी नही समझा जाता है, किन्तु बहुत सी दृष्टियो मे वह स्थायी साहित्य मे भी अधिक महत्वपूर्ण होता है। हमारे नित्यप्रति के जीवन की जो झाँकी इस साहित्य मे दृष्टिगोचर होती है वह स्थायी साहित्य मे इस रूप मे नही मिलती। हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध रखने के कारण इस साहित्य का महत्व भी स्थायी साहित्य से अधिक है। साथ ही साथ इस प्रकार के साहित्य सृष्टाओ का दायित्व भी स्थायी साहित्य सृष्टाओ की अपेक्षा अधिक है।[3]

स्थायी एव अस्थायी साहित्य मे वर्णित घटनाओ के सत्य मे अन्तर होता है। यही कारण है कि रिपोर्ताज़ और पत्रकारिता मे वर्णित सत्य मे अन्तर है। स्थायी साहित्य मे सत्य के जिस स्वरूप पर बल दिया जाता है वह इस साहित्य के स्वरूप से थोडा भिन्न होता है—कहने का अभिप्राय यह है कि पत्र-पत्रिकाओ के साहित्य का सत्य

१. हिन्दी साहित्य कोष, पृ० ७१७
२ काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २५०
३. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, ले० गोविन्द त्रिगुणायत

शुद्ध स्थायी साहित्य के सत्य के बिल्कुल अनुरूप नही हो सकता । उसे लौकिक सत्य की रक्षा के साथ-साथ ही काव्य सत्य की सीमा का स्पर्श भी करना पडेगा । पत्रकार को केवल सत्य के स्वरूप की सुरक्षा का ही ध्यान नही रखना पडता वरन् उसे साहित्य के शिव और सौदर्य तत्वो को भी कुछ अधिक वास्तविक रूप मे जनता के सामने लाना पडेगा इसके लिए उसे जनरुचि और जनकल्याण भावनाओ के मनोविज्ञान से पूर्ण परिचित होना पडेगा । जो पत्रकार इन भावनाओ के मनोविज्ञान से परिचित नही होते वे इस साहित्य की रचना मे कदापि सफल नही होते । वास्तव मे पत्र-पत्रिकाओ का साहित्य हमारे प्रत्यक्ष जीवन को बल प्रदान करने वाला वह अव्यर्थ शस्त्र है जिसके समुचित प्रयोग से हम जनजीवन की चेतना की गतिविधि तक बदलने मे समर्थ होते है ।[1]

रिपोर्ताज़ और पत्रकारिता दोनो की सीमा सीमित होती है । साहित्य का यह सबसे लचीला रूप है जिसकी सीमा एक पृष्ठ से लेकर कई पृष्ठो तक हो सकती है । वर्तमान पत्रकार-कला से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है । पत्रो मे जैसे लम्बे उपन्यास एक साथ नही छप सकते, वैसे ही उनमे बहुत लम्बी रिपोर्ताज़ भी नही छप सकती ।[2] इससे स्पष्ट है कि इन दोनो विधाओ का पारस्परिक सम्बन्ध है ।

रिपोर्ताज़ लेखक को इस बात की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है कि वह अपने लेख को घटना-प्रधान बनाए अथवा चरित्र-प्रधान, वह उसमे नाटकीयता का पुट दे या गीतात्मकता का; परन्तु पत्रकारिता के लेखक को इतनी स्वतन्त्रता नही प्राप्त होती ।

रिपोर्ताज़ मे लेखक घटना का विवरण तो प्रस्तुत करता ही है उसके साथ उसके व्यक्तिगत विचार भी प्रस्तुत होते हैं । इसलिए पत्रकारिता के लेखक की अपेक्षा रिपोर्ताज लेखक अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण स्वय करता है । उसके वर्णन मे उसका व्यक्तित्व मुखरित हो उठता है । लेख मे घटना का विवरण होता है, स्केच मे रेखा-चित्र और सस्मरण मे जीवन का स्पन्दन, पर विवरण, चित्र और स्पन्दन का समन्वय ही रिपोर्ताज़ है । दूसरे शब्दो मे रिपोर्टिंग मे समाचार होता है, सम्पादकीय मे विचार, पर रिपोर्ताज़ मे समाचार और विचार का सगम है । शायद यो कहकर मैं और समीप हो जाऊँ कि इसमे दृश्य और चिन्तन का सगम है । इससे स्पष्ट हो जाता है कि रिपोर्ताज़ मे लेखक घटनाओ के विवरण के साथ-साथ विचारो का भी वर्णन करता है जिससे शैली मे आत्मीयता के साथ-साथ प्रभावोत्पादकता आ जाती है । यही कारण है कि रिपोर्ताज लेखक को पत्रकार तथा कलाकार की दोहरी जिम्मेवारी निभानी पडती है ।

---

१. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त, ले० गोविन्द त्रिगुणायत

२. हमारा हिन्दी साहित्य, ले० भवानीशंकर, पृ० ४२३

3
जीवनी

जब कोई लेखक कुछ वास्तविक घटनाओं के आधार पर श्रद्धेय व्यक्ति की जीवनी कलात्मक रूप से प्रस्तुत करता है तो साहित्य का वह रूप जीवनी कहलाता है। साहित्य की इस विधा का विस्तृत विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया है।

तत्व

प्रकाशित जीवनी साहित्य के आधार पर 'जीवनी' के तत्व निम्नलिखित हैं—

वर्ण्य विषय—जीवनी साहित्य का यह महत्वपूर्ण तत्व है। इसमे लेखक के नायक का विश्लेषण होता है। नायक के चरित्र का वास्तविक घटनाओं के आधार पर सश्लेषण, विवेचन एव विश्लेषण ही वर्ण्य विषय मे कलात्मक रूप से किया जाता है। लेखक अपनी रुचि अनुसार किसी भी व्यक्ति का जीवन चरित्र लिख सकता है। यह आवश्यक नही कि वह साहित्यिक व्यक्ति ही हो, धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक कोई भी व्यक्ति हो सकता है पर इतना आवश्यक है कि ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसका जीवन चरित्र पढने से पाठक कुछ प्रेरणा अथवा विशिष्ट ज्ञान ग्रहण कर सके।

वर्ण्य विषय को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए उसमे कुछ गुणो का होना आवश्यक है। सर्वप्रथम विषय मे वास्तविकता एव सत्यता का होना है। यही एक ऐसा तत्व है जिस पर जीवनीकार की कला कुशलता एव सफलता निर्भर है। चरित्र नायक के गुण दोषों का स्पष्ट विश्लेषण करने से ही जीवनी सफल कही जा सकती है। जीवनीकार सत्य पथ मे कभी विचलित नहीं होता। यह हो सकता है कि दोष दर्शन में उसके हृदय में सहृदयता की भावना ऐसी हो कि वह यथार्थता की रक्षा करता हुआ चरित्र नायक की दुर्बलताओं का परिहास न करे। जीवनीकार सत्य का पल्ला कभी नही छोडता। वह इस मर्यादा की रक्षा के लिए सब कुछ त्याग करने को तैयार रहता है।[१] वर्ण्य विषय मे जीवनीकार किसी भी ऐसी घटना का उल्लेख नही करता जो काल्पनिक हो प्रत्येक घटना सत्य पर आधारित होती है। जीवन चरित्र के निर्माण मे गुण और दोष, जीवन के काले और उज्ज्वल धब्बे सत्य रूप मे अकित होने चाहिए।[२] यही एक ऐसा गुण है जो कि जीवनी साहित्य को गद्य की अन्य विधाओं से पृथक् करता है। लेखक की प्रत्येक घटना सत्य एव वास्तविकता पर आधारित

---

१. समीक्षा शास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १६६, द्वितीय संस्करण जुलाई, १६५७

२. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० १३

होती है। शिवनन्दन सहाय ने भारतेन्दु के जीवन की प्रत्येक घटना का वर्णन इस ढग से किया है कि उसकी प्रामाणिकता का आधार वह साथ-ही-साथ देते गए हैं। भारतेन्दु के पूर्वजो के निवास स्थान का जहाँ इन्होने वर्णन किया है वहाँ उसकी वास्तविकता का आधार भी पाठक के सम्मुख प्रस्तुत किया है—

"बाबू हरिश्चन्द्र के पूर्वज मुर्शिदाबाद मे रहते थे यह बात तो निर्विवाद है क्योकि ब.बू साहब के स्वर्गवास के थोडे ही काल के अनन्तर "इण्डियन क्रोनिकल" नामक अग्रेजी समाचार पत्र मे लिखा था कि बाबू हरिश्चन्द्र का जन्म एक धनाढ्य वैश्य कुल मे हुआ था जिसके पूर्वज बगाल की प्राचीन राजधानी गौड़नगर की बढती के समय वहाँ वास करते थे फिर राजमरल आए और जब बगाल की राजधानी मुर्शिदाबाद हुई तो लोग वहाँ आए।"[1]

यही नही भारतेन्दु के चरित्र का विश्लेषण इन्होने स्पष्ट रूप से किया है। जहाँ इन्होने इनके गुणो का विश्लेषण किया है वहाँ दोषो का वर्णन करने मे यह पीछे नही रहे। चतुर्विंश परिच्छेद मे माधवी और मल्लिका के साथ इनके अनुराग का वर्णन इसी बात का द्योतक है। लेखक ने इस परिच्छेद का शीर्षक "गुलाब मे काँटे" इसीलिए रखा है।

विषय के स्पष्ट एव सत्य वर्णन से ही रोचकता एव प्रसादात्मकता का समावेश होता है। पाठक तभी पढने मे रुचि लेगा यदि जीवन का स्पष्ट चित्रण हो। केवल गुण ही किसी व्यक्ति मे नही होते दोष भी होते है। इन सभी के वर्णन से ही विषय मे रोचकता आ सकती है।

तीसरा महत्वपूर्ण गुण जो कि विषय को उत्कृष्ट बना सकता है वह वैज्ञानिकता का होना है। विज्ञान और विवेक की शत प्रतिशत आवश्यकता जीवन चरित्र मे अनिवार्य है। यदि लेखक की वैज्ञानिकता मे लेशमात्र भी अन्तर आया तो जीवनचरित्र उसी अश तक दूषित हो जाएगा। जीवन की घटनाओ की वैज्ञानिक छान-बीन और उन्हे वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखना और उपस्थित करना आवश्यक है। यदि वैज्ञानिक विवेचना मे कमी आई तो जीवन चरित्र कल्पना की कहानी हो जाएगा। वैज्ञानिक दृष्टिकोण जीवन साहित्य को एक ऊँची मर्यादा प्रदान करता है।[2]

वर्ण्य विषय मे सक्षिप्तता एव सुसगठितता का होना अत्यन्त आवश्यक है। यद्यपि जीवनीकार मूर्ति रक्षक की भाँति अनुपातपूर्ण सुगठित और चमकदार जीवनी नही दे सकता है क्योंकि उसे सत्य का आग्रह रहता है और एक सजीव और सकुल चरित्र के उद्घाटन मे अन्विति के साथ विरोध और व्याघात भी रहते है जिनके बिना जीवनी शायद निर्जीव हो जाय तथापि उसे अपनी कृति को ब्यौरे के वैविध्य को खोए बिना ऐसा सुसगठित रूप देना चाहिए कि उसमे थोडे मे बहुत प्रसादात्मकता आ

---

१. भारतेन्तु हरिश्चन्द्र
२. हिन्दी मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० ११

जाए।[1] इससे स्पष्ट है कि जीवनीकार विषय को सक्षिप्त एव सुसगठित रूप से वर्णन करे।

अतः विवेचन से स्पष्ट है कि उपरिलिखित गुणो से युक्त विषय ही आकर्षक एवं स्फूर्तिदायक हो सकता है। इन्ही को दृष्टि मे रखते हुए तो लिओन ईडेल (Leon Edel) ने जीवनीकार के लिए कुछ सीमाए निश्चित की हैं। जीवनीकार जितना चाहे उतना कल्पनाशील बन सकता है, जितना वह कल्पनाशील होगा उतना ही सामग्री को अच्छे ढग से एकत्रित कर सकता है, पर उसकी सामग्री कल्पित नही होनी चाहिए। उसको भूतकाल का अवश्य अध्ययन करना चाहिए, पर उस भूतकाल को वर्तमान की दृष्टि में रखते हुए अध्ययन आवश्यक है। उसको तत्वों का अनुमान करना चाहिए पर उसे निर्णय मे नही बैठना चाहिए। उसे बीती हुई घटनाओ का सम्मान करना चाहिए पर सत्य अवश्य कहना चाहिए।[2]

The Biographer may be as imaginative as he pleases—the more imaginative the better—in the way in which he brings together his materials, but he must not imagine the materials. He must read himself into the past, but he must also read that past into the present He must judge the facts, but he must not sit in judgment. He must respect the dead—but he must tell the truth

चरित्र चित्रण

जीवनी साहित्य का यह अन्य महत्वपूर्ण तत्त्व है। जीवनीकार इतिहास मे तथा मामयिक समाज मे प्रसिद्ध व्यक्ति को ही अपनी रचना का विषय बनाता है। वही उसका प्रधान पात्र होता है। इसी मुख्य पात्र का चरित्र चित्रण करना ही उसका प्रमुख लक्ष्य होता है। इसीलिए चरित्र चित्रण जीवनी का विधायक तत्त्व माना जा सकता है।

जीवनी मे घटनाओ का अकन नहीं होता वरन् चित्रण होता है। किसी भी मनुष्य के अन्तर और बाह्य स्वरूप का कलात्मक रूप से इसमे विवेचन होता है। इसमे जीवनीकार अपने श्रद्धेय पात्र के जीवन का अध्ययन, सश्लेषण एव विश्लेषण करता है। उसकी चारित्रिक विशेषताओं का अनुशीलन करता है। जीवनीकार का विशेष ध्यान वर्ण्य चरित्र की सत्प्रवृत्तियो, उदात्त भावनाओ एव सराहनीय कार्यों पर ही रहता है। फिर भी जब वह अपने चरित्र नायक की गम्भीरता, समीपता से चित्रण करने का उपक्रम करता है तब उसे उसकी दुर्बलताएँ भी दृष्टिगोचर होने लगती है। जीवनीकार इन दुर्बलताओ से मुँह नही मोडता। उसमे अपने वर्ण्य चरित्र के प्रति श्रद्धा होती है, सहानुभूति होती है पर अनन्य भक्ति नही। वह उन दोषो को दोष रूप मे ही

१. काव्य के रूप, ले० गुलाबराय, पृ० २३९

२. 'Literary Biography' by Leon Edel, Page 1, 1957.

ग्रहण करता है। वह उनका अपने वर्ण्य चरित्र के व्यक्तित्व के स्पष्टीकरण मे उपयोग करता है। दोष तो उसके व्यक्तित्व की बाह्य रेखाओ को उभार मे ला देते है।[1] इस प्रकार चरित्र चित्रण मे लेखक चरित्र के सभी गुण दोषो का वर्णन करता है।

जहाँ तक बाह्य व्यक्तित्व का प्रश्न है लेखक चरित्र नायक के अवयवो का एवं शारीरिक सौंदर्य का भी पाठक को अवश्य ज्ञान करवाता है। ब्रजरत्नदास ने भारतेन्दु की आकृति का वर्णन इसीलिए किया है—

"भारतेन्दुजी कद के लम्बे थे और शरीर से एकहरे थे, न अत्यंत कृश और न मोटे ही। आँखे कुछ छोटी और धंसी हुई-सी थी तथा नाक बहुत सुडौल थी। कान कुछ बडे थे जिन पर घुँघराले बालो की लटे लटकती रहती थी। उँचा ललाट इनके भाग्य का द्योतक था। इनका रग सावलापन लिए हुए था। शरीर की कुल बनावट सुडौल थी।"[2]

इस बाह्य वेशभूषा के वर्णन का प्रभाव आरम्भ मे ही पाठक पर पड जाता है। यदि सीधी-सादी वेशभूषा होगी तो व्यक्तित्व एवं स्वभाव भी वैसा ही होगा, यदि चटकीली होगी तो वैसा ही चरित्र नायक का व्यक्तित्व होगा।

अब वाह्य व्यक्तित्व के पश्चात् चरित्र नायक का आन्तरिक विश्लेषण है। इसमे दो बातें होती हैं—नायक के गुण एव दोष। जिस व्यक्ति मे गुण अधिक होते हैं उसके प्रति लोग अधिक आकृष्ट हो जाते हैं पर इसका यह अर्थ नही है कि उनमे दोष नही होते, होते हैं पर गुणो की सख्या अधिक होती है। आज से साठ वर्ष पूर्व शिवनन्दन सहाय ने जो भारतेन्दु की जीवनी लिखी है उसमे जहाँ भारतेन्दु के साहित्यिक गुणो का विस्तार रूप से वर्णन किया है वहाँ उन्होने उनकी चारित्रिक दुर्बलताओ का परिचय 'गुलाब मे काँटा' शीर्षक मे दिया है। भारतेन्दु के चरित्र सम्बन्धी गुण-दोषो के वर्णन मे इन्होंने 'सप्तविंश परिच्छेद' मे लिखा है—

> "हम भी इनके गुण-अवगुण को पूर्व परिच्छेदो मे स्पष्ट वर्णन करते आए हैं जिसको देखकर बहुत से लोग आक्षेप करेंगे और कहेंगे कि केवल इनकी सुख्याति के ध्यान से अनेक बातो को प्रकाशित करने के बदले हमको उन पर परदा ही देना चाहिए था पर हमारी क्षुद्र बुद्धि मे यह बात नही जँचती। ऐसा करने से इनके यथार्थ सद्गुणो की कथाएँ भी अविश्वसनीय हो जाती क्योकि कोई व्यक्ति सर्वगुण आगर ही हो, कही किसी दोष का लेश भी उसमे न हो, सर्वदा जेठ विसाख के सूर्य की चमक ही हो, सर्वत्र उज्ज्वल धूप ही हो, कहीं श्यामल छाया का नाम तक न हो, यह बात प्रकृति के विरुद्ध है। किसी प्राणी के विषय मे ऐसा कहना कब सच माना जा सकता है। और कोई अर्थ-लोलुप कवि ऐसा करे तो करे, परन्तु सत्यकवि या चरित्र-लेखक को ऐसा करना कब उचित

१ 'सिद्धान्तालोचन,' ले० धर्मचन्द बलदेवकृष्ण, पृ० २०५

२. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० ब्रजरत्नदास, पृ० १५

है । उसको जो कुछ घटना हो सब ही वर्णन कर देनी चाहिए चाहे वह गुण हों वा दोष ।[१]

ब्रजरत्नदास ने भी भारतेन्दु पर लिखी जीवनी मे अपने इस मत का समर्थन 'चन्द्र मे कलक' शीर्षक मे दिया है—

"मनुष्य तभी मनुष्य रहेगा जब उसके दोष आदि भी प्रकट कर दिए जायेंगे मनुष्य देवता नही है, उसमे दोष रहेगे, किसी मे एक है तो किसी मे कुछ और है । यदि एक महात्मा की जीवनी से हम दोनो को निकाल देते है तो हम ऐसा निर्दोष आदर्श उपस्थित कर देते है जिसको अनुगमन करने का लोग साहस छोड बैठेंगे— तात्पर्य यह है कि जीवन चरित्र मे गुणो का विवेचन करते हुए दोषो का भी, यदि हो, तो विश्लेषण अवश्य कर देना चाहिए ।"[२]

इस प्रकार उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि चरित्र नायक के व्यक्तित्व के गुणो के वर्णन के साथ-साथ उसकी दुर्बलताओ एव त्रुटियो का विवेचन भी जीवनीकार को अवश्य करना चाहिए ।

देशकाल

देशकाल भी जीवनी साहित्य का एक महत्वपूर्ण तत्व है । वर्ण्य चरित्र किसी देश या काल मे ही अपना जीवन व्यतीत करता है । इसीलिए उसके समस्त जीवन की घटनाएँ देश एव काल से सम्बन्ध रखती हैं । अन्य प्रकथनात्मक साहित्य की भाँति जीवनी साहित्य मे देशकाल का चित्रण मुख्य रूप से नही किया जाता । यह तो गौण रहता है । अन्य साहित्य मे देशकाल का चित्रण स्वतन्त्र रूप से किया जाता है । जीवनी मे व्यक्ति ही मुख्य होता है वही अगी होता है ।

हिन्दी जीवनी साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि चरित्र नायक के जीवन को उभारने के लिए तो लेखक ने देशकाल का वर्णन किया है अन्य किसी उद्देश्य से नही । साहित्यिक जीवनी मे अधिकतर तत्कालीन साहित्यिक दशा का तो वर्णन मिल जाएगा परन्तु जहाँ तक राजनैतिक परिस्थितियो का प्रश्न है वह तो न के बराबर ही है । साहित्यिक जीवनी मे तो अधिकतर लेखक तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो का वर्णन कर चरित्र नायक का उसमे स्थान निर्धारित करता है । शिवनन्दन सहाय ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का स्थान पचम परिच्छेद मे "हिन्दी भाषा और हिन्दी प्रचार" मे तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियो का वर्णन करते हुए निर्धारित किया है । परन्तु ब्रजरत्नदास ने अपनी लिखित जीवनी मे थोडा-बहुत तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का आभास पाठक को करवा दिया है । उनका "राजभक्ति" शीषक इसी प्रकार का है । इसमे लेखक ने भारतेन्दु के व्यक्तित्व को परिस्थितियो से प्रभावित दिखलाया है—

---

१. भारेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० शिवनन्दन सहाय, पृ० ३४६, प्रथम सस्करण, १९०५
२ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० ब्रजरलदास, पृ० २५०

"भारतेन्दुजी का रचनाकाल स० १६२४ से स० १६४१ तक था और वह समय था जब भारवर्ष मे पूर्ण शान्ति नही हो चुकती थी। उनके जन्मस्थान काशी ही मे उन्ही के समय सध्या के बाद किसी अमीर आदमी का आगे-पीछे दस-पॉच सिपाही साथ लिए बिना निकलना कठिन था। ऐसे समय शान्ति-स्थापक अग्रेजी राज्य को 'ईस इत थिर करि थापै' कहना ही देशप्रेम था। साथ ही अंग्रेजी राज्य के दोषो का कथन, उनके निवारणार्थ प्रार्थना करना आदि 'राजद्रोह' नही कहा जा सकता था। वे अग्रेजी राज्य को उसके दूषणो से रहित देखना ही देशप्रेम समझते थे और वही उस समय के लिए उचित भी था।"[१]

इसी प्रकार "प्रेमचन्द कलम का सिपाही" मे भी अमृतराय ने जहाँ उचित समझा वही तत्कालीन परिरिथतियो का वर्णन किया है—

"सन् १६१४ तक आते-आते देश पूरी तरह निष्प्राण हो चुका था। जुलाई १६१४ मे महायुद्ध छिडा। नवम्बर मे जर्मन सेनाएँ फ्रास के दरवाजे पर थी। इंगलैड-फ्रास के जीवन-मरण का सकट उपस्थित था। ऐसे समय मे हिन्दुस्तान के बडे लाट हार्डिग ने बडी हिम्मत करके हिन्दुस्तान से अपनी गोरी और काली फौजें हटायी और उन्हे योरोप के मोर्चों पर भेजा। साथी देशो की प्राण-रक्षा हुई।······ प्रेमचन्द भी इसी बीच इन्तहाई पस्ती के दौर से गुजरे। शरीर, मन दोनो बिल्कुल टूटा हुआ।[२]

यह तो हुई साहित्यिक व्यक्ति की जीवनी की बात जहाँ तक राजनैतिक व्यक्ति का प्रश्न है उसका तो सम्पूर्ण जीवन देश की राजनैतिक एव सामाजिक परि-स्थितियों मे ही निखरता है बापू का समस्त जीवन इस बात का प्रतीक है। घनश्यामदास बिड़ला द्वारा लिखा हुआ "बापू" के जीवन मे पाठक को एक तो तत्का-लीन राजनैतिक परिस्थितिगो का पता चलता है दूसरे उन परिस्थितियो मे बापू का क्या हाथ रहा यह भी ज्ञात होता है। ऐसे महापुरुषो का समस्त जीवन इन सभी परिस्थितियो से प्रभावित होता है—

"गाँधीजी ने सरकार के साथ कई लडाइयाँ लडी और कई मर्तबा सरकार के ससर्ग मे आए। इन सभी लडाइयो मे या ससर्गों मे सत्याग्रह की झलक मिलती है, पर मेरा ख्याल है कि १६१४-१८ का योरोपीय महाभारत और उसी जमाने मे किया गया चम्पारन सत्याग्रह और वर्तमान योरोपीय महा-भारत—ये तीन प्रकरण इनके स्वदेश लौटने के बाद ऐसे हुए हैं कि जिनमे हमे शुद्ध सत्याग्रह का दिग्दर्शन होता है।[३]

इन पक्तियो से एक तो यह अनुमान होता है कि गाँधीजी ने तात्कालीन देश

---

१. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ले० ब्रजरत्नदास, पृ० २०६
२. प्रेमचन्द कलम का सिपाही, ले० अमृतराय, पृ० १६२
३. बापू, ले० घनश्यामदास बिड़ला, पृ० १०३

की परिस्थितिमो से बाध्य होकर सत्याग्रह किए। दूसरे उनके तपस्वी जीवन का ज्ञान पाठक को होता है फिर भी लेखक का उद्देश्य राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन करना नही था। जीवनी लेखक इसी ढग से वर्णन कर सकता है। जहाँ तक सामाजिक एव धार्मिक परिस्थितियो का प्रश्न है इन जीवनियो के पढने से पाठक अनुमान लगा सकता है लेकिन इनका कही भी स्पष्ट चित्रण हमे नही प्राप्त होता। धार्मिक व्यक्तियो की जीवनियो मे विशेषतया तत्कालीन धार्मिक परिस्थितियो का चित्रण है फिर उन परिस्थितियो मे लेखक ने चरित्र नायक का स्थान निर्धारित करने का प्रयत्न किया है।

उद्देश्य

जीवनी साहित्य का यह एक महत्वपूर्ण तत्व है। इस तत्त्व मे लेखक क्या कहना चाहता है, उसके अमुक पुस्तक लिखने का क्या आशय है, इन सब बातो का उल्लेख होता है, वैसे तो प्रत्येक लेखक जो कुछ भी लिखता है वह किसी-न-किसी उद्देश्य से ही लिखता है। निरुद्देश्य कोई भी रचना नही लिखी जाती। जीवनीकार का उद्देश्य भी उसकी रचना मे प्रकारान्तर से समाविष्ट हो जाता है।

कोई भी व्यक्ति जिसने भी अपने समय मे जो भी महत्वपूर्ण कार्य किए उन सभी का पूणतया ज्ञान हमे उसकी जीवनी पढने से ही मिलती है। यदि वह राजनैतिक व्यक्ति है तो अवश्य ही देश के प्रति उसकी विचारधारा का एव राजनैतिक परि-स्थितियो के वर्णन मे उसके सहयोग का आभास हमे उसके जीवन चरित्र से मिले। यदि वह सच्चा देशभक्त है तो वह किस प्रकार आग के अगारो से जूझता हुआ सोना बनता है और अपने कर्तव्य मे सफल होता है—इन सभी बातो का पता उसके जीवन चरित्र से प्रामाणिक रूप से लगता है। लेखक इसीलिए ऐसे महापुरुषो का जीवन जनता के सामने लिखकर रखते हैं कि हम भी उससे कुछ प्रेरणा ग्रहण करें और अपने जीवन को सार्थक बनाए। घनश्यामदास बिडला ने इसी उद्देश्य से बापू और जमना-लाल बजाज के जीवन चरित्र लिखे। बिडला के इन लोगो के जीवन चरित्र लिखने का यही उद्देश्य था कि जनता को पता चल जाए कि भारत को स्वतन्त्रता किन कठि-नाइयो से प्राप्त हुई है और उसकी प्राप्ति मे किन-किन महापुरुषो का हाथ रहा है।

जहाँ तक साहित्यिक जीवनी लिखने के उद्देश्य का प्रश्न है वह भी इसी उद्देश्य से लिखी जाती है कि हिन्दी साहित्य की प्रगति मे जो भी व्यक्ति अधिक पुस्तकें लिखकर सहयोग देता है और कोई नई पुस्तक जनता के सम्मुख रखता है जिससे समाज एव साहित्य है नई चेतना उत्पन्न होती है तो उस व्यक्ति की जीवनी लिखने के लिए लेखकगण आकृष्ट होते हैं। यहाँ मेरे कहने का तात्पर्य यह है दो-चार पुस्तकें लिखकर कोई भी व्यक्ति साहित्य मे अपना नाम लिखवा सकता है पर ऐसे व्यक्तियो की जीवनी लिखने से कोई भी लाभ नही है। मेरा अभिप्राय तो ऐसे साहित्यिक लोगो की जीवनी लिखने से है जिन्होने कोई विशेष योग हिन्दी साहित्य

की प्रगति मे दिया है जैसे 'भारतेन्दु' हरिश्चन्द्र सर्वप्रथम विस्तृत जीवनी इनकी शिवनन्दन सहाय ने लिखी है 'भूमिका' मे अपने उद्देश्य को उन्होने प्रकट किया है—

"इस पुस्तक को लिखने का मुख्य उद्देश्य यह है कि मातृभाषा हिन्दी को नीरस एव सारहीन समझने वाले अग्रेजी भाषी रसिकजनो की हिन्दी पढने मे रुचि जन्मे, और वे लोग सब प्रकार की प्रकृति के अनुसार सब प्रकार के रसो से पूर्ण हरिश्चन्द्र के ग्रन्थो को पढकर देखे कि हिन्दी की उन्नति के लिए केवल एक व्यवित ने कितना यत्न तथा परिश्रम किया है एव उसी निष्काम मातृभाषा की सेवा से वह देश-विदेश मे कैसा सम्मानित हुआ है और सचेष्ट इसकी और अधिक गौरव वृद्धि के निमित्त यत्नवान हो। इसी कारण यह जीवनी अग्रेजी पुस्तक के ढग से लिखी गई है।"[1]

इसीलिए महापुरुषो की जीवनियाँ लिखी जाती है। जीवन चरित्र लिखने का एक तो यह उद्देश्य है कि हम मनुष्य के बाह्य स्वरूप के साथ-साथ उसके आन्तरिक स्वरूप को भी जान सकते है। दूसरी बात यह है कि दुनिया मे विशाल स्मारक, भवन, दृढतम मन्दिर, चित्र आदि सभी नष्ट हो जाते है, केवल अमरग्रन्थ ही रह जाते हैं। किसी भी श्रद्धेय महापुरुष की जीवली इसी अमरत्व की भावना को लेकर ही लिखी जाती है।

किसी भाषा के समग्र साहित्य को देखिए—सभी मे मनुष्य तथा उसकी कृति और विचार भरे है। इसलिए सुलिखित जीवन चरित्र के पढने मे देखा जाता है कि मनुष्य को सबसे अधिक आनन्द मिलता है। कहानियो तथा उपन्यासो मे मनगढत कल्पित चरित्र चित्रण होने से उनसे अधिक मनोरजन होता है और नाटको मे भी इसी कारण अधिक तमाशाई इकट्ठे होते हैं। इतिहास भी सैकडो मनुष्यो की जीवनियो का सग्रह मात्र है। बडे-बड़े सत्काव्य आदर्श नायको के चरित्र ही चित्रित करते हैं जिन्हे लोग बडे प्रेम से सुनते हैं।

जीवन चरित्र यह भी उपदेश देता है कि मनुष्य क्या हो सकता है और क्या कर सकता है। एक महान व्यक्ति की जीवनी पाठको के हृदय मे उत्साह, आशा, शक्ति और साहस भर देती है, और उन्हे इस आदर्श तक उठने को प्रोत्साहित करती है। साहित्य का इन कारणो से जीवन चरित्र एक विशेष अग है।[2]

वर्तमानकाल की सर्वश्रेष्ठ जीवनी 'प्रेमचन्द : कलम का सिपाही' भी अमृतराय ने इसी उद्देश्य से लिखी है। उस जीवनी के पढने के पश्चात् पाठक को यह पता चल जाता है कि किस प्रकार इस कलम के सिपाही ने अपने जीवन मे कष्टो एव उलझनो का सामना करते हुए हिन्दी साहित्य की प्रगति की ओर ध्यान रक्खा है। कलम के

---

१. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० शिवनन्दन सहाय, भूमिका

१. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० ब्रजरत्नदास, पृ० २३

सम्मुख किसी भी जीवन को आकर्षित करने वाली एवं सुख देने वाली बातो की ओर ध्यान नही दिया। पाठक को यह अनुभव हो जाता है कि जीवन मे परिश्रमी व्यक्ति ही कुछ प्राप्त कर सकता है। अमृतराय ने जिस उद्देश्य से यह जीवनी लिखी है वह इसमे पूर्णतया सफल हुए हैं, बहुत से आने वाले साहित्यिको को इससे प्रेरणा मिलेगी।

भाषा शैली

शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते हैं। जीवन चरित्र लेखक को अपने नायक के काल्पनिक रूप की सृष्टि नही करनी होती, उसे तो केवल एक साँचा तैयार करना पडता है। यह साँचा शैली के नाम से पुकारा जा सकता है। जीवनी लेखक के पास नायक के सम्बन्ध मे लिखित, अलिखित अथवा विश्वस्त सूत्रों से उपलब्ध तथ्यो को सकलित करके ऐसे कौशल से सजाना पडता है कि पाठक के मन मे वे सीधे घर कर ले।[1] इस प्रकार जीवनी की शैली मे कुछ विशेषताएँ एव गुणों का होना आवश्यक है जिनके होते हुए वह उत्कृष्ट शैली कहला सकती है।

जीवनी शैली मे सर्वप्रथम सुसगठितता का होना आवश्यक है। जीवनीकार को समस्त सामग्री का इस ढग से वर्णन करना चाहिए जिससे उसमे अन्विति हो। जीवन की समस्त घटनाएँ एक-दूसरे से बँधी हुई हो। उनमे किसी प्रकार का बिखरापन न हो। इस बात के लिए अनावश्यक बात का निवारण एव आवश्यक बात का समावेश करना पडता है जैसे शिवनन्दन सहाय ने भारतेन्दु के जीवन की प्राप्त सामग्री को क्रमानुसार रक्खा है। किसी भी प्रकार का बिखरापन उसमे दृष्टि-गोचर नही होता। यही बात' गोस्वामी तुलसीदास' मे अकित तुलसी के जीवन चरित्र मे भी पायी जाती है। इसी गुण के कारण वह जीवनी लिखने मे कुशल माने गए हैं। उन्होने अपने चरित्र नायको के जीवन को परिच्छेदो मे बाँट लिया है इससे सभी सामग्री अच्छी प्रकार से सुगठित हो गई है।

जीवनी मे शैली सम्बन्धी दूसरी विशेषता निरपेक्षता की है। निरपेक्षता से मेरा अभिप्राय यह है कि लेखक अपने चरित्र नायक के गुण-दोषो का निष्पक्ष होकर वर्णन करे। ऐसा न हो कि वह श्रद्धावश गुणो का ही वर्णन करता जाय और दोषो को भूल जाय। श्रद्धा रखने पर उसे अन्ध-भक्त नही होना चाहिए। लेखक को अपनी स्वतत्रता नही खोनी चाहिए। कभी-कभी आदर एव पूज्य भाव के कारण लेखक का विश्लेषण निष्पक्ष न होकर अतिरजित हो जाता है। कभी-कभी अपनी तुलनात्मक प्रतिभा के कारण वह अपने चरित्र नायक को आवश्यकता से अधिक ऊँचा उठाकर दूसरे का अपमान भी कर देता है। जीवनीकार को इस सम्बन्ध मे विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए और अपने नायक का चरित्र यथातथ्य रूप मे निष्कपट भाव से वर्णन करना

---

१. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० ब्रजरत्नदास, पृ० २३

चाहिए। हिन्दी साहित्य मे जितनी भी साहित्यिक व्यक्तियो की जीवनियाँ प्राप्त होती हैं उनकी शैली मे यह गुण विशेष रूप से पाया जाता है जोकि उनकी शैली को परिपक्व बनाता है।

तीसरा महत्त्वपूर्ण गुण शैली मे लेखक की तटस्थता का होना है। जीवन चरित्र का लेखक बिल्कुल तटस्थ रहकर ही चरित्र-चित्रण कर सकेगा।[1] इसलिए जीवनीकार को अपनी स्वतन्त्रता का प्रयोग उचित अनुपात मे करना चाहिए। उसकी अपनी धारणा का आधार पर्याप्त सत्य होना चाहिए। जीवनी मे सत्य का पुट न होने से वह समाज को प्रभावित करने मे असमर्थ रहेगी। वही जीवन चरित्र उच्चकोटि का होगा जिसकी शैली मे सन्तुलन होगा एव लेखक का मस्तिष्क तटस्थ होगा।[2]

चौथी विशेषता सहृदयता की है। जीवनीकार को यह ध्यान रखना चाहिए कि चन्द्रमा मे कलक है अवश्य किन्तु वह साधारण है। सहानुभूति अन्ध भक्ति से भिन्न है। अन्ध भक्ति दोषो को भी गुण समझती है, सहानुभूति दोष को दोष ही समझती है किन्तु उसके कारण दोष की हँसी नही उडाई जाती। जीवनीकार छोटे-मोटे दोषो को अर्थात् गुणो के समूह या बाहुल्य मे एक दोष इस प्रकार छिपा जाता है जैसा चन्द्रमा की किरणो मे उसका कलक। दोषो के वर्णन में सहृदयता का पल्ला नही छोडना चाहिए।[3] इसलिए शैली मे लेखक की सहृदयता का होना आवश्यक है।

उपरिलिखित गुणो से युक्त शैली ही जीवनी को प्रभावोत्पादक बना सकती है। इसलिए जीवनी की शैली मे इन सभी विशेषताओ का होना आवश्यक है। इन इन गुणो से सम्मिलित जीवन चरित्र ही विशुद्ध जीवन चरित्र कहला सकता है। हैराल्ड निकलसन ने तभी तो जीवन-चरित्र को दो मार्गों मे विभाजित किया है। १ शुद्ध जीवन चरित्र, २ अशुद्ध जीवन चरित्र[4] (Pure and Impure Biography)। शुद्ध जीवन चरित्र इन्होने उसको माना है जिसकी शैली मे सभी उपरिलिखित गुण है और अशुद्ध जीवन चरित्र तो है ही इससे विपरीत।

जीवनी लेखन कला की सफलता के लिए भाषा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अग है। जीवन चरित्र लिखने मे सरल, सुबोध, आकर्षक और रुचिकर भाषा का प्रयोग आवश्यक है। जीवन भर की घटनाओ के समूह को थोडे मे इस प्रकार सगठित और सुसज्जित करके उपस्थित करना आवश्यक है कि भाव मे लेशमात्र भी कमी न आने पावे, उसकी भव्यता बढ जाय और रूप अधिक स्पष्ट हो जाए। इसीलिए जीवनी लेखक का भाषा पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए। जीवनी साहित्य जीवन की घटनाओ का नीरस ऐतिहासिक उल्लेख मात्र नही है। और न थका देने के लिए केवल मनोदशा का

---

१. समीक्षाशास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १९९

२. हिन्दी मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृष्ठ १३

३. काव्य के रूप, लेखक गुलाबराय, पृष्ठ २३९

४. Development of English Biography by Harold Nicolson.

वैज्ञानिक विश्लेषण है। इसमे साहित्य का माधुर्य अनिवार्य है जो पाठक की उत्सुकता और जिज्ञासा, उसके आनन्द की अनुभूति और मन के आमोद को उत्तरोत्तर बढाता जाय। भाषा इतनी सुबोध हो कि घटनाओ की गुत्थियाँ और नायक के मानसिक विकास तथा मस्तिष्क की क्रिया-प्रतिक्रिया के गूढ तत्व सरलता से पाठक को स्पष्ट होते जाएँ। भाषा ऐसा आवरण और परिधान है जो चरित्र को सुसज्जित एवं वास्त- विक रूप देता है और व्यक्तित्व को ठीक रूप में व्यक्त करना है।[1]

इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि भाषा ही लेखक की भावाभिव्यक्ति का साधन है। यदि भाषा शुद्ध परिमार्जित एव भावानुकूल होगी तभी वह कृति पाठक को प्रभावित कर सकती है। प्रसाद गुण का भाषा मे होना अनिवार्य है परन्तु विषया-नुसार एवं आवश्यकतानुसार लेखक आलकारिक भाषा का प्रयोग भी कर सकता है। यह विशेषता विशेष रूप से शिवनन्दन सहाय मे पाई जाती है। जहाँ वह भारतेन्दु की कविता के विषय मे लिखते हैं वहाँ उनकी भाषा अलंकारमयी दृष्टिगोचर होती है। इसके अतिरिक्त जहाँ उन्होने एक विस्तृत लेख उनकी 'हिन्दी भाषा और हिन्दी प्रचार' के विषय में लिखा है उसमे इतनी सरसता नहीं। 'कविता' मे तो इनकी भाषा में भी माधुर्य और अलकारो की छटा है।

> "हरिश्चन्द्र हिन्दी साहित्य वाटिका के प्रवीण माली थे। इनकी इसी वाटिका मे काव्य-नाटक आदि की कैसी-कैसी सुन्दर क्यारियाँ कटी हुई हैं, ललित लेख, प्रबन्ध एव पुस्तको के कैसे-कैसे अपूर्व वृक्षो से यह सुशोभित है। उसमे कविता लता कैसे लहरा रही है, अलकारो के पुष्पों की कैसी छटा छहरा रही है, अर्थ का कैसा पराग झर रहा है, भाव का कैसा सुगन्ध उड रहा है, सरसता मे कैसा मधु टपक रहा है······सच तो यह है कि इस वाटिका की सैर नि सन्देह आमोद-प्रमोद है। परन्तु इस वाटिका मे स्वय भ्रमण किए बिना किसी को यथार्थ आनन्द नही मिलता।"[2]

अतः जीवनीकार की भाषा एवं शैली शुद्ध परिमार्जित, परिनिष्ठित एव सधी हुई होनी चाहिए। विषय एव भावानुकूल शैली ही अपना स्थायी प्रभाव लेखक पर डाल सकती है। इसलिए लेखक का भाषा शैली मे सिद्धहस्त होना आवश्यक है।

विकास

हिन्दी जीवनी साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भारतेन्दु युग से पहले जीवनी साहित्य तीन प्रकार का प्राप्त होता है—रासो शैली का जीवनी साहित्य, भक्तो की जीवनियाँ एव बनारसीदास का अर्धकथा आत्मचरित। रासो काल में जितने भी जीवन चरित्र लिखे गए उनमे से कोई भी ऐसा जीवन चरित्र नही जो किसी मानवेतर व्यक्ति का हो। इसी प्रकार भक्तिकाल के चरित्रो मे भी सभी

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० १२

२. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ले० शिवनन्दन सहाय, पृ० ११४

साधारण व्यक्ति है। 'भक्तमाल', 'चौरासी वैष्णवो की वार्ता' या 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' या 'अष्ट सखान की वार्ता' के चरित्र भी साधारण व्यक्तियो के ही है। चमत्कारपूर्ण बाते तो उनके व्यक्तित्व मे है पर उससे वे मानवेतर नही हो पाते है। उनके अध्ययन से केवल यही ज्ञात होता है कि वे भक्त थे जिन पर भगवान् की असीम कृपा थी। 'अर्ध कथानक' का लेखक बनारसीदास भी साधारण व्यक्ति है। 'पृथ्वीराज रासो' एव 'अर्ध कथानक' के सिवाय कोई चरित्र जीवनी लिखने के उद्देश्य से नही लिखा गया था। भक्तो की भक्ति और उनके चमत्कारपूर्ण कार्यों के वर्णन मे भी प्रसगवश जीवन वृत्तान्त लिखे गए। अत. १००० ई० से १६०० ई० के पूर्वार्द्ध के पहले तक के हिन्दी जीवनी साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि इस काल का जीवनी साहित्य उन लक्षणो अथवा तत्वो से शून्य था जिनके आधार पर किसी साहित्य को हम जीवनी साहित्य कह सके। 'भक्तमाल' तथा '८४ वैष्णवन की वार्ता' आदि की जीवनियाँ व्यक्तित्व का पूरा चित्र उतना नही प्रस्तुत करती जितना वे भक्ति का प्रचार करती है। सबसे महत्वपूर्ण कमी इस काल तक के जीवनी साहित्य मे वृत्तान्त की प्रामाणिकता मे अभाव पाया जाता है। सभी वृत्तान्त सुने सुनाए है सिवाय पृथ्वीराज रासो के। इस काल मे जीवनी साहित्य के प्रफुल्लित न होने के कारण तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, देश की परिस्थितियाँ हैं, इन्ही के कारण हिन्दी जीवनी साहित्य का वैज्ञानिक विकास न हो सका। केवल 'अर्ध कथानक' मे जीवनी साहित्य की वैज्ञानिक रूपरेखा को बहुत कुछ अशो मे पूरा किया है। लेकिन फिर भी आधुनिक युग मे ही जीवनी साहित्य पर्याप्त रूप से लिखा गया है। इसका आरम्भ भारतेन्दु युग से होता है।

भारतेन्दु युग

भारतेन्दु युग के सर्वप्रथम जीवनी लेखक भारतेन्दु स्वयं ही है। यद्यपि इनके द्वारा लिखे हुए जीवन चरित्र इस श्रेणी के नही जिनमे जीवन का सम्पूर्ण चित्र खीचा गया हो प्रत्युत फिर भी जीवनी लिखने का यह नवीन प्रयास था। 'चरितावली' मे इन्होने सोलह जीवन चरित्र लिखे है जो कि निबन्धो के रूप मे है। कालिदास, रामानुजाचार्य, जयदेव, सूरदास, वल्लभाचार्य जैसे विद्वानो के जीवन चरित्रो के अतिरिक्त लार्डम्यो एव महाराजाधिराज ज़ार के जीवन चरित्र भी लिखे हैं। इनके अध्ययन से नायक के चरित्र की पूर्ण जानकारी पाठक को नही हो सकती—ये तो छोटे-छोटे निबन्ध हैं जिनमे इनके जीवन की दो-एक घटनाओ का वर्णन है। सूरदास की जीवनी लिखने का इन्होंने प्रयत्न किया था परन्तु ये उसमे भी सफल नहीं हो सके।

'बादशाह दर्पण' इनकी दूसरी जीवन चरित सम्बन्धी पुस्तक है। इसमें कासिम द्वारा जीते गए सिन्ध देश से लेकर मुगल साम्राज्य के अन्तिम बादशाह तक का वर्णन है। इसमे जीवनी साहित्य के तत्व का अभाव है। 'पंच पवित्रात्मा' मे

मुहम्मद बीबी फातिमा एव इमाम हुसैन की जीवनियाँ हैं। इनके अतिरिक्त 'उदय-पुरोध्य' दौर 'बूँदी का राज्यवश' भी भारतेन्दु द्वारा लिखे गए ग्रथ हैं। इन ग्रथो मे केवल वश-परम्परा, राज्यारोहण एव विजय पराजय का, इसके साथ ही मृत्यु का वर्णन है।

हिन्दी जीवनी साहित्य के तत्वों की ओर दृष्टिपात करते हुए यदि भारतेन्दु के जीवनी साहित्य का विश्लेषण किया जाय तो इसमे कई त्रुटियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। जहाँ तक चरित्र चित्रण का प्रश्न है, इन्होने किसी भी अपने चरित नायक का विस्तृत रूप से वर्णन नही किया उनके जीवन की दो-चार घटनाओ को लेकर इन्होंने एक निबन्ध-सा लिखा है। इनके चरित्र चित्रण मे वह तटस्थता नही जो कि एक जीवनी लेखक की जीवनी मे होनी चाहिए। फिर भी 'पच पवित्रात्मा' मे इतनी कुछ तटस्थता दृष्टिगोचर होती है। जहाँ तक घटनाओ और वृत्तान्तो की छानबीन का प्रश्न है वह भी नकारात्मक है। कुछ ही लेखो मे इसका प्रयत्न किया है। इन जीवन चरित सम्बन्धी निबन्धो को लिखने का उद्देश्य लेखक ने कहीं भी स्पष्ट नही किया। इनके अध्ययन से यही अनुमान लगाया जा सकता है कि लेखक का उद्देश्य इन चरित्रो को लिखने का यह था कि हिन्दी साहित्य की उन्नति हो, यह गद्य की इस विधा से भी वचित न होने पाए दूसरे कुछ महान् व्यक्तियो के चरित्रों का जनता को परिचय करवाना था।

जहाँ तक इनकी भाषा शैली का प्रश्न है भारतेन्दु के जीवन चरित्र सम्बन्धी लेखो मे शुद्ध एव साहित्यिक भाषा का प्रयोग किया गया है। भाषा प्रसाद गुण युक्त है। भावानुकूल एवं विषयानुकूल भाषा का प्रयोग इन्होने किया है। जीवनी साहित्य का भाषा से घनिष्ट सम्बन्ध है। भारतेन्दु के जीवन चरित्र सम्बन्धी लेखों मे साहित्यिक भाषा का रोचक प्रयोग है। भाषा सरल तथा सुन्दर है। भावानुकूल भाषा का प्रयोग कर चरित्र चित्रण मे सजीवता उत्पन्न करने की क्षमता भारतेन्दु मे यथेष्ट रूप से थी मानव हृदय के व्यापक भावो, हर्ष, शोक, क्षोभ आदि को व्यक्त करने मे सफल थे।[1]

१८८३ ई० मे श्री रमाशकर व्यास द्वारा लिखी हुई 'नेपोलियन बोनापार्ट का जीवन चरित्र' पुस्तक प्राप्त होती है। यह पुस्तक २० पृष्ठो मे लिखी गई है। इसमे नेपोलियन के जीवन की कुछ घटनाओं का वर्णन किया है। इस जीवनी मे भी वही कमी है जो कि भारतेन्दु के जीवन चरितो मे पायी जाती है। नेपोलियन के चरित्र का पूर्णतया विश्लेषण इसमे नही किया गया है। लेखक जो कुछ कहना चाहता है वह उसमे निष्कर्ष रूप मे ही कहा है। कही भी उसके व्यक्तित्व का स्पष्ट विवेचन नही प्राप्त होता। भाषा-शैली भी जीवनी साहित्य के अनुकूल नही है। १८८३ ई० मे ही काशीनाथ खत्री द्वारा लिखित पुस्तक 'भारतवर्ष की विख्यात स्त्रियो के जीवन चरित्र' प्राप्त होती है। जीवनी साहित्य की दृष्टि से इस पुस्तक का भी कोई विशेष

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिह, पृ० १२४

महत्व नही है। इसके पश्चात् १८८८ ई० मे जगन्नाथ द्वारा लिखित 'महर्षि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र' प्राप्त होता है। इस पुस्तक मे स्वामी जी के जीवन सम्बन्धी कुछ घटनाओ का वर्णन करते हुए उनके जीवन पर प्रकाश डाला है।

१८९३ ई० मे सर्वप्रथम किसी साहित्यिक व्यक्ति पर लिखी हुई जीवनी हमे कार्त्तिक प्रसाद खत्री द्वारा प्राप्त होती है। इनकी जीवनी का नाम 'मीराबाई का जीवन चरित्र' है। इस पुस्तक मे लेखक ने मीराबाई के जीवन पर लिखने का प्रयास किया है। जीवन चरित लिखने मे लेखक काफी सीमा तक सफल हुआ है। जिन भी जीवन के पक्षो को लेकर लेखक ने मीरा के व्यक्तित्व को स्पष्ट किया है वह इसका प्रयास अवर्णनीय है। लेकिन फिर भी इसमे एक त्रुटि है वह यह कि यह जीवनी भी मीराबाई के सम्पूर्ण चरित्र का ज्ञान पाठक को नही कराती। इसमे लेखक की भाषा परिमार्जित है। वर्णन शैली मे भी रोचकता है। इन्ही द्वारा लिखी हुई शिवाजी पर जीवनी हमे १८९० ई० मे प्राप्त होती है। इसमे खत्रीजी ने शिवाजी के जीवन का वर्णन स्पष्ट एव सत्य रूप से किया है। समय, स्थान एव घटनाओं की वास्तविकता पर लेखक ने पूरा ध्यान दिया है। इसमे भी पूर्ण जीवन का वर्णन नही है। १८९३ ई० मे हमे कई राजनैतिक पुरुषो के जीवन चरित प्राप्त होते हैं। प्रेमचन्द्र द्वारा लिखा हुआ 'महाराजा विक्रमादित्य का जीवन चरित्र' एव 'महाराजा छत्रपति शिवाजी का जीवन चरित्र,' प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त १८९५ ई० मे राधाकृष्ण दास द्वारा लिखित 'कविवर बिहारीलाल' पुस्तक प्राप्त होती है। इस पुस्तक मे भी अनेक त्रुटिया हैं इसलिए इसको उच्च जीवनी साहित्य की श्रेणी मे नही रक्खा जा सकता। 'श्री नागरीदास का जीवन चरित' भी इन्होंने लिखा है। इसके अतिरिक्त 'सूरदास' एव भारतेन्दु के जीवन विषयक लेख भी इन्होने लिखे। इन सभी जीवन चरितो मे किसी भी चरित्र नायक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का वर्णन नहीं है। ये तो केवल जीवन चरित्र सम्बन्धी निबन्ध है। इनको जीवन चरित्र लिखने का प्रारम्भिक प्रयास कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त बालमुकुन्द गुप्त का १८९६ ई० मे 'हरिदास गुरयानी' १८९७ ई० मे गोकुलनाथ शर्मा द्वारा लिखित 'श्री देवी सहाय चरित्र' एव बलभद्र मिश्र का 'स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज का जीवन चरित्र' प्राप्त होते हैं।

भारतेन्दु युग मे अन्य भाषाओ के जीवन ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद भी प्राप्त होता है। इससे यह पता चलता है कि इस काल मे जीवनी साहित्य की ओर न केवल रुचि और आकर्षण बढा बल्कि सजग चेतना के साथ साहित्य के इस क्षेत्र मे उन्नति और विकास की ओर भी ध्यान दिया गया। १८९९ ई० मे स्वामी विरजानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र, परमहंस शिवनारायण स्वामीजी का जीवन चरित्र, एव 'क्रस्टोफर कोलम्बस' जीवनिया प्राप्त होती हैं। स्वामी विरजानन्द सरस्वती के जीवन चरित्र का अनुवाद जगदम्बा प्रसाद ने सन् १८९९ ई० मे उर्दू से हिन्दी मे किया। इसके

मूल लेखक पडित लेखराम हैं। परमहस शिवनारायण स्वामीजी का जीवन चरित्र मोहनी मोहन चटर्जी ने बगला से हिन्दी मे अनुवाद करके १८९५ ई० मे प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त 'क्रस्टोफर कोलम्बस' का अनुवाद गोपालद देवगण शर्मा ने १८९९ ई० मे किया।

भारतेन्दु युग के प्रसिद्ध जीवनीकारो मे देवी प्रसाद मुसिफ का नाम उल्लेखनीय है। इनका इतिहास का अच्छा ज्ञान था इसलिए ऐतिहासिक अनुसन्धान के आधार पर इन्होने अनेक महापुरुषो की जीवनिया लिखी हैं। महाराज मानसिंह कछवाला वाले अमीर का जीवन चरित्र (१८८९ ई०), राजा मालदेव का चित्र और जीवनी चरित्र, (१८८९ ई०) अकबर बादशाह और राजा बीरबल का जीवन चरित्र (१८९३) ई०, श्री रणधीर महाराजा प्रतापसिंह जी का जीवन चरित्र (१८९३ ई०), राणा भीम रत्नसिह (१८९३ ई०), यदुपति महाराजा उदयसिंहजी (१८९३ ई०), मीराबाई का जीवन चरित्र (१८९८ ई०), श्री जयवन्त सिंह सिघोल का जीवन चरित्र १८९८ ई० में प्राप्त होते हैं। ये सभी प्रामाणिक जीवनिया हैं। भाषा की दृष्टि से भी ये अपना अद्वितीय स्थान रखती हैं।

विदेशी मिशनरियो ने भी जीवनी साहित्य की प्रगति मे इस युग मे सहयोग दिया है। यह ठीक है कि इन मिशनरियो का उद्देश्य अपने मजहब का प्रचार करना था, साहित्य या साहित्य के किसी अग का विकास करना इनका उद्देश्य नही था फिर भी इनके द्वारा प्रकाशित हमे कुछ जीवनियां प्राप्त होती हैं। सन् १८९६ ई० मे 'महाराणी वि टोरिया का वृत्तान्त' पुस्तक क्रिश्चियन लिटरेचर सोसाइटी, इलाहाबाद मे प्रकाशित हुई। १८९६ ई० मे 'सिकन्दर महान का वृत्तान्त' भी इडियन क्रिश्चियन प्रेस, इलाहाबाद से ही प्रकाशित करवाया। इन पुस्तको मे भाषा का स्तर बहुत नीचा है, इसे बाजारू साहित्यिक भाषा की श्रेणी मे रक्खा जा सकता है। यह भाषा भारतेन्दु युग के साहित्यिक स्तर से बहुत नीची है।

भारतेन्दु युग के जीवनी साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि प्रायः सभी जीवनियो मे जीवनी की स्थूल घटनाओ का वर्णन मात्र कर दिया है। जीवनी साहित्य इन्हे नही कहा जा सकता। इन्हे नायक के जीवन सम्बन्धी वर्णनात्मक लेख कहना अधिक उपयुक्त है।

द्विवेदी युग

बीसवी शताब्दी के आरम्भ के साथ ही हिन्दी साहित्य के क्षेत्र मे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का प्रादुर्भाव हुआ। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य मे प्रवेश करते ही हिन्दी भाषा को शुद्ध परिमार्जित एव उसका परिपक्व रूप स्थापित किया। भाषा के व्याकरण-शैली और वाक्य-विन्यासो पर ध्यान देते हुए उन्होने साहित्यिक समालोचना, इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति और जीवन चरित्र आदि विषयो पर गम्भीरता, तल्लीनता तथा परिश्रम के साथ लिखना अपना कर्त्तव्य

निर्धारित कर लिया था। द्विवेदीजी ने जीवनी साहित्य के विषय मे जो कुछ भी लिखा वह 'सरस्वती' पत्रिका मे प्राय प्रकाशित हुआ। ये सभी जीवन चरित्र लेख के रूप मे प्रकाशित हुए इनका सकलन पुस्तक रूप मे हो गया। जीवन चरित्र सम्बन्धी इनकी पाँच पुस्तके हैं। 'प्राचीन पडित और कवि' पुस्तक मे आठ प्राचीन विद्वानो के जीवन सम्बन्धी लेख हैं। इसमे सुखदेव मिश्र एव लोलिंब राज के जीवन के विषय मे लिखा है। द्विवेदीजी प्रत्येक बात अच्छी प्रकार से छानबीन करने के पश्चात् कहते थे। इस पुस्तक की भूमिका मे इन्होने सुखदेव मिश्र की चर्चा करते हुए लिखा है 'इनके सिवाय उनके चरित्र मे विलक्षणतापूर्ण कुछ अलौकिक बाते भी है जिनसे विशेष मनो-रजन हो सकता है।'[1] इसके अतिरिक्त इस पुस्तक मे विशेष रूप से नायक की कवि-ताओ का उल्लेख मात्र है।

'सुकवि सकीर्त्तन' मे सात जीवनिया १५० पृष्ठो मे लिखी गई हैं। इसमे महामहोपाध्याय पडित दुर्गाप्रसाद, बगकवि माइकेल मधुसूदन और कविवर रवन्द्रनाथ ठाकुर जैसे कवियो की जीवनिया है। इनमे द्विवेदीजी ने इनके कवि जीवन को ही विशेष रूप से लिया है, जीवन सम्बन्धी कुछ घटनाएँ अनायास ही आ गई हैं।

'चरित चर्चा' मे १२ व्यक्तियो के जीवन चरित्र हैं जिनमे 'रामकृष्ण परमहस', 'सीताराम शरण भगवान प्रसाद', 'बाबू शिशिर कुमार घोष', प्रसिद्ध नायक 'मौला बक्श' आदि विद्वान है। इन सभी जीवनियो मे द्विवेदीजी ने नायक के कार्यों की प्रशंसा की है। ये सभी जीवनिया उन्होने उपदेशात्मक दृष्टिकोण से लिखी हैं जैसाकि उन्होने पुस्तक की भूमिका मे भी स्वय कहा है— "इस चरित माला के आधार सत्पुरुषों मे से दो एक को छोडकर बाकी के सभी आधुनिक कहे जा सकते हैं इन सभी के चरित्रो मे अनेक विशेषताएँ हैं वे सभी गेय हैं अनुकरणीय है।"[2]

'वालेस का जीवन चरित्र' अनूदित जीवनी ग्रन्थ लिखकर द्विवेदीजी ने जीवनी साहित्य को उन्नतिशील बनाने का प्रशसात्मक कार्य किया है। वालेस का जीवन देश-प्रेम एव त्याग से सम्पन्न है। इसी उपदेशात्मक दृष्टिकोण को सम्मुख रखते ही इन्होने बगला से हिन्दी मे अनुवाद किया।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि द्विवेदीजी ने सभी प्रकार के व्यक्तियो के जीवन चरित्र लिखे। कवि, लेखक, विद्वान और वक्ता, सम्पादक, राजनीतिज्ञ, बादशाह सुल्तान और अमीर एव नूतन पथ-प्रदर्शक सभी प्रकार के जीवन चरित्र लिखे हैं। इन्होने अपने जीवन-चरित्र उपदेश के लिए, चरित्र निर्माण के लिए, यशस्वी तथा महान् व्यक्तियो की उपादेयता की ओर लोगो का ध्यान आक-र्षित करने के लिए, हिन्दी पाठको को देश के इतिहास से परिचित कराने के लिए,

---

१ प्राचीन पडित और कवि, पृ० ७, द्वितीय प्रवृत्ति, ले० महावीरप्रसाद द्विवेदी।

२. चरित चर्चा, ले० महावीरप्रसाद द्विवेदी, पृ० २

समाज की बुराइयो से लोगो को परिचित कराने के लिए और हिन्दी लेखको को हिन्दी सेवा के लिए प्रेरणा देने के लिए तथा अन्य ऐसे ही उद्देश्यो को ध्यान मे रखकर जीवनियाँ लिखी थी।[1] कई पुस्तको मे द्विवेदीजी ने अपने उद्देश्य को स्वयं लिखा है। 'चरित चर्चा' की भूमिका मे लिखते हैं—

"विद्वानो और महात्माओ के चरित से कुछ न कुछ अच्छी शिक्षा अवश्य मिलती है और समय ऐसी शिक्षा के प्रभाव को मलिन या कम नही कर सकता—इस चरित सग्रह से यदि पाठक का घडी दो घडी मनोरजन ही हो सका तो इसके प्रकाशन का प्रयास सफल हो जाएगा।"[1] उनके समस्त जीवनी लेख सन् १९०४ से १९३८ के बीच लिखे गए हैं।

बालमुकुन्द गुप्त

भारतेन्दु और द्विवेदी युग के सधिस्थल पर बालमुकुन्द गुप्त हुए हैं। इनके द्वारा लिखे हुए १७ जीवन चरित्र सम्बन्धी लेख हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए हैं। प्रतापनारायण मिश्र पर लिखा हुआ इनका जीवन चरित्र लेख १९०७ सन् मे प्राप्त होता है। गुप्तजी ने प्रतापनारायण मिश्रजी का जीवन उनकी 'ब्राह्मण पत्रिका' मे लिखी स्वलिखित जीवनी के आधार पर लिखा है। इसमे गुप्तजी ने उनके जीवन में यद्यपि विस्तारपूर्वक घटनाओ का वर्णन नही कर सके प्रत्युत फिर भी इनकी शैली उत्तम है। अन्य जीवन चरित्रो मे देवकीनन्दन तिवारी 'अम्बिकादत्त व्यास', 'पडित देवीसहाय', 'बाबूराम दीन,' 'पडित गौरी दत्त', 'पडित माधवप्रसाद मिश्र,' 'मुशी देवी प्रसाद', 'योगेन्द्रचन्द्रबसु मैक्समूलर', 'अकबर बादशाह' एव 'शेखसादी' हैं। शेखसादी के जीवन चरित्र लिखने से पहले यह लिखते हैं—

> "कुछ ऐसे लोग हैं कि जो जीते हैं पर लोग नही जानते कि वह जीते हैं या मर गए। कुछ ऐसे हैं कि जो मरकर मर गए और कुछ जी कर जीते हैं। पर कुछ ऐसे भी हैं कि सैकडो साल हुए मर गए, भूमि उनकी हड्डियो को कबर समेत चाट गई तथापि वह जीते हैं। फारिस के मुसलमान कवियो में शेखसादी भी वैसे ही लोगो मे से हैं।"[2]

इस उक्ति से इनके जीवन चरित्र लिखने का उद्देश्य एव उत्कृष्ट भाषा शैली के प्रयोग का अनुमान हो जाता हे। गुप्तजी के ये सभी जीवन चरित सम्बन्धी निबन्ध सन् १९०० से १९०७ ई० तक लिखे गए। ये सभी 'भारत मित्र' पत्रिका मे प्रकाशित हुए हैं। इस प्रकार हम देखते है कि गुप्तजी ने भी जीवन की कुछ घटनाओ को आधार मान कर ही जीवनी साहित्य लिखा है लेकिन इनमे वैज्ञानिकता एव सत्यता का पूर्ण रूप से ध्यान रक्खा है।

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० १४१
२ चरित चर्चा, प्रथम सस्करण, पृ० २
३ गुप्त निबन्धावली, पृ० ६९, ले० बालमुकुन्द गुप्त

इसके अतिरिक्त स्व० बाबू जमनादास की 'सजीवनी चरित्र' १९०० ई० मे, रामविलास सारढा द्वारा लिखित 'आर्य धर्मेन्द्र जीवन महर्षि' १९०१ ई० मे, पूर्ण कवि द्वारा लिखित 'विक्टोरिया चरितानद', लज्जा राम शर्मा का 'विक्टोरिया का चरित्र' १९०२ ई० मे गौरीशकर हीराचन्द ओझा का 'कर्नल जेम्सटाड', राजाराम का 'स्वामी शंकराचार्य', लाला काशीनाथ खत्री का 'भारतवर्ष की विख्यात नारियो के चरित्र,' बलदेव प्रसाद मिश्र का 'पृथ्वीराज चौहान' प्रकाशित हुए। इनमे राजाराम द्वारा लिखित स्वामी शकराचार्य का जीवन वृत्तान्त उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त रामविलास मारढा ने महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र भी 'आर्य धमेन्द्र जीवन महर्षि' धार्मिक जीवन चरित्रो की श्रेणी मे उल्लेखनीय पुस्तक है। इसमे स्वामीजी के जीवन का वर्णन अत्यन्त रोचक एव आकर्षक है।

सन् १९०३ मे देवीप्रसाद का 'महाराणा प्रतापसिंह' माधवप्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'स्वामी विशुद्धानन्द', क्षेत्रपाल शर्मा का 'डॉ० हरनामसिंह' एव लज्जाराम मेहता का 'अमीर अब्दुर्रहमान खा' जीवनियाँ प्रकाशित हुईं। इनमे देवीप्रसाद द्वारा लिखित महाराणाप्रतापसिंह की जीवनी अधिक प्रामाणिक आधारो को लेकर लिखी गई है। तत्कालीन इतिहास का यह पाठक को अच्छा दिग्दर्शन करवाती हैं।

सन् १९०४ ई० मे कन्हैयालाल शास्त्री द्वारा लिखित 'श्री बल्लभाचार्य दिग्विजय,' गगाप्रसाद गुप्त की 'रानी भवानी', दयाराम द्वारा लिखित 'दयानन्द चरितामृत', देवीप्रसाद का 'राणा सग्रामसिंह', विज्ञानन्द द्वारा लिखित 'रामकृष्ण परमहस और उनके उपदेश', कार्त्तिक प्रसाद द्वारा लिखित 'अहिल्याबाई का जीवन चरित्र,' सखाराम गणेश का 'आनन्दीबाई', विश्वेश्वरानन्द का 'महिला महत्व', गोकर्णसिंह की 'श्रीयुत सप्तम एडवर्ड की सक्षिप्त जीवनी', सुन्दरलाल शर्मा द्वारा लिखित 'विश्वनाथ प्रसाद पाठक, एव परमानन्द द्वारा लिखित 'पतिव्रता स्त्रियो का जीवन चरित्र' प्रकाशित हुए। इन प्राप्त जीवनियो मे गोकर्णसिंह की सप्तम एडवर्ड पर लिखी हुई जीवनी का विशेष महत्व है क्योकि यह विदेशी शासक के जीवन पर लिखने का प्रयास है। दयाराम ने स्वामी दयानन्द का जीवन भी अत्यन्त श्रद्धापूर्वक लिखा है। इस जीवनी का धार्मिक एव ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्व है। श्रद्धा का अतिरेक होने से जीवनी साहित्य के सिद्धातो का लेखक ने पूर्णरूप से प्रयोग नही किया है।

शिवनन्दन सहाय

हिन्दी साहित्य मे सर्वप्रथम एव सफल साहित्यिक जीवनी लेखक शिवनन्दन सहाय हैं। जीवनी लेखको मे इनका नाम सर्वमान्य एव उल्लेखनीय है। सत्य तो यह है कि जीवनी लेखन मे वे मार्गदर्शक हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, गोस्वामी तुलसीदास, बाबू साहिब प्रसादसिंह की जीवनी चैतन्य महाप्रभु एवं मीराबाई की जीवनियाँ इनकी अमर देन हैं।

'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' नामक जीवनी

शिवनन्दन सहाय द्वारा लिखित 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' जीवनी सन् १९०५ मे पटना—'खग विलास' प्रेस, बाकीपुर से प्रकाशित हुई। इस समस्त जीवनी को इन्होने सुसगठित एव सक्षिप्त रूप देने के लिए परिच्छेदो मे विभाजित किया है। इसके अष्ट-विंश परिच्छेद हैं। प्रथम परिच्छेद मे लेखक ने भारतेन्दु के 'वश परिचय' का वर्णन किया है जिसमे अमीचन्द को भारतेन्दु का पूर्वज मानते हुए इनके निवास स्थान की प्रामाणिकता के विषय मे 'इण्डियन क्रोनिकल मैगजीन', रमाशंकर व्यास और राधाकृष्णदास के मत को स्वीकार किया है। इसके अतिरिक्त सेठ अमीचन्द के वर्णन मे अनेक आग्ल भाषा की ऐतिहासिक पुस्तको को आधार माना है।

द्वितीय परिच्छेद मे 'बाल्यावस्था' का वर्णन है। इसमे बचपन से ही इनकी कुशाग्र बुद्धि का परिचय इन्होने पाठक से करवा दिया है। तृतीय परिच्छेद मे इनकी 'यात्रा' का वर्णन है। जिन-जिन देशों एव नगरो मे ये घूमे उन सभी स्थानो का वर्णन प्रमाण-युक्त लेखक ने किया है।

चतुर्थ परिच्छेद में इन्होंने जो भी लोकहित कार्य किए उन सभी का उल्लेख है। लोकहित कार्यं में लेखक ने चौखम्भा स्कूल, समाचार पत्रो मे—बनारस अखबार सुधाकर, पत्र, कविवचन सुधा, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका, बालबोधिनी काशी पत्रिका, आर्य-मित्र, मित्र विलास, भारत मित्र एवं हिन्दी प्रदीप पत्रिकाओ के जन्म के प्रधान कारण भारतेन्दु को बतलाते हुए लेखक ने इनके पूर्ण सहयोग का वर्णन किया है। इसके पश्चात् लोगो के हित के लिए जो इन्होने सभाएं—'कविता र्वाद्धनी सभा' स० १९२७ मे, १८७३ मे 'पेनिंग रीडिंग क्लब' एव श्रावण शुक्ल १३ बुधवार १९३० (१८७३ ई०) को इन्होने 'तदीय समाज' जो स्थापित किया था इन सभी का वर्णन 'कवि समाज' शीर्षक मे है। इसके अतिरिक्त वैश्य लोगो के हित के लिए १८७४ ई० मे 'वैश्व हितैषिणी' सभा जो इन्होने स्थापित की थी उन सभी का विस्तारपूर्वक वर्णन है। इनके अतिरिक्त भारतेन्दु की स्थापित अन्य सभाए अनाथ रक्षिणी सभा, काशी सार्व-जनिक सभा, यग मैन्स असोसियेशन एव हिन्दी डिबेटिंग क्लब का भी इसमे उल्लेख है। अन्य देशहित कार्य भी इन्होने किए जैसे १८६८ ई० मे 'होमियोपैथिक दातव्य चिकित्सालय' की स्थापना जो इन्होने की उन सभी का उल्लेख है।

'पचम परिच्छेद' हिन्दी भाषा तथा 'हिन्दी अक्षर' नाम से है। इसमे लेखक ने हिन्दी भाषा एव हिन्दी वर्णमाला के विषय मे लिखा है। इसको लिखने का लेखक का विशेष उद्देश्य था जैसा कि उसने भूमिका मे स्पष्ट किया है—

"इसमे एक परिच्छेद 'हिन्दी भाषा' और 'हिन्दी वर्णमाला' के विषय मे लिखा गया है। इसको हमने निज प्रिय पुत्र बाबू ब्रजनन्दन सहाय वकील के अनुरोध से लिखा है। नि:सन्देह यह परिच्छेद बहुतेरो के लिए उपयोगी होगा। यह विषय अद्या-वधि कदाचित् किसी पुस्तक मे सन्निवेशित नही हुआ है। इस विषय का लेख

१९१६ ई० है। इस पुस्तक के दो खड हैं। पहले मे बडे विस्तार से सत्रह परिच्छेदो मे तुलसीदास के जीवन पर प्रकाश डाला है। इन परिच्छेदो के शीर्षक तुलसी के जीवन के निरुपित विभिन्न पक्षो को स्पष्टत द्योतित करते हैं शीर्षक हैं - जन्मकाल और जन्मस्थान, जाति और जनक जननी, बाल्यावस्था, विवाह, राजापुरवास. श्री रामदर्शन, श्री हनुमानजी विषयक दो एक अन्य बाते, काशी वास वृत्तात, दिल्ली गमन, ब्रजगमन, चित्रकूट तथा अवधवास, मित्र और सम्मान, बधु और वशज, भ्रमण स्वभाव तथा स्वर्ग-पयान। इस जीवनी मे लेखक ने जन श्रुतियों के महत्व को बहुत समझा है इसीलिए वह सजीव व्यक्तित्व के निर्माण मे सफल हुए हैं। दूसरी ओर, अतस्साक्ष्य से उपलब्ध तथ्य विशेष मे जनश्रुति की सहायता से प्राण सचार कर दिया है। यही कारण है कि इस पुस्तक का जीवनी खड भक्तमाल प्रकार का न होकर वास्तविक जीवनी की कोटि मे परिगणनीय है।

इस पुस्तक के द्वितीय खड मे तुलसीदास की कृतियो के साहित्यिक महत्व पर साधारणत पृथक कृतियो को ध्यान मे रखते हुए तथा समवेत रूप से भी विचार किया गया है। शिवनन्दन सहाय ने उन सभी प्राचीन भक्तचरित लेखको तथा समसामयिक विद्वानो एव टीकाकारो आदि के मत मतातरो का यथास्थान उल्लेख कर अपने ग्रन्थ को प्रामाणिक बनाने की चेष्टा की है, जिन्होने सविस्तार या सक्षेप्त: पुस्तकों या पत्र पत्रिकाओ मे तुलसीदास के जीवन या साहित्य पर लिखा था। जिनमे भक्तमाल, प्रियादासकृत भक्तमाल की टीका, वेणीमाधवकृत मूल गोसाई चरित, शिवसिह सरोज इपीरियल गजेटियर, राधाचरण गोस्वामी कृत नव भक्तमाल आदि। गोस्वामी तुलसीदास पर लिखी हुई यह सर्वप्रथम जीवनी है जिसमे इतना विशद वर्णन गोस्वामीजी का प्राप्त होता है। माताप्रसाद गुप्त ने इस ग्रन्थ की उपादेयता के विषय मे कहा है—"ग्रन्थ दो दृष्यो से उपादेय है एक तो उसके पहले कवि के सम्बन्ध मे जो कुछ लिखा गया था, इस ग्रन्थ मे उस पर गम्भीरतापूर्वक किया विचार गया है और दूसरे 'मानस' मे अपने पूर्ववती सस्कृत ग्रन्थो की जो प्रतिच्छाया मिलती है उसकी ओर स्पष्ट रूप से पहले पहल इसी ग्रन्थ मे तुलसीदास के पाठको का ध्यान आकर्षित किया है।"[1] इस जीवनी मे कही-कही लेखक ने तुलसीदास की तुलना शेक्सपीयर से की है। श्रद्धावश तुलसी को शेक्सपीयर से श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। भाषा एव शैली की दृष्टि से जीवनी सर्वश्रेष्ठ है।

इनके पश्चात् १९०५ ई० मे उमापति दत्त शर्मा की नेपोलियन बोनापार्ट की जीवनी भी प्राप्त होती है। सन् १९०६ मे गगाप्रसाद गुप्त की 'दादा भाई नौरोजी', देवराज की 'सेमीरामिसे', मु० देवीप्रसाद की 'रसानामृत भाग १' जीवनियाँ लिखी गईं जिनका ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक महत्व है। इसके पश्चात् १९०७ ई० मे चिमनलाल वैश्य द्वारा लिखित स्वामी दयानन्द, ठाकुरप्रसाद खत्री द्वारा 'हैदरअली', महादेव भट्ट की 'लाजपत महिमा', सतीशचन्द्र मिश्र द्वारा 'रणधीर महाराणा प्रतापसिंह जी',

१. तुलसीदास ले० माताप्रसाद गुप्त, प्र० स० भूमिका, पृ० १२

कुँवर कन्हैया जू द्वारा 'बुन्देलखण्ड केशरी', वामनाचार्य गिरी द्वारा वीरेन्द्र बाजीराव, हनुमतसिंह पन्नालाल द्वारा 'रमणीरत्नमाला', ब्रजनन्दसहाय द्वारा लिखित बलदेवप्रसाद मिश्र एव ब्रजनन्दन सहाय वकील द्वारा लिखित 'राधाकृष्णदास जी की जीवनी' प्रकाशित हुई। इनके अतिरिक्त इसी सन् मे गगाप्रसाद गुप्त का 'बाबू राधाकृष्णदास का जीवन चरित्र', रामशकर शर्मा का 'गौरीशकर उदयशकर का 'रा० दुर्गाप्रसाद साहब बहादुर का जीवन चरित्र', चतुर्वेदी द्वारिका प्रसाद का 'गौरीशकर उदयशंकर ओझा' भी प्रकाशित हुए। इन सभी मे जीवनी लेखक कला का सफल प्रयास है।

द्विवेदी युग के जीवनी साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि सन् १९०८ से १९२६ तक कोई भी उत्कृष्ट साहित्यिक व्यक्ति की जीवनी किसी भी साहित्यिक लेखक ने नही लिखी। जो भी जीवनियाँ प्राप्त होती हैं वे सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक पुरुषो की हैं। १९०८ ई० मे वृन्दावनलाल वर्मा का भगवान बुद्ध का जीवन चरित्र' बलदेव प्रसाद मिश्र का 'तालिया भीम', सूर्यकुमार वर्मा का 'काग्रेस चरितावली' प० रामचन्द्र वैद्य शास्त्री का 'भारत नर रत्न चरितावली' प्रकाशित हुए। १९०९ ई० गोचरण स्वामी का 'भगवानप्रसादजी', रूपनारायण पाँडेय, का 'श्री गोरागचरित', पुरमानन्द स्वामी का 'बुद्ध' सूर्यकुमार वर्मा का 'मुगल सम्राट अकबर', मु० देवीप्रसाद का 'खानखाना नामा दो भाग', ज्वालादत्त शर्मा का 'सिक्खो के दस गुरु', बैजनाथजी का 'सच्चासाधु' एव पारसनाथ त्रिपाठी का 'तपोनिष्ठ महात्मा अरविन्द घोष' प्रकाशित हुए। इन जीवनियो मे से सूर्यकुमार द्वारा लिखित अकबर की जीवनी मे हमे तत्कालीन देश की परिस्थितियो के विषय मे अच्छा अनुमान हो जाता है।

सन् १९१० मे देवीप्रसाद की 'बाबरनाभा' अखिलानन्द शर्मा की 'दयानन्द दिग्विजय' किशोरीलाल गोस्वामी की 'नन्हे लाल गोस्वामी' दयाचन्दगोयलीय की 'काग्रेस के पिता ए० ओ० ह्यूम' ब्रजनाथ शर्मा घोचक द्वारा लिखित 'सर विलियम वेडरर्व' नवनीत चौबे की 'हरिदास वशानु चरित्र' मु० सूर्यमल का 'जीत जीवन चरित्र' जगन्नाथप्रसाद शुक्ल का 'शंकर चरित्र' ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा का 'महारानी बापजा बाई सिंधिया' तिलक सिंह का 'रामपाल सिंह' जीवन चरित्र प्रकाशित हुए। ये सभी जीवन चरित साधारण कोटि के हैं। इनमे कोई विशेष बात नही किन्तु इनका महत्व ऐतिहासिक दृष्टि से ही है।

सन् १९११ मे मु० राम जिज्ञासु का 'नेपोलियन बोनापार्ट' उदयनारायण तिवारी का 'सम्राट् जार्ज पचम का जीवन चरित्र' विलियम ए० थेयर का 'गारफील्ड' जीवन चरित्र प्रकाशित हुए। इनमे उदयनारायण तिवारी का 'जार्ज पचम का जीवन चरित्र' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस जीवन चरित्र के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि भारतीय लेखको को विदेशी पुरुषो के जीवन चरित्र लिखने का शौक था। हिन्दी लेखको का यह प्रयास भारतीय जीवनी साहित्य की प्रगति के लिए एक सराहनीय प्रयास है।

सन् १९११ मे द्वारिकाप्रसाद शर्मा की 'भीष्म पितामह', 'आदर्श महात्मागण भाग ४', 'आदर्श महिलाएँ भाग १', लज्जा राम शर्मा की 'उम्मेदसिंह चरित्र', ललिता प्रसाद शर्मा की 'विदुषी स्त्रियाँ भाग १', 'विदुषी स्त्रियाँ भाग २', देवेन्द्र प्रसाद जैन की 'ऐतिहासिक स्त्रियाँ', बैजनाथ शर्मा की 'श्रीगुरुचरित्र', रामप्रताप पडित की 'राम गोपाल सिंह चौधरी की सक्षिप्त जीवनी', एव यशोदादेवी की 'वीरपत्नी सयोगिता', जीवनियाँ प्रकाशित हुई। ये सभी जीवनियाँ धार्मिक एव सामाजिक व्यक्तियो की हैं। ये सभी जीवन चरित्र निबन्धात्मक शैली मे लिखे गए हैं। इसलिए इन्हे जीवन चरित्र सम्बन्धी निबन्ध कहना अधिक उपयुक्त है। राधामोहन गोकुलजी की 'देशभक्त लाजपत' एव नारायण प्रसाद अरोडा का 'स्वामी रामतीर्थ का जीवन चरित्र', भी इसी सन् मे प्राप्त होते हैं। यही दो जीवनियाँ इसी सन् मे ऐसी है जो मानव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झाँकी प्रस्तुत करती है। इसलिए इनका विशेष महत्व है।

सन् १९१३ मे भी धार्मिक एव सामाजिक व्यक्तियो की जीवनिया ही प्राप्त होती हैं। परमानन्द स्वामी की 'शकराचार्य', मुकुन्दी लाल वर्मा का 'कर्म वीर गाँधी', लज्जाराम शर्मा का 'उम्मेदसिह चरित', भगवती नारायण सिह की 'हिज हाइनेस श्री सर प्रभुनारायण सिह बहादुर जी० सी० आई० ई० काशी की सक्षिप्त जीवनी', गगाप्रसाद शास्त्री का 'महिला जीवन', गणेश लाल का 'सचित्र भारत रत्न', ललिताप्रसाद वर्मा की 'भारतवर्ष की वीर माताएँ', कु० छत्रपति सिह जू देव का 'रमेश जीवन', देवीप्रसाद शर्मा का 'हृदयोद्गार', बलदेव प्रसाद शर्मा का 'हकीकत राय धर्मी', एव लक्ष्मी धर वाजपेयी का 'स्वामी नित्यानन्द' जीवन चरित्र प्रकाशित हुए।

सन् १९१४ मे आनन्द किशोर महता का 'गुरु गोविन्दसिह जी', बेनीप्रसाद द्वारा लिखित 'गुरु गोविन्दसिह, स्वामी श्रद्धानन्द की 'आर्य पथिक लेखराम', महात्मा मुन्शीराम की 'आर्य पथिक लेखराम', रघुनन्दन प्रसाद मिश्र की 'शिवाजी और मराठा जाति', सम्पूर्णानन्द की 'धर्मवीर गाधी', सूर्य नारायण त्रिपाठी की 'रानी दुर्गावती' गणपति कृष्ण गजर की 'स्वामी रामतीर्थ की जीवनी और व्याख्यान', रामानन्द द्विवेदी का 'गाधी चरित्र', नन्दकुमार देव शर्मा का 'महात्मा गोखले', ब्रह्मानन्द का 'जर्मनी के विधाता या केसेर के साथी', लक्ष्मीधर वाजपेयी की 'गोसिफ मैजिनी', बद्रीप्रसाद गुप्त की 'मि० दादाभाई नौरोजी', अखौरी कृष्ण-प्रसाद सिह की 'नैलसन', रामचन्द्र वर्मा की 'महादेव गोविन्द रानाडे', ताराचरण अग्निहोत्री की 'महाराष्ट्र केसरी शिवाजी', नाथूराम प्रेमी की 'कर्णाटक जैन कवि', जैनेन्द किशोर की 'मु० कु० वा० रामदीन सिह', मेहता लज्जाराम शर्मा का 'जुझारतेजा', पाँडेय लोचन प्रसाद शर्मा की 'चरित्र माला', एव नारायणसिह जी की 'भारतीय आत्मकथा' इसी सन् मे प्रकाशित हुई। इन सभी मे स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा लिखी हुई 'आर्य पथिक लेखराम', एव बेनीप्रसाद की 'गुरु गोविन्द सिह की जीवनी' उत्कृष्ट हैं। धार्मिक दृष्टिकोण से इनका विशेष महत्व है। सम्पूर्णानन्द एवं

रामानन्द द्विवेदी ने गाधीजी के जीवन की कुछ घटनाओ का आधार लेकर जीवन चरित्र लिखने का प्रयास किया है। इसी प्रकार ताराचरण अग्निहोत्री एव रघुनन्द प्रसाद मिश्र ने शिवाजी की जीवनी लिखी है। इसका ऐतिहासिक दृष्टि से महत्व है। दुर्गावती का जीवन चरित्र भी सूर्यनारायण त्रिपाठी ने लिखा है। इन इतिहास के बीते हुए समय के प्रसिद्ध वीर पुरुषो एव वीरागनाओ के जीवन चरित्र इस समय मे उपदेशात्मक दृष्टिकोण से लिखे जाते थे जिससे लोग इनके अध्ययन से कुछ प्रेरणा ग्रहण कर सके।

१९१५ सन् मे द्वारिका प्रसाद चतुर्वेदी का 'रामानुजाचार्य', ज्ञानचन्द्र का 'वीरागना', केदारनाथ पाठक का 'लक्ष्मण द्विवेदी', लाला भगवानदीन की 'श्रीमती ऐनी बेसेंट', द्वारिका प्रसाद शर्मा का 'साक्रटीज महात्मा', श्री किशोरीदास का 'निम्बार्क महामुनीन्द्र', इद्रवेदालकार का 'प्रिन्स बिस्मार्क', केशव प्रसाद उपाध्याय का 'भारतीय आरकाने', रामेश्वर प्रसाद शर्मा का 'मि० दादाभाई नौरोजी', नरेन्द्र कुमार देव शर्मा की 'स्वामी रामतीर्थ की जीवनी और व्याख्यान', ब्रज मोहन झा ओंकारनाथ वाजपेयी का 'समर्थ रामदास' एव चतुर्वेदी द्वारिका प्रसाद शर्मा का भाष्यकार श्री रामानुजाचार्य का सचित्र जीवन चरित्र जीवनिया प्रकाशित हुई।

१९१६ ई० मे जगमोहन वर्मा की 'राणा जगत्बहादुर', सम्पूर्णानन्द की 'महाराज छत्रसाल', चन्द्रशेखर पाठक का 'नेपोलियन बोनापार्ट', बृजबिहारी शुक्ल का 'मदन मोहन मालवीय', शिव कुमार सिंह की 'मानवीय पडित मालवीयजी के साथ', और हिन्दू विश्वविद्यालय के काशीराम नारायण मिश्र की 'महादेव गोविन्द रानाडे एवं अज्ञात की 'सच्ची स्त्रिया" भी प्रकाशित हुई। इनके अतिरिक्त १९१६ सन् मे अन्य भाषाओ की जीवनियो का हिन्दी मे अनुवाद हुआ। श्याम सुन्दर दास की 'बुद्धदेव,' जिसके मौलिक लेखक जगमोहन वर्मा हैं इसी सन् मे प्राप्त होती हैं। चंडीचरण बनर्जी द्वारा लिखित जीवनी 'विद्यासागर" का हिन्दी अनुवाद रूपनारायण पाडेय ने लिखा। बकिमचन्द्र लाहिडी द्वारा लिखी जीवनी 'नेपोलियन बोनापार्ट', का हिन्दी अनुवाद जनार्दन झा ने किया।

सन् १९१७ मे पद्मनन्दन प्रसाद मिश्र की 'राजा राम मोहन राय', शिवनारायण द्विवेदी की 'राजाराम मोहन राय', एव 'कोलम्बस', बृजमोहन लाल की 'हजरत मुहम्मद साहब', रामानन्द द्विवेदी का नूरजहाँ यदुनदन प्रसाद एव बालमुकुद वाजपेयी की 'एनी बेसेंट', जयशकर प्रसाद की 'सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य', लक्ष्मीधर वाजपेयी की 'छत्रपति शिवाजी', शीतला चरण वाजपेयी की 'रमेशचन्द्र दत्त', हरिदास मणिक की 'भारत की छत्राणी भाग २', राधामोहन मोकुल जी की 'नैपोलियन बोनापार्ट', जीवनिया प्रकाशित हुई।

सन् १९१८ सन् मे पूर्णसिंह वर्मा की 'भीमसेन शर्मा', लालमणि वाडिया की 'पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र', राधाकृष्ण का 'नवरत्न', ओकारनाथ वाजपेयी का 'जे० एन० टाटा', अक्षयकुमार मंत्रेय का 'सिराजुदौला', विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक

का 'रूस का राहु' 'वीर सत्याग्रही भवानी दयाल की संक्षिप्त जीवनी' अज्ञात द्वारा लिखी गई। इनके अतिरिक्त लोकमान्य तिलक, गुरु गोविन्द सिंह की जीवनियाँ भी माता सेवक एव राधेमोहन गोकुल ओंकार द्वारा लिखी गई।

सन् १६१६ मे रूपनारायण पाडेय की 'बंकिम चन्द्र चटर्जी की जीवनी' प्राप्त होती है। यह तथ्यपूर्ण एव सप्रमाण जीवनी लिखी गई है। पाडेयजी ने अत्यन्त स्वाभाविक ढग से नायक के चरित्र गुणो का उल्लेख किया है। एक भारतीय हृदय द्वारा लिखी हुई केशवचन्द्र सेन की जीवनी भी इसी सन् मे प्राप्त होती है। इस युग मे जीवनी साहित्य मे यदि सर्वोत्तम नही तो सर्वश्रेष्ठ पुस्तको मे इस पुस्तक का स्थान ऊँचा है। चरित्र नायक का व्यक्तित्व इस ग्रन्थ मे देखा जा सकता है। उसकी आत्मा पहचानी जा सकती है। जीवन का सच्चा चित्र इस पुस्तक मे मिलता है। पाठक यह अनुभव करता है कि एक तटस्थ लेखक ने एक व्यक्ति के जीवन की मीमासा दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक ढग से करने का प्रयत्न किया है। चरित्र नायक का मानवीय रूप उसके गुण और दोष के साथ इस ग्रन्थ मे चित्रित है। इसका मुख्य आधार अग्रेजी पुस्तक है। इनके अतिरिक्त विश्वम्भरनाथ शर्मा का 'रूस का शत्रु', महावीर प्रसाद का 'आदर्श सम्राट', चन्द्रशेखर पाठक का 'पृथ्वीराज', केदारनाथ गुप्त का 'भारत के देश रत्न' जैसी जीवनियाँ प्राप्त होती हैं।

१६२० सन् सम्पूर्णानन्द की लिखी हुई 'सम्राट हर्षवर्द्धन', 'महादाजी सिन्धिया' जैसी जीवनियाँ प्राप्त होती हैं। इन जीवनियो को न तो इतिहास की श्रेणी मे रक्खा जा सकता है और न जीवन चरित्रो की। इनमे लेखक ने नायक के जीवन की कुछ घटनाओ का वर्णन किया है। 'महादाजी सिंधिया' मे इसी वीर पुरुष का जीवन चरित्र लिखा है। इसमे नायक के सम्बन्ध का साधारण इतिहास है जो केवल सर्व-साधारण की जानकारी के लिए लिखा गया है। लेखक ने इसको पुस्तक की भूमिका मे ही कह डाला है—"उनके जीवन का परिचय सर्वसाधारण को करवाने के लिए ही यह पुस्तक लिखी गई।" इन पुस्तकों मे हिन्दू सस्कृति और भारत के गौरव के महत्व पर जोर दिया है। व्यक्तिगत स्वभाव, परिवार की बातें इन पुस्तको मे वर्णित हैं। इसलिये उन्हें ऐतिहासिक जीवनी साहित्य मे लिया गया है।

यही नही १६२० सन् मे ही चन्द्रशेखर पाठक ने राणा प्रताप सिंह एव सिकन्दर शाह के जीवन चरित लिखे। नवजादिकलाल श्रीवास्तव का 'देशभक्त लाला लाजपत राय', भगवानदास केला का 'देशभक्त दामोदर', लक्ष्मीबाई का 'धन्नो देवी', सुखसम्पत राय भडारी का 'भगवान बुद्ध', बेनीप्रसाद का महाराजा रणजीत सिंह' एव ईश्वरी प्रसाद शर्मा, अज्ञात एव माता सेवक की बाल गगाधर तिलक पर लिखी जीवनियाँ भी इसी सन् मे प्रकाशित हुई।

सन् १६२१ मे श्यामसुन्दरदास की 'कोविद रत्नमाला भाग २', सुरेन्द्रनाथ तिवारी की 'वेदज्ञ मैक्समूलेर', विश्वेश्वरनाथ मेहर की 'अब्राह्म लिकन' एव राम-दयाल तिवारी की 'गाधी मीमासा' प्रकाशित हुई। इनमे डॉ० श्यामसुन्दरदास

की कोविद रत्नमाला का साहित्यिक दृष्टि से विशेष महत्व है। सन् १९२२ मे दुलारेलाल भार्गव की 'द्विजेन्द्र लाल राय', श्री रूपनारायण पाडेय की 'मारवाड के प्रसिद्ध महात्मा की बानी और जीवन चरित्र', मथुराप्रसाद दीक्षित की 'नादिरशाह', शिवव्रत लाल की 'प्राचीन हिन्दू माताएँ', बालकृष्णपति वाजपेयी की 'एडमस्मिथ', स्वामी मुरली धर का 'निम्बादित्य चरितम्', राधामोहन गोकुल जी की 'जौजेफ गेरीवाल्डी' प्रकाशित हुई। सन् १९२३ मे भाई परमानन्द की 'वैरागीवीर', गुलबदन ब्रजरत्नदास की 'सर हेनरी लारैंस', सुखसम्पत्ति राय भडारी की 'श्री जगदीशचन्द्र बोस', कृष्ण कुमारी की 'भारत की विदुषी नारियाँ' एव प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा द्वारा लिखित 'दादा भाई नौरोजी' जीवनियाँ प्रकाशित हुई है। सन् १९२४ मे रामनारायण सिंह जायसवाल की 'स्वामी शकराचार्य का जीवन वृत्तान्त' एवं बनारसीदास चतुर्वेदी की महादेव गोविन्द रानाडे प्राप्त होती हैं। १९२५ सन् मे केवल दो ही जीवनियाँ चक्रवर्ती वाप्पारल एव शिवाजी रामशकर त्रिपाठी एवं रामवृक्ष शर्मा द्वारा लिखी हुई प्रकाशित हुईं। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि १९१६ से १९२५ सन् के भीतर जितनी भी जीवनियाँ लिखी गई हैं वे सामाजिक, धार्मिक एव राजनीतिज्ञो की है चाहे उनके लेखक साहित्यिक ही हैं।

बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखित जीवनी-साहित्य

इस समय की अन्य महत्वपूर्ण जीवनी बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखित 'सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी' है। यह भी एक मौलिक जीवनी है। इसका प्रकाशन काल १९२६ सन् है। लेखक ने चरित्र नायक के दोषो का भी पूर्ण रूप से उल्लेख किया है। इसमे किसी भी प्रकार की कृत्रिमता नही देखने मे आती। लेखक ने नायक का वर्णन अत्यन्त स्वाभाविक ढंग से किया है। इसके अतिरिक्त नायक की व्यक्तिगत घटनाओ को लेखक ने सप्रमाण व्यक्त किया है। लेखक ने नायक के घर जाकर उनके जीवन के सम्बन्ध मे पता लगाया जो नायक के व्यक्तित्व पर पूर्ण रूप से प्रकाश डालता है। जीवनी मे लेखक ने कुछ पत्रो का भी समावेश किया है। इनके समावेश से जीवनी के चरित्र नायक का स्तर और भी ऊँचा उठ जाता है। लेखक ने जीवन की प्रत्येक घटना को सप्रमाण प्रस्तुत किया है। जहाँ इन्होंने नायक के विद्यार्थी जीवन के विषय मे लिखा है वहाँ यह पूर्ण विवरण प्रस्तुत करते हैं जोकि इनकी सत्यता एवं प्रामाणिकता का द्योतक है—

> "सत्यनारायण के विद्यार्थी जीवन को हम दो भागो मे बाँट सकते हैं। एक तो अध्ययन काल सन् १८९० से १८९६ तक और दूसरा अग्रेजी अध्ययन सन् १८९७ से १९०० तक। यद्यपि सन् १८९० से पहले सत्यनारायण ने लुहार-गली, आगरे मे वैद्यवर पडित रामदत्त के साथ, सारस्वत पढना आरम्भ किया था जबकि वे अपनी माता के साथ रामदत्तजी के पिता देवदत्तजी के यहाँ रहा करते थे तथापि नियमानुसार पढाई धाँधूपुर पहुँचने पर ही प्रारम्भ हुई।··· धाँधूपुर आगरे के निकट भी है और दूर भी।···वास्तव में सत्यनारायण की

शिक्षा का आरम्भ इसी ग्राम से समझना चाहिए। पहले वे ताजगंज के मदर्से मे पढने के लिए बिठलाए गए थे।"[1]

यह जीवनी सरल, रोचक एव मार्मिक भाषा मे लिखी गई है। इस जीवनी का महत्व इसलिए है कि लेखक ने एक साधारण व्यक्ति का चरित्र चित्रण करके मानवता का सुन्दर चित्रण उपस्थित किया है।

इसके अतिरिक्त १९२६ ई० मे उमादत्त शर्मा की शकराचार्य जटाधरप्रसाद शर्मा विमल की 'अहिल्याबाई', रामवृत्त शर्मा का 'लगट सिंह', रामनाथ लाल सुमन का 'माइकेल' मधुसूदन दत्त उमादत्त शर्मा का 'शिवाजी' जीवनियाँ भी प्रकाशित हुईं। १९२२ ई० मे विश्व की 'पृथ्वीराज चौहान', वल्लभभट्ट शास्त्री की 'राजा बीरबल', भ्रमरलाल सोनी की 'मेवाड के महावीर' द्वारिका प्रसाद शर्मा की 'प्राचीन आर्य वीरता', हरिहर नाथ शास्त्री की 'मीरकासिम', प० शीशनाथ चौधरी की 'भगवान बुद्ध', गौरी शकर हीराचन्द ओझा की 'महाराणा प्रताप' जैसी जीवनिया प्रकाशित हुईं। इस युग मे डॉ० श्यामसुन्दरदास द्वारा लिखित 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' की जीवनी प्रकाशित हुई। शिवनन्दन सहाय के पश्चात् डॉ० श्यामसुन्दरदास ने भारतेन्दु की जीवनी लिखने का प्रयास किया। आलोचक होने के कारण लेखक ने भारतेन्दु के जीवन की अच्छी प्रकार से छानबीन की है, भाषा भी उच्चकोटि की है।

सन् १९२८ मे लक्ष्मी सहाय माथुर की 'बैंजामिन फ्रैंकलिन का जीवन चरित्र', बटुक सिंह की 'बेचसिंह नाम पैदा करने वाला', सूर्यदेवसिंह की 'महाराणा हम्मीरसिंह', शिवकुमार शास्त्री की 'नेलसन की जीवनी', प्रवासी लाल वर्मा की 'कर्मदेवी' एव सत्यव्रत की 'अब्राह्म लिंकन' जीवनियाँ प्राप्त होती हैं। सन् १९२९ मे भक्तवर तुकाराम जी का जीवन चरित्र चतुर्भुजसहाय द्वारा लिखा हुआ, अवतारकृष्ण कौल का 'शिवाजी महाराज', रामगोपाल का 'वीर सन्यासी श्रद्धानन्द', उदयभानु शर्मा का 'देवी अहिल्याबाई' जीवनियाँ प्रकाशित हुईं। सन् १९३० मे सरदार वल्लभभाई पटेल एवं 'बादशाह हुमायूँ' सुरेन्द्र शर्मा एव व्रजरत्नदास द्वारा लिखे हुए चरित्र प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार द्विवेदी युग के प्राप्त जीवनी साहित्य से स्पष्ट है कि भारतेन्दु युग से इसमे अधिक उन्नति हुई है। इससे पूर्व की जीवनी शैली से इसमें विशेष अन्तर उत्पन्न हुआ। इसके साथ एक और महत्वपूर्ण बात है कि सभी लेखको का ध्यान जीवन चरित्र लिखने की ओर आकर्षित हुआ। आवेश मे आकर जैसा भी लिख सकते थे उन्होंने लिखा, केवल कुछ ही जीवन चरित्र उच्चकोटि के हैं। अधिकतर लेखकों ने सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक व्यक्तियो के विषय मे ही लिखा है। स्वय द्विवेदीजी ने भी अधिकतर ऐतिहासिक पुरुषो के विषय मे ही लिखा है क्योकि इनका दृष्टिकोण उपदेशात्मक था एव हिन्दी का प्रचार करना इनका उद्देश्य था। इसलिए इन्होंने

---

१. सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी, प्रथम सस्करण, पृष्ठ ७-८, ले० बनारसीदास चतुर्वेदी।

इतिहास से अपने जीवन चरित्रो को लिया। इनके लिखे हुए सभी जीवन चरित निबन्ध शैली मे है। लेकिन फिर भी द्विवेदीजी ने वैज्ञानिक ढग से उनका विवेचन किया है। यह ठीक है कि श्रद्धा की भावना होने से शिक्षा ग्रहण करने का उद्देश्य होने से जीवन के उन्ही पक्षो का विश्लेषण है जिसे पढकर पाठक कुछ ग्रहण कर सके। अन्य महत्व-पूर्ण बात यह है कि इस काल मे अन्य भाषाओ की जीवनियो का हिन्दी भाषा मे अनुवाद हुआ। रूपनारायण पाडेय ने 'विद्यासागर' एव श्यामसुन्दरदास ने 'बुद्धदेव' लिखकर विशेष प्रशसनीय कार्य किया। इनके अतिरिक्त अन्य भी अनूदित जीवनियाँ प्रकाशित हुई। राष्ट्रीय चरित्रो मे जहाँ इन्होने 'देशभक्त लाजपत', 'कर्मवीर गाधी', 'सरोजिनी नायडू', 'दादा भाई नौरोजी' लिखे वहाँ उन विदेशी महापुरुषो के जीवन चरित्र भी लिखे जो त्याग और बलिदान से ओतप्रोत है। इनमे 'गैरीवाल्डी', 'महावीर गैरीवाल्डी', 'बैंजामिन फ्रैंकलिन', 'अब्राह्म लिकन' आदि उल्लेखनीय है। ऐतिहासिक चरित्रो की भी कमी नही है। 'नेपोलियन बोनापार्ट', 'महाराणा प्रतापसिंह', 'सम्राट अशोक' आदि जीवनियाँ प्राप्त होती है। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसी जीवनियाँ हैं जो कि मानव जीवन को ऊँचा उठाती है जैसे—शकराचार्य, 'गुरु गोविन्दसिंह', 'केशव-चन्द्र सेन', 'महर्षि सुकरात' आदि।

जहाँ तक साहित्यिक व्यक्तियो के जीवन चरित्र का प्रश्न है वह भी इस युग मे लिखे गए। शिवनन्दन सहाय ने 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' एव 'गोस्वामी तुलसीदास' लिखकर इस श्रेणी को प्रगतिशील बनाया है। हिन्दी साहित्य मे भारतेन्दु पर लिखी हुई यह जीवनी अधिक प्रामाणिक एव सर्वप्रथम जीवनी मानी जा सकती है। इसमे लेखक ने भारतेन्दु के समस्त जीवन का वर्णन प्रामाणिक रूप से किया है। इनकी गोस्वामी तुलसीदास पर लिखी हुई जीवनी भी उत्कृष्ट है। इस प्रकार शिवनन्दन सहाय से ही साहित्यिक जीवनी लेखको का आरम्भ माना जाना चाहिए क्योकि इनसे पहले जो भी साहित्यिक व्यक्तियो के विषय मे हमे प्राप्त होता है वह निबन्धात्मक रूप मे ही है। किसी भी लेखक ने पूर्ण एव विस्तृत जीवनी, जीवनी शैली मे नही लिखी। यही नही बनारसीदास चतुर्वेदी की कवि सत्यनारायण की जीवनी भी अपना स्थान रखती है। इनके पश्चात् डा० श्यामसुन्दरदास ने भी भारतेन्दु पर जीवनी लिखी। इस प्रकार स्पष्ट है कि शिवनन्दन सहाय से ही हिन्दी साहित्यिक पुरुषो की जीवनी का आरम्भ होता है।

वर्तमान काल

वर्तमान काल १९३० ई० के पश्चात् आरम्भ होता है। १९३१ ई० मे देवव्रत द्वारा लिखित 'गणेशशकर विद्यार्थी', रामबिहारी शुक्ल की 'अनमोल रत्न', प्यारे मोहन चतुर्वेदी की 'क्रान्तिकारी राजकुमार' एवं कृष्णरमाकान्त गोखले की 'वीरवर दुर्गादास' जीवनियाँ प्रकाशित हुईं। ये सभी साधारण कोटि के जीवनग्रन्थ हैं।

सन् १९३२ मे गगाप्रसाद मेहता द्वारा लिखित 'चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य' जीवनी प्राप्त होती है। गगाप्रसाद मेहता ने यह जीवनी अत्यन्त छानबीन के साथ लिखी है जैसाकि इन्होने स्वय भी कहा है।

> राजाधिराजर्षि चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का वृत्तान्त विद्यमान ऐतिहासिक साधनो से जितना कुछ उपलब्ध हुआ है उसका विवेचन और विचार मैंने यथाशक्ति इस पुस्तक मे किया है।[1]

इस जीवनी मे गुप्तकालीन इतिहास के साथ चन्द्रगुप्त की जीवनी का वर्णन है। लेखक ने इसमे जीवन चरित्र की अपेक्षा तत्कालीन इतिहास का सीमा से अधिक वर्णन किया है।

इसी सन् मे इसके अतिरिक्त और जीवनियाँ भी प्राप्त होती हैं—श्री सतोष सिह का 'गुरुनानक प्रकाश', मुकुन्दी लाल श्रीवास्तव एवं राजावल्लभ सहाय की 'ग्रीस और रोम के महापुरुष', नारायण प्रसाद अरोड़ा की 'ईमन डी बेलेरा का जीवन चरित्र', विश्वेश्वरनाथ रेऊ का 'राजा भोज', उमादत्त शर्मा की 'डी बेलेरा' गोपीनाथ दीक्षित की 'नहरूद्वय' एव माता सेवक पाठक की 'रणधीर महाराणा प्रताप सिंह' है। ये सभी जीवनियाँ साधारण कोटि की हैं। इनमे ऐसी कोई विलक्षण बात नही जोकि वर्णनीय हो।

ब्रजरत्नदास कृत 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र'

ब्रजरत्नदास की 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' जीवनी १९३३ ई० मे प्राप्त होती है। हिन्दी साहित्य मे प्राप्त साहित्यिक जीवनियो मे इसका अद्वितीय स्थान है। लेखक ने यह जीवनी प्रामाणिक रूप से लिखी है। जिन व्यक्तियों की सहायता से इन्होने भारतेन्दु के जीवन को प्रामाणिक रूप दिया है उन सभी का उल्लेख लेखक ने आरम्भ मे ही दे दिया है। इसके साथ जीवनी लिखने के सभी साधनो का भी वर्णन है—

> "इस कार्य में मुझे बहुत सज्जनों से सहायता मिली है और उन लोगो का मै हृदय से अनुगृहीत हूँ। बाबा राधाकृष्णदासजी के पितृव्य बा० पुरुषोत्तम दासजी, रायकृष्णदासजी, बा० जयशकरप्रसादजी, बा० गोकुलदासजी जयपुरी, बा० जगन्नाथ दासजी बी० ए० रत्नाकर, प० गणेशदत्त त्रिपाठी आदि सज्जनों ने भारतेन्दु के विषय मे जितनी ज्ञातव्य बातें बताई हैं...इसके अनन्तर ईश्वर की कृपा से बहुत से कागजात, पत्र-पत्रिकाएँ आदि आप से आप मिलती गईं, जिनसे इस जीवनी के लिखने मे बहुत सहायता मिली। कुछ कागजात की नकल कचहरी से ली गई।[2]

इस जीवनी मे लेखक ने भारतेन्दु के जीवन का पूर्ण रूप से विश्लेषण किया

---

१. चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, ले० गंगाप्रसाद मेहता, पृ० १०
२. भारतेन्दु हरिचन्द्र, ले० ब्रजरत्नदास, पृ० ७

है। गुण-दोषो को प्रकट करने मे किसी भी प्रकार का सकोच नही दृष्टिगोचर होता। इन्होंने उनके विषय मे स्पष्ट रूप से लिखा है—

"भारतेन्दु की जीवनी देखने से ज्ञात होता है कि घर के शुभचिन्तको ने उन्हें जितना ही लायक बनाने का प्रयत्न किया उतने ही वे मीराबाई के समान 'नालायक' होते गए। और दोनो ही पक्ष अन्त तक अपने-अपने प्रयास मे डटे रहे। फलतः आरम्भ मे यह परकीया नायिकाओ के फेर मे कुछ दिन पडकर अपने चित्त को सान्त्वना देते रहे।"

इस प्रकार वर्णन से स्पष्ट है कि लेखक ने नायक के गुण-दोष दोना का वर्णन पूर्ण रूप से किया है। भाषा एव वर्णन शैली उत्तम है। प्रत्येक घटना का वर्णन लेखक ने कोमलता से किया है।

इसके अतिरिक्त १६३३ ई० मे और भी कई जीवनियाँ प्रकाशित हुई। रामनाथ सुमन की 'हमारे राष्ट्र निर्माता', बेनीमाधव अग्रवाल का 'इटली का शहीद', कृष्णचन्द्र विरमानी की 'दयानन्द सिद्धान्त भास्कर', द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी की 'वारेन-हेस्टिंग्स' लक्ष्मीचन्द्र उपाध्याय की 'महाराणा प्रताप', कृष्णदेव उपाध्याय की 'चारु-चरितावली' अयोध्यानाथ शर्मा की 'उज्ज्वल तारे', दयाशकर दुबे की 'भक्त मीरा', सत्यदेव विद्यालंकार की 'स्वामी श्रद्धानन्द की जीवनी', सत्यभक्त की 'कार्लमार्क्स', सत्यदेव पडित की 'स्वामी श्रद्धानन्द', रमाशकरसिंह की 'ससार के प्रसिद्ध पुरुष' इसी युग की देन हैं।

१६३४ ई० से १६४४ तक की जीवनी साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इसमे दो प्रकार की जीवनियाँ लिखी गई हैं—राष्ट्रीय जीवन चरित्र एव ऐतिहासिक जीवन चरित्र। राष्ट्रीय जीवन चरित्रो मे श्री गदाधरप्रसाद की 'देशपूज्य श्री राजेन्द्रप्रसाद' १६३४ ई०, 'हमारे राष्ट्रपति' ले० सत्यदेव विद्यालकार १६३६ ई०, शिवनारायण टडन की 'पडित जवाहरलाल नेहरु' १६३७ ई०, 'जवाहरलाल नेहरु' गोपीनाथ दीक्षित, १६३७ ई०, लाला 'लाजपतराय' जगतपति चतुर्वेदी १६३८ ई० 'राजा राममोहन राय' ले० गणेश पाडेय, १६३८ ई०, 'देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद' १६३८ ई०, ले० देवव्रत शास्त्री, 'सुभाष बोस' १६३८ ई० ले० श्री बाजेन्द्र शकर, 'चन्द्रशेखर आजाद', १६३८ ई० ले० मन्मथनाथ गुप्त, महात्मा गाँधी १६३९ ई० ले० लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज, 'मोतीलाल नेहरु' १६३९ ई० ले० रामनाथ सुमन, 'बापू' १६४० ई० ले० घनश्यामदास बिडला हैं। इन प्राप्त राष्ट्रीय जीवन चरित्रो में से घनश्यामदास बिडला द्वारा लिखा हुआ 'बापू' जीवन चरित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बिड़ला की यह जीवनी अत्यन्त प्रामाणिक है क्योंकि इनका सम्पर्क गाधीजी के साथ बहुत देर तक रहा। इस दीर्घकालीन निकटता के कारण ही इन्होंने यह पुस्तक लिखी है। यह सारी पुस्तक बिडलाजी की तलस्पर्शी परीक्षण शक्ति का सुन्दर नमूना है। इसमे कही-कही गाँधीजी के विचारो एव सिद्धान्तो पर भी प्रकाश डाला गया है। यह जीवनी सस्मरणात्मक शैली मे लिखी गई है।

इन जीवन चरित्रो मे से पत्तनलाल का (१९४० ई०) 'बाबू जवाहरलालजी का जीवन चरित्र', एव घनश्यामदास बिडला का जमनालाल बजाज (१९४२ ई०) भी उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त कई ऐसी पुस्तकें भी प्राप्त होती हैं जिनमे निबन्धात्मक शैली मे राष्ट्रीय पुरुषो के जीवन चरित्र लिखे हैं, इनमे—रामनाथ सुमन की 'हमारे नेता और निर्माता' १९४२ ई०, सिद्धनाथ दीक्षित 'सन्त' की 'सम्मेलन के रत्न' १९४२ ई० एव केदारनाथ गुप्त की 'भारत के दस रत्न' १९३८ ई० उल्लेखनीय हैं।

ऐतिहासिक पुरुषों की प्रकाशित जीवनियो के नाम ये हैं—ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा की 'महारानी वायजा बाई सिन्धिया' १९३५, भगदत्त की 'भारतीय महिला' १९३५, 'महाराज पृथ्वीराज' १९३६ ई०, ले० लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी, 'महाराज छत्रसाल बुन्देले' १९३६ ई०, ले० राधाकृष्ण तोषनीवान, 'राठौर दुर्गादास' (१९३७ ई०) ले० राम रत्न हल्दर, 'छत्रपति शिवाजी' ले० लाला लाजपत राय (१९३९ ई०), 'बाबरनामा' १९४० ई० ले० देवीप्रसाद कायस्थ आदि लिखी गई। इनके अतिरिक्त कुछ विदेशी शासको की जीवनियाँ जो त्याग और बलिदान से भरपूर हैं प्राप्त होती है, उनके नाम ये हैं—'महात्मा लेनिन' (१९३४ ई०), ले० सदानन्द भारती, 'हिटलर महान' (१९३६ ई०) ले० चन्द्रशेखर शास्त्री, 'सम्राट पचम जार्ज' (१९३६ ई०) ले० श्री नारायण चतुर्वेदी, 'राष्ट्र-निर्माता मुसोलिनी' (१९३७ ई०) ले० श्री चन्द्रशेखर, 'राबर्ट क्लाइव' (१९३८ ई०) द्वारिकाप्रसाद शर्मा, 'प्रिंस क्रोपाटकीने' (१९३९ ई०) मूल लेखक ए० जी० गार्डनर अनु० बनारसीदास चतुर्वेदी, 'इटली का तानाशाह मुसोलिनी' (१९४० ई०) लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज, 'स्टालिन' (१९४० ई०) त्रिलोकीनाथ। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे धार्मिक व्यक्तियों की जीवनियाँ प्राप्त होती हैं जो कि मानव जीवन को ऊँचा उठाने के लिए पर्याप्त रूप से सहायता प्रदान करती हैं। इनमे श्रीमन्नारायण स्वामी, श्री रामकृष्ण परमहस (१९३६ ई०) ले० स्वामी विवेकानन्द, 'सत तुकाराम' (१९३७ ई०) ले० हरिराम चन्द्र दिवेकर, 'गुरु नानक' (१९३८ ई०) ले० मन्मथनाथ गुप्त, 'रामकृष्ण चरितामृत' (१९४० ई०) ले० लल्ली प्रसाद पाडेय, स्वामी शकरानन्द सदर्शन (१९४२ ई०) ले० भवानी दयाल आदि हैं। इस १९३४ ई० से १९४४ ई० तक प्राप्त जीवनी साहित्य से स्पष्ट है कि इसमे किसी भी साहित्यिक लेखक की जीवनी नही प्रकाशित हुई।

शिवरानी देवी कृत 'प्रेमचन्द : घर में'

सन् १९४४ ई० मे शिवरानी देवी द्वारा लिखी हुई। 'प्रेमचन्द : घर मे' जीवनी आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली से प्रकाशित हुई। शिवरानीजी प्रेमचन्द की पत्नी हैं। इसलिए इन्होंने प्रेमचन्द का जो भी जीवन लिखा है वह सप्रमाण लिखा है। इसमे लेखिका की स्पष्टवादिता एव ईमानदारी पूर्णरूप से लक्षित होती है। वैसे लेखिका ने स्वय भी कहा है—

"पुस्तक के लिखने मे मैंने केवल एक बात का अधिक से ध्यान रक्खा है और वह है ईमानदारी सचाई। घटनाए जैसे-जैसे याद आती गई है मैं उन्हे लिखती गई हूँ।"[1]

सस्मरणो मे लिखा हुआ यह जीवन चरित्र अत्यन्त रोचक एव मार्मिक है। पुस्तक लिखने के उद्देश्य को लेखिका ने स्वय ही वर्णन किया है—

"इस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य उस महान आत्मा की कीर्ति फैलाना नही है जैसाकि अधिकाश जीवनियो का होता है। इस पुस्तक मे आपको घरेलू सस्मरण मिलेगे पर इन सस्मरणो का साहित्यिक मूल्य भी इस दृष्टि से है कि इनसे उस महान् साहित्यिक के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। मानवता की दृष्टि से वह व्यक्ति कितना महान् कितना विशाल था, यही बताना इस पुस्तक का उद्देश्य है।·· उनके और उनके असख्य प्रेमियो के प्रति यह मेरी बेवफाई होती अगर मैं उनकी मानवता का थोडा-सा परिचय न देती। मेरा भी यह विश्वास है कि यह पुस्तक साहित्यिक आलोचको को भी प्रेमचन्द साहित्य समझने मे मदद पहुँचाएगी क्योकि उनकी आदमियत की छाप उनकी एक-एक पक्ति और एक-एक शब्द पर है।[2]

इस पुस्तक मे शिवरानी देवी ने प्रेमचन्द्र के व्यक्तित्व पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला है। भाषा भी उच्चकोटि की है।

१९४६ सन् से लेकर १९५१ तक का जो भी जीवनी साहित्य हमे प्राप्त होता है उनमे अधिकतर बापू के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इनके अतिरिक्त उन सभी महापुरुषो के जीवन चरित्र की झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं जिन्होने भारत को स्वतत्र बनाने के लिए त्याग और बलिदान दिए। इनमे पडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, सुभाषचन्द्र बोस एव राजर्षि टंडन मुख्य हैं। शिवनारायन टडन एव देवराज मिश्र ने तो राजर्षि टडन के विषय मे लिखा है, श्री सुरेन्द्र शर्मा एव विश्वम्भरप्रसाद शर्मा ने सरदार पटेल के जीवन के विषय मे लिखा है। गाँधीजी के जीवन के विषय मे लिखा है। इनके विषय के लेखको मे डा० सुशीला नायर, वियोगी हरि, कमलापति प्रधान, जवाहरलाल नेहरु, राजेन्द्रप्रसाद का नाम मुख्य रूप से लिया जा सकता है। इन सभी ने कुछ घटनाओ के आधार पर गाँधीजी के चरित्र को आँका है। इस युग मे अर्थात् १९४९ ई० मे रत्नलाल बासल की 'मृत्युजय सरदार भगतसिह' पर लिखी जीवनी प्राप्त होती है। यह भी अपना स्थान वीर पुरुषो की जीवनियो मे रखती है।

सन् १९५१ मे रामवृक्ष बेनीपुरी की दो जीवनियाँ 'कार्लमार्क्स' एव 'जयप्रकाश नारायण' प्रकाशित हुई। इनके अतिरिक्त भीमसेन विद्यालकार की 'शिवाजी' जीवनी इसी सन् मे प्राप्त होती है। इसमे शिवाजी का ऐतिहासिक जीवन चरित्र है। सन् १९४७ मे लालबहादुर शास्त्री ने 'श्रीमती क्यूरी' का अनुवाद किया। इस युग तक

१. प्रेमचन्द : घर मे, लेखिका शिवरानी देवी, दो शब्द
२. वही

कुछ हिन्दी विद्वानो ने खोजपूर्ण जीवनी-ग्रन्थ लिखे हैं जिनमे नायक के जीवन पर भी विशेष रूप से प्रकाश डाला है। ऐसे लेखको मे माताप्रसाद गुप्त, डॉ० रामकुमार वर्मा, डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा एव डॉ० दीनदयालु गुप्त के नाम उल्लेखनीय हैं। गुप्तजी ने अपने ग्रन्थ तुलसीदास मे जोकि १९४२ ई० मे प्रकाशित हुआ तुलसीदास का जीवन चरित्र वैज्ञानिक ढग से प्रस्तुत किया है। इसमे तुलसी के ग्रन्थो तथा उसकी रचना का समय आदि बातो की सतर्क विवेचना की गई है। यह आलोचनात्मक जीवनी साहित्य है। डा० ब्रजेश्वर वर्मा का भी 'सूरदास जीवनी और काव्य का अध्ययन' भी इसी श्रेणी का ग्रन्थ है। इसमे भी सूर के ग्रन्थो के आधार पर उनके जीवन तथा व्यक्तिव का चित्र अकित किया गया है। समय की परिस्थिति की भी छानबीन की गई है। डा० दीनदयालु गुप्त ने अपनी पुस्तक 'अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय' मे अष्ट-छाप के आठो भक्तो का बडी छानबीन के साथ जीवन प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक मे जीवनी के अतिरिक्त वल्लभ सम्प्रदाय का पूर्ण विवेचनात्मक साहित्य है।

कुछ अभिनन्दन ग्रन्थ भी इस काल तक प्रकाशित हुए। ये अभिनन्दन ग्रथ विशेषतया जन्म दिवस पर भेंट किए गए। मालवीय अभिनन्दन ग्रन्थ १९३६ ई० मे भेंट किया गया एव नेहरू अभिनन्दन ग्रन्थ १९४८ ई० मे प्रकाशित हुआ। इसी युग मे गाँधी अभिनन्दन ग्रन्थ भी प्रकाशित हुआ। इन अभिनन्दन ग्रन्थो मे नायक के जीव - के प्रशसात्मक कार्यों का ही उल्लेखमात्र है। निर्दोष जीवन चरित्र का उल्लेख इन ग्रथो मे नही है। फिर भी जीवनी साहित्य की उन्नति मे इन ग्रन्थो का विशेष हाथ रहा है।

राहुल सांकृत्यायन कृत जीवनी साहित्य

१९५१ के पश्चात् विदेशी शासको के जीवन चरित्र लिखने वालो मे राहुलजी का नाम उल्लेखनीय है। इन्होने कई जीवनियाँ लिखी हैं। १९५३ ई० मे इनकी 'स्तालिन' की जीवनी प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त १९५४ सन् मे कार्लमार्क्स, लेनिन, माओ त्सेतु ग, घुमक्कडस्वामी, प्रकाशित हुई। ये सभी जीवनियाँ हिन्दी साहित्य मे अपना विशेष स्थान रखती हैं। इन जीवनियो की शैली सर्वसाधारण है।

सन् १९५५ मे रगनाथ रामचन्द्र द्वारा लिखित श्री अरविन्द की जीवनी साधना और उपदेश 'महायोगी' नाम से रामकुमार प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित हुई। अरविन्द की यह जीवनी रगनाथ रामचन्द्र ने अत्यन्त रोचक एव मार्मिक भाषा मे प्रस्तुत की है। श्रद्धा का अतिरेक होने से यह उपदेशात्मक प्रवृत्ति को मुख्य रूप से ध्यान मे रखकर लिखी गई है।

सन् १९५६ मे इलाचन्द्र जोशी द्वारा लिखी हुई 'विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर' जीवनी भारतीय विद्याभवन, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई। जोशीजी ने रवीन्द्रनाथ की जीवनी अत्यन्त प्रामाणिक रूप से लिखी है। मनोवैज्ञानिककार होने के नाते इन्होने रवीन्द्रनाथ ठाकुर के जीवन की प्रत्येक घटना को मनोविज्ञान के आधार पर रक्खा है। उनके विवाह के विषय मे एक स्थान पर लिखते हैं—

"अपने भावी जीवन के सम्बन्ध मे उनके मन मे तरह-तरह की विचित्र कल्पनाएँ धूप-छाँह का लेख लिखा करती थी। यूरोप के नारी समाज की स्वतन्त्रता का पक्ष समर्थन करते हुए उस पाश्चात्य आदर्श को अपने यहाँ के प्राचीन-आदर्श से समन्वित करके योग्य जीवनी समिति की जो प्रतिमा उन्होने निर्धारित की थी उसमे कम-से-कम कालिदास के 'गृहिणी सचिव सखी मिथ प्रियशिष्या-ललिते कलाविधो' का आदर्श तो निहित था ही। पर ग्यारह वर्ष की जिस देहाती लडकी से उनका गठजोड होने जा रहा था उसके साथ उक्त आदर्श की चरितार्थता की सम्भावना प्रकट मे कुछ विशेष न होने पर भी उसके लिए उन्होने अपनी मौन सहमति दे दी।"[1]

विश्व कवि के चिरपरिचित होने के कारण एव काफी समय तक सहवास के कारण इनकी जीवनी प्रामाणिक मानी जा सकती है। इलाचन्द्र जोशी ने कविवर के मस्तिष्क का काफी मात्रा मे अध्ययन किया था, यह इस जीवनी से लक्षित होता है।

१९५६ सन् मे ही रामकृष्णदेव के अतरग गृही शिष्य का जीवन चरित्र प्रकाशित हुआ। यह जीवन चरित्र श्री शरच्चन्द्र चक्रवर्ती द्वारा लिखा हुआ है और इसका नाम 'साधुनाग महाशय' है।

सन् १९५७ मे रागेय राघव द्वारा लिखित तुलसीदास का जीवन चरित्र 'रत्ना की बात' नाम से विनोद पुस्तक भडार, आगरा से प्रकाशित हुआ, यह द्वितीय सस्करण है। इसमे तुलसी का जीवन वर्णित है। राहुल साकृत्यायन की जीवनी 'अकबर' भी इसी काल में प्रकाशित हुई। १९५८ सन् मे 'जार्ज वाशिगटन' की जीवनी प्रकाशित हुई जिसके अनुवादक मगनलाल जैन हैं। १९५९ मे श्यामराय भटनागर ने 'अब्राह्मलिकन' की जीवनी का हिन्दी अनुवाद किया। १९५९ मे ही श्री रविशकर द्वारा लिखी गुजराती भाषा मे 'गुजरात के महाराज' जीवनी का हिन्दी रुपान्तर निगमानन्द परमहस ने किया। श्री कृष्ण दत्त भट्ट की जीवनी 'जाजू जी जीवन और साधना' भी इसी सन् मे प्रकाशित हुई। किताब महल इलाहाबाद से 'राष्ट्रनिर्माता तिलक' जीवनी कृपाशकर द्वारा लिखी हुई भी इसी समय मे प्राप्त होती है।

सन् १९५९ एक और दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है। इसमे अनेको अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित हुए जिनसे जीवनी साहित्य की प्रगति और भी होने लगी। 'पाडेय स्मृति ग्रन्थ', 'सुमित्रानन्दन स्मृति चित्र', 'मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ' एव 'शिवपूजन रचनावली चौथा खण्ड' भी इसी सन् मे प्रकाशित हुआ। इन स्मृति ग्रन्थो में विविध हिन्दी लेखको द्वारा निबन्धात्मक शैली मे इनके जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इन सभी जीवन चरित सम्बन्धी निबन्धो मे नायक के गुणो का ही वर्णन है। इसके अतिरिक्त 'शिवपूजन रचनावली चौथे खंड' मे शिवपूजन सहाय द्वारा लिखी हुई अनेक छोटी-छोटी जीवनियाँ सकलित हैं। ये सभी ग्रन्थ हिन्दी जीवनी साहित्य के

---

1. विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर, ले० इलाचन्द्र जोशी, पृ० ९६

विकास मे विशेष सहयोग देते हैं।

सन् १९६० मे ऋषि जेमिनी कौशिक बरुआ द्वारा लिखी हुई 'माखनलाल चतुर्वेदी की जीवनी' भारती ज्ञानपीठ, काशी से प्रकाशित हुई। इसमे लेखक ने माखनलाल चतुर्वेदी के व्यक्तित्व का विश्लेषण सुचारु रूप से किया है। लेकिन जहाँ लेखक इनके व्यक्तित्व की कुछ दुर्बलताओ का विश्लेषण करने लगता है वहाँ उन दुर्बलताओ को और ही साँचे मे ढालकर पाठक का मन उनके प्रति श्रद्धा से भर देता है। एक स्थान पर जहाँ लेखक उनके पढाने के विषय मे वर्णन करता है—पत्नी को उन पर किए शक का अनुमान एवं उसके प्रत्यक्ष रूप से देखने का वर्णन है वहाँ लेखक का मन उनकी चारित्रिक त्रुटियो का वर्णन करता हुआ अपनी कलम को पीछे हटा लेता है और उस मालकिन के सम्बन्ध को बहन के रूप मे परिवर्तित कर देता है—

"एक दिन इस शकालु पत्नी से न रहा गया और वह निकट से सत्य की जानकारी के लिए उस समय उन जेठानी देवरानी के पास ही आ बैठी, जब परदे की दूसरी ओर उसका पति बच्चो को पढा रहा था। उसने महसूस किया कि कनखियाँ तो व्यस्त रहना चाहती हैं पर परदे की दिशा पर उसकी उपस्थिति मे उन कनखियो की कठिनाई बढ चली है। अब उससे न रहा गया और उसने उसी दिन फुरसत पाते ही पति से कह ही तो दिया कि जब आप पढाते हैं, तो बच्चों की माताएँ आपको कनखियो से देखा करती हैं...पर शीघ्र ही समाधान का क्षण आया। उस दिन सुबह से शहर मे रक्षाबन्धन का पर्व था, पर माखनलाल किसी दूसरे शहर शाम होते ही जाने की तैयारी मे व्यस्त था कि नीचे से मकान मालिक का बुलावा आया—दुबारा बुलावा आया तो माखनलाल ने स्वय जाकर मकान मालिक से उस दिन ठहर जाने की यह शर्त ठहराई कि उनके परिवार की दोनो पत्नियाँ उसे रक्षाबन्धन का डोरा बाँध दें।"[1]

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है लेखक ने अत्यन्त सजीव एव मार्मिक भाषा का प्रयोग किया है। यह जीवनी प्रामाणिक है। एक तो इस दृष्टिकोण से कि इसमे जहाँ भी आवश्यकता पडी है चतुर्वेदी की निजलिखित पंक्तियो का समावेश किया गया है, इसके अतिरिक्त वह स्वय उन स्थानो पर घूमा है जहाँ चतुर्वेदी का जन्म हुआ। काफी सामग्री लेखक ने इसी प्रकार इकट्ठी की है।

सन् १९६० में ही 'बालकृष्ण भट्ट' का जीवन ब्रजमोहन व्यास द्वारा लिखा हुआ प्रकाशित हुआ। यह समस्त जीवन लेखक ने सस्मरणों मे लिखा है। इसमे व्यासजी ने भट्टजी के आद्यात जीवन पर नया प्रकाश डाला है। इससे त्याग और तपस्या से परिपूर्ण उनका ज्वलत चित्र उपस्थित हो जाता है। लेखक ने ऐसे कितने ही प्रसगों का वर्णन किया है जिनसे उनका व्यक्तित्व स्पष्ट हो जाता है। भाषा की स्वाभाविकता एवं शैली की सजीवता इनकी जीवनी में लक्षित होती है।

---

१. माखनलाल चतुर्वेदी, ले० ऋषि जेमिनी कौशिक 'बरुआ', पृ० २३९

सन् १९६२ मे 'प्रेमचन्द : कलम का सिपाही' जीवनी अमृतराय द्वारा लिखी हुई हंस प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई। हिन्दी साहित्य मे प्रकाशित जीवनियो मे इसका स्थान अग्रगण्य है। इस जीवनी का महत्व कई कारणो से है। एक तो इस ढग की लिखी हुई जीवनी हिन्दी साहित्य मे किसी भी लेखक की नही प्राप्त होती। यह तो एक ढग का उपन्यास है। उपन्यास और इसमे अन्तर यही है कि उसकी कहानी कल्पित नही बल्कि वास्तविक है। जीवनी को प्रामाणिक सिद्ध करने के लिए लेखक ने तत्कालीन लिखित प्रेमचन्द सम्बन्धी सस्मरणो एव पत्रो का विशेष सहयोग लिया है, अधिक सहायता शिवरानी देवी से इन्होने ली है। लेखक ने प्रेमचन्द के जीवन का इतने रोचक ढग से वर्णन किया है कि नीरस प्रसगो को पढने मे भी लेखक रस का अनुभव करता है। जहाँ लेखक ने देश की राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन करते हुए उनका प्रेमचन्द के जीवन से सम्बन्ध स्थापित किया है वहाँ इसकी कला की कुशलता द्रष्टव्य है। प्रेमचन्द के समस्त जीवन का विवेचन अमृतरायजी ने वैज्ञानिक ढग से किया है। देश की परिस्थितियो के परिवर्तन के साथ-साथ नायक के व्यक्तित्व एव विचारो मे भी परिवर्तन आया है इसका विवेचन करते हुए लिखते हैं—

"देश एक नई करवट ले रहा था—वैसे ही जैसे अपने छोटे-से पैमाने पर खुद मुशीजी की जिन्दगी, उनका दिल दिमाग एक नयी करवट ले रहा था। राष्ट्रीयता की चेतना मे एक नया ज्वार आ रहा था और उस नये ज्वार को जिन लोगो ने अपने खून की गर्मी और खानी मे सबसे पहले महसूस किया उन्ही मे एक मुशीजी भी थे।"[1]

इतना ही नही जीवनी मे वर्णित कई प्रसग तो इतने मार्मिक हैं कि उनको पढते ही पाठक के रोगटे खडे हो जाते हैं, विषयानुसार ही लेखक ने भाषा का प्रयोग किया है। उनकी प्रथम पत्नी के प्रसग मे जोकि नवाब को भी पसन्द न थी लिखते हैं—

"शादी हुई, शादी मे खूब चुहलबाजी हुई—घर पहुँचकर उसने अपनी बीवी की सूरत जो देखी तो उसका खून सूख गया। उम्र मे वह नवाब से ज्यादा थी, मगर वह तो ऐसी कोई बात नही लैला भी तो मजनूँ से बडी थी काली थी मगर सुनते हैं लैला भी तो काली थी। किस्सा और चीज है, जिन्दगी और चीज। यथार्थ का एक और यह गहरा धक्का था जो नवाब को लगा। देखते ही शक्ल से नफरत हो गयी—भद्दी थुलथुल फूहड।"[2]

इस जीवनी की भाषा शैली जीवन चरित शैली के अनुकूल है। लेखक ने पूर्ण तटस्थ एव निष्पक्ष रूप से प्रेमचन्द के जीवन का विवेचन किया है। प्रस्तुत जीवनी मे जहाँ हमें प्रेमचन्द के व्यक्तिगत जीवन का अनुभव होता है वहाँ साहित्यिक जीवन एवं

१. प्रेमचन्द : कलम का सिपाही, ले० अमृतराय, पृ० ८०
२. वही, पृ० ९५

कृतियो का भी लेखक ने वर्णन किया है। ये सभी वर्णन इस ढग से किए गये हैं कि पाठक का मन तनिक भी नही घबराता। इस प्रकार नवीनतम जीवनियो मे इस जीवनी का स्थान अद्वितीय है। अभी तक हिन्दी साहित्य मे ऐसे ढग का कोई भी जीवन चरित्र प्राप्त नही होता।

१९६४ सन् मे अमरबहादुर सिह 'अमरेश' का 'आचार्य द्विवेदी गाँव मे' जीवन चरित्र प्राप्त होता है। इसमे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के ग्रामीण जीवन का चित्रण है।

१९६० के पश्चात् कुछ अनुसन्धानकर्त्ताओ के ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं जिनमे उन्होने अपने नायक के जीवन चरित्र का उल्लेख किया है। वास्तव मे हैं ये सभी आलोचनात्मक ग्रन्थ। इनमे डॉ० त्रिभुवनसिह का 'महाकवि मतिराम' १९६० मे प्रकाशित हुआ एव डॉ० सरनामसिह का 'कबीर : एक विवेचन' भी इसी समय का ग्रन्थ है। 'मतिराम कवि और आचार्य' भी इसी श्रेणी का ग्रन्थ है। डॉ० त्रिभुवनसिह एवं महेन्द्र कुमार ने मतिराम के जीवन के विषय मे जो कुछ भी लिखा है वह अनेक वैज्ञानिक प्रमाणो सहित लिखा है। इसके अतिरिक्त डॉ० सरनामसिह ने भी कबीर का जीवनवृत्त अनेक बाह्य एव अन्तर्साक्ष्य के आधार पर लिखा है। डॉ० मनोहरलाल गौड ने भी अपनी घनानन्द पर लिखी प्रतिशोध पुस्तक 'घनानन्द और स्वच्छन्द काव्यधारा' मे घनानन्द के जीवन वृत्त को जो भी लिखा है वह प्रामाणिक है। प्रत्येक घटना के वर्णन मे पुस्तको को आधार माना है। अनेक अग्रेजी भाषा मे लिखी हुई ऐतिहासिक पुस्तको का आधार भी लिया है। इनके अतिरिक्त और भी कितने ही थीसिस निकले हैं जिनसे जीवनी साहित्य का विकास प्रगति की ओर अग्रसर है।

विभाजन

प्रकाशित जीवनी साहित्य के आधार पर इसका विभाजन निम्नलिखित ढंग से हो सकता है—

(क) वर्ण्य चरित्र के क्षेत्र के आधार पर

साहित्यिक पुरुषों की जीवनियाँ—हिन्दी जीवनी साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इसमे साहित्यिक पुरुषो की जीवनियाँ भी लिखी गई हैं। यहाँ साहित्यिक पुरुष से अभिप्राय उस व्यक्ति से है जिसने हिन्दी साहित्य को आगे बढाने मे सहयोग दिया है अर्थात् कुछ लिखकर अपनी विद्वता का परिचय जनता को करवाया है। शिवनन्दन सहाय द्वारा लिखित 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र', 'गोस्वामी तुलसीदास', डा०श्यामसुन्दरदास द्वारा लिखित 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' एव ब्रजरत्नदास की 'भारतेन्दु हरिश्चद्र' इसी श्रेणी की जीवनियाँ हैं। जैसाकि हिन्दी साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है इसमें शुद्ध एव प्रामाणिक साहित्यिक जीवनियाँ कुछ कम ही लिखी गई हैं। अधिकतर जीवनियाँ निबन्ध शैली मे ही हैं जिनको सम्पूर्ण जीवन चरित्र न कहकर

जीवन की एक झाँकी ही कहा जा सकता है। जैसाकि जीवनी लेखक के लिए आवश्यक है कि वह चरित्र नायक का जीवन तटस्थ एव निरपेक्ष रूप से वर्णन करे, इन जीवनियो के लेखको ने भी अपने चरित्र नायक का जीवन चरित्र इसी ढग से लिखा है। शिवनन्दन सहाय ने गोस्वामीजी के व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से विश्लेषण किया है। साहित्यिक लेखक होने के कारण इनकी भाषा शैली भी विषयानुकूल एव भावानुकूल है। एक स्थान पर गोस्वामीजी के स्वभाव के विषय मे लिखते है—

> "इतने प्रतिष्ठित तथा सर्वमान्य पुरुषो से भेट और भिन्नता होने पर भी इन्होने कभी किसी के सम्बन्ध या प्रशसा मे कुछ कविता नही की। सर्वदा अपनी जिह्वा से रामयश कीर्तन करते तथा अपनी प्रबल लेखनी को उन्ही के गुण-वर्णन मे प्रचलित करते रहे और अपने इस कथन को 'कीन्हें प्राकृत जन गुन गाना। सिर धुनि गिरा लागि पछताना।' जीवनपर्यन्त निर्वाह किया।"[१]

कही-कही लेखक ने इनके व्यक्तित्व के विषय मे इतने सक्षिप्त रूप से कहा है कि बात भी स्पष्ट हो जाती है और शैली भी सुन्दर दृष्टिगोचर होती है। जहाँ लेखक ने इनकी रचनाओ मे प्राप्त पात्रो के विषय मे लिखा है वहाँ इनकी शैली द्रष्टव्य है—

> "उत्कृष्ट तथा निकृष्ट पात्रों का इन्होने ऐसा सच्चा चित्र खींचा है कि कदाचित् कोई विरला ही कवि इस बात मे इनकी समता कर सकता है। इनके पात्रगण कहते-करते, सोचते-विचारते, मानो हम लोगो के नेत्रो के सामने उपस्थित किए जाते है। रामायण पाठ से वस्तुत ऐसा ही प्रतीत होता है कि नाटक के पात्रगण नेपथ्य से निकल-निकल कर रगभूमि मे आते और वातचीत करते हैं।"[२]

हिन्दी साहित्य मे कुछ ही जीवन चरित्र साहित्यिक लेखको के प्राप्त होते हैं। जो हैं वे अपनी शैली की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं। ब्रजरत्नदास के भारतेन्दु के लिखे गए जीवन मे भी कोई त्रुटि नही है। वे भी प्रामाणिक जीवनी लिखने मे सिद्धहस्त हैं। इन सभी लेखको ने प्रामाणिक जीवनी सिद्ध करने के लिए अनेक साथ साथ प्रमाण दिए हैं जिससे किसी भी प्रकार का सन्देह उत्पन्न हो ही नही सकता। इस प्रकार ऐतिहासिक सत्यता, निष्पक्षता, वैज्ञानिकता, सुसगठितता आदि सभी विशेषताएँ इनकी जीवनी शैली मे विद्यमान हैं। भाषा भी इनकी भावानुकूल एव विषयानुकूल है। इस प्रकार सभी प्रकाशित इस श्रेणी की जीवनियो मे प्रायः ये गुण हैं। ऋषि जैमिनी कौशिक 'बरुआ' की 'माखनलाल चतुर्वेदी' एवं अमृतराय की 'प्रेमचन्द . कलम का सिपाही' भी इसी ढग की जीवनियाँ हैं।

---

१. गोस्वामी तुलसीदास, ले० शिवनन्दन सहाय, पृ० १११,

२. वही, पृ० १२६

(२) **राजनैतिक पुरुषों की जीवनियाँ**—जहाँ साहित्यिक पुरुषो की जीवनियाँ हमे प्राप्त होती हैं वहाँ राजनैतिक पुरुषो की जीवनियो की भी कमी नही है। जैसा कि हिन्दी जीवनी साहित्य के विकास से स्पष्ट है अधिकतर जीवनियाँ इसी प्रकार की विभिन्न समयो मे प्रकाशित हुई हैं। महात्मा गाँधी, पडित नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल पर लिखी हुई जीवनियाँ इसी श्रेणी की हैं। 'घनश्यामदास बिडला' की 'बापू', जमनालाल बजाज सुरेन्द्र शर्मा की 'वल्लभभाई पटेल', नवजादिकलाल श्रीवास्तव की 'देशभक्त लाला लाजपतराय' जैसी जीवनियाँ इसी कोटि की हैं। इन जीवनियो की सबसे बडी विशेषता यह है कि इसमे पाठक को नायक के व्यक्तित्व के साथ-साथ तत्कालीन परिस्थितियो का भी आभास हो जाता है। जैसेकि बिडला द्वारा लिखे हुए 'बापू' मे पाठक को जहाँ उनके त्याग और तपस्यामय व्यक्तित्व का अनुभव होता है वहाँ यह भी पता चलता है कि जिस समय इनके व्यक्तित्व का उभार हुआ उस समय देश की क्या परिस्थितियाँ थी। सारा स्वतन्त्रता सग्राम का एक चित्र-सा उपस्थित हो जाता है। इन परिस्थितियो का वर्णन करना लेखक के लिए आवश्यक सा हो जाता है क्योकि इन्ही के बीच इनका व्यक्तित्व उभरता है। घनश्यामदास बिडला ने अत्यन्त रोचक एव सीधी-सादी भाषा का प्रयोग किया है। छोटे वाक्यों का प्रयोग यह करते हैं—

> "गाँधीजी ने सत्य की साधना की है। अहिंसा का आचरण किया है। ब्रह्मचर्य का पालन किया है। भगवान की भक्ति की है। स्वराज्य के लिए युद्ध किया है। खादी आन्दोलनो को अपनाया है। हरिजनो का हित साधा है।[1]

जहाँ हमे भारतीय राजनैतिक पुरुषो की जीवनियाँ प्राप्त होती हैं वहाँ हिन्दी लेखको व विदेशी पुरुषो की भी जीवनियाँ लिखी है, कुछ मौलिक है एव कुछ का अनुवाद किया है। बनारसीदास चतुर्वेदी की 'भारत भक्त एण्ड्रूज' जीवनी इसी प्रकार की है। लालबहादुर शास्त्री जैसे व्यक्तियो ने भी 'श्रीमती क्यूरी' का हिन्दी अनुवाद किया।

ऐतिहासिक वीर पुरुषो की जीवनियाँ—कुछ ऐसी जीवनियाँ भी लिखी गई है जिनके नायक ऐतिहासिक वीर पुरुष है। जितना भी जीवनी साहित्य अभी तक प्रकाशित हुआ है उसमे अधिकतर इसी प्रकार की जीवनियाँ है। इनके लिखने में लेखक का यह आशय होता है कि साधारण जनता इनको पढने से कुछ प्रेरणा ग्रहण कर सके और दूसरा कारण यह होता है कि मृत इतिहास को पुनर्जीवित किया जाय। द्विवेदी युग मे जितने भी जीवन चरित्र लिखे गए है वे सभी इन्हीं भावनाओं को लेकर लिखे गए है। स्वय द्विवेदीजी का उद्देश्य उन व्यक्तियो के जीवन चरित्रों को लिखना था जिनसे जनता कुछ ग्रहण कर सके। गगाप्रसाद मेहता की लिखी हुई 'चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य', गौरीशकर चटर्जी का 'हर्षवर्द्धन', रूपनारायण पाडेय का 'सम्राट अशोक' इसी प्रकार की जीवनियाँ हैं। रामवृक्ष शर्मा की 'शिवाजी', विश्व

---

१. बापू, ले० घनश्यामदास बिड़ला, पृ० २२

का 'पृथ्वीराज चौहान' ब्रजरत्नदास का 'बादशाह हुमायूँ' आदि जीवनियाँ प्राप्त होती है।

हिन्दी साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भारतीय लेखको ने केवल भारतीय ऐतिहासिक पुरुषो के जीवन चरित्र नही लिखे अपितु जनता को जागृत एव परिपक्व बनाने के लिए विदेशी वीर पुरुषो के चरित्र लिखे हैं। रामप्रसाद त्रिपाठी का 'जनरल जार्ज वाशिंगटन का जीवन चरित्र', चन्द्रशेखर पाठक का 'नेपोलियन बोनापार्ट', गुलवदन ब्रजरत्नदाम का 'सर हेनरी लोरैंस' इसी प्रकार के जीवनी चरित्र हैं।

धार्मिक पुरुषो की जीवनियाँ— हिन्दी जीवनी साहित्य मे जहाँ हमे राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक पुरुषो की जीवनियाँ प्राप्त होती हैं वहाँ धार्मिक व्यक्तियो की भी बहुत-सी जीवनियाँ प्रकाशित हुई हैं। द्विवेदी युग मे तो अनेक ग्रन्थ श्री दयानन्द सरस्वती के विषय मे लिखे गए। 'दयानन्द चरितामृत', 'आर्य धर्मेन्द्र जीवन महर्षि' 'स्वामी दयानन्द', 'दयानन्द दिग्विजय' आदि अनेक ग्रथ प्रकाशित हुए। इनके अतिरिक्त आर्य समाज के अन्य महापुरुषो की जीवनियाँ भी—'स्वामी विशुद्धानन्द', 'लाजपत महिमा', 'आर्य पथिक लेखराम' इसी युग मे प्राप्त होती हैं। १९५० मे प्रकाशित श्री बलदेव उपाध्याय की 'श्री शकराचार्य' पुस्तक धार्मिक जीवनी ग्रथ है। यह ग्रंथ जीवनी साहित्य का उत्कृष्ट ग्रथ है। लेखक ने वैज्ञानिक तथा साहित्यिक दृष्टिकोण से पुस्तक लिखने का प्रयत्न किया है। कुछ अलौकिक बातो की चर्चा इस ग्रथ मे है परन्तु इसे भी प्रामाणिक करने की चेष्टा लेखक ने की है। पाठक शंकराचार्य के व्यक्तित्व को मानव रूप मे देखता है। रगनाथ रामचन्द्र द्वारा लिखी हुई अरविन्द की जीवनी जो 'महायोगी' नाम से १९५५ ई० मे प्रकाशित हुई वह भी इसी प्रकार का जीवनी ग्रंथ है। 'सन्त तुकाराम' और 'स्वामी रामतीर्थ महाराज का जीवन चरित्र' भी उच्चकोटि के हैं। इन ग्रथो मे भी कल्पनाओ का आधार नही लिया गया है और न अप्रामाणिक बातें कहने का प्रयत्न किया गया है। जीवन का मानवीय चित्र उपस्थित किया गया है जिसे लोग ग्रहण कर सकें।

(ख) शैली के आधार पर

प्रत्येक लेखक का अपने चरित्र नायक के विषय मे लिखने का अपना-अपना ढग होता है कोई तो निबन्ध रूप मे अपने चरित्र नायक के विषय मे लेखक का जीवन संक्षिप्त रूप से कह देता है, कोई सस्मरणो के आधार पर चरित्र नायक की जीवनी लिख देता है। इसी प्रकार हिन्दी जीवनी साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि विभिन्न लेखकों की जीवन चरित लिखने की विभिन्न शैलियाँ हैं उन्ही के अनुसार हिन्दी जीवनी साहित्य का विभाजन निम्नलिखित है—

सस्मरणात्मक शैली में लिखी हुई जीवनियाँ—इस शैली मे लिखी हुई केवल दो साहित्यिक जीवनियाँ अभी तक प्रकाशित हुई हैं। शिवरानी देवी की 'प्रेमचन्द : घर मे'

एव ब्रजमोहन व्यास द्वारा लिखित 'बालकृष्ण भट्ट'। शिवरानी ने प्रेमचन्द का समस्त वर्णन इस पुस्तक मे सस्मरणात्मक शैली मे किया है। जैसे कि संस्मरणात्मक शैली मे प्रभावोत्पादकता, रोचकता, सुसगठितता एवं सक्षिप्तता आदि गुणो का समावेश होता है वैसे ही इनके द्वारा लिखे हुए प्रत्येक सस्मरण से प्रेमचन्द का व्यक्तित्व उभरता है जैसा कि लेखिका ने स्वय भी कहा है—

"इस पुस्तक मे घरेलू सस्मरण मिलेंगे पर इन सस्मरणो का साहित्यिक मूल्य भी इस दृष्टि से है कि इनसे उस महान् साहित्यिक के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है।"

इसी प्रकार ब्रजमोहन व्यास ने 'बालकृष्ण भट्ट' का जीवन भी संस्मरणों मे लिखा है। इसमे लेखक ने अत्यत्त रोचक एव सजीव भाषा मे बालकृष्ण भट्ट के जीवन का वर्णन सस्मरणो मे लिखा है।

निबन्धात्मक शैली में लिखी हुई जीवनियाँ—हिन्दी साहित्य मे बहुत से ऐसे जीवनीकार हुए हैं जिन्होने अपने चरित्र नायको का जीवन निबन्धात्मक शैली मे लिखा है। छोटे-छोटे निबन्धो के रूप में लिखे हुए जीवन चरित्र तो बहुत ही प्रकाशित हुए हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एव महावीर प्रसाद द्विवेदी ने स्वय इसी शैली का प्रयोग किया था। इनके जितने भी जीवन चरित्र हैं वे सभी निबन्ध रूप मे प्राप्त होते हैं।

औपन्यासिक शैली में लिखी हुई जीवनी—हिन्दी साहित्य मे केवल एक जीवनी 'प्रेमचन्द : कलम का सिपाही' अमृतराय की इस शैली की प्राप्त होती है। यह जीवनी एक तरह का प्रेमचन्द पर लिखा हुआ उपन्यास है, परन्तु उपन्यास और जीवनी मे अर्थात् इनकी शैली मे जहाँ कुछ समानताएँ होती हैं वहा विषमताओ की भी कमी नही होती, इसी प्रकार इस जीवनी मे दृष्टिगोचर होता है। आरम्भ से अन्त तक प्रेमचन्द की कथा धारावाहिक रूप से चलती है। लेखक ने स्वय भी कहा है—

"यह भी एक उपन्यास ही है जिसका नायक प्रेमचन्द नाम का एक आदमी है। फर्क बस इतना ही है कि यह आदमी मेरे दिमाग की उपज नही है, हाड-मास का एक पुतला है जो इस धरती पर डोल चुका है और समय की पगडंडी पर अपने पैरों के कुछ निशान छोड गया है। उसको मारने-जिलाने की, जैसा मन चाहे तोडने-मरोडने की आजादी मुझे नही है, घटना प्रसगो का आविष्कार करने की छूट मुझे नहीं है, कितने ही मोटे-मोटे रस्सो से मैं अच्छी तरह खूँटे से बँधा हुआ हूँ। लेकिन मुझे उसकी शिकायत नहीं है क्योकि मैं जानता हूँ कि पूर्ण स्वच्छन्दता उपन्यास की कहानी कहते समय भी नही रहती, वहाँ भी कहानी कहने वाला जीवन के खूँटे से, प्रतीति के खूँटे से बँधा ही रहता है। एक न एक सयम अनुशासन हर सृजन के साथ लगा हुआ है। लेकिन सृजन के सुख मे उ से कोई बाधा नही उपस्थित होती क्योकि जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ सृजन का असली सुख इसमे नही है कि कथाकार अपने कल्पना लोक मे अबाध विचरण कर सके बल्कि इसमे कि वह जड वास्तविकता को अपनी कल्पना से स्फूर्त और स्पदित कर सके, मूक बधिर तथ्यों को वाणी दे सके, जीवन के

संदर्भ मे अपने चरित्रो को देख सके, पहचान सके खोल सके। यह सुख मुझे यहाँ भी मिला और भरपूर मिला।[1]

वास्तविक घटनाओ का वर्णन लेखक ने इस ढग से किया है कि पाठक को यह अनुभव भी नही होता कि मैं एक सच्ची घटनाओ से युक्त प्रेमचन्द का जीवन पढ रहा हूँ। उपन्यास मे जैसे लेखक नायक के जीवन की छोटी-छोटी घटनाओ का वर्णन भी करता है वैसे ही अमृतराय ने भी प्रेमचन्द के जीवन की छोटी से छोटी घटना का वर्णन भी किया है पर विशेषता यह है कि पढते हुए यह कभी भी अनुभव नही होता कि जीवनी मे अनावश्यक विस्तार-सा है। उपन्यास मे लेखक उसी व्यक्ति को नायक बनाता है जिनको कि वह समाज मे देखता है। किसी भी ऐसे व्यक्ति का चित्रण वह नही कर सकता जो कि हमारी दुनिया के बाहर का व्यक्ति हो वरना कथावस्तु मे असभाव्यता का गुण आ जाता है। इस जीवनी का नायक भी एक सामान्य व्यक्ति है। परन्तु यह सामान्य व्यक्ति अपनी चारित्रिक विशेषताओ के कारण विशेष बन जाता है। इस प्रकार यह जीवनी एक ढग का उपन्यास-सा है और इसकी शैली बहुत कुछ उपन्यास शैली से मिलती है। कही लेखक ने प्रेमचन्द के वार्तालापो का ज्यो का त्यो वर्णन किया है जो कि इनके जीवन को और भी रोचक बना देता है। अपने शैली सम्बन्धी गुण के कारण यह हिन्दी जीवनी साहित्य मे अपना विशेष स्थान रखती है।

---

१. प्रेमचन्द : कलम का सिपाही, ले० अमृतराय, पृ० ११

आत्मकथा

आत्मकथा गद्य का वह रूप है जिसमे लेखक व्यक्तिगत जीवन का विवेचन विश्लेषण नि सकोच रूप से करता है। इसके साथ ही वह बाह्य विश्व से सम्बन्धित मानसिक क्रियाओ-प्रतिक्रियाओ का विवेचन भी कलात्मक रूप से करता है। इसका विस्तृत विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया है।

तत्व

प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओ एवं प्राप्त पुस्तकों के आधार पर आत्मकथा के तत्व निम्नलिखित हैं—

१. **वर्ण्य विषय**—'आत्मकथा' साहित्य का यह प्रमुख तत्व है। जैसे कि आत्मकथा शब्द से स्पष्ट है इसमे लेखक का विषय अपने सम्पूर्ण जीवन का वर्णन करना है। आत्मचरित्र अपने ही जीवन और मस्तिष्क का विश्लेषण कर जीवन और ससार को समझने का प्रयत्न है।[1] इस प्रकार आत्मचरित्र लेखक का विषय आत्म-विश्लेषण, आत्मनिरीक्षण के साथ-साथ विश्व की बाह्य घटनाओ की क्रिया-प्रतिक्रियाओं का भी वर्णन है।

आत्मकथा तभी प्रभावित कर सकती है यदि उसका लेखक सर्वमान्य एवं सर्वप्रतिष्ठित व्यक्ति हो। आत्मचरित्र लेखक किसी भी क्षेत्र का हो परन्तु उसका सर्वमान्य होना आवश्यक है। हिन्दी साहित्य के इतिहास से स्पष्ट है कि जहाँ हमें साहित्यिक पुरुषो की आत्मकथाएँ प्राप्त होती हैं वहाँ राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक पुरुषो की भी आत्मकथाएँ लिखी हुई हैं। जहाँ तक विषय का प्रश्न है व्यक्ति के अनुसार ही विषय का आत्मचरित्र मे उल्लेख होता है। सामाजिक व्यक्ति होगा तो उसमें समाज की परिस्थितियो का वर्णन अवश्य होगा क्योंकि उसका व्यक्तित्व उससे प्रभावित होगा, इसी प्रकार राजनैतिक एवं धार्मिक व्यक्ति के विषय में कहा जा सकता है। जहाँ तक साहित्यिक व्यक्ति का प्रश्न है उसकी आत्मकथा में भी हमें तत्कालीन साहित्य की परिस्थितियों का अवश्य आभास मिलेगा। मेरा अभिप्राय यह है कि यद्यपि आत्मचरित्र लेखक का विषय तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन करना नहीं है परन्तु फिर भी परोक्ष रूप से उनका वर्णन स्वतः ही हो जाता है। इस

---

१. हिन्दी साहित्य में जीवन चरित का इतिहास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ० ६७

परिस्थितियो के वर्णन के बिना वह अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट नही कर पाता।

वर्ण्य विषय मे अर्थात् आत्मकथा मे कुछ गुणो का होना आवश्यक है जिनसे यह प्रभावोत्पादक बनती है। सर्वप्रथम आत्मकथा मे सत्यवादिता व यथार्थता का होना आवश्यक है। प्रत्येक आत्मकथा का विषय अनुभूत्यात्मक होता है काल्पनिक नही। इसलिए इसमे वास्तविकता होती है। आत्मकथा मे सत्य से अभिप्राय विषयगत सत्य से नही कुछ सीमित विषय तक का सत्य है जिससे लेखक का जीवन बढता है एव जिससे विशेष गुण एव घटनाओ के परिपक्व होने की दृढता एव व्यावहारिक गुण एव आकृति स्पष्ट होती है [1]

It will not be an objective truth but the truth in the confines of a limited purpose, a purpose that grows out of the author's life and imposes itself on him as his specific quality and thus determines his choice of events and the manner of his treatment and expression

हिन्दी साहित्य मे प्राप्त आत्मकथाओ के अध्ययन से स्पष्ट है कि जितने भी साहित्यिको ने अपनी आत्मकथाएँ लिखी है उनमे इस गुण को पूर्ण रूप से देखा जा सकता है। उदाहरणतया यदि डा० श्यामसुन्दरदास को ही ले तो उनकी लिखी हुई आत्मकहानी में उनकी सत्यवादिता एवं स्पष्टता पूर्ण रूप से लक्षित होती है। यही एक प्रमुख गुण है जिसने उनकी आत्मकथा को उत्कृष्ट बना दिया है—

> "मेरे जीवन मे दो बाते मुख्यतया विशेषता रखती है। एक तो मेरा जीवन सदा सघर्ष मे बीता। विरोध का सामना करने मे मुझे प्रयत्नशील रहना पडा" दूसरी विशेष बात मेरे जीवन मे यह हुई कि वैयक्तिक रूप से मैंने जिन-जिन की सहायता की उनमे से अधिकाश प्राय कृतघ्न सिद्ध हुए और अपने स्वार्थ के आगे मुझको हानि पहुँचाने मे उनको तनिक भी सकोच नही हुआ।"[2]

पूर्ण ईमानदारी के साथ आत्मकथा का वर्णन करना ही वर्ण्य विषय को उत्कृष्ट एवं परिपक्व बनाता है। आत्मचरित्र लेखक के लिए ईमानदारी ही एक विघ्न स्थान व एक महान् अशुद्धि का कारण है। अपने विषय मे सत्य कह देने की जहाँ प्रतिज्ञा है यह चरित्र को एक साहसी एव कपा देने वाला बना देती है। ऐसे वर्णन मे लेखक की योग्यता साधारण मनुष्य की अन्तर्दृष्टि से अधिक होती है।[3]

Honesty is the greatest stumbling block of the autobiographer. The resolution to tell the truth about oneself takes a spartan rigor of character and the ability to do so requires a more than common insight

---

१. Design and Truth in Autobiography by Roy Pascal, P, 83
२. मेरी आत्मकहानी, ले० डा० श्य मसुन्दरदास, पृ० २७५
३. One Mighty Torrent by Johnson, P. 97

अन्य महत्वपूर्ण गुण जिसका कि विषय वर्णन मे होना नितान्त आवश्यक है वह है रोचकता। लेखक को अपनी आत्मकथा इस ढग से वर्णन करनी चाहिए जिससे वह पाठक को रुचिकर प्रतीत हो। नीरस विषय को कोई भी पाठक नही पढता। आचार्य चतुरसेन ने अपनी आत्मकथा का तो आरम्भ ही ऐसे रोचक ढग से किया है कि पाठक को आगे पढने मे भी उकसाहट उत्पन्न होती है। शैली भी विषयानुसार रोचक प्रतीत होती है—

"मैं एक आहत किन्तु अपराजित योद्धा हूँ। अपने चिर जीवन मे मैंने सब कुछ खोया है पाया कुछ भी नही। मैंने एक भी मित्र जीवन मे नहीं उत्पन्न किया। आज जीवन की सन्ध्या मे अपने को सर्वथा एकाकी असहाय और निस्संग अनुभव करता हूँ। मेरी दशा उस मुसाफिर के समान है जो दिन भर निरन्तर मजिल काटता रहा हो और जब निर्जन राह ही मे सूर्य अस्त हो गया हो, वह बेसरोसामान थक कर राह के एक वृक्ष के सहारे रात काटने पड गया हो।"[1]

रोचकता, स्पष्टता, सत्यवादिता एव ईमानदारी के पश्चात् विषय वर्णन में सक्षिप्तता का होना आवश्यक है। अनावश्यक विस्तार विषय को नीरस एव कृत्रिम बना देता है। आत्मचरित्र लिखना कोई आसान काम नहीं है क्योंकि पहले तो अपने आप को पहचानना ही कठिन है और फिर पाठको के सम्मुख अपनी जिन्दगी के हमारे किन अंशो को लाना उचित है और किनको न लाना उचित है यह निर्णय करना कठिन है और इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या जीवन मे कोई ऐसी विशेष बात है भी जिसका वर्णन किया जाय? वैसे तो यदि कोई निर्जीव व्यक्तित्व वाला भी ईमानदारी के साथ अपनी निर्जीवता का वर्णन कर सके और उसके कारण भी बतला सके तो वह एक मनोरजक एवं उपदेशप्रद आत्मचरित्र लिख सकता है पर दूसरो के जीवन मे स्फूर्ति उत्पन्न करने वाला आत्मचरित लिखना किसी सजीव व्यक्तित्व वाले पुरुष का ही काम है।[2]

इससे स्पष्ट है कि आत्मकथा के लेखक को इस बात का भी ध्यान रखना पडता है कि वह अनावश्यक घटनाओ का विस्तार न करे। केवल उन्हीं घटनाओं का उल्लेख करे जिनसे उसके व्यक्तित्व के विश्लेषण में सहायता मिले तथा पाठकों के सम्मुख मानव जीवन के यथार्थ सत्य को उद्घाटित करने में उनकी उपयोगिता हो।[3]

अत. उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विषय वर्णन मे स्पष्टवादिता, रोचकता यथार्थता, निरपेक्षता, सक्षिप्तता एवं स्वाभाविकता आदि गुणों का होना आवश्यक है। इन गुणों से सम्पन्न होने पर ही सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा बन सकती है।

चरित्र-चित्रण—आत्मकथा साहित्य का यह दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। जैसे

---

१. मेरी आत्मकहानी, ले० आचार्य चतुरसेन, पृ० २

२. अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल'

३. सिद्धान्तालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त, बलदेवकृष्ण, पृ० २११

कि आत्मकथा साहित्य से स्पष्ट है आत्मचरित्र आत्मपरिचय का साधन है। लेखक आत्मचरित्र मे अपने मस्तिष्क के विकास का क्रम लिखता है। वह स्वयं अपने मस्तिष्क का अध्ययन करता है। आत्मनिरीक्षण और आत्मविवेचन करता है।[1] इस प्रकार स्पष्ट है कि आत्मकथा मे लेखक का उद्देश्य अपने ही चरित्र का विश्लेषण करना है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने आत्मचरित्र मे लिखा है—"इसमे जहाँ तक मुमकिन हो सकता था मैंने अपना मानसिक विकास अंकित करने का प्रयत्न किया है।[2]"

जब लेखक अपने ही व्यक्तित्व का वर्णन करता है तब वह अपनी लेखनी को तटस्थ भाव से चलाता है ; गुण एव अवगुणो को एक साथ लेता है। जहाँ तक गुणों का प्रश्न है यह ठीक है कि उसे आत्मश्लाघा करनी पडती है परन्तु ऐसा किए बिना उसका व्यक्तित्व स्पष्ट नही हो पाता। इस प्रकार आत्मचरित्र मे अहकार और आत्मश्लाघा के दोष से बच सकना कठिन है। डॉ० श्यामसुन्दरदास मे भी यह प्रवृत्ति पायी जाती है। उन्होने भी अपने व्यक्तित्व की विशेषताओ का वर्णन करते हुए अपने स्वाभिमान का वर्णन किया है—

> "मैंने नागरी प्रचारिणी सभा तथा हिन्दी भाषा और साहित्य की उन्नति मे भरसक उद्योग किया और अपनी तथा अपने कुटम्ब की चिन्ता छोडकर इनकी सेवा मे अपना शरीर अर्पण कर दिया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के उपरान्त हिन्दी बडी शोचनीय अवस्था मे थी। उसे कोई पूछने वाला नही था। नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना, 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन, तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन की आयोजना से हिन्दी दृढता से उन्नति करने लगी।[3]

यही नही आचार्य चतुरसेन शास्त्री भी आत्मचरित्र मे अपने अह को स्वीकार करते हैं। वे इस बात को मानने के लिए तत्पर हैं कि आत्मचरित्र में अहकार और आत्मश्लाघा के दोष से बच सकना कठिन है। इसीलिए उन्होने आत्मनिवेदन मे कहा है—"अब आज मे अपने अहं का एक दूसरा प्रमाण इस निवेदन मे दे रहा हूँ।"[4]

कुछ भी हो इस दोष और दुर्बलता के बीच भी आत्मचरित्र आत्मअध्ययन तथा आत्मनिरीक्षण का सर्वश्रेष्ठ साधन है। एच० जी० वेल्स ने अपनी पुस्तक Experiment in Autobiography की भूमिका मे लिखा है, "यदि मैं जीवन मे अत्यधिक दिलचस्पी न लेता तो आत्मचरित्र लिखने का प्रयास न करता और चूँकि अपने ही जीवन की विवेचना और परीक्षण के द्वारा जीवन की गुत्थियाँ समझी जा सकती हैं इसलिए अपनी आत्मकहानी लिखने का प्रयत्न किया है।"[5]

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह, पृ०१६
२. मेरी कहानी, सस्करण ७, पृ० ६, जवाहरलाल नेहरू, पृ० १६
३. मेरी आत्मकहानी, ले० डा० श्यामसुन्दरदास, पृ० २७६
४. मेरी आत्मकहानी, ले० चतुरसेन शास्त्री (ग)
५. Experiment in Autobiography, Publication 1954, by H. G. Wells, Vol. II, Page 417

If I did not take an immense interest in life through the medium of myself, I should not have embarked upon this analysis ..... I am being my own rabbit, because I find no other specimen so convenient for dissection.

इससे स्पष्ट है कि आत्मकथा मे लेखक गुण-दोषों का वर्णन निरपेक्ष भावना से करता है। लेखक का किसी विशेष दोष व गुण को वर्णन करने मे मोह नही होता। वह आत्मकथा सफल नही कही जा सकती जिसमे लेखक ने केवल अपने जीवन के केवल एक पहलू का ही चित्रण किया हो। प्रत्येक मनुष्य मे दोष भी होते हैं एव गुण भी होते हैं, दोनो के वर्णन मे ही व्यक्तित्व स्पष्ट होता है।

अपने चरित्र को स्पष्ट करने के लिए जहाँ लेखक अपनी रुचि, स्वभाव, चारित्रिक विशेषताओ मे गुण एव न्यूनताओ का वर्णन करता है वहाँ वह उन व्यक्तियों के चरित्र को भी साथ-साथ स्पष्ट करता जाता है जिनसे उसका जीवन मे सम्बन्ध होता है। ऐसे करने से भी लेखक के व्यक्तित्व को समझने में हमें और भी सहायता मिलती है। डॉ० श्यामसुन्दरदास की आत्मकथा मे अनेक साहित्यिकों के नाम आते हैं जिनसे इनका सम्बन्ध रहा है। गौण रूप से इन साहित्य-सेवियो के विषय मे भी पाठक को पता चल जाता है। राधाकृष्णदास, मदनमोहन मालवीय एव बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' आदि का नाम प्रमुख हैं। बाबू राधाकृष्णदास के विषय में लिखते हैं—

> "बाबू राधाकृष्णदास सा सज्जन और सहृदय मित्र मिलना तो कठिन है। उनकी कृपा का मैं कहाँ तक उल्लेख करूँ। उन्ही ने मुझे हस्तलिखित पुस्तको की खोज का काम सिखाया और हिन्दी के सम्बन्ध मे अनुसधान करने की रीति सिखाई।[1]

जब लेखक अपने व्यक्तित्व के वर्णन मे अन्य सम्बन्धित व्यक्तियो के चरित्र पर कुछ ही पक्तियो मे प्रकाश डालता है तो उससे दो लाभ होते हैं—एक तो लेखक का व्यक्तित्व स्पष्ट होता है और दूसरा उस व्यक्ति के विषय मे गौण रूप से पाठक को पता चल जाता है। डाक्टर श्यामसुन्दरदास में ही नहीं अन्य आत्मकथा लेखको में भी यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आत्मकथा मे लेखक अपने चरित्र को स्पष्ट रूप से पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करता है वह अपने चरित्र सम्बन्धी गुण एव दोषो का नि सकोच भावना से वर्णन करता है। जीवन मे जो भी उसे विशेष सफलताएँ मिलती हैं और कुछ ऐसी आकाक्षाएँ जिनको प्राप्त करने के लिए वह सम्पूर्ण जीवन भरसक प्रयत्न करता है सभी का उल्लेख अपनी आत्मकथा में करता है जोकि उसके चरित्र को समझने मे सहायक होती हैं। बाह्य व्यक्तित्व का वर्णन तो होता ही है पर आन्तरिक व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से व्यक्त करना ही बड़े

---

१. मेरी आत्मकहानी, ले० डा० श्यामसुन्दरदास, पृ० २७३

साहस का कार्य होता है। इन सभी विशेषताओ से लेखक के व्यक्तित्व को समझने मे सुविधा होती है। इस प्रकार लेखक के चरित्र का जो खुला रूप हम आत्मकथा मे पा सकते हैं वह अन्यत्र नही।

देशकाल—वातावरण उन समस्त परिस्थितियो का सकुल नाम है जिनसे पात्रो को सघर्ष करना पडता है। देशकाल वातावरण का बाह्य स्वरूप है। वातावरण आन्तरिक भी हो सकता है। आदमी जिस प्रकार के समाज मे रहता है वैसा तो कार्य करता ही है परन्तु उसके भाव, भावना और विचार भी उसकी अनुकूलता और प्रतिकूलता मे सहायक होते हैं।[1]

वर्ण्य चरित्र किसी देश या किसी काल मे ही अपना जीवन व्यतीत करता है। उसके जीवन की घटनाएँ देशकाल से सर्वथा सम्बद्ध रहती है। इस प्रकार आत्मकथा मे भी देशकाल का महत्त्व है। अन्य प्रकथनात्मक साहित्य की भाँति आत्मकथा साहित्य मे देशकाल का चित्रण मुख्यता प्राप्त नही होता। यह तो व्यग्य रहता है। अन्य साहित्य मे देशकाल का चित्रण उचित अनुपात के साथ स्वतन्त्र रूप से भी किया जा सकता है। आत्मकथा मे लेखक ही मुख्य होता है। वह अगी होता है देश और काल तो अगभूत होकर रहता है और वह व्यग्य रहता है।

हिन्दी आत्मकथा साहित्य पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि जहाँ साहित्यिक लोगो की आत्मकथाएँ प्राप्त होती हैं वहाँ राजनैतिक, धार्मिक एव सामाजिक पुरुषो ने भी अपनी आत्मकथाएँ लिखी हैं। जहाँ तक राजनैतिक पुरुषो का प्रश्न है इनकी आत्मकथाओ मे तो तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन होता ही है क्योंकि इनका जीवन उन्ही परिस्थितियो के प्रभाववश फलता-फूलता है। इसलिए राजनैतिक परिस्थितियो का विशेषतया ज्ञान हमे इन्ही द्वारा रचित आत्मकथाओ मे मिलता है। जवाहरलाल नेहरू, डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद एवं महात्मा गाँधी द्वारा लिखित आत्मकथाएँ इसी श्रेणी की हैं। इनकी आत्मकथाओ मे पाठक को तत्कालीन सभी राजनैतिक परिस्थितियो का ज्ञान हो जाता है। इन्ही परिस्थितियो के वर्णन द्वारा ही लेखक अपने व्यक्तित्व को पाठक के सम्मुख रख देता है। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक की आत्मकथा मे भी राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन काफी मात्रा मे किया गया है।

धार्मिक व्यक्ति प्रधान व्यक्तियो की आत्मकथाओ मे तत्कालीन धार्मिक एव सामाजिक परिस्थितियो का आभास होता है क्योकि उनका जीवन इन्ही परिस्थितियो मे प्रस्फुटित होता है। भवानीदयाल सन्यासी की 'प्रवासी की आत्मकथा' इसी ढग की है। इसमे सभी सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन है। इसमे इन्होने भारत के स्वराज्य प्राप्ति के प्रयत्नो का भी इतिहास लिख डाला है। इसमे भी उन्होने सक्रिय भाग लिया है और बहुत कुछ निजी जानकारी और अनुभवो

---

१. समीक्षाशास्त्र, ले० डा० दशरथ ओझा, पृ० १६१, द्वितीय सस्करण जुलाई, १९५७

के आधार पर लिखा है। साथ ही हमारे सामाजिक जीवन का, उसकी त्रुटियो और खूबियो का भी इसमे चित्रण है।[1]

इन आत्मकथाओ के अतिरिक्त कुछ साहित्यिक व्यक्तियो ने भी आत्मकथाएं लिखी हैं उनमे हमे साहित्य की परिस्थितियो का आभास होता है। उदाहरणतया डा श्यामसुन्दरदास की सम्पूर्ण आत्मकहानी मे हमे तत्कालीन देश की साहित्यिक दशा का ही आभास होता है। डाक्टर साहब का सम्पूर्ण जीवन साहित्य सेवा में व्यतीत हुआ था इसलिए इनके जीवन मे इन्ही परिस्थितियो का दिग्दर्शन होना था। इनकी प्रत्येक व्यक्तिगत घटना भी इन्ही परिस्थितियो से सम्बद्ध है। एक स्थान पर 'हिन्दी शब्दसागर' के प्रकाशन की परिस्थितियो के विषय मे लिखते हैं।—

"अप्रैल १९१० से सितम्बर १९१० तक तो जम्बू मे कोश के सम्पादन का कार्य बहुत उत्तमतापूर्वक और निर्विघ्न होता रहा पर पीछे इसमे विघ्न पडा—१९१० मे छुट्टी लेकर प्रयाग आना पडा· ·१५ दिसम्बर १९१० को कोश का कार्यालय जम्बू से काशी भेज देना पडा · जनवरी, १९११ को अमीरसिंह भी स्वस्थ होकर सम्मिलित हो गए · नवम्बर, १९११ को गंगाप्रसाद गुप्त ने इस्तीफा दे दिया···१९२२ मे लाला भगवानदीन पुन इस विभाग मे सम्मिलित कर लिए गए।"[2]

आचार्य चतुरसेन की आत्मकहानी मे जहाँ हमे तत्कालीन साहित्य की परिस्थितियो का वर्णन मिलता है वहाँ उनकी आत्मकहानी मे 'राजनैतिक और साहित्यिक विचार' मे राजनैतिक परिस्थितियो का ज्ञान भी हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आत्मकथाओ मे लेखको के व्यक्तित्व के अनुसार ही तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन पाया जाता है। इन परिस्थितियों का वर्णन हम गौण रूप से पाते हैं। लेखक का मुख्य उद्देश्य आत्मनिरीक्षण एव आत्मविश्लेषण ही होता है। लेखक अपने व्यक्तित्व का उभारने एव निखारने के लिए ही इन परिस्थितियों का वर्णन करता है।

देश और काल के उभय पक्षो मे वास्तविकता लाने के लिए स्थानीय ज्ञान होना आवश्यक है। हिन्दी आत्मकथा साहित्य मे केवल राहुल साकृत्यायन ही ऐसे आत्मकथा लेखक हैं जिन्होने इसकी ओर ध्यान दिया है। राहुलजी ने अपनी 'जीवन यात्रा' में जिन-जिन स्थानो का भ्रमण किया है उन सभी का विस्तार मे चित्रण किया है। 'जीवन यात्रा' मे द्वितीय खड इसी प्रकार का है। उनकी आत्मकथा में देश एव स्थान विशेष का वर्णन कोई विशेष मुहावरेदार भाषा मे नही है बल्कि स्वाभाविक ढग से किया गया है। जिन-जिन नगरो एव पहाडी स्थानो पर उन्होंने भ्रमण किया था उन सभी का थोडा-बहुत वर्णन उनकी आत्मकथा में अवश्य होना था। यह सब गौण रूप

१. प्रवासी की आत्मकथा, ले० भवानीदयाल सन्यासी, पृ० ३, प्रथम सस्करण १९४७
२. मेरी आत्मकहानी, ले० डॉ० श्यामसुन्दरदास, पृ० १५४

से ही किया गया है, मुख्य उद्देश्य तो आत्मकहानी का ही वर्णन करना है।

इस प्रकार आत्मकथा साहित्य से स्पष्ट है कि लेखक का मुख्य उद्देश्य आत्म-विश्लेषण ही है परिस्थितियो का चित्रण करना नही। जिन परिस्थितियो का वर्णन आत्मकथा मे आया भी है, वह उन्होने अपने व्यक्तित्व को प्रामाणित एवं शुद्ध रूप प्रदान करने के लिए किया है। किसी स्थान विशेष का चित्रण तो बहुत कम ही पाया जाता है।

उद्देश्य—इसमे लेखक की उस सामान्य या विशिष्ट जीवन दृष्टि का विवेचन होता है जो उसकी कृति मे कथावस्तु का विन्यास, पात्रो की योजना, वातावरण के प्रयोग प्राप्ति मे सर्वत्र निहित पायी जाती है। इसे लेखक का जीवन दर्शन अथवा उसकी जीवन दृष्टि, जीवन की व्याख्या या जीवन की आलोचना कह सकते है। उन कृतियो को छोडकर जिनकी रचना का उद्देश्य मन-बहलाव या मनोरजन मात्र होता है, सभी कलाकृतियो मे लेखक की कोई विशेष विचारधारा प्रकट या निहित रूप मे देखी जा सकती है। बिना इसके साहित्यिक कृतित्व प्रयोजनहीन और व्यर्थ होता है।

जहाँ तक आत्मकथा लेखक के उद्देश्य का प्रश्न है इसका उद्देश्य अन्य लेखको से पृथक् होता है। आत्मकथा साहित्य का उद्देश्य होता है आत्म-निर्माण, आत्म-परीक्षण या आत्म-समर्थन, अतीत की स्मृतियो को पुनर्जीवित करने का मोह या जटिल विश्व के उलझावो मे अपने आपको अन्वेषित करने का सात्विक प्रयास। इस प्रकार के आत्मकथात्मक साहित्य के पाठको मे सर्वप्रमुख स्वत लेखक होता है जो आत्मा-कन द्वारा आत्मपरिष्कार एव आत्मोन्नति करना चाहता है।

आत्म-सम्बन्धी साहित्य लिखने का एक दूसरा उद्देश्य यह भी है कि लेखक के अनुभवो का लाभ अन्य लोग उठा सकें। महान् ऐतिहासिक आन्दोलनो और घटनाओ के सम्पर्क मे रहते से डायरी, सस्मरण या आत्मकथा लेखक को यह आशा होना स्वाभाविक है कि आगामी युगो मे उसकी रचना उसके युग तथा समय के प्रमाण रूप मे पढी जाएगी। यदि धर्म, राजनीति अथवा साहित्य के इतिहास-निर्माण मे किसी व्यक्ति का महत्वपूर्ण हाथ रहा हो तो अवश्य ही पाठक उस व्यक्ति के बारे मे स्वय उसकी लिखी बातों को पढना पसन्द करेंगे।

इन दोनो स्वत सिद्ध उपयोगो के अतिरिक्त आत्मकथा लेखक के मूल मे कलात्मक अभिव्यक्ति की प्रेरणा भी हो सकती है और अपनी पद मर्यादा अथवा ख्याति से लाभ उठाने की शुद्ध व्यावसायिक इच्छा भी।[1]

यही नहीं चन्द्रावती सिह ने भी आत्मकथा लिखने के उद्देश्य को अच्छी प्रकार से व्यक्त किया है—

> "आधुनिक समाज मे व्यक्ति की दो प्रवृत्तियाँ उत्तरोत्तर तीव्र होती जा रही हैं—(१) वह आत्मप्रचार चाहता है, अपने को समाज के सम्मुख ला देना

---

१. हिन्दी साहित्य कोष, पृष्ठ ९९, द्वितीय संस्करण

चाहता है, वह अपने व्यक्तित्व का उभार चाहता है, और अपने विचारों, मनोभावो के प्रति समाज की सहानुभूति प्राप्त करना चाहता है। (२) वह आत्म-अध्ययन और आत्मविश्लेषण कर विश्व और मानव समाज को समझना चाहता है। वह नित्य छानबीन मे लगा है और उसमे वह अपनी परीक्षा किया करता है। इन दो प्रवृत्तियो का अनिवार्य परिणाम आत्मजीवनी साहित्य का भविष्य में अधिक प्रसार और उत्थान है।"[1]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रत्येक आत्मकथा लेखक का उद्देश्य आत्मविश्लेषण, आत्मनिरीक्षण एव आत्मविवेचन के साथ बाह्य विश्व के साथ अपने सम्बन्ध को वर्णन करना है। डाक्टर श्यामसुन्दरदास ने आरम्भ मे ही अपनी आत्मकहानी लिखने के उद्देश्य को प्रकट किया है—

"बहुत दिनो से मेरी यह इच्छा थी कि मैं अपनी कहानी स्वयं लिख डालता तो अच्छा होता, क्योकि मेरे जीवन से सम्बन्ध रखने वाली मुख्य-मुख्य घटनाओ को जान लेना तो किसी के लिए भी कठिन न होगा, पर हिन्दी और विशेषकर काशी नागरी प्रचारिणी सभा से सम्बन्ध रखने वाली अनेक घटनाओं का विवरण, जिनका उस समय प्रकाशित होना असम्भव-सा था परन्तु जिनका ज्ञान बना रहना परम आवश्यक है, मेरे साथ ही लुप्त हो जाएगा और ज्यो-ज्यों समय बीतता जायगा मैं भी उन्हें कुछ-कुछ भूलता जाऊँगा। इसलिए मेरी यह इच्छा है कि इस समय इन घटनाओ का वृत्तान्त तथा अपना भी कुछ-कुछ लिख डालूं जिससे समय पडने पर मैं इन बातो से काम ले सकूं और मेरे पीछे दूसरे लोग उन घटनाओ की वास्तविकता जानकर इस समय के ऐतिहासिक तथ्य का यथार्थ निर्णय कर सकें।"[2]

ऐसे ही राहुल साकृत्यायन ने भी अपनी जीवन यात्रा लिखने के उद्देश्य को प्राक्कथन मे ही व्यक्त किया है—

" 'मेरी जीवन यात्रा' मैंने क्यो लिखी, मैं बराबर इसे महसूस करता रहा कि ऐसे ही रास्तो से गुजरे हुए दूसरे मुसाफिर यदि अपनी जीवन यात्रा को लिख गए होते तो मेरा बहुत लाभ हुआ होता—ज्ञान के ख्याल से ही नहीं, समय के परिमाण मे भी। मैं मानता हूँ कि दो जीवन यात्राएँ बिल्कुल एक-सी नहीं हो सकती, तो भी इसमे सन्देह नही कि सभी जीवनों को उसी आन्तरिक बाह्य विश्व की तरगो मे तैरना पडता है।"[3]

राहुल साकृत्यायन के कथन से स्पष्ट है कि उन्होंने अपनी आत्मकथा इसलिए लिखी कि शायद आगामी साहित्यिक इससे कुछ लाभ उठा सके, क्योंकि

---

१. मेरी आत्मकहानी, ले० डॉ० श्यामसुन्दरदास, पृ० १
२. हिन्दी साहित्य में जीवन चरित का विकास, ले० चन्द्रावती सिंह
३. मेरी जीवन यात्रा, ले० राहुल साकृत्यायन, पृ० ५

प्रत्येक मनुष्य को जीवन मे सघर्षों का सामना करना पडता है। उन्ही सघर्षों के अध्ययन से अन्य व्यक्ति को भी प्रोत्साहना मिल सकती है। अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य अतीत की स्मृतियो को पुनर्जीवित करने का मोह है। इसके साथ ही अपने गुण-दोषो के विवेचन से आत्मपरिष्कार एव आत्मोन्नति चाहना है। अत आत्मकथा लेखक का प्रमुख उद्देश्य आत्मविश्लेषण एव आत्म-निरीक्षण ही है।

शैली—शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीको का नाम है जो इस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते है। इस पर असामान्य अधिकार के प्रभाव मे लेखक की सफलता सम्भव नही। क्योकि सामान्य रूप से लिखने की यहाँ बात ही नही, आत्मकथा शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जिनका होना इसमे आवश्यक है।

सर्वप्रथम शैली मे प्रभावोत्पादकता का होना आवश्यक है। लेखक की शैली ऐसी होनी चाहिए जिसका प्रभाव पाठक पर स्थायी रूप से रहे। प्रभावोत्पादकता से ही विषय मे रोचकता आती है। मुशी प्रेमचन्द की आरम्भ की तीन-चार पक्तियाँ ही अपना स्थायी प्रभाव पाठक पर डाल देती हैं, शेष कथन तो है ही प्रभावपूर्ण शैली मे लिखा हुआ—

> "मेरा जीवन सपाट, समतल मैदान है जिसमे कही-कही गढे तो हैं पर टीलो, पर्वतो, घने जगलो, गहरी घाटियो और खड्डो को स्थान नही है। जो सज्जन पहाडो की सैर के शौकीन हैं उन्हे तो यहाँ निराशा होगी।"[1]

लेखक की शैली मे प्रभावोत्पादकता तभी उत्पन्न हो सकती है यदि वह आत्म-विश्लेषण नि सकोच एव स्पष्ट रूप से वर्णन करे। इस प्रकार आत्मकथा की शैली मे नि सकोच आत्मविश्लेषण होना चाहिए। हिन्दी आत्मकथा साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि उन्ही लेखको की आत्मकथाएँ प्रभावोत्पादक हो सकी हैं जिन्होने स्पष्ट रूप से आत्मनिरीक्षण किया है।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता शैली मे सुसगठितता एव लाघवता का होना है। आत्मकथा शैली मे यदि लेखक जीवन मे घटित अनावश्यक घटनाओ का वर्णन सीमा से अधिक करता है तो वह आत्मकथा रोचक एव प्रभावपूर्ण नही बन सकती। लेखक को आत्मकथा मे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह जो कुछ भी अपने विषय मे कहना चाहता है वह इस ढग से कहे कि बात भी स्पष्ट हो जाय और विस्तार भी न हो। महादेवी वर्मा द्वारा लिखी हुई कुछ पक्तियाँ ही उनके समूचे जीवन पर प्रकाश डालती हैं —

> "परिवर्तन का दूसरा नाम जीवन है। जिस प्रकार जीवन के ऊषाकाल मे मेरे सुखो का उपहास-सा करती हुई विश्व के कण-कण से एक करुण की धारा उमड पड़ी है उसी प्रकार सन्ध्याकाल मे जब लम्बी यात्रा से थका हुआ जीवन

---

१. मेरा जीवन, ले० मुंशी प्रेमचन्द, 'हस' आत्मकथा अंक, सन् १९३२

अपने ही भार से दबकर कातर क्रन्दन कर उठेगा तब विश्व के कोने-कोने में एक अज्ञात पूर्व सुख मुस्करा पड़ेगा। ऐसा ही मेरा स्वप्न है।"[१]

इस प्रकार आत्मकथा शैली मे प्रभावोत्पादकता, लाघवता, सुसगठितता, स्पष्टता आदि गुणो का होना आवश्यक है। इनके सम्बद्ध होने से ही आत्मकथा की शैली परिपक्व हो सकती है।

हिन्दी आत्मकथा साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि आत्मकथा लिखने की भी अनेक शैलियाँ हैं। कई आत्मकथा लेखक जिन्होने स्फुट रूप मे अपने जीवन के विषय मे लिखा है उन्होने निबन्धात्मक शैली को अपनाया है। महादेवी वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, गुलाबराय, मुशी प्रेमचन्द, रामवृक्ष बेनीपुरी आदि लेखकों ने इसी शैली को अपनाया है। हिन्दी साहित्य मे कई ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होंने संस्मरणात्मक शैली मे अपने विषय मे लिखा है। इसका सफल प्रयास शान्तिप्रिय द्विवेदी की पुस्तक 'परिव्राजक की प्रजा' मे उपलब्ध होता है। इस पुस्तक में शान्तिप्रिय द्विवेदी ने समस्त आत्मकथा सस्मरणात्मक शैली मे लिखी है। ऐतिहासिक शैली का आभास हमे राजनैतिक पुरुषो द्वारा लिखी हुई आत्मकथाओ में प्राप्त होता है। राहुल सांकृत्यायन द्वारा लिखी हुई आत्मकथा 'मेरी जीवन यात्रा' मे डायरी शैली की काफी सहायता ली गई है। शुद्ध साहित्यिक शैली डा० श्यामसुन्दरदास एव आचार्य चतुरसेन की आत्मकथाओ मे लक्षित होती है।

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है। यदि भाषा शुद्ध, परिमार्जित एव भावानुकूल होगी तभी वह पाठक को प्रभावित कर सकती है। शब्द-चयन भी विषय एव भावानुकूल होना चाहिए।

विकास

हिन्दी साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि आत्मकथा लिखने की प्रथा यद्यपि नवीन है पर इसका थोड़ा-बहुत लिखने का प्रयास आरम्भ से ही चला आ रहा है। हिन्दी साहित्य मे सर्वप्रथम आत्मकथा सन् १६४१ ई० में 'अर्द्धकथानक' नाम से बनारसीदास जैन ने लिखी है। एक अच्छी आत्मकथा में जिन प्रमुख गुणों का समावेश होना चाहिए वे सभी इसमे यथेष्ट मात्रा मे मिलते हैं। भाषा की दृष्टि से भी कृति का महत्व कम नहीं है। रचना के आरम्भ मे ही लेखक उसकी भाषा के सम्बन्ध में कहता है कि वह 'मध्य देश की बोली बोल' कर अपनी कथा कहेगा। केवल कविता की दृष्टि से भी 'अर्द्धकथा' का स्थान ऊँचा है। साहित्यिक परम्पराओं से मुक्त प्रयासरहित शैली मे घटनाओं के सजीव और यथातथ्य वर्णन का जहाँ तक सम्बन्ध है इतनी सुन्दर रचना हमारे हिन्दी साहित्य मे कम मिलेगी। प्रस्तुत आत्मकथा का महत्व अन्य दृष्टि से और भी अधिक है। वह मध्यकालीन उत्तरी भारत

---

२. जीवन स्मृतियाँ, संपादक क्षेमेन्द्र सुमन, पृ० १२१

की सामाजिक अवस्था तथा धनी और निर्धन प्रजा के सुख दु ख का यथार्थ परिचय देती है। इसका प्रथम सस्करण सन् १९४३ मे प्रयाग विश्वविद्यालय हिन्दी परिषद् से प्रकाशित हुआ। इसके सम्पादक माताप्रसाद गुप्त हैं।

(क) भारतेन्दु युग

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट है कि भारतेन्दु के आगमन से पहले केवल 'अर्द्धकथा' ही आत्मकथा प्राप्त होती है। भारतेन्दु युग मे भारतेन्दु ने ही 'एक कहानी : कुछ आपबीती कुछ जगबीती' मे अपने विषय मे लिखने का प्रयास किया था। केवल दो पृष्ठ ही वह लिख पाए हैं इसलिए यह अपूर्ण है। आरम्भ मे यह लिखते हैं—

"हम कौन हैं और किस कुल मे उत्पन्न हैं—आप लोग पीछे जानेंगे। आप लोगो को क्या किसी का रोना हो पढे चलिए जी बहलाने से काम है। अभी मैं इतना ही कहता हूँ कि मेरा जन्म जिस तिथि को हुआ वह जैन और वैदिक दोनो मे ही बडा पवित्र दिन है।"[१]

इन पृष्ठो मे भारतेन्दु ने अपने जीवन के विषय मे कोई विशेष बात नही लिखी। केवल आत्मकथा लिखने का प्रयास ही लक्षित होता है।

राधाचरण गोस्वामी—भारतेन्दु युग के एक प्रतिभाशाली तथा प्रगतिशील विचार के लेखक राधाचरण गोस्वामी थे। इन्होने अपना छोटा-सा जीवन चरित्र लिखा था जो मथुरा प्रेस से प्रकाशित 'राधाचरण गोस्वामी का जीवन चरित्र' नाम से प्रसिद्ध है। यह पुस्तक जीवनी साहित्य के आत्मचरित्र का रूप मात्र है। इस पुस्तक मे उस समय के समाज और प्राचीन कवियो का पता लगता है। यह पुस्तक केवल बारह पृष्ठ की है। वह भी बडी मनोरंजक है। एक स्थान पर उन्होने लिखा है—

"मुझे अंग्रेजी शिक्षा पर बहुत श्रद्धा हुई और मैंने अंग्रेजी पढने की ठान ली। पाठको को स्मरण रखना चाहिए कि मैं जिस कुल मे उत्पन्न हुआ उसमें अंग्रेजी पढ़ना तो दूर की बात है, यदि कोई फारसी अंग्रेजी का शब्द भूल से मुख से भी निकल जाय तो बहुत पश्चात्ताप करना पडे। अस्तु मैंने गुप्त रीति से अंग्रेजी आरम्भ की......।"[२]

राधाचरण गोस्वामी के इस जीवन चरित्र से भारतेन्दु युग की प्रवृत्तियो के विषय मे विशेष रूप से अधिक पता चलता है। गोस्वामीजी ने अपने विषय मे कुछ कम ही कहा है।

प्रतापनारायण मिश्र—प्रतापनारायण मिश्र ने भी आत्मचरित लिखना

---

१. भारतेन्दु के निबन्ध, संग्रहकर्त्ता और सम्पादक केसरीनारायण शुक्ल, प्रथम संस्करण, पृ० १६१

२. राधाचरण गोस्वामी का जीवन चरित्र, ले० राधाचरण गोस्वामी, पृ० ३

आरम्भ किया था पर दुर्भाग्य की बात है कि वह उसे अधूरा ही छोड गए। मिश्रजी ने अपने लेख की भूमिका मे आत्मचरितो की महिमा का वर्णन बहुत सुन्दर ढंग पर किया था—

"एक घास का तिनका हाथ मे लीजिए और उसकी भूत तथा वर्तमान दशा का विचार कर चलिए तो जो-जो बात तुच्छ तिनके पर बीती है, उसका ठीक-ठीक वृत्तान्त तो आप जान ही नही सकते, पर तो भी इतना अवश्य सोच सकते हैं कि एक दिन उसकी हरीतिमा सब्जी किसी मैदान की शोभा का कारण रही होगी, कितने बडे-बडे रूप गुण बुद्धि विद्यादि विशिष्ट उसके देखने को आते होगे, कितने ही क्षुद्र कीटो एव महान् व्यक्तियो ने उस पर विहार किया होगा, कितने ही क्षुधित पशु उसको खा जाने को लालायित रहे होगे।"

श्री मिश्रजी ने अपने लेख मे लिखा था—

"हमारी सभा मे तो जितने मनुष्य हैं सब का जीवनचरित लेखनीबद्ध होना चाहिए। हमारे देश मे यह लिखने की चाल नहीं है, इससे बडी हानि होती है। मैं उनका बडा गुण मानूँगा जो अपना वृत्तान्त लिखकर मेरा साथ देंगे।"

अम्बिकादत्त व्यास—सन् १९०१ मे अम्बिकादत्त व्यास द्वारा लिखा हुआ 'निजवृत्तान्त'[1] प्राप्त होता है। व्यासजी ने ५६ पृष्ठो मे अपने जीवन के सवत् १९३५ से लेकर सवत् १९५३ तक का वर्णन किया है। प्रत्येक सवत् के शीर्षक को लिखकर सवत् क्रमानुसार जीवन का वणन है। इन्होने अपने साहित्यिक एव सामाजिक जीवन पर भी प्रकाश डाला है। सर्वप्रथम वश का परिचय देकर अपने विद्याध्ययन का वर्णन कर फिर अपनी साहित्यिक सेवाओ का वर्णन किया है। इसके साथ ही लेखक ने जहाँ-जहाँ नौकरी की है वहाँ का भी वर्णन किया है। इसके अध्ययन से लेखक के विस्तृत अध्ययन का भी पता चलता है। आरम्भ इन्होने इस ढग से किया है—

"पडित हरिप्रसाद प्रभृति ने अपना वृत्तान्त कुछ भी न लिखा तो इस समय के विद्वद्गण को उनके ग्रन्थ मे इस अभाव को देख नाक सिकोड़नी ही पड़ती है। परमानन्द पडित ने इस समय ग्रन्थ बनाया तो भी निज शृंगार सप्तशतिका में अपना कुछ भी चरित्र न लिखा। यह देख हम लोग इस अश मे उनकी भी चूक कहते हैं। ऐसे ही यदि मैं भी अपने ग्रंथ मे निज विषय में कुछ न लिखूँ तो मुझे विद्वान् लोग उनकी अपेक्षा भी अधिक दूषित समझेंगे। इस कारण मे किंचित् निजवृत्तान्त लिखता हूँ और समझता हूँ कि जैसे लल्लू लाल ने निज ग्रंथ के अन्त मे स्व-वृत्तान्त लिखा तो उससे साक्षर समुदाय अधिक प्रसन्न है और कृष्णदत्त का निज विषय मे किंचित् लिखना बिहारी के भी जीवन का निर्णायक समझते हैं वैसे ही मेरा लेख भी आवश्यक ही समझा जाएगा।"

---

१ विद्याविनोद, अष्टम भाग, बाबू चडीप्रसाद सिंह द्वारा सम्पादित पटना 'खंग' विलास प्रेस, बाकीपुर

"मेरे पिता के ग्रथ साहित्य भाण्डागार मे घर-घर पाये जाते है और उनका जीवन चरित बिहार के (गवर्नमेट द्वारा स्वीकृत) प्रसिद्ध शिक्षा सम्बन्धी विद्याविनोद नामक पत्र मे बाबू चडीप्रसादसिंह छाप चुके है तथा उसी ग्रथ मे उद्धृत कर बाबू साहब प्रसादसिंह ने अलग भी खग विलास यन्त्रालय (बाकीपुर) से प्रकाशित किया है तथा इनाम मे बाँटने के लिए यहाँ के शिक्षा विभाग ने स्वीकार किया है। इसी के अवलोकन से मेरे जन्म तक वृत्तान्त तथा मेरे पूर्वजो का सक्षिप्त चरित विदित हो सकता है तो भी सूचना मात्र यहाँ लिख देता हूँ।"[1]

इतना विस्तृत उद्धरण देने का मेरा अभिप्राय यह है कि भारतेन्दु युग मे लेखको का मन आत्मचरित लिखने को अवश्य था। परन्तु किसी कारणवश वह अपनी इच्छाओ को पूर्ण न कर सके। केवल थोडा-बहुत ही अपने जीवन का वर्णन कर सके हैं जिसको कि आत्मकथा लिखने का थोडा-बहुत प्रयास ही कहा जा सकता है। पर आत्मकथा लिखने की प्रवृत्ति अवश्य उनमे थी।

श्रीधर पाठक—सन् १९२७ मे श्रीधर पाठक द्वारा लिखी हुई 'स्व जीवनी' प्राप्त होती है। यह दो पृष्ठो की जीवनी श्रीधर पाठक ने लिखी है। इसमे इनके जन्म स्थान एव तिथि का ही विशेष रूप से पता चलता है। साथ ही उनकी शैली सम्बन्धी विशेषताओ का पता चलता है कि इन्होने ब्रज भाषा और खडी बोली दोनो का प्रयोग किया। इनकी 'स्व जीवनी' का उद्धरण उल्लेखनीय है—

"वर्ष पैंसिठ हुई आज अपनी बयस हर्षपूरिन हुई स्व-गृह जन मडली मन हुआ मुदित अति उदत रवि दरस सग प्रात के समय ज्यो सरस सरसिज कली।"

"मडली शब्द पर्यन्त इस पद्य की पक्ति उत्मव सुलभ विमल मगल मे जनवरी मास तारीख तेईम उन्नीस पच्चीस सन् बीच विरचित हुई।"

"बहुत से मित्र अनुरोध अतिकर रहे कीजिए। शीघ्रलिपि बद्ध निज जीवनी। न अति विस्तृत न अति लघु न अत्युक्तियुत किन्तु सब सत्य सुव्यक्त स्व व्यक्तिगत सकल घटना घटित सरलता से बलित सुमग सुन्दरललित सुघर साहित्य सस्थान से अस्खलित सुलभ कल कोकिला काकली-सी भली।"

"किन्तु मम जीवनी ऐसी वस्तु नही जोकि हो जगत के जानने योग्य। अतएव इस ओर मति अतिव आती नही चित्त मे सुरुचि सुमचित समाती नही। पर सुजन वृन्द या सुहृद जन सघ की ओर से की गई प्रबल यो प्रार्थना विवशता विवश स्वीकार्य होती हुई जगत के बीच है प्रायः देखी गई।"

"अत लिखना उचित जीवनी का हुआ शक्ति अनुसार कुछ सार सयुक्त यद्यपि लगे कार्य यह निपट एक भार ही।"[2]

इस प्रकार भारतेन्दु युग के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि इस युग के लेखकों

१. 'माधुरी अगस्त जनवरी श्रावण (३०३ तु० स)
२. माधुरी, १९२७ ई० अगस्त, जनवरी

ने आत्मचरित लिखने के महत्व को समझ लिया था और शक्ति अनुसार थोडा-बहुत लिखने का प्रयास भी किया परन्तु पूर्ण सफलता किसी को नही हुई, केवल जन्म स्थान, जन्म तिथि एव वश-परिचय से ये लोग आगे नही बढे ।

(ख) द्विवेदी-युग

हिन्दी आत्मकथा साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि महावीरप्रसाद द्विवेदी के आगमन से पहले आत्मचरित लिखने के महत्व को साहित्य सेवियो ने जान लियाँ था और कुछ लेखको ने प्रयास भी किया । द्विवेदीजी ने भी अपने विषय मे 'मेरी जीवन रेखा'[1] नाम से पाँच पृष्ठो का चरित लिखा है । इन पाँच पृष्ठो की स्व-लिखित जीवनी मे द्विवेदीजी ने अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व की सच्ची झाँकी पाठको के सम्मुख प्रस्तुत की है । इन पृष्ठो मे द्विवेदीजी ने अपने व्यक्तित्व की सभी विशेषताओं को बडी ईमानदारी और सचाई से वर्णन किया है । कुछ पक्तियो मे ही अपने साहित्यिक व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से रखा है । एक आत्मकथा लेखक की शैली मे जो गुण होने चाहिए वे इनकी शैली मे विद्यमान हैं ।

अपने जीवन को इन्होने नि सकोच रूप से लिखा है । इनके आत्मविवेचन मे स्पष्टवादिता एव सत्यता दृष्टिगोचर होती है—

> "मैं एक ऐसे देहाती का एकमात्र आत्मज हूँ जिसका मासिक वेतन १० रु० था । अपने गाँव के देहाती मदरसे मे थोडी-सी उर्दू और घर पर थोडी-सी सस्कृत पढकर १३ वर्ष की उम्र मे २६ मील दूर राय बरेली के जिला स्कूल मे अंग्रेजी पढने गया । आटा दाल घर से पीठ पर लादकर ले जाता था। दो आने फीस देता था—कौटुम्बिक दुरावस्था के कारण मे उससे आगे न पढ सका ।"[2]

यही नही इन्होने नि सकोच आत्मविश्लेषण किया है । इनके द्वारा लिखे हुए पाँच पृष्ठ ही साहित्यिको के लिए बहुत लाभप्रद सिद्ध होते हैं । अगर आचार्य जी अपना सम्पूर्ण व्यक्तित्व और विस्तार से लिख देते तो वह हिन्दी साहित्य मे एक अद्वितीय स्थान रखता । फिर भी इन्होंने आत्मचरित लिखने का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया है ।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—आचार्य शुक्ल ने अपने जीवन के कुछ पहलुओं को 'आत्मसंस्मरण'[3] शीर्षक से लिखा है । तीन पृष्ठो के इस आत्मचरित मे शुक्लजी ने साहित्यिक जीवन मे प्रविष्ट होने से पहले जीवन का वर्णन किया है । इसमे उन्होंने अपने जीवन की किसी अन्य विशेषता का वर्णन न कर केवल साहित्यिक रुचि का ही वर्णन किया है । किन-किन साहित्यिकों का इनके जीवन पर प्रभाव पडा —इसका भी इन्होंने स्पष्ट रूप से वर्णन किया है । संस्मरण रूप मे लिखा हुआ यह आत्मचरित

---

१. आचार्य द्विवेदी, सम्पादिका निर्मल तालवार

२. द्विवेदी जी, संपादिका निर्मल तालवार, पृ० ४

३. जीवन स्मृतियाँ, सम्पादक क्षेमेन्द्र सुमन, द्वितीय संस्करण, १९५३, पृ० ४८

झगडा करना आदि घटनाओ के वर्णन से अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट किया है। हीरानन्द शास्त्री ने 'दो सन्यासी' शीर्षक मे दो घटनाओ का वर्णन किया है जोकि सावित्री और ब्रह्मा के मन्दिरो को देखने के लिए घटी थी। दलाई लामा और दैवी शक्ति शीर्षक हैं।

सन् १९३९ मे विद्यावती प्रेस लहरियासराय से प्रकाशित प्रोफेसर अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द' द्वारा लिखा हुआ 'आत्मचरित चम्पू' प्राप्त होता है। यह गद्य-पद्य-मयी सचित्र आत्मकथा है। इसके दस अध्याय हैं और सभी के नाम लेखक ने दिए हैं अर्थात् समस्त जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओ को लेखक ने शीर्षको मे बाँट दिया है जैसे मेरी जन्मभूमि, वश परिचय, शिक्षा दीक्षा, प्रवास, कलकता निवास आदि प्रोफेसर साहब ने अपने जीवन को विस्तारपूर्वक लिखा है।

सन् १९३९ मे ही देवीदत्त शुक्ल ने मुशी लुत्फुल्ला की आत्मकथा का अनुवाद 'एक आत्मकथा' शीर्षक से किया है। अनुवाद करते समय शुक्लजी ने विषयातर को छोडकर केवल आत्मकथा सम्बन्धी बातो का ही इसमे सकलन किया है। यही नही महात्मा टाल्स्टाय की आत्मकथा का अनुवाद किया इसी सन् में राजाराम अग्रवाल ने 'मेरी आत्मकहानी' शीर्षक से किया। इसके अतिरिक्त राजाराम ने भी अपनी आत्मकथा 'मेरी कहानी' नाम ने इसी सन् मे प्रकाशित की।

सन् १९४० मे स्वामी सत्यभक्त की 'आत्मकथा' सत्याश्रम वर्धा (सीपी) से प्रकाशित हुई। इस आत्मकथा मे न तो कोई ऐसी घटना है जो लोगो को चकित करे न कोई ऐसी सफलता दिखाई है जो लोगो को प्रभावित करे न जीवन इतनी पवित्रता के शिखर तक पहुँचा है कि लोग उसकी वन्दना करें। यह साधारण पुरुष की साधारण कहानी है। सन् १९४० मे ही रामनाथ लाल सुमन और परमेश्वरी दयाल की 'मेरी मुक्ति की कहानी' प्राप्त होती है।

डा० श्यामसुन्दरदास—सन् १९४१ में डा० श्यामसुन्दरदास की 'मेरी आत्मकहानी' प्राप्त होती है। यह भी एक विचारणीय कृति है। डा० श्यामसुन्दरदास हिन्दी खड़ी बोली के उन्नायको में से हैं, हिन्दी भाषा और साहित्य के महाप्राण हैं और हिन्दी ससार के प्रसिद्ध लेखक हैं। इस दृष्टिकोण से इनका स्थान साहित्य के क्षेत्र मे बहुत ऊँचा होने से इनका आत्मचरित्र विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करता है। श्यामसुन्दरदास उच्च कोटि के निबन्ध लेखक थे इसलिए उनकी जीवनी में भी निबन्ध शैली की नीरसता प्रकट होती है। साहित्यिक और उच्च कोटि की भाषा होने पर भी उसमें माधुर्य नहीं है और जीवनी साहित्य की भाषा यदि माधुर्यपूर्ण नही है तो उसका रसात्मक साहित्य की दृष्टि से मूल्य बहुत कम हो जाता है। इस पुस्तक में हिन्दी की सेवाओ और हिन्दी से सम्बन्धित अन्य बातो के विषय मे विशेष रूप से लिखा गया है। यह तो कहा जा सकता है कि श्यामसुन्दरदास का जीवन हिन्दी साहित्य से परे और क्या था तो कोई आपत्ति नहीं होगी, परन्तु मनुष्य अपने जीवन की महत्त्वपूर्ण सेवाओं के अतिरिक्त कुछ और भी है। आत्मचरित जीवन के महत्वपूर्ण

कार्यों का उल्लेखखमात्र नही है । अतएव इतने बडे साहित्यिक के आत्मचरित्र मे चरित्र-चित्रण के पूर्ण विकास की कमी खलती है । यदि श्यामसुन्दरदास हिन्दी ससार के ससार के अत्यन्त प्रसिद्ध व्यक्ति न होते तो उनकी 'आतमकथा' पर विचार करने की आवश्यकता ही न होती ।

श्रीपद्मलाल पुन्नालाल बख्शी—द्विवेदी युग के प्रसिद्ध आलोचको मे श्री पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी का नाम भी अग्रगण्य है । इन्होने अपने जीवन का सक्षिप्त विवरण 'अपनी बात' मे किया है । साहित्यिक जीवन के अतिरिक्त बाल्यावस्था एव यौवनावस्था के विषय मे लेखक ने एक झाँकी भी प्रस्तुत की है । जीवन पर पडे अन्य व्यक्तियो के प्रभाव का वर्णन भी लेखक ने स्पष्ट रूप से किया है । इसके अतिरिक्त लेखक ने अपने विचारो एव भावो का स्पष्ट चित्रण किया है ।

अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी—इस युग के आतमकथा लेखको मे अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी का नाम उल्लेखनीय है । वाजपेयीजी हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास मे भीष्म पितामह का स्थान रखते है । अपने जीवन का महत्वपूर्ण भाग आपने हिन्दी पत्रकारिता और भाषा की समृद्धि मे ही लगाया है । इसलिए आप द्वारा लिखी हुई आत्मकथा[1] हिन्दी साहित्य-सेवियो के लिए लाभप्रद है । इसमे वाजपेयीजी ने तत्कालीन साहित्यिक एव राजनैतिक परिस्थितियो के अल्प वर्णन के पश्चात् अपने साहित्यिक व्यक्तित्व के विषय मे लिखा है । आतमकथा के इन पृष्ठो के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इन्होने दैनिक 'भारत मित्र' तथा 'स्वतत्र' आदि हिन्दी के उल्लेखनीय पत्रो का सम्पादन अत्यन्त सफलतापूर्वक किया । इसके अतिरिक्त अपनी आत्मकथा' मे इन्होने अपनी विद्वता, कर्मकुशलता एव सहज सरलता का उल्लेख स्पष्ट रूप से किया है ।

बाबू गुलाबराय—बाबू गुलाबराय द्विवेदी युग की शृखला के लेखक हैं । आपने दर्शनशास्त्र विषयक लेखो और पुस्तको के प्रणयन द्वारा हिन्दी साहित्य के मन्दिर मे प्रवेश किया और धीरे-धीरे एक रससिद्ध आलोचक के प्रतिष्ठित आसन पर आ विराजे । इन्होंने अपनी आत्मकथा स्फुट निबन्धो के रूप मे लिखी है ।[2] 'मैं और मेरी कृतियाँ . आत्मविश्लेषण'[3] मे विशेष रूप से इन्होने अपने जीवन के दोनो पक्षो का—साहित्यिक एव व्यक्तिगत का—विश्लेषण किया है । जीवन की घटनाओ का वर्णन ही नही किया अपितु आलोचक होने के कारण टीका-टिप्पणी भी की है । इसके अतिरिक्त 'मेरी असफलताएँ' मे लिखे वैयक्तिगत निबन्धो मे इनकेजी वन का पाठक को अनुमान हो जाता है । इन वैयक्तिगत निबन्धो के अनुशीलन से इनकी स्पष्टवादिता, निष्पक्षता, सत्यता एव शैली की लाघवता दृष्टिगोचर होते हैं ।

---

१ जीवत-स्मृतियाँ (साहित्यकारों के आत्मचरित), संपादक क्षेमेन्द्र सुमन
२. जीवन स्मृतियाँ, सपादक क्षेमेन्द्र सुमन. १९५२, आत्माराम एण्ड संस
३ मेरे निबन्ध जीवन और जगत, गुलाबराय

मूलचन्द्र अग्रवाल—सन् १६४४ मे मूलचन्द्र अग्रवाल की 'एक पत्रकार की आत्मकथा' प्राप्त होती है। मूलचन्द्र अग्रवाल 'विश्वमित्र' के सचालक रहे हैं। इन्होने अपनी आत्मकथा का आरम्भ ही अद्भुत ढग से किया है। पाठक इन पक्तियो को पढकर कुछ घबरा-सा जाता है —

> "धडाम गढी के कुएँ से अन्धेरी रात्रि के प्रथम प्रहर मे आवाज उठी और सारे गाँव मे प्रतिध्वनित सी हो गई। नर-नारी कुएँ की ओर दौडते हुए दिखाई दिए। सबने साश्चर्य देखा कुएँ के घाट पर बँधी हुई मैली पगडी रक्खी है और एक जोडा ग्रामीण जूता तो गोपाल दद्दा का है।'

आत्मकथा के जितने भी अध्याय है लेखक ने उन सभी का नाम रक्खा हुआ है—आत्मोत्सर्ग, निर्धनता बनाम शिक्षा प्रगति, अंग्रेजी शिक्षा की ओर, कालेज की शिक्षा, भाग्यचक्र, अनुभवशून्यता के आधार पर, अन्धकार से प्रकाश और विकास, १६२२ की जेल य त्रा, फिर नया सग्राम, विस्तारपथ पर अधूरी कहानी और अन्त मे लेखक ने २५ वर्ष के स्फुट सस्मरण लिखे हैं। जीवन यात्रा के विपिन्न पथिक इससे शान्ति लाभ कर सकते है। एक श्रमजीवी पत्रकार पूँजीपति पत्रकार के रूप मे दिखायी देने पर आलोचना की सामग्री हो सकता है परन्तु आदर्शवादी पत्रकार के बाद व्यावहारिक हिन्दी पत्रकार की यह दूसरी पुश्त है।[1]

आत्मकथा लेखक की शैली मे प्राय. जो गुण होने चाहिए वह इनकी आत्मकथा मे स्पष्ट रूप से विद्यमान हैं। हिन्दी मे प्राप्त श्रेष्ठ आत्मकथाओं में इसकी भी गणना की जा सकती है।

इसी युग मे महात्मा गाधी एवं जवाहरलाल नेहरू जेसे प्रसिद्ध महापुरुषो की आत्मकथाएँ प्राप्त होती हैं। महात्मा गाधी की मूल गुजराती पुस्तक 'आत्मकथा' का हिन्दी अनुवाद श्री हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा सन् १६२७ मे प्रकाशित हो चुका था। इस जीवनी ग्रन्थ ने जीवनी साहित्य को गौरवपूर्ण स्तर प्रदान किया। आत्मकथा के सम्बन्ध मे भारतीय सकुचित दृष्टिकोण की परिधि बन्धन तोडकर विस्तृत और उन्मुक्त हो गई। जीवनी लिखने का एक अत्यन्त वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न हो गया था। पंडित नेहरू के अंग्रेजी मे लिखे आत्मचरित का हिन्दी अनुवाद १६३६ ई० में प्रकाशित हो गया था। इनके आत्मचरित्र के हिन्दी अनुवाद से हिन्दी आत्मकथा साहित्य को अधिक बल पहुँचा था। इन दोनो महापुरुषो के अतिरिक्त डा० राजेन्द्र-प्रसाद की 'आत्मकथा' सन् १६४७ मे प्रकाशित हुई। इस आत्मकथा से हिन्दी आत्मकथा साहित्य का स्तर और भी अधिक ऊँचा उठ गया। इस प्रकार इन महापुरुषों की आत्मकथाओ मे वे सभी गुण प्राप्त होते हैं जोकि एक अच्छे आतमकथा लेखक मे होने चाहिए। इस दृष्टिकोण से हिन्दी साहित्य को यह बहुत प्रभावित कर सके हैं।

सन् १६४७ मे भवानीदयाल सन्यासी का आत्मचरित्र 'प्रवासी की आत्मकथा'

---

१. एक पत्रकार की आत्मकथा, ले० मूलचन्द्र अग्रवाल, पृ० ८६

नाम से प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ का बडा महत्व है क्योकि इतिहास और आत्मकथा होने के साथ-साथ यह एक सुन्दर साहित्यिक कृति भी है।

कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी की आत्मकथा दो भागो मे प्रकाशित हुई है। इन दोनो भागो के हिन्दी अनुवाद भी हुए। प्रथम भाग 'आधे रास्ते' सन् १९४२ ई० और दूसरा भाग 'सीधी चढान' सन् १९४९ मे प्रकाशित हुए। 'आधे रास्ते' के हिन्दी अनुवादक श्री पद्मसिंह शर्मा कमलेश हैं और 'सीधी चढान' के अनुवादक श्री मुजुलावीरदेव हैं। दोनो भागो मे मुशी जी का व्यक्तित्व प्रत्येक पृष्ठ के साथ उभरता आया है। अत्यन्त ऊँची साहित्यिक भाषा मे जीवनी ग्रन्थ लिखा है। कही आँडम्बर का नाम नही, छिपाने का प्रयत्न नही और पाठक को ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे-जैसे जीवन प्रतिदिन आगे चलता गया है, उसी रूप मे जीवनी ग्रन्थ उसे लिखता गया है। जीवन के अनेक पहलू, मन की पीडाएँ और व्यथाएँ, आकाक्षाएँ और असफलताएँ घृणा और प्रेम, निराशा की पराकाष्ठा और फिर उससे ऊपर उठने के प्रयत्न, पारिवारिक स्थिति और उसमे अपना स्थान अपने-अपने स्थान पर ठीक ढग से चित्रित मिलते हैं।

वियोगी हरि—सन् १९४८ मे 'मेरा जीवन प्रवाह' वियोगी हरि द्वारा लिखा हुआ प्राप्त होता है। 'मेरा जीवन प्रवाह' जीवन की छोटी बडी सभी बातो का चित्रण करता है। मन की तरगो का, ज्वार और भाटा का उसमे एक चित्र मिलता है। भाषा सुन्दर है और लिखने की शैली अच्छी है, वर्णन अधिक है।

राहुल सांकृत्यायन—राहुल साकृत्यायन ने 'मेरी जीवन यात्रा' मे अपना आत्मचरित्र लिखने का प्रयत्न किया है। इसमे उन्होने बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। इसमे भाषा की सुन्दरता, विविधता विशेष रूप से आकर्षक है। भावो को सरल तथा रोचक ढग से व्यक्त करने की उनमे क्षमता है। इस पुस्तक का प्रकाशन सन् १९४६ मे हुआ। समस्त पुस्तक को चार खंडो मे विभाजित किया हुआ है।

सन् १९४९ ई० मे पूज्य श्री १०५ क्षू० गणेशप्रसादजी वर्णी ने 'मेरी जीवनगाथा' प्रकाशित कराई।

इस प्रकार सन् १९२७ से १९५० तक के आत्मकथा साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि जहाँ इस युग मे साहित्यिक व्यक्तियो के आत्मचरित्र स्फुट एवं सम्बद्ध रूप में प्राप्त होते हैं वहाँ कुछ ऐसे राजनैतिक पुरुषो के आत्मचरित्र भी प्राप्त होते हैं जिनका आत्मकथा साहित्य की प्रगति मे विशेष हाथ रहा है। महात्मा गाधी, जवाहरलाल नेहरू एवं डा० राजेन्द्रप्रसाद के आत्मचरितो से जनता बहुत प्रभावित हुई। इस युग तक साहित्यिक व्यक्तियों में केवल डा० श्यामसुन्दरदास ही ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होने अपनी आत्मकथा विस्तारपूर्वक लिखी यद्यपि यह इनके साहित्यिक व्यक्तित्व को ही लक्षित करती है। स्फुट रूप से जितनी भी निबन्धात्मक एवं संस्मरणात्मक शैली मे आत्मकथाएँ लिखी गई हैं वे भी विषय एवं शैली की दृष्टि से साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इस प्रकार हिन्दी आत्मकथा साहित्य

की विशेष रूप से प्रगति हुई। कई अनुवादित आत्मकथाएँ भी प्राप्त होती हैं। राजाराम अग्रवाल एव पद्मसिह शर्मा कमलेश ने महात्मा टाल्सटाय एव मुशी जी की आत्मकथाओ का हिन्दी मे अनुवाद किया। इनके अतिरिक्त हरिभाऊ उपाध्याय ने गाधीजी की जीवनी का हिन्दी अनुवाद किया। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जहाँ इस युग मे मौलिक आत्मकथाएँ प्राप्त होती है वहाँ अनुवादित भी। भारतेन्दु युग मे तो साहित्यिक लेखको ने आत्मचरित लिखने के महत्व को ही समझा था जिसका परिणाम यह हुआ कि द्विवेदी युग मे इसकी पर्याप्त प्रगति हुई। 'हंस' के आत्मकथा अक ने भी इस युग मे आत्मकथा साहित्य के विकास मे विशेष सहयोग दिया है।

(ग) वर्तमान काल

वर्तमान काल मे भी अनेक कथालेखको, आलोचको एव कवियो द्वारा लिखी हुई कथाएँ स्फुट एव सम्बद्ध रूप मे पाई जाती हैं।

सन् १९५१ मे 'स्वतन्त्रता की खोज में' अर्थात् 'मेरी आत्मकथा' स्वामी सत्यदेव परिव्राजक द्वारा लिखी हुई हिन्दुस्तान प्रिंटिंग प्रेस, अलीगढ से प्रकाशित हुई। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने देश-विदेश मे भ्रमण कर भारतीयता और राष्ट्रीयता का जो प्रचार किया था उसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

कालिदास कपूर — सन् १९५३ मे इण्डियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग से प्रकाशित कालिदास कपूर की आत्मकथा 'मुदर्रिस की रामकहानी' प्राप्त होती है। यह पुस्तक अध्यापक का जीवन-वृत्त है और मुख्यत अध्यापक पाठको को ध्यान मे रखकर ही लिखा गया है। इस रामकहानी मे कालिदास कपूर ने अपने जीवन से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओ का बडे गर्व के साथ वर्णन किया है। इनके जीवन मे जो भी सकट व बाधाएँ आई हैं वे सभी शिक्षक समुदाय की हो सकती हैं ऐसा इन्होने स्वय स्वीकार किया है —

> "अतएव कुछ ऐसा विश्वास हो रहा है कि मेरी रामकहानी मे भारतीय शिक्षक बन्धुओ की कहानी सन्निहित है। यदि वदनीय नेताओ की आत्मकथाओ से समस्त भारतीय नागरिक प्रभावित होते हैं तो माध्यमिक एवं प्रारम्भिक विद्यालयो के शिक्षक समुदाय को तो मेरे जैसे मुदर्रिस की रामकहानी मे आत्म-दर्शन होना ही चाहिए।"[1]

इस आत्मकथा मे लेखक की स्पष्टवादिता एव लेखन शैली में प्रभावोत्पादकता दृष्टिगोचर होती है।

सन् १९५३ मे आत्माराम एण्ड सस ने 'जीवन-स्मृतियाँ' पुस्तक प्रकाशित की जिसके सम्पादक क्षेमेन्द्र सुमन हैं। इस पुस्तक मे आधुनिक कथालेखक, आलोचक एवं कविजनों के आत्मचरित सकलित हैं। कविगण में सुमित्रानन्दन पत, महादेवी

---

१. मुदर्रिस की रामकहानी, ले० कालिदास कपूर, पृ० ३

वर्मा एव मैथिलीशरण गुप्त जी द्वारा लिखे गए आत्मकथा सम्बन्धी लेख हैं। मैथिली-शरण गुप्त ने अपने साहित्यिक जीवन के विकास के विषय मे लिखा है। इसका अर्थात् आत्मकथा सम्बन्धी लेख का शीर्षक 'कविता के पथ पर' है। साहित्यिक जीवन की झाँकी ही केवल प्राप्त होती है इसलिए लेख कुछ अपूर्ण-सा प्रतीत होता है।

इसी प्रकार सुमित्रानन्दन पत ने भी 'मेरा रचनाकाल' शीर्षक मे अपने कवि जीवन के विकासक्रम को पाठको के सम्मुख रक्खा है। इस प्रकार इनके भी साहित्यिक जीवन का पाठक को आभास मिलता है।

महादेवी वर्मा ने भी 'अपने सम्बन्ध मे' शीर्षक मे अपने कवि जीवन के भाव पक्ष का ही अधिक वर्णन किया है। कविताओ के करुण, दु ख आदि विषयो का ही विस्तारपूर्वक लिखा है। अपने व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से भावुकतामयी शैली मे लिखा हैं। दुःख के विषय मे लिखती है—

"मुझे दु.ख के दोनो ही रूप प्रिय हैं—एक वह जो मनुष्य के सवेदनशील हृदय को सारे ससार से एक अविच्छिन्न बन्धन मे बाँध देता है और दूसरा वह जो काल और सीमा के बन्धन मे पडे हुए असीम चेतना का क्रन्दन है।"[1]

महादेवी द्वारा लिखे हुए इन पाँच पृष्ठो को पढने के पश्चात् इनकी कविताओ के भाव पक्ष को समझने मे पाठक को बहुत सहायता मिल सकती है।

कथालेखक एव आलोचको मे से जैनेन्द्रकुमार, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, श्री रामवृक्षबेनीपुरी, श्री शातिप्रिय द्विवेदी एवं डाक्टर रामकुमार वर्मा द्वारा लिखे हुए आत्मकथा सम्बन्धी निबन्ध भी सग्रहीत हैं। जैनेन्द्र ने भी 'अपनी कैफियत' शीर्षक मे साहित्यिक व्यक्तित्व के विषय मे ही लिखा है। इन्होने कैसा लिखना शुरू किया और किस प्रकार इनकी लेखन शैली का विकास हुआ इसी का विश्लेषण किया है।

भगवतीप्रसाद वाजपेयी ने अपने जीवन का आरम्भ से वर्णन किया है – जन्म, शिक्षा एव साहित्यिक जीवन को क्रमानुसार 'मेरा निर्माण' मे लिखा है। इन्होने सक्षिप्त रूप से जीवन के समस्त पहलुओ को रक्खा है। साहित्यिक रचनाओ के विषय पर इन्होने प्रकाश डाला है। इस प्रकार इन द्वारा लिखे हुए अपने जीवन के विषय मे कुछ पन्ने इनके साहित्यानुशीलन मे पाठक को बहुत लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं।

डाक्टर रामकुमार वर्मा ने अपने जीवन की कुछ घटनाओ को जिनसे उनका व्यक्तितत्व विशेष रूप से प्रभावित है पाठको के सम्मुख रक्खा है। इसका शीर्षक उन्होने 'मेरे जीवन के कुछ चित्र' रक्खा है।

इसी प्रकार रामवृक्ष बेनीपुरी ने भी 'मैं कैसे लिखता हूँ' शीर्षक मे अपने साहित्यिक जीवन का ही वर्णन किया है।

इस प्रकार क्षेमेन्द्र सुमन ने इन सभी स्फुट रूप मे लिखे हुए आत्मकथा सबधी लेखो का सकलन किया है। इनके अध्ययन से स्पष्ट है कि इन्होने जीवन के केवल एक

---

१. जीवन स्मृतियाँ, सपादक क्षेमेन्द्र सुमन, पृ० १५१

समूह का विश्लेषण किया है। व्यक्तिगत जीवन को यह पूर्ण छोड गए हैं।

शान्तिप्रिय द्विवेदी ने भी अपनी आत्मकथा 'परिव्राजक की प्रजा' सस्मरणात्मक शैली मे लिखी है। सस्मरणो मे लिखी हुई इस आत्मकथा का प्रकाशन काल १९५२ सन् है। इसका विस्तृत वर्णन मैंने 'सस्मरण' अध्याय मे दिया है। फिर भी द्विवेदीजी ने अपनी आत्मकथा मे अपने जीवन के दोनो पहलुओं का विश्लेषण किया है। 'बाल्मकाल' मे शैशवावस्था का एव उत्तरकाल मे साहित्यिक जीवन को लिया है।

सन् १९५९ मे उपेन्द्रनाथ अश्क द्वारा लिखे यात्रा, डायरी, सस्मरण एव आत्मकथा सम्बन्धी लेखो का सकलन नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। इसमे 'जीवनी' के नोट शीर्षक मे अश्क जी ने अपन साहित्यिक व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है।

सन् १९६२ मे अमर शहीद 'बिस्मिल' द्वारा जेल मे फाँसी के दो दिन पूर्व लिखी हुई आत्मकथा बनारसीदास चतुर्वेदी ने प्रकाशित करवाई। यह इसका द्वितीय सस्करण है। इसके प्रकाशक आत्माराम एण्ड सस हैं। इस आत्मकथा के चार खण्ड हैं। आत्मचरित, स्वदेश प्रेम, स्वतन्त्र जीवन एव वृहत सगठन। क्या भाषा और क्या भाव दोनो दृष्टियों से बिस्मिल की आत्मकथा एक अद्भुत ग्रथ है। बिस्मिल ने अपने पूर्वजो का जो वृत्तान्त आरम्भ मे दिया है वह बडा आकर्षक है। पुस्तक मे स्पष्टवादिता है और अपने सगठन की त्रुटियो का जिक्र है और साथी-सगियो की कडी आलोचना भी है।[1] बिस्मिल के इस आत्मचरित के मुकाबले का ग्रथ केवल हिन्दी साहित्य मे ही नही, वरन् भारत की अन्य भाषाओ के साहित्य मे भी मुश्किल से मिलेगा।

सतराम बी० ए० सन् १९६३ मे सतराम बी० ए० की आत्मकथा प्राप्त होती है। अपने जीवन के छिहत्तर वर्षों के अनुभवो को लेखक ने इसमे वर्णित किया है। इसीलिए इसका नाम भी इन्होंने 'मेरे जीवन के अनुभव' दिया है। इन्होंने अपने समस्त जीवन को चौदह भागो मे विभाजित किया है और फिर क्रमानुसार वर्णन किया है। जीवन के सभी पक्षो का विवेचन इनकी आत्मकथा मे लक्षित होता है। आत्मकथा लेखक मे जिस ईमानदारी और जिन्दादिली का होना आवश्यक है वह इनमे है जैसा कि इन्होने स्वय भी कहा है—

> "अपने जीवन के छिहत्तर वर्षों मे मुझे जो सुखद-दु:खद अनुभव प्राप्त हुए हैं इन्ही को मैंने ईमानदारी के साथ ज्यो का त्यो यहाँ लिखने का यत्न किया है।"[2]

जीवन की किसी भी घटना को लेखक ने छिपाया नहीं है। वर्णन मे सत्यता एव स्पष्टवादिता लक्षित होती है। इसके साथ ही लेखक ने 'साहित्यिक जीवन' शीर्षक मे अपनी साहित्यिक सेवाओ का वर्णन किया है। यहाँ तक कि लेखक के व्यक्तित्व पर किन-किन व्यक्तियो का प्रभाव पड़ा था उसका भी वर्णन इसमे पाया जाता है। अत्यन्त

---

१. सम्पादकीय बनारसीदास चतुर्वेदी।

२. मेरे जीवन के अनुभव, ले० सतराम, पृ० ६।

प्रभावशाली शैली मे लेखक ने अपनी आत्मकथा लिखी है। इसीलिए प्राप्त श्रेष्ठ हिन्दी आत्मकथाओ मे यह एक कही जा सकती है। क्या भाषा एव क्या भाव दोनो ही दृष्टियो से यह सफल कही जा सकती है।

आचार्य चतुरसेन—सन् १९६३ मे आचार्य चतुरसेन की 'मेरी आत्मकहानी' चतुरसेन साहित्य समिति ज्ञानधाम शाहदरा दिल्ली से प्रकाशित हुई। इसमे आचार्य जी ने अपने जीवन का पूर्ण विस्तृत रूप से वर्णन किया है। इस आत्मकथा मे आचार्य जी के व्यक्तिगत एव साहित्यिक जीवन का पूर्ण रूप से वर्णन है। आरम्भ मे लेखक ने अपने माता-पिता एव पूर्वजों के विषय मे लिखा है। उसके बाद बाल्यावस्था का वर्णन है। विद्यार्थी जीवन का वर्णन लेखक ने स्पष्ट एव रोचकपूर्ण ढग से किया है। गृहस्थ जीवन की सभी समस्याओ का लेखक ने नग्न चित्र खीचा है। इसके पश्चात् लेखक ने अपने साहित्यिक जीवन का विकास लिखा है। जीवन मे जिन-जिन व्यक्तियो से लेखक का सम्बन्ध रहा है, उन सभी का वर्णन किया है। आत्मकथा को पढने के पश्चात् आचार्य जी की की स्पष्टवादिता का पता चलता है। गुण-कथन मे ही वह सिद्धहस्त नही थे अपितु त्रुटियो को मानने मे भी वह चतुर थे। गुण-दोषो का लेखक ने वर्णन ही नही किया अपितु शक्ति अनुसार विश्लेषण भी किया है। राजनैतिक एव साहित्यिक विषयो पर भी लेखक ने निस्कोच रूप से अपने विचार रक्खे है। अपने विषय मे एव अन्य व्यक्ति के विषय जो कुछ भी लेखक ने लिखा है वह निरपेक्ष स्वभाव का ही परिणाम है। व्यक्तिगत घटनाओ के वर्णन की अपेक्षा लेखक ने जहाँ बाह्य जीवन से अपना सम्बन्ध स्थापित किया है वह अधिक प्रभावशाली बन पडा है। हिन्दी साहित्य मे प्राप्त आत्मकथाओ मे यह सवश्रेष्ठ आत्मकथा कही जा सकती है। क्या भाषा एव क्या भाव दोनो दृष्टियो से इसका महत्व कम नही है। इसमे केवल एक त्रुटि है कि यह अधिक विस्तृत है। अनावश्यक विस्तार प्राय रोचक नही होता लेकिन फिर भी आचार्य जी की शैली प्रभावोत्पादक है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी आत्मकथा साहित्य प्रगति की ओर अग्रसर है। हिन्दी साहित्य मे विस्तृत एव पूर्ण आत्मकथा केवल आचार्य चतुरसेन की ही प्राप्त होती है और जितनी भी आत्मकथाएँ स्फुट एव निबन्ध रूप मे प्राप्त होती हैं उनमे लेखको के एक ही पहलू व पक्ष का ज्ञान होता है। साहित्यिक जीवन के अतिरिक्त लेखक का व्यक्तिगत जीवन भी होता है उसका बहुत कम उल्लेख है। वही आत्मकथा सफल कही जा सकती है जिसमे जीवन के सभी पक्षो का उल्लेख हो। इस दृष्टिकोण से आचार्य चतुरसेन की 'मेरी आत्मकहानी' ही उत्कृष्ट रचना है। प्रकाशित आत्मकथाओ मे से यही सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा है।

विभाजन

पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित एव प्रकाशित पुस्तको के आधार पर आत्मकथा साहित्य का विभाजन निम्न ढंग से हो सकता है—

(क) लेखकों के आधार पर

हिन्दी साहित्य मे आत्मकथा लेखक केवल साहित्यिक व्यक्ति ही नही हैं प्रत्युत अनेक राजनैतिक एव धार्मिक व्यक्तियो की आत्मकथाएँ भी प्राप्त होती हैं। यहाँ साहित्यिक व्यक्ति से अभिप्राय उन व्यक्तियो से है जिन्होने हिन्दी साहित्य के विकास मे अपनी कृतियो द्वारा विद्वता का परिचय दिया है। ऐसी श्रेणी मे कवि, कथालेखक एव आलोचकगण आते है।

कवि—हिन्दी आत्मकथा साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि हिन्दी के प्रसिद्ध कवियो ने अपनी आत्मकथा स्फुट रूप से निबन्धात्मक शैली मे लिखी है। भारतेन्दु युग मे स्वय भारतेन्दु ने लिखने का प्रयास किया था। द्विवेदी युग मे वियोगी हरि, मैथिलीशरण गुप्त एव वर्तमान युग मे सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, उदयशकर भट्ट, निराला, सियारामशरण गुप्त एव हरिकृष्ण प्रेमी द्वारा लिखी हुई आत्मकथाएँ प्राप्त होती है। इन कवियो ने अपनी आत्मकथाओ मे अपने चरित्र का चित्रण पूर्ण ढंग से नही किया है। केवल कवि जीवन के विकास क्रम को ही समझाने का प्रयत्न किया है। कवि होने के कारण इनकी शैली भी विषयानुकूल हो गई है। कही-कही आत्मनिरीक्षण करते समय भावुक-से प्रतीत होते हैं। पत की 'मेरा रचनाकाल' में शैली इसी प्रकार की है—

> "पर्वत प्रदेश के निर्मल चचल सौदर्य ने मेरे जीवन के चारों ओर अपने नीरव सौदर्य का जाल बुनना शुरू कर दिया था। मेरे मन के भीतर बरफ की ऊँची चमकीली चोटियाँ रहस्य भरे शिखरो की तरह उठने लगी थी जिन पर खडा हुआ नीला आकाश रेशमी चदोवे की तरह आँखो के सामने फहराया करता था। कितने ही इन्द्रधनुष मेरी कल्पना के पट पर रगीन रेखाएँ खीच चुके थे, बिजलियाँ बचपन की आँखो को चकाचौंध कर चुकी थी।"[1]

इस प्रकार इनका प्रत्येक पृष्ठ जहाँ यह अपनी रचनाओ के विषय में लिखते हैं उनके व्यक्तित्व से प्रभावित लक्षित होता है।

आत्मकथा शैली का प्रधान गुण सक्षिप्तता एव लाघवता का होना है तो इन कवियो की आत्मकथा मे यह विशेष रूप से पाया जाता है क्योंकि किसी ने भी पूर्ण चरित्र को तो लिखा नही, थोडे शब्दों मे अधिक कह देने की प्रवृत्ति ही इनमे विशेष रूप से पायी जाती है। इसीलिए इनके द्वारा लिखे हुए कुछ पृष्ठ ही बहुत उपयोगी हैं। महादेवी मे यह प्रवृति विशेष रूप से है—आरम्भ म ही पाठक को इसका अनुभव हो जाता है—

> "अपने सम्बन्ध मे क्या कहूँ ? एक व्यापक विकृति के समय, निर्जीव संस्कारो के बोझ से जडीभूत वर्ग मे मुझे जन्म मिला है। परन्तु एक ओर साधना पूत, आस्तिक और भावुक माता और दूसरी ओर सब प्रकार की साम्प्रदायिकता

---

१. जीवन-स्मृतियाँ, सम्पादक क्षेमेंद्र सुमन, पृ० १२६

से दूर, कर्मनिष्ठ और दार्शनिक पिता ने अपने-अपने सस्कार देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया उसमे भावुकता बुद्धि के कठोर धरातल पर, साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर और आस्तिकता एक सक्रिय किन्तु किसी वर्ग या सम्प्रदाय से न बधने वाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी।[1]

अत स्पष्ट है कि जीवन के जिस पक्ष को लेकर इन्होने लिखा है उसमे इनकी पूर्ण ईमानदारी दृष्टिगोचर होती है। इनकी शैली भी परिपक्व एव उत्कृष्ट है।

कथालेखक —कथालेखको मे से उपेन्द्रनाथ अश्क, रामवृक्ष बेनीपुरी, शान्तिप्रिय द्विवेदी, मुशी प्रेमचन्द एव आचार्य चतुरसेन की आत्मकथाएँ प्राप्त होती है। इन कथालेखको मे आचार्य चतुरसेन के अतिरिक्त किसी ने भी अपूर्ण चरित्र का चित्रण नही किया। उपेन्द्रनाथ अश्क ने भी अपने साहित्यिक जीवन के विषय मे 'ज्यादा अपनी और कम परायी' मे लिखा है। इसी प्रकार रामवृक्ष बेनीपुरी ने भी 'मैं कैसे लिखता हूँ' मे अपने साहित्य जीवन के विषय मे लिखा है। इसमे इन्होने कला पक्ष पर अधिक बल दिया है। मुशी प्रेमचन्द ने भी व्यक्तिगत जीवन को कम ही लिखा है। शान्तिप्रिय द्विवेदी ने अपनी आत्मकथा सस्मरणो मे 'परिव्राजक की प्रजा' नाम से लिखी है। इसमे इन्होने 'बाल्यकाल' एव उत्तर काल मे जीवन के सभी पक्षो के विषय मे लिखा है। इनकी शैली मे इनका भावुक मन अधिक लक्षित होता है। कथा लेखको की शैली मे रोचकता अधिक पायी जाती है जैसे कि कहानी तभी उत्कृष्ट होती है यदि वह पाठक का मनोरजन कर सके। तो इसी प्रकार आत्मकथा मे भी यही है। इन लेखको ने आत्मकथा भी ऐसे ढग से लिखी है कि वह पाठक का मनोरजन कर सके। मुशी प्रेमचन्द ने तो व्यक्तिगत घटना का वर्णन करते समय वार्तालाप भी ज्यो का त्यो लिखा है। इससे और भी रोकचता एव प्रभावोत्पादकता बढती है—

"एक महीने के बाद मैं फिर मि० रिचर्डसन से मिला और सिफारिशी चिट्ठी दिखलाई। प्रिंसिपल ने मेरी तरफ तीव्र नेत्रो से देखकर पूछा, "इतने दिन से कहाँ थे ?"

"बीमार हो गया था।"

"क्या बीमारी थी ?"

मैं इस प्रश्न के लिए तैयार न था। अगर ज्वर बताता हूँ तो शायद साहब झूठा समझे—मैंने कहा—

"पैलपिटेशन ऑफ हार्ट सर।[2]"

मेरा यहाँ कहने का अभिप्राय यह है कि इन कथालेखको की शैली जोकि इन्होने उपन्यास एव कहानियो के लिखने मे अपनायी है आत्मकथा मे भी आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया है। इससे वह पाठक के सम्मुख और अधिक नग्न एव स्पष्ट रूप

---

१. जीवन-स्मृतियाँ, सम्पादक, क्षेमेन्द्र सुमन, पृ० १४२

२. मेरा जीवन सार, ले० मुशी प्रेमचन्द, 'हंस' आत्मकथा अंक, सन् १९३२

से अपने चरित्र को रख सकते हैं। इन कथालेखको मे से केवल आचार्य चतुरसेन ही अपने पूर्ण व्यक्तित्व को स्पष्ट कर सके हैं। इनकी आत्मकहानी मे वे सभी विशेषताएँ हैं जोकि एक आत्मकथा लेखक की शैली मे होनी चाहिए।

आलोचक—आलोचको मे से आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ॰ श्यामसुन्दरदास, पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी, डॉ॰ रामकुमार वर्मा एवं बाबू गुलाबराय द्वारा लिखी हुई आत्मकथाएँ प्राप्त होती हैं। इनमे केवल डॉ॰ श्यामसुन्दरदास की आत्मकथा ही हमे विस्तृत रूप से प्राप्त होती है बाकी आलोचको ने स्फुट रूप से ही अपने विषय मे लिखा है। आलोचक होने के कारण इनकी आत्मकथाओ मे आत्मविश्लेषण, आत्म-निरीक्षण एव आत्मविवेचन अधिक मात्रा मे प्राप्त होता है। अपने गुण-दोषो का वर्णन करना ही ये अपना ध्येय नही समझते प्रत्युत उन पर टीका टिप्पणी भी करते हैं। बाबू गुलाबराय इस विषय मे सिद्धहस्त हैं। वह अपने जीवन की छोटी-से-छोटी घटना का वर्णन भी इस ढग से करते हैं कि उनका व्यक्तित्व पाठक को स्पष्ट हो जाए। उन्होने जिस ईमानदारी और सचाई से आत्मविश्लेषण किया है वह अभी तक कोई भी आलोचक नही कर सका है। एक स्थान पर यह लिखते हैं—

> "मैं तर्कशास्त्र के विद्यार्थियो मे अग्रगण्य था। इस विषय के अवैतनिक ट्यूशन करने का मुझे व्यसन-सा हो गया था। कुछ को तो स्नेहवश पढाता था और कुछ को केवल शान जिताने के लिए क्योकि शान जताने के लिए मेरे पास और कुछ न था। कपडो के नाम से पट्टू का कोट था और सामान के नाम पर एक टूटा चीड का बक्स। फिर शान किस चीज की दिखाता!"[1]

कही-कही तो इन आलोचको ने बडे गाम्भीर्य से अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण किया है। पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी की शैली मे अधिक गम्भीरता है—

> "मैं अपने जीवन को दो भागो मे विभक्त कर सकता हूँ। एक कर्म जीवन है और दूसरा भाव जीवन। एक तथ्य का राज्य है और दूसरा कल्पना का। मैंने कभी तथ्य के राज्य मे विचरण किया है और कभी कल्पना के राज्य मे। दोनो मे मैंने सुख-दुःख, आशा-निराशा और उत्थान-पतन का अनुभव किया है। दोनो मेरे लिए समान रूप से सत्य हैं।"[2]

डा॰ श्यामसुन्दरदास की आत्मकहानी तो हिन्दी भाषा तथा साहित्य की उत्पत्ति एव विकास को समझने के लिए विशेष रूप से सहायक है। इसमे इन्होने अपने साहित्यिक व्यक्तित्व को ही विशेष रूप से लिया है।

राजनैतिक एवं धार्मिक पुरुष—हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसी आत्मकथाएँ प्राप्त होती हैं जो राजनैतिक एव धार्मिक पुरुषो की हैं। राजनैतिक पुरुषों मे महात्मा

---

१. मैं और मेरी कृतियाँ, ले॰ गुलाबराय, पृ॰ ६

२. अपनी बात, ले॰ पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी, पृ॰ ८६
पुस्तक 'जीवन स्मृतियाँ', सम्पादक क्षेमेन्द्र सुमन

गाँधी, पडित जवाहरलाल नेहरू एव डा० राजेन्द्रप्रसाद प्रमुख है। राजनैतिक नेताओ का जीवन भी एक सघर्ष का जीवन रहता है। उत्थान और पतन उनके जीवन के दो समान महत्वपूर्ण पक्ष होते हैं। भाग्य का झकोरा उन्हे किस समय किस पक्ष की ओर ले जाकर पटकता है, यह कुछ नही कहा जा सकता। इन लोगो की आत्मकथाओ का सौन्दर्य भाग्य के इसी उत्थान और पतन की कहानी को सचाई से व्यक्त करने मे निहित रहता है। इन महापुरुषो द्वारा लिखी हुई सभी आत्मकथाएँ इसी श्रेणी मे आती हैं।

कुछ धार्मिक पुरुषो द्वारा लिखी हुई आत्मकथाएँ भी प्राप्त होती हैं। हरिभाऊ उपाध्याय की 'साधना के पथ पर' एव भवानीदयाल सन्यासी की 'प्रवासी की आत्मकथा' इसी श्रेणी मे आती है। ससार मे बहुत से महान् व्यक्ति हुए है जो अपने जीवन के प्रारम्भिक काल मे कुल अधिक उच्छृखल रहे है किन्तु किन्ही विशेष प्रेरणाओ और परिस्थितियों के फलस्वरूप उनके जीवन की गतिविधि सहसा बदल गई और वे उच्चकोटि के धार्मिक व्यक्ति बन गए। इस कोटि के व्यक्तियो द्वारा लिखी गई आत्मकथाओ मे हमे आत्मनिवेदन और आत्मविगर्हणा के साथ-साथ उन परिस्थितियो और घटनाओ का मार्मिक चित्रण भी मिलता है, जिन्होने उनके जीवन की गतिविधि को बदलने मे योग दिया और उनके जीवन को सफल जीवन बना दिया। ये सभी आत्मकथाएँ इसी कोटि की हैं।

(ख) शैली के आधार पर

प्रत्येक लेखक का अपनी विषयवस्तु को सजाने का अपना-अपना ढग होता है। हिन्दी आत्मकथा साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि विभिन्न लेखकों ने विभिन्न शैलियो मे अपनी आत्मकथाएँ लिखी हैं।

निबन्धात्मक शैली मे लिखी हुई आत्मकथाएँ—हिन्दी साहित्य मे निबन्धात्मक शैली मे अनेक साहित्यिक लेखको ने अपनी आत्मकथाएँ लिखी हैं। गुलाबराय, महावीरप्रसाद द्विवेदी, मुशी प्रेमचन्द एव डा० श्यामसुन्दरदास आदि लेखको ने इस शैली को अपनाया है। इस शैली मे एक निबन्ध की तरह से लेखको ने अपने विषय मे लिखा है। डॉ० श्यामसुन्दरदास की 'मेरी आत्मकहानी' इसी शैली मे लिखी गई है। इस शैली की यह विशेषता है कि यदि आत्मकथा के किसी एक भाग को निकाल दिया जाय तो बाकी का भाग स्वतन्त्र रूप से अपना अस्तित्व रखता है। इसका एक भाग दूसरे से और दूसरा तीसरे से सम्बद्ध नही होता जैसे बाबू गुलाबराय द्वारा लिखी हुई आत्मकथा है। इसका प्रत्येक निबन्ध अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखता है। ऐसे ही डॉक्टर साहब की आत्मकथा के विषय मे कहा जा सकता है। इन्होंने पृथक्-पृथक् निबन्धो मे भिन्न-भिन्न जीवन के पहलुओ को व्यक्त किया है।

संस्मरणात्मक शैली में लिखी हुई आत्मकथाएँ कुछ ऐसे भी लेखक हुए हैं जिन्होंने आत्मकथाएँ संस्मरणो के रूप में लिखी हैं। इसका सफल प्रयोग शान्तिप्रिय

द्विवेदी, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पत, उपेन्द्रनाथ ग्रश्क, रामवृक्ष बेनीपुरी ग्रादि लेखकों ने किया है। द्विवेदीजी की पूर्ण ग्रात्मकथा 'परिव्राजक की प्रजा' इसी शैली मे लिखी गई है। इस शैली की यह विशेषता है कि इसमे लेखक उन्ही घटनाग्रो का वर्णन करता है जो कि विशेष रूप से पाठक को प्रभावित करती हैं। सतराम बी० ए० ने भी अपनी अपनी ग्रात्मकथा 'मेरे जीवन के ग्रनुभव' इसी शैली मे लिखी है।

डायरी शैली मे लिखी हुई ग्रात्मकथाएँ—हिन्दी साहित्य मे केवल कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी की ग्रात्मकथा इस शैली मे लिखी गई है। मुशीजी ने प्रत्येक जीवन की घटना का वर्णन करते समय समय, स्थान ग्रौर सन् को दिया है। इसके ग्रतिरिक्त राहुल सास्यकृत्ययान की 'मेरी जीवन यात्रा' मे भी इसका थोडा-बहुत प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।

ग्रात्मकथात्मक जीवन चरित शैली मे लिखी हुई तो केवल एक ही साहित्यिक व्यक्ति ग्राचार्य चतुरसेन की 'मेरी ग्रात्मकहानी' प्राप्त होती है। इसमें ग्राचार्यजी ने ऐतिहासिक शैली का प्रयोग किया है। ग्रादि से ग्रन्त तक सम्बद्ध रूप मे इन्होंने ग्रपना सम्पूर्ण जीवन लिखा है। ग्रपनी जीवनी को ग्रर्थात् जीवन की कुछ घटनाग्रो का स्पष्ट रूप से पाठको के सम्मुख रखने के लिए लेखक ने विभिन्न लेखको से जो पत्र-व्यवहार हुग्रा था वह भी अपनी ग्रात्मकथा मे दिया है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ग्रात्मकथा लेखक विभिन्न शैलियों का प्रयोग कर सकता है।

रेखाचित्र

रेखाचित्र साहित्य का वह गद्यात्मक रूप है जिसमे एकात्मक विषय विशेष का शब्द-रेखाओ से मवेदनशील चित्र प्रस्तुत किया जाता है। इसका विस्तृत विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया है।

रेखाचित्र के तत्व

हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित एवं प्राप्त पुस्तको के आधार पर रेखाचित्र के तत्व निम्नलिखित हैं—

वर्ण्य विषय—१ 'रेखाचित्र' साहित्य का यह प्रमुख तत्व है। रेखाचित्र साहित्य विषय से अभिप्राय है कि रेखाचित्रकार ने अपने रेखाचित्र का विषय किसी व्यक्ति को, घटना को, वस्तु को या किसी विशेष स्थल को लिया है। जहाँ तक व्यक्ति का प्रश्न है वह किसी साधारण व्यक्ति का रेखाचित्र भी खीच सकता है यदि उसके चरित्र मे कुछ ऐसे गुण हैं जिनसे वह प्रभावित हुआ हो। साहित्यिक राजनैतिक एव महापुरुषो के जीवन मे तो कुछ कहना ही क्या वे तो होते ही असाधारण है। ऐसे ही घटना के विषय मे है—रेखाचित्रकार यदि किमी विशेष घटना का रेखाचित्र खीचता है तो वह अवश्य उससे प्रभावित होगा। कही-कही हमे प्रसिद्ध नगरो के रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे रेखाचित्रकार हुए हैं जिन्होने विशेष नगरो जैसे वाराणसी, कानपुर आदि के विषय मे रेखा चित्र लिखे है। इस प्रकार रेखाचित्र का विषय व्यक्ति भी हो सकता है, चेतन भी और जड भी।

विषय चुनाव के पश्चात् रेखाचित्रो मे कुछ गुणो का होना आवश्यक है। सर्वप्रथम रेखाचित्रो मे यथार्थता का होना आवश्यक है। प्रत्येक रेखाचित्र का विषय अनुभूत्यात्मक होता है काल्पनिक नही। इसीलिए उसमे वास्तविकता होती है। महादेवी के रेखाचित्रात्मक कृतियो के नामो - 'स्मृति की रेखाएँ' 'अतीत के चलचित्र', दूसरी कृति की भूमिका से, इससे भी बढकर उनकी सघन सवेदना से यह स्पष्ट है कि इन रेखाओं मे चित्रकर्त्री ने उनको चित्रित किया है जो स्मृति पट से हटते नही।[1] या जो धूमिल चलचित्रो के उज्जल आधार हैं।[2] जिनकी ममता सुन्दर, सरलता शिव और

---

१. स्मृति की रेखाएँ

२. अतीत के चलचित्र

मनुष्यता सत्य रही है ।[1] मानो जो धूलि के रत्न हैं और जिन्हें किसी पारखी ने पहचाना । प्रकाशचन्द्र गुप्ता ने भी 'पुरानी स्मृतियाँ' पुस्तक मे उन व्यक्तियो के चित्र बनाए हैं जिनके बीच उनका शैशव खेला है । कन्हैयालाल मिश्र ने भी 'भूले हुए चेहरो' की याद को रेखाओ मे बाँधा है ।

यह तो हुई विषय की वास्तविकता, इसके पश्चात् वर्ण्य विषय मे यथार्थता से अभिप्राय है प्रत्येक बात को स्पष्ट रूप से रेखाकित करना । कौशल्या अश्क ने अपने पति अश्क के विषय मे स्पष्ट रूप से लिखा है

> अश्कजी का स्वभाव ऐसे शान्तिप्रिय व्यक्ति का-सा नही जो पहाड की चोटी पर पहुँच कर उस पर डेरा डाल ले, बल्कि ऐसा चचल राही है जिसको कभी पहाडी के शिखर पसन्द हैं कभी गहरी घाटियाँ ।...उन्होने अतीव के कडवे प्याले भी पिये हैं और मीठे भी, बाहुल्य भी देखा है और अभाव भी—और न जाने किन जन्मजात सस्कारो और माता-पिता के किन गुण-दोषों और दूसरी सामाजिक अथवा मानसिक विषमताओ के कारण उनका स्वभाव ऐसी आत्म-विरोधी पराकाष्ठाओ मे घडी के पेंडुलम की भाँति चलता रहता है ।"[2]

इस प्रकार लेखक को पूर्ण ईमानदारी के साथ अपने विषय का वर्णन करना चाहिए । रेखाचित्र का यही गुण है जिससे हम रेखाचित्र को आत्मकथात्मक कहते हैं ।

अन्य महत्वपूर्ण गुण जिसका विषय वर्णन मे होना उचित है वह है रोचकता । लेखक को अपने विषय का इस ढग से वर्णन करना चाहिए जिससे वह पाठक को रुचिकर प्रतीत हो । नीरस विषय को कोई भी व्यक्ति पढने के लिए तैयार नहीं होता ।[3] 'स्केच का साहित्यिक मूल्य और सुन्दरता केवल सामयिक अथवा स्थानीय न हो वरन् प्रत्येक युग मे और प्रत्येक जगह उसकी रोचकता बनी रहे और वह नीरस न हो जाए ।[4] वैसे तो सभी लेखको के रेखाचित्रों में यह गुण है पर प्रेमनारायण टडन के रेखाचित्रो मे तो विशेष रूप से यह गुण है । 'कूकी' का वर्णन आरम्भ से ही अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग से किया है—

> "हमारे प्रेस मे काम करने वाले महाजन का नाम 'कूकी' है । वह विचित्र नाम उसके माता-पिता का दिया हुआ नहीं है । उन्होंने तो बडी श्रद्धा और भक्ति से उसका नाम रक्खा था भगवतीप्रसाद । उसके सगे-सम्बन्धी जो व्याकरण के नियमों से सर्वथा अनभिज्ञ थे, स्त्रीलिंगवाची 'भगवती' शब्द से ही अपना काम निकालने लगे । इस मे भी कम से कम इतनी सच्चाई तो थी कि दिन मे आठ-दस बार 'भगवती' का शुभ नाम मुँह से निकलता था और बहुत सभव है, किसी को यह आशा भी हो कि चारों ओर मँडराने वाले यमदूतो से

---

१. अतीत के चलचित्र
२. दो धारा—लेखक उपेन्द्रनाथ अश्क, कौशल्या अश्क, प्रथम सस्करण, पृ० २७
३. 'स्केच' एक अध्ययन, ले० घनश्यामदास सेठी, अजन्ता, जनवरी, १९५१
४. वही

किसी समय यदि रक्षा करने की आवश्यकता होगी तो इस नाम की अधिष्ठात्री हमारी अवश्य रक्षा करेगी जैसे अजामिल की सहायता विष्णु के दूतो ने नारायण नाम सुनते ही की थी ।"[१]

स्पष्टता एव रोचकता के पश्चात् वर्ण्य विषय मे सक्षिप्तता का होना आवश्यक है। रेखाचित्रकार की सीमाएँ निश्चित हैं। उसे कम से कम शब्दो मे सजीव रूप-विधान और छोटे से छोटे वाक्य से अधिक तीव्र और मर्मस्पर्शी भाव-व्यजना करनी पडती है ।[२] रेखाचित्र की विशेषता विस्तार मे नही तीव्रता मे होती है ।[3] इस प्रकार प्रत्येक लेखक को सक्षिप्त रूप से ही वर्णन करना चाहिए। पद्मसिंह शर्मा ने अकबर के समस्त व्यक्तित्व को अत्यन्त सक्षिप्त रूप से खींचा है —

अकबर साहब मान-मर्यादा और पद-प्रतिष्ठा की दृष्टि से बहुत बडे आदमी थे। जज के ओहदे से रिटायर हुए थे। अंग्रेजी के विद्वान थे। अंग्रेजी सभ्यता के सब रग देख चुके थे पर रहन-सहन और आचार-व्यवहार मे पक्के स्वदेशी। अपनी सस्कृति के उपासक और प्राचीनता के प्रेमी थे। स्वभाव के सरल और मिलनसार थे ।"[४]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वही रेखाचित्र उच्चकोटि के माने जायेंगे जिनके विषय वर्णन मे स्पष्टवादिता, रोचकता, सक्षिप्तता एव स्वाभाविकता आदि गुण होते हैं।

चरित्रोद्घाटन—रेखाचित्र साहित्य का यह दूसरा महत्वपूर्ण तत्त्व है। रेखाचित्र मे लेखक का उद्देश्य न तो किसी अन्य व्यक्ति के चरित्र को चित्रित करना है और न उसका चरित्र विश्लेषण अपितु वह अपनी रेखाओ से उसके चरित्र का केवल उद्घाटन करता है। चरित्रोद्घाटन ही रेखाचित्रकार अपने रेखाचित्र मे करता है। जिस भी व्यक्ति का वह रेखाचित्र लिखता है उसके जीवन से सम्बन्धित छोटी-छोटी घटनाओ द्वारा वह उसके चरित्र पर प्रकाश डालता है। उन घटनाओ की रेखा वह ऐसे ढग से खीचता है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व के विषय मे स्वय ज्ञान हो जाता है। इसका कारण यह है कि रेखाचित्र मे प्रधानता सकेतो की होती है, खुलकर बात बहुत कम की जाती है। कौशल्या अश्क ने अपने पति अश्क के स्वभाव एव व्यक्तित्व के विषय मे एक छोटी-सी घटना द्वारा पाठको के सम्मुख रख दिया है—

"इनके इस रूखे स्वभाव का एक दिलचस्प प्रमाण मुझे इन्ही दिनों फिर मिला। दिल्ली ही की बात है मैंने इन्द्रप्रस्थ गर्ल्ज हाई स्कूल मे नौकरी कर ली थी। लडकियो की परीक्षाएँ हो चुकी थी और पेपरों का ढेर का ढेर आया

---

१. रेखाचित्र, ले० प्रेमनारायण टंडन, पृ० ११
२. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात, गोविन्द त्रिगुणायत
३. हिन्दी साहित्य कोष
४. पद्मपराग—ले० पद्मसिंह शर्मा, पृ० २६६

पडा था। उन्ही दिनो नौकर भाग गया। किसी प्रकार रात का खाना पका, कपडे-बर्तन आदि छोड मैं पेपर देखने लगी और रात के दो बजे तक देखती रही—उस दिन कुछ देर से उठी—खुशी से भागी-भागी अन्दर गई तो देखा रसोई घर मे बाप-बेटे बैठे-बैठे बर्तन मल रहे हैं और अश्कजी अपने लडके को बर्तन मलने की कला मे निपुण बना रहे हैं।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रभावोत्पादक घटनाओ के चित्रण से भी चरित्र का उद्घाटन रेखाचित्रकार करता है। कई बार ऐसा होता है कि रेखाचित्रकार जब किसी व्यक्ति के बाह्य व्यक्तित्व का परिचय पाठक को देता है तो वह भी उसके चरित्र के विषय मे सकेत होता है। गगाप्रसाद पाडेय ने प्रथम दर्शन से ही मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व के विषय मे जान लिया था। उसी के वर्णन से पाठक भी उनके चरित्र विषय मे जान सका है—

"प्रथम दर्शन से ही मैंने समझ लिया कि गुप्तजी ज्ञान प्रतिभा चरित्र और वय मे बडे होकर भी गुरु गम्भीर नही हो पाए। उनमे शारीरिक शिथिलता-जनित सयानापन नही आ सका, उल्टे बालको-जैसे विनोदी, सरल सहज और निश्छल एव निर्विकार होते जाते हैं—हास से स्निग्ध कर देते हैं, सारल्य से लुभा लेते हैं, ममत्व से मोह लेते हैं। सवा सोलह आने वे ऐसे हैं। डाक्टरी की उपाधि पाने पर भी वैसे हैं।"[2]

चरित्र का उद्घाटन रेखाचित्रकार कई बार अपनी चित्रात्मक शैली द्वारा भी प्रकट करता है। वह ऐसे सुन्दर ढग से कुछ ही पक्तियो मे व्यक्ति का चित्र खीचता है कि उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की एक झाँकी-सी प्रस्तुत हो जाती है।

चरित्रोद्घाटन मे रेखाचित्रकार केवल वर्णित व्यक्ति के चरित्र को वर्णित करने मे ही सतर्क नही रहता अपितु उसे अपने व्यक्तित्व का भी ध्यान रखना पडता है। इसमे आत्मतत्व और परतत्व का अद्भुत सामंजस्य होता है। महादेवी के रेखा-चित्रो की मर्मस्पर्शता जहाँ जगत की मुर्झाई कलियो तथा 'आँसू लडियो' के कारण है वहाँ महादेवी की गीली पलको मे उनकी भावुक करुणा को भी नही भूला जा सकता। महत्व दोनो का है—महादेवी की करुणा ही तथाकथित क्षुद्रो की निहित महानता को अनावृत कर सकी है। इसी अर्थ मे शब्दचित्र को वैयक्तिक कला कहा जा सकता है वैसे रेखाचित्र कोई लेखक का अपना नही होता, किसी और का ही होता है। इसलिए रेखाचित्र मे सामान्यत: आत्मतत्व तथा परतत्व का अद्भुत सामजस्य होता है – यह अन्तर्बाह्य चित्र होता है।[3]

---

१. दो धारा प्रथम सस्करण, १६४६, लेखक उपेन्द्रनाथ अश्क, कौशल्या अश्क, पृ॰ २५।

२. रेखाचित्र, ले॰ प्रेमनारायण टडन, पृ॰ ८८।

३. रेखाचित्र कला—श्री सत्यपाल ध्रुव, सम्मेलन पत्रिका कला अक, वि॰ २०१२।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लेखक अपने चरित्र नायक का चित्र स्पष्ट एव रमणीय ढग से वर्णन करता है। चरित्र उद्घाटन के लिए वह मनोवैज्ञानिकता को भी अपना सकता है। प्रत्येक रेखाचित्र मे लेखक के व्यक्तित्व की आभा भी होती है। एक प्रभावशाली घटना के वर्णन से सम्पूर्ण चरित्र का उद्घाटन करना रेखाचित्र साहित्य की अपनी विशेषता है।

देशकाल वातावरण—रेखाचित्र साहित्य का यही एक तत्त्व है जोकि इसे गद्य की अन्य विधाओ से पृथक करता है। रेखाचित्र का सम्बन्ध देश से होता है, काल तो संगति के लिए व्यग्य रहता है।[1] क्योकि वर्ण्य विषय किसी स्थान विशेष मे विद्यमान रहता है, उसके आस-पास की कुछ परिस्थितियाँ होती है। ये पार्श्ववती भाग गतिशील नही होते है और वर्ण्य विषय के साथ नित्य सपृक्त रहते हैं। उनके बिना पात्र या वस्तु का अस्तित्व गोचर नही हो सकता। रेखाचित्रकार उन स्थायी सम्बन्ध रखने वाले अशो का वर्णन करता है।[2] 'चान्सलर साहब की आमद' रेखाचित्र मे अमृतराय ने यूनिवर्सिटी कम्पाउण्ड का जो वर्णन किया है वह इसी बात का प्रमाण है कि रेखाचित्रकार का सम्बन्ध देश से ही है—

> "यूनिवर्सिटी कम्पाउण्ड मे सब जगह मोटरें ही मोटरे दिखाई दे रही थी। एक से एक नई बिल्कुल लेटेस्ट मॉडल की चमचम चमकती हुई लम्बी सुबुक मोटरें। सजे हुए फाटक के भीतर घुसते ही रोशनी की बहार थी, रग-बिरगे कुमकुमो की झालर रास्ते के दोनो तरफ दूर तक चली गई थी। पेड भी सब इन्ही रगीन कुमकुमो से जगमग थे—हाल का तो कुछ कहना ही नही। जो हाल खास इसी काम के लिए बनवाया गया है, विशिष्ट अतिथियो के स्वागत सत्कार के लिए उसकी शान का क्या कहना। झाड़-फूस अपनी जगह पर दुरुस्त ऐसे कि लखनऊ का इमामबाडा याद आ जाए।"[3]

चित्राकन के लिए पट चाहिए। वैसे ही शब्दचित्रकार का वर्ण्य भी किसी स्थान विशेष पर आधारित होता है। वस्तु या पात्र की गोचरता के लिए ही इसकी सार्थकता है। इससे अधिक की शब्दचित्र मे गुजायश नही। वस्तुत विषय अपने अस्तित्व के लिए कुछ नैसर्गिक पीठिका लिए होता है, शब्दचित्रकार का आधार वही है। हिन्दी साहित्य मे कई ऐसे रेखाचित्रकार हुए हैं जिन्होने स्थान विशेष के विषय मे रेखाचित्र लिखे हैं। इनमे श्री रामाज्ञा द्विवेदी समीर एव सन्तराम बी० ए० का नाम उल्लेखनीय है। 'कानपुर' रेखाचित्र मे श्री रामाज्ञा द्विवेदी समीर ने मेस्टन रोड का वर्णन अत्यन्त सुन्दर ढग से किया है—

> "मेस्टन रोड एक चौडी सडक है जिसके दोनो ओर सुसज्जित भवन और दुकानें हैं। जिधर दृष्टि डालिए एक ही प्रकार के भवन दिखाई देंगे।

---

१. सिद्धान्तालोचन, धर्मचन्द सत, पृ० १७१
२ वही
३. चान्सलर साहब की आमद (स्केच), अमृतराय, आजकल १९५२, जून, पृ० ५०

दुकानें अधिकतर जूतो और चमडे की अन्य चीजो की हैं किन्तु हर तरह की पहनने-ओढने की चीजें भी यहाँ प्राप्य हैं ···· क्लर्क बैठे-बैठे लेजर और जरनल लिखा करते हैं।"[१]

यही नही 'लाहौर' रेखाचित्र मे सतराम ने शीश महल का वर्णन भी रोचक-पूर्ण शैली मे किया है—

"यहाँ सफेद सीमेट मे भिन्न-भिन्न आठ वर्गों के छोटे कांच जडकर विचित्र चित्रकारी की गई है। इन कांचो के चमकने से एक बडा ही उज्जवल और शोभायुक्त दृश्य देख पडता है······शाही बुर्ज पर चढकर देखने से एक बहुत मनोहर दृश्य देख पडता है। नगर की भीड-भाड और चहल पहल तथा तंग और टेढी-मेढी गलियाँ उसके मन्दिरों और गिरजो के चमकते हुए श्रृंग और मसजिदो के उभरते हुए गुबद दर्शक के मन को मोह लेते हैं।"[२]

इधर हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे लेखक हुए है जिन्होने यात्रा सम्बन्धी रेखाचित्र लिखे हैं। ऐसे लेखकों मे सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन का नाम उल्लेखनीय है। इनके ये रेखाचित्र 'अरे यादावर रहेगा याद' मे सग्रहीत हैं। कुणालस्तूप तक्षशिला का वर्णन द्रष्टव्य है—

"कुणालस्तूप उसी स्थान पर बनाया गया बताया जाता है जहाँ बिमाता तिष्यरक्षिता के दुश्चक्र से कुणाल की आँखे फोड दी गई थी। देव की विडम्बना है कि इसी स्थान से समूची नगरी का और नीचे की उपत्य का और नदी का पूरा दृश्य दीखता है। कुणालस्तूप से लगभग पांच भील भल्लडस्तूप है, जिसके साथ मे विहार मे सौत्रान्तिक कुमारलब्ध ने वास किया था।"[३]

अतः विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्र मे देश से अभिप्राय नगर स्थान विशेष से है। इसमे लेखक उस पट को चित्रित करता है जिस पर रेखाकित करना चाहता है, काल तो इसमे व्यग्य रूप से ही रहता है।

जहाँ तक वातावरण का प्रश्न है वातावरणप्रधान रेखाचित्रों में भी मानव चरित्र के अन्तः रहस्यो की गुत्थियाँ ही सुलझाई जाती हैं। इसमें मनुष्य की किसी एक भावना को ही अनुरजित और अनुप्राणित करके अनेक घटनाओं द्वारा पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। सारा प्रयत्न उसी अनुभूति को उभारता है। उस भावना को निकाल देने पर उस रेखाचित्र मे कुछ भी शेष नहीं रहता है। बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'बन्धुवर नवीनजी' नामक रेखाचित्र मे कई घटनाओं द्वारा श्री नवीन की संकटग्रस्त व्यक्तियों की सहायता करने की मनोवृत्ति का उद्घाटन किया है। नवीन के ड्रायवर और स्वयं लेखक आपसी वार्तालाप द्वारा अनेक भूतकालिक घटनाओं

---

१. माधुरी, १९२५ ई०, पृ० ४९२
२. माधुरी
३. अरे यादावर रहेगा याद, ले० वात्स्यायन, पृ० ४७

का रोचक और मार्मिक वर्णन करते हुए उस भाव को पुष्ट करते चले जाते हैं।

फिर भी कुछ भी हो कही-कही साकेतिक रूप मे हमे तत्कालीन परिस्थितियों के विषय मे वर्णन मिल ही जाता है। आधुनिक समाज की त्रुटियो का दिग्दर्शन लेखक ने 'हिन्दू नारी' रेखाचित्र मे कैसी विद्वता से किया है—

> "फिर भी वह जीना चाहती है। उसके पास पैसा नहीं है उसका सम्मान नही है कोई उसकी बात पूछने वाला नही है फिर भी वह जीना चाहती है...... वह जीना चाहती है अपने उस हिन्दू समाज के लिए जो उसके भरण-पोषण का उसके सुख सन्तोष का, उसकी शाति और मर्यादा का रक्षक होते हुए भी उसकी रक्षा नही करना चाहता—सब-कुछ देखते-सुनते भी जो अपनी आँख मूँद लेने मे कानो मे तेल डालने मे अपने कर्तव्य की इतिश्री समझता है।"[1]

इसी प्रकार लोगो के 'हिन्दी लेखक' के प्रति क्या विचार हैं इनका स्पष्ट वर्णन भी इन्होने किया है—

> "पर इस व्यावसायिक जगत मे उनकी पूँजी का क्या मूल्य है ? उनके प्राणो के प्राण को, उनके जीवन के सार को, यह व्यावसायिक जगत किन दामो मे खरीदना चाहता है ? संक्षेप मे इसका उत्तर यही है कि भौतिक सघर्ष मे व्यस्त सभ्य मानव समाज शरीर के रक्त से लिखी हुई पक्तियो का मूल्य कौडियो मे आँकता है। ऐसी दशा मे उनकी आर्थिक स्थिति सर्वथा शोचनीय है तो आश्चर्य ही क्या है ?"[2]

इस प्रकार स्पष्ट है कि रेखाचित्रो मे देश का ही चित्रण प्रधान रूप से होता है। तत्कालीन परिस्थितियो का चित्रण हमे साकेतिक रूप से ही प्राप्त होता है।

उद्देश्य—इसमे लेखक की उस सामान्य या विशिष्ट जीवनदृष्टि का विवेचन होता है जो उसकी कृति मे कथावस्तु का विन्यास, पात्रो की योजना, वातावरण के प्रयोग आदि मे सर्वत्र निहित पाई जाती है। इसे लेखक का जीवन-दर्शन अथवा उसकी जीवनदृष्टि जीवन की व्याख्या या जीवन की आलोचना कह सकते हैं। उन कृतियो को छोडकर जिनकी रचना का उद्देश्य मन-बहलाव या मनोरजन मात्र होता है, सभी कलाकृतियो मे लेखक की कोई विशेष विचारधारा प्रकट या निहित रूप में देखी जा सकती है। बिना इसके साहित्यिक कृतित्व प्रयोजनहीन और व्यर्थ होता है।

जहाँ तक रेखाचित्र साहित्य का प्रश्न है इसके लेखक का उद्देश्य अन्य लेखको से पृथक् है। रेखाचित्रकार का प्रमुख लक्ष्य होता है [3] चरित्र विशेष के बाह्य और अभ्यान्तर दोनो ही के मार्मिक एव सवेदनशील तत्त्वो को उभारकर पाठको के सम्मुख प्रस्तुत कर देना।[4]

---

१. रेखाचित्र, ले० प्रेमनारायण टंडन, पृ० ६०
२. रेखाचित्र, प्रेमनारायण टडन, पृ० ६७
३. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात, ले० गोविन्द त्रिगुणायत, पृ० ४६२
४. सिद्धातालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त, पृ० १७८

रेखाचित्र की संक्षिप्त परिधि में जो कुछ वर्णित होता है उसमे जीवन की अभिव्यक्ति हो जाती है। यदि वर्ण्य विषय वस्तु या प्राणी है तो मानव जीवन के साथ उसके सम्बन्ध पर प्रकाश डालना अनिवार्य हो जाता है। रेखाचित्रों मे किसी ऐसी वस्तु का चित्र उपस्थित करना उपादेय नही जिसके साथ मानव ने अभी तक अपना किसी भी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित नही किया। यह सम्बन्ध व्यावहारिक भी हो सकता है, दार्शनिक या साहित्यिक तथा रागात्मक भी। इसी सम्बन्ध की प्रेरणा रेखाचित्र के मूल में निहित रहती है। यदि वर्ण्य विषय कोई व्यक्ति है तो उसका जीवन के साथ सीधा सम्बन्ध होने से रेखाचित्र में जीवन व्याख्या अनायास ही आ जाती है, लेखक अपनी अनुभूतियों, मानसिक प्रतिक्रियाओं, मान्यताओं, आदर्शों को उसी व्यक्ति के माध्यम से अभिव्यक्त करने लगता है।[1]

चित्रण की कुशलता कला का आदर्श है। जीवनोन्नायक तत्त्वों का उद्बोधन चित्रण का आदर्श रेखाचित्र कला की सार्थकता इसी मे है। शब्दचित्र-चित्रण में ऐसा प्रभाव अपेक्षित है कि पाठक के भाव विचार जागृत हुए बिना न रह सकें। यह प्रभावक उद्देश्य चित्र के भीतर से ही आए, बाह्यारोपित न हो—चित्रण की प्रत्यक्ष वास्तविकता से ही अभीप्सित आदर्श का बोध हो जाए। बेनीपुरी की 'माटी की मूरतें' ग्राम्य जीवन का यथार्थ चित्र है। यथातथ्य चित्रण होते हुए भी लेखक का अभीष्ट स्केच के अन्त पर ध्वनित हो उठता है और पाठक विचारोद्बोधन हुए बिना नहीं रहता। इन ग्रामीणों के रेखाचित्र लिखने के उद्देश्य को प्रकट करते हुए लिखते हैं —

> ये मूरतें न इनमे कोई खूबसूरती है, न रंगीनी ··उन्हें देखते ही मुँह मोड ले, नाक सिकोड ले, तो आचरज की कौन सी बात ? किन्तु इन कुरुप बदशक्ल मूरतो मे भी एक चीज़ है ··शायद उस ओर हमारा ध्यान नही गया। वह है जिन्दगी। ये माटी की बनी हैं, माटी पर धरी हैं, इसीलिए जिन्दगी के नजदीक है, जिन्दगी से शराबोर हैं। ये देखती हैं, सुनती हैं, खुश होती हैं, नाराज होती हैं, शाप देती हैं, आशीर्वाद देती है कला का काम जीवन को छिपाना नही। उसे उभाडना है। कला वह है जिसे पाकर जिन्दगी निखर उठे, चमक उठे।[2]

संवेदनानुभूति बढाने मे महादेवी के रेखाचित्र सर्वाधिक सफल कहे जा सकते हैं। जिस उदास उन्मन लघुता ने उनके संवेदन को दिशा तथा भावना को गति दी, उसी के कुशल चित्रण से वे पाठकों को भी प्रभावित करने मे समर्थ हुई हैं। अवश्य ही महादेवी ने यत्र-तत्र विषयान्तर करके भी अपनी प्रतिक्रियाओं के दृष्टिकोण को व्यक्त किया है—और ऐसा करने से रेखाचित्रकार मानो निबन्ध तत्व का उपयोग करता है फिर भी पाठक को मूल संवेदनानुभूति पात्रों के कुशल करुण चित्रण द्वारा ही होती है। संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में आत्मतत्व के सहज सन्निवेश के कारण प्रसंगानुसार व्यक्त हुई लेखक की मानसिक हार्दिक प्रतिक्रियाएँ अनाधिकार चेष्टा

---

१. सिद्धांतालोचन, ले० धर्मचन्द सन्त, पृ० १७८
२. माटी की मूरतें, ले० रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० ३

नही लगती।

मानवेतर रेखाचित्र भी किसी न किसी सत्प्रेरणा को लेकर लिखे जाते हैं। मानवेतर होते हुए भी वे मानवहिताय होते है। प्रकाशचन्द गुप्त के लिखे हुए रेखाचित्र प्रायः इसी प्रकार के है। इन्होने अल्मोडा का बाजार, शेरशाह की सडक आदि रेखाचित्र लिखे। इन्होने इन रेखाचित्रो के लिखने के उद्देश्य को लिखा है—

"मेरे पहले सग्रह 'रेखाचित्र' की देहली रेडियो पर आलोचना करते हुए अज्ञेय ने कहा था कि मैंने मानवता का चित्रण न करके खडहरो का चित्रण किया था। यह सच था लेकिन मानवता से प्रेरणा पाकर ही मैंने अपने विचार और भाव ऐतिहासिक भग्नावशेषो पर आरोपित किए थे।

बाद मे मैंने अल्मोडा का बाजार आदि स्केच लिखे जिनमे साम्राज्यवादी शोषण के प्रति विद्रोह मेरी प्रेरणा का मुख्य आधार था।"[1]

इसी प्रकार देवेन्द्र सत्यार्थी ने भी अपने उद्देश्य को प्रकट किया है—

"मधुमक्खी को फूलो पर बैठते और मधुसचय करते देखकर मुझे यह हमेशा ध्यान आता है कि एक लेखक भी अपनी कला के लिए इसी प्रकार मधु जुटा सकता है। मेरा यही दृष्टिकोण मुझे समय-समय पर अनेक व्यक्तियो के निकट ले गया जो अपनी साधना मे लगे हुए थे, जिन्होने किसी प्रकार मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। मैं उनसे मिला, उनकी बाते सुनी, उनका काम देखा, व्यक्तित्व की रेखाएँ उभरी। मैंने हमेशा कुछ न कुछ प्राप्त किया, जहाँ भी मुझे जो चीज मिली उसका लेखा-जोखा इन रेखाचित्रो मे मिलेगा। कला के हस्ताक्षर मुझे सदैव प्रिय रहे हैं क्योकि मैं कला को किसी कटघरे मे बन्द चीज नही समझता। मेरे लिए तो कला एक जीवित वस्तु रही है और मेरे साथ सास लेती है। मेरे साथ कदम मिलाकर चलती है।"[2]

इस प्रकार स्पष्ट है कि रेखाचित्र एक साहित्यिक रूप है अतएव लेखक का व्यक्तित्व, उसका जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण प्रत्यक्ष परोक्ष वृत्ति से इस रूप मे अनिवार्यत' अर्न्तानिहित एव समाविष्ट हो जाता है।

भाषा शैली—शैली अनुभूत विषयवस्तु का सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते हैं। इस पर असामान्य अधिकार के अभाव मे रेखाचित्रकार की सफलता सम्भव नही क्योकि सामान्य रूप से कुछ लिखने की बात यहाँ नही। रेखाचित्र शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जिनका होना इसमे आवश्यक है।

सर्वप्रथम रेखाचित्र शैली मे चित्रात्मकता का होना आवश्यक है। स्केच चित्रकला का अंग है। इसमे चित्रकार कुछ इनी-गिनी रेखाओं द्वारा किसी वस्तु, व्यक्ति

---

१. आधुनिक हिन्दी साहित्य : एक दृष्टि, ले० प्रकाशचन्द गुप्त

२. कला के हस्ताक्षर—देवेन्द्र सत्यार्थी

या दृश्य को अंकित कर देता है। रेखाचित्र की कला बहुत कुछ फोटोग्राफी की कला की भाँति है। जिस प्रकार कैमरामैन अपने कैमरे द्वारा किसी वस्तु, स्थान अथवा व्यक्ति का वास्तविक चित्र ले लेता है उसी प्रकार रेखाचित्रकार भी विश्व की किसी भी वस्तु का—चेतन तथा अचेतन का चित्र अपने शब्दो द्वारा बना लेता है जिसमे उसी प्रकार की वास्तविकता रहती है। 'अफसर' रेखाचित्र मे प्रेमनारायण टडन ने अफसर की जो रेखा खीची है उसमे उनकी चित्रात्मक शैली की विद्वता प्रदर्शनीय है —

"साढे पाँच फीट के लगभग ऊँचे कद का आदमी जिसके बदन पर नये कट का बढिया सूट दूसरो का तो नही पर स्वय उसे बहुत खिलता जान पडता है। पैर मे जूते और गले की टाई दोनो सूट के रग से मैच करने वाले हैं। कोट की ऊपरी जेब मे फाउटेन पैन से दबा एक रेशमी रुमाल आप रखते हैं और दूसरा सफेद पतलून की बायी जेब मे जो प्रति पाँच मिट बाद कभी हाथ कभी मुँह और कभी सिर के बाल पोछने के लिए निकाला जाता है। बायें हाथ की कलाई पर सोने की चैन से बँधी घडी कोट से कुछ इस तरह बाहर निकली रहती है कि मिलने वाले उसके डिजाइन से ही बडे रोब मे आ जाते हैं और समय पूछने का उनमे प्राय' साहस नहीं रहता।"[1]

लेखक की शैली ऐसी होनी चाहिए जिसका प्रभाव पाठक पर स्थायी रूप से रहे। इसलिए प्रभावोत्पादकता का होना आवश्यक है। प्रभावपूर्ण शैली होने से ही विषय मे रोचकता आती है। हिन्दी साहित्य मे जितने भी रेखाचित्रकार हुए हैं उन सभी ने अपनी शैली मे इस गुण को प्रमुख रूप से रक्खा है। बेनीपुरी के सभी रेखा-चित्रो मे यह विशेषता पायी जाती है। ऐसे रेखाचित्रो को पढते हुए पाठक का मन ऊबता नही। बलदेव सिंह के चरित्र के चित्रण मे यह विशेषता प्रमुख रूप से देखने में आती है—

"टूटे हुए तारे की तरह एक दिन हमने अचानक अपने बीच मे आकर उसे धम्म से गिरता हुआ पाया ' ज्योतिर्मय प्रकाशपुज दीप्तिपूर्ण। और उसी तारे की तरह एक क्षण प्रकाश दिखला, हमे चकाचौंध मे डाल, वह हमेशा के लिए चलता बना। जैसे वह आया हमे आश्चर्य हुआ, जिस दिन वह गया हम स्तमित रह गये।"[2]

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता शैली मे लाघवता का होना है। लेखक को सीमित परिधि मे शब्दो से रेखाओ का काम लेकर कोण को सम्पूर्ण बनाना होता है जो विशेष लाघव सक्षिप्तता स्फूर्ति का काम है। बनारसीदास चतुर्वेदी के रेखाचित्रों में इस विशेषता को प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। श्रीराम शर्मा का समस्त व्यक्तित्व इन्होंने कुछ ही पक्तियों मे कह डाला है जोकि शैली की इसी विशेषता को अकित करता है—

---

१. रेखाचित्र, ले० प्रेमनारायण टंडन, पृ ४६

२. माटी की मूरतें, रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० १

"कद मझोला, शरीर सुगठित, चेहरे पर मर्दानगी, आँखो मे लालिमा, बातचीत मे जनपदीय शब्दो का प्रयोग, चाल मे दृढता और स्वभाव मे अक्खडपन, श्रीराम जी के इस रूप मे एक पौरुषमय अदा है, निराला आकर्षण है जो उनके व्यक्तित्व को विशेषता प्रदान करता है।"[1]

आत्मीयता का शैली मे होना आवश्यक है। शैली मे आत्मीयता से अभिप्राय है वर्ण्य विषय पर लेखक के व्यक्तित्व की छाप पडना। इस विशेषता से शैली मे जान पडती है और इसको गद्य की अन्य विधाओ से पृथक करती है।

इस प्रकार रेखाचित्र शैली मे चित्रात्मकता, प्रभावोत्पादकता, रोचकता, लाघवता एव आत्मीयता आदि गुणो का होना आवश्यक है। इन गुणो से शैली परिपक्व हो जाती है।

रेखाचित्र लिखने की कई शैलियाँ हैं जैसा कि रेखाचित्र साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है। हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होंने निबन्धात्मक शैली मे अपने रेखाचित्र लिखे हैं। ऐसे लेखको मे बनारसीदास चतुर्वेदी एव रामवृक्ष बेनीपुरी अग्रणीय हैं। सस्मरणात्मक शैली मे भी लिखे हुए रेखाचित्र प्राप्त होते है। महादेवी जी के रेखाचित्र इसी शैली मे लिखे गए हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे लेखक भी हैं जिन्होंने प्रतीकात्मक शैली मे लिखा है। बेनीपुरी लिखित 'गेहूँ और गुलाब' सग्रह मे सगृहीत रेखाचित्र इसी शैली के हैं।

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है। यदि भाषा, शुद्ध परिमार्जित एव भावानुकूल होगी तभी वह पाठक को प्रभावित कर सकती है। चित्र की प्रकृति के अनुरूप ग्रामीण शब्दो और मुहावरो का भी आश्रय लिया जाता है। रेखाचित्रकार की तूलिका मे स्थानीय रग भरा जाना आवश्यक है। बेनीपुरी ने 'माटी की मूरतें' पुस्तक मे ग्राम्य जीवन के स्केचो मे ग्रामीण शब्दो का विशेष प्रयोग किया है। कोमलकान्त पदावली लिखने वाली महादेवी ने भी रेखाचित्रो मे उनका स्वाभाविक सगत आश्रय लिया है।

रेखाचित्रो की भाषा पात्रानुकूल होना चाहिए। इसी से रेखाचित्रो मे स्वाभाविकता आती है। महादेवी की भक्तिन की भाषा इसका प्रमाण है—

"हम मर जाव तो इनकर का कोई, कउन बनाई खियाई। कउन इन पर कर ई अजायबघर देखी सुनी।"[2]

चुभते चित्रोपम विशेषण, साम्यमूलक अलकार, लक्षण-व्यजना आदि कवित्वपूर्ण प्रसाधनो से चित्र को सजीव किया जाता है। महादेवी की कविता तथा गद्य की उपमाओ मे बडा अन्तर आ गया है। सामयिक युग के पात्रो के लिए उपमाएँ भी दैनन्दिन के जीवन से ली गई हैं यथा—

---

१. रेखाचित्र, ले० बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० १८७

१. स्मृति की रेखाएँ—महादेवी, पृ० ७२

"मेरी किसी पुस्तक प्रकाशित होने पर उसके मुख पर प्रसन्नता की छाया वैसे ही उद्‌भासित हो उठती है जैसे स्विच दबाने से बल्ब में छिपा आलोक।"[1]

रेखाचित्र मे यथार्थ के लिए ध्वन्यात्मक शब्दो से ध्वनि चित्र रगो का उल्लेख कर वर्ण चित्र अकित किए जाते हैं। मिलते-जुलते शब्दो से प्रभाववर्द्धन किया जाता है। एक ही वाक्य को एक छोटे-से चित्र मे अनेक बार दुहरा कर स्थिति के प्रभाव को मानस खड पर मुद्रित करने का सकल्प होता है। रेखाचित्र मे विराम चिह्न मात्र स्पष्टीकरण के लिए नही आते, वे भी बोलने लगते है। हास्य-व्यग्य शैली को मनोरजक तथा तीखा बनाते हैं।

रेखाचित्र मे शब्द-विन्यास तथा वाक्य-विन्यास विशिष्टता होती है। एक शब्द का एक वाक्य तथा अपने मे चित्र हो सकता है। एक पंक्ति का ही प्रघटन हो सकता है। पूर्ण वाक्य के स्थान पर वाक्य-खड से ही काम चला लिया जाता है और 'है' 'था' आदि सहकारी क्रियाओ की बेजा मुदाखलत भी बरदाश्त नही की जाती। इन्हीं साधनो से तो शब्द-रेखाएँ बनती हैं। बेनीपुरी के छोटे-छोटे वाक्य सहकारी क्रियाओ के बिना कार्य करते हैं—

"सिर के मुंडे हुए छोटे-छोटे बालो के रंग से चेहरे का रग प्रतियोगिता करता हुआ। बालो ने चारो ओर से जिस पर मुदाखलत बेजा कर रखी है वह छोटा-सा ललाट चिपटा-सा। ललाट की कालिमा मे पतली भौओं की रेखा सोई सोई-सी। छोटी-छोटी आँखे—जिनका पीला रग राजेन्द्र बाबू की आँखों की याद दिलाता है।"[2]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रेखाचित्रकार की भाषा विषय एवं भावानुकूल होनी चाहिए। शब्द-चयन भी विषयानुसार होना चाहिए।

विकास

रेखाचित्र साहित्य गद्य की नवीनतम विधा है। गद्य की इस विधा का विकास अधिकतर हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ द्वारा ही हुआ है। सन् १६२४ से पहले हमें रेखाचित्र प्राप्त नहीं होते इसलिए इसके पश्चात् ही इनका आविर्भाव हुआ है। 'विशाल भारत', 'माधुरी', 'हंस' एव 'सरस्वती' जैसी प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं ने इसके विकास मे विशेष रूप से सहयोग दिया है। इस प्रकार प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओ एवं पुस्तकों के आधार पर मैंने यह विकास लिखा है।

पद्मसिंह शर्मा

हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम रेखाचित्र लिखने का श्रेय आचार्य पद्मसिंह शर्मा

---

१. गेहूँ और गुलाब का, 'नखुनिया', ले० बेनीपुरी, पृ० २८
२. स्मृति की रेखाएँ—महादेवी, पृ० १५

की है। इनके रेखाचित्र 'पद्मपराग' मे सग्रहीत हैं जिसका प्रकाशन काल सन् १९२४ है। इस पुस्तक मे पद्मसिंह शर्मा द्वारा लिखे हुए नौ रेखाचित्र हैं पर सबसे बढ़िया महाकवि अकबर विषयक रेखाचित्र है। यह रेखाचित्र महाकवि अकबर विषयक चरित्र चित्रण का सर्वोत्तम दृष्टान्त माना जा सकता है। एक स्थान पर यह उनकी कदामत-पसन्दी (अपनी प्राचीन सस्कृति मे आस्था) के विषय मे लिखते है—

> "मुझे उनकी कदामतपसन्दी बहुत पसन्द थी। इस पर अक्सर बातें होती थी और बहुत मजे की बाते होती थी। अब याद आती है तो दिल थामकर रह जाता हूँ। एक बार की मुलाकात मे मुझसे पूछा—'तुमने अपने लडके को क्या तालीम दिलाई है?' मैंने कहा—'सस्कृत पढाई है।' सुनकर बहुत ही खुश हुए और उठकर मेरी पीठ ठोकी।"[1]

इनके रेखाचित्रो मे यद्यपि कला का वह रूप नही दिखाई पडता जो आज के रेखाचित्रों में मिलता है किन्तु यह कहने मे कोई सकोच नही है कि उन्होने जो शिलान्यास किया था आज के कलाकारो ने उसी पर रेखाचित्र का भव्य भवन खडा करने का प्रयास किया है।

इनके पश्चात् सन् १९२५ मे हमे कुछ ऐसे रेखाचित्र प्राप्त होते हैं जिनमे नगरों का चित्रण है। सतराम बी० ए० द्वारा लिखा हुआ[2] 'लाहौर' नामक रेखाचित्र एव श्री रामाज्ञा द्विवेदी समीर के[3] हिन्दू विश्वविद्यालय एव[4] 'कानपुर' रेखाचित्र प्राप्त होते है। सतराम बी० ए० ने 'लाहौर' रेखाचित्र मे लाहौर मे देखने योग्य प्रसिद्ध स्थानो का वर्णन अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग से किया है। इसके पश्चात् श्री रामाज्ञा द्विवेदीजी ने कानपुर और हिन्दू विश्वविद्यालय का जीता-जागता चित्र प्रस्तुत किया है। इनके पढने से लेखक की परिपक्व शैली का आभास पाठक को हो जाता है।

सन् १९२६ मे शीतल सहाय द्वारा लिखित[5] 'द्वारिकापुरी' रेखाचित्र प्राप्त होता है जिसमे लेखक ने द्वारिकापुरी की महत्ता को प्रकट करते हुए दर्शनीय स्थानो का वर्णन किया है।

सन् १९३० मे ईश्वरचन्द्र शर्मा द्वारा लिखा हुआ[6] 'काश्मीर मे एक मास' एवं मोहनलाल महतो वियोगी के 'धुंधले चित्र' नाम से रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। चार बच्चो के महाप्रयाण पर उन्होने जो कुछ लिखा था वही हृदयवेधकता का वर्णन इसमे है। कही-कही भावुकता में इतने लीन हो गए हैं—

---

१. पद्मपराग, प्रथम सस्करण, ले० पद्मसिंह शर्मा, पृ० २७८
२. माधुरी
३. माधुरी
४. माधुरी
५. चाँद
६. चाँद

"मुझे इस मायामय दुनिया मे आने की क्या आवश्यकता थी यह मैं आज तक नही समझ सका हूँ। केवल शाप, केवल आह, केवल जलन, केवल टीस। उफ ! कितने गिनाऊँ देव । हाँ इस दुनियाँ ने मुझे जी भर कर कोसा, पूरी शक्ति लगाकर सताया। तुम्हे भी मेरे कारण कष्ट उठाना पडा ।"[1]

इस प्रकार ११२ पृष्ठो की पुस्तक मे लेखक के हृदयपटल पर अकित वेदना ही दृष्टिगोचर होती है।

सन् १६३१ मे श्री प्रेमनारायण अग्रवाल द्वारा लिखित[2] 'मैथिलीशरण गुप्त' एव श्री रामनाथ सुमन द्वारा[3] 'सरोजनी नायडू' रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। इन रेखाचित्रो मे लेखको ने इनके समस्त जीवन की एक झाँकी-सी प्रस्तुत की है।

श्रीराम शर्मा

आचार्य पद्मसिह शर्मा के बाद हिन्दी साहित्य के प्रमुख रेखाचित्रकारो में श्रीराम शर्मा का नाम आता है। इन्होंने उस समय रेखाचित्र विधा को अपनाने की चेष्टा की थी जबकि हिन्दी साहित्य के अधिकाश लेखक इस विधा के नाम से भी परिचित न थे। सन् १६३४ मे इनके लिखे हुए[4] एक सडक का दृश्य एव थर्डक्लास[5] नामक रेखाचित्र प्राप्त होते हैं। वैसे इनके रेखाचित्र 'बोलती प्रतिमा' नाम से भी प्रकाशित हुए हैं। इनकी बोलती प्रतिमा की प्रतिमाएँ देहाती हैं। सीधे-सादे और आडम्बर से शून्य जमीदार और साहूकार के अत्याचारो से पीडित जो जमीन खोदते हैं और फसल काटते हैं धान उपजाकर भूखो मरते हैं दूसरो को पानी पिलाने वाले वे प्यासे हैं, दूसरों को जीवित रखने वाले वे बिना दवा पानी के यूँ ही मर जाते हैं।

बोलती प्रतिमा का चन्दा चमार और तोता विक्रमसिह संकटप्रसाद और रत्ला की अम्मा पुस्तक से अधिक हमारे अडोस-पडोस में बसने वाले प्राणी हैं। पुस्तक हमें उन्हें अधिक निकट से देखने की एक दृष्टि प्रदान करती है। उन पर होने वाले अत्याचार से लेखक हमे अवगत कराता है और उनके उद्धरण की प्रेरणा देता है।

मैले-कुचैले कपडो वाला और हजारों मवेशियो को जीवनदान देने वाला हकीम पीताम्बर पाठको पर एक अमिट छाप छोड जाता है। कहाँ आज के बिना फीस लिए एक कदम न चलने वाले ज्ञान के भडार डाक्टर जो स्वय आश्वस्त नहीं हैं कि वे रोगी को चगा ही कर देंगे और कहाँ काली रातो और बरसते पानी मे यहाँ और वहाँ दौडता-भागता मवेशियो की चिकित्सा करता हकीम पीताम्बर। 'हरनामदास' हमारे सामने अलिफ लैला का एक अध्याय ही खोल देता है।

इस प्रकार हम देखते है कि श्रीराम शर्मा हिन्दी मे वास्तविकतावादी लेखक हैं।

---

१. धुंधले चित्र—मोहनलाल महतो वियोगी, पृ० ३
२. माधुरी
३. माधुरी
४. विशाल भारत
५. विशाल भारत

अपने अडोस-पडोस मे जो कुछ देखते है उसको ज्यो का त्यो कागज पर उतारकर रख देते हैं। इनकी एक और पुस्तक 'वे जीते कैसे हैं ?' १९५७ मे प्रकाशित हुई है। इसमे भी कुछ रेखाचित्रो का सग्रह है। इस पुस्तक मे सग्रहीत सभी रेखाचित्र भावपूर्ण है।

सन् १९३५ मे डॉक्टर बाबूराम सक्सेना द्वारा लिखित[1] 'वर्धा मे तीन दिन' नामक रेखाचित्र प्राप्त होता हैं जिसमे लेखक ने वर्धा के मुख्य-मुख्य स्थानो का वर्णन किया है। सत्याश्रम, कन्याश्रम एव बजाज का बगला का विशेष वर्णन है।

सन् १९३८ मे 'हस' के रेखाचित्र अक ने रेखाचित्र साहित्य के विकास मे विशेष सहयोग दिया है। इस अक मे हमे अनेक हिन्दी के अच्छे लेखको द्वारा लिखे हुए रेखा-चित्र प्राप्त होते हैं। रामनाथ सुमन द्वारा लिखे हुए दो रेखाचित्र 'विष्णु पराडकर · हिन्दी पत्रकारिता के प्रकाशस्तम्भ' एव 'सम्पूर्णानद एक बहुमुख व्यक्तित्व', बनारसीदास चतुर्वेदी एव श्रीराम शर्मा द्वारा लिखा हुआ 'पालीवाल जी', 'जैनेन्द्र द्वारा लिखा हुआ 'मैथिलीशरण गुप्त' एव प्रकाशचन्द्र गुप्त द्वारा लिखा हुआ 'बच्चन' नामक रेखाचित्र प्रकाशित हुए। इन सभी रेखाचित्रो मे लेखको की कलाकुशलता का पता चलता है। प्रत्येक लेखक ने बडी समझदारी से व्यक्तित्व को खीचा है। प्रत्येक रेखाचित्र पर लेखक के व्यक्तित्व का प्रभाव है। गुप्तजी तो इस कला मे है ही सिद्धहस्त। बच्चन का वस्तु ही सुन्दर परिचय पाठक को करवाते है जिससे उनकी शैली की परिपक्वता दृष्टिगोचर होती है—

> "बच्चन के रूखे बिखरे बाल, कृशगात किसी घोर तप साधन मे सुखाया शरीर, मस्ती अलस भाव भरी आँखें कुछ चीनियों जैसे सूझे से पलक उनके मुख का पूरा भाव उनकी सम्पूण आकृति मानो 'मधुशाला का साकार रूप हो।"[2]

सन् १९३९ मे लोचनप्रसाद पाडेय द्वारा लिखित[3] श्रीपुर के दर्शन एव भुवनेश्वर प्रसाद द्वारा लिखित[4] दो स्केच प्रकाशित हुए। भुवनेश्वर प्रसाद के रेखा-चित्रो मे एक डॉक्टर और विलास का चित्रण है।

प्रकाशचन्द्र गुप्त

हिन्दी के प्रसिद्ध रेखाचित्रकारो मे प्रकाशचन्द्र गुप्त का नाम भी उल्लेखनीय है। इनकी 'रेखाचित्र' पुस्तक सन् १९४० मे एव 'पुरानी स्मृतियाँ' सन् १९४७ मे प्रकाशित हुई। सबसे पहले इन्होने देहली और आगरे मे पुराने खडहरो के रेखाचित्र बनाए। 'रूपाम' मे 'देहली दरवाजा' शीर्षक स्केच सबसे पहले प्रकाशित हुआ था।

---

१. सुधा
२. हस, पृ० ५८२
३. विशाल भारत
४. हस

इनका सबसे महत्वपूर्ण प्रयास 'शेरशाह की सड़क' था जिसमें इन्होने भारतीय इतिहास पर एक विहगम दृष्टि डालने की कोशिश की। फिर इन्होने वैज्ञानिक दृष्टि प्राप्त कर श्रौद्योगिक क्रान्ति के विकास को समझा श्रौर 'राजा की मण्डी', 'लेटरबक्स के प्रति', 'पेट्रोलपम्प' श्रादि स्केच लिखे। 'रेखाचित्र' सग्रह मे अधिकतर खडहरो का ही चित्रण है। मानवता से प्रेरणा पाकर ही इन्होने अपने विचार श्रौर भाव ऐतिहासिक भग्नावशेषों पर श्रारोपित किए थे। बाद मे इन्होने 'अलमोडा का बाजार', रानीखेत की रात', 'चीड का वन' श्रादि रेखाचित्र लिखे जिनमें प्रकृति-चित्रण का प्रयास है।

मानवता को रेखाचित्रो मे व्यक्त करने का सबसे पहला प्रयास 'पुरानी स्मृतियाँ' शीर्षकमाला है। इन स्केचो मे उन व्यक्तियो के चित्र बनाए है जिनके बीच इनका शैशव बीता था।

सन् १९४० मे ही सद्गुरुशरण अवस्थी का "पल्हड : एक स्केच"[1] प्राप्त होता है। 'पल्हड' जिसे कि असाधारण परिस्थिति के कारण इस नाम पुकारते थे, लेखक ने उसका शारीरिक वर्णन सुन्दर किया है—

> "पल्हडका शरीर न छोटा था श्रौर न लम्बा। रग गेहुँश्रा था श्रँधियारी को पकडे हुए। पतली पिंडुरी श्रौर दुबली जघा वाले थे। ऊपर का माम अधिक मासल था। एक विचित्र विषमता सर्वत्र दिखलाई देती थी। कहीं-कहीं मासपेशियाँ बिल्कुल लटक आई थी। कई दिशाश्रो की श्रोर शरीर कुछ मसका हुश्रा-सा दिखाई देता था।"[2]

सन् १९४३ में 'श्री अल्फ्रेड नार्वल मिचल आई० सी० एस०'[3] रेखाचित्र प० सुन्दरलाल त्रिपाठी का प्राप्त होता है। इस रेखाचित्र मे त्रिपाठीजी ने इनके समस्त व्यक्तित्व का चित्र जीती-जागती भाषा में खीचा है। शब्द-चयन मे लेखक की कला-कुशलता दृष्टिगोचर होती है। शैली भी विषयानुकूल है।

रामवृक्ष बेनीपुरी

प्रतीकात्मक एवं रूपकात्मक रेखाचित्र लिखने वालो मे बेनीपुरी का नाम अग्रगण्य है। सन् १९४८ मे 'माटी की मूरतें', 'लालतारा', 'गेहूँ और गुलाब' नामक पुस्तकें प्राप्त होती हैं। ग्रामीण जीवन का समस्त चित्रण इनकी पुस्तक 'माटी की मूरतें' में प्राप्त होता है। इस पुस्तक का प्रकाशन काल सन् १९४८ है। इसमे सबसे पहले बुधिया से हमारा परिचय होता है जिसकी तीन झाँकियाँ हमें मिलती हैं। नन्ही-सी-छोकरी बुधिया, सलोनी-सी, रूपगर्विता, युवती बुधिया और अत मे अधेड़

---

१. माधुरी।
२ माधुरी, पृ० १०५
३, माधुरी, सितम्बर

बुधिया जो कई बच्चो की माँ बन चुकी है, इसी क्रिया मे जिसकी देह बरबाद हो चुकी है।

बलदेव सिंह सामतशाही युग के अवशेष हैं, दर्प की मात्रा उनमे कम नही, मगर अपनी आन पर वे मिटने को सदा तैयार रहते है, बात के धनी । मगर भी एक व्यक्ति नही 'टाइप' है । सरजू भैया का परिचय देते हुए स्वयं उनके बारे मे कुछ कहना जरूरी नही, इतना कहना काफी है कि दुनिया बहुत खराब है । 'भौजी' मे गाँव की गृहस्थी का चित्र है ।

'गेहूँ और गुलाब' पुस्तक बेनीपुरीजी की श्रेष्ठ रेखाचित्र सम्बन्धी पुस्तक है । इसमे बेनीपुरीजी की निबन्धावली भावनाप्रधान जान पडती है । 'छब्बीस साल बाद' और 'बचपन' शीर्षक रेखाचित्र डायरी के पन्ने से जान पडते है । 'पुरुष और परमेश्वर' शीर्षक रेखाचित्र मे लेखक ने एक अति महत्वपूर्ण दार्शनिक समस्या पर कलम उठाई है । 'नीव की ईंटें' और 'निहारिन' नि सदेह बडे ही सफल और मन को छूने वाले रेखाचित्र हैं।

सब चित्र बहुत स्वाभाविक हैं बनावटी नही । इन पुस्तको मे बेनीपुरीजी की शैली मे भी अधिक गाम्भीर्य मिलता है । भावनाओ को उभाड़ने के लिए भारी-भरकम, अत्यधिक चटकीली मटकीली-भडकीली-शब्दावली और ढेरो उद्गार चिह्नो का प्रयोग अपेक्षाकृत बहुत कम हुआ है जिसके फलस्वरूप पुस्तको मे हल्कापन नही आने पाया ।

सन् १६४६ मे 'दो धारा' पुस्तक कौशल्या अश्क एवं उपेन्द्रनाथ अश्क द्वारा लिखी हुई प्राप्त होती है । इसमे दोनो द्वारा लिखे हुए रेखाचित्र आरम्भ मे ही जिनका विषय अश्कजो एव कौशल्या अश्क हैं प्रकाशित हुए । इन दोनो रेखाचित्रो मे एक-दूसरे के व्यक्तित्व का चित्रण है ।

देवेन्द्र सत्यार्थी

रेखाचित्रकारो मे देवेन्द्र सत्यार्थी का नाम उल्लेखनीय है । इन्होने बडे ही सजीव रेखाचित्र लिखे हैं। इनके रेखाचित्रो के संग्रह 'एक युग एक प्रतीक' १६८४, 'रेखाएँ बोल उठी', १६४६ एव 'कला के हस्ताक्षर' सन् १६५४ नाम से प्राप्त होते हैं । 'कला के हस्ताक्षर' पुस्तक मे बारह रेखाचित्र हैं। 'प्रेमचन्द- एक चित्र', 'अज्ञेय से मिलिए', होमवती' रेखाचित्रो को उच्चकोटि की श्रेणी मे रक्खा जा सकता है। 'एक युग एक प्रतीक' मे कई निबन्धात्मक रेखाचित्र हैं । एक से अधिक रेखाचित्रों मे बापू की चर्चा की गई है । 'रेखाएँ बोल उठी' मे 'जन्मभूमि' नामक रेखाचित्र उच्च-कोटि का है, उसकी टीस अब भी हृदय को कुरेद देती है । इनके रेखाचित्रो के विषय मे स्पष्टवादिता, स्वाभाविकता, चित्रात्मकता एवं आत्मीयता आदि विशेषताएँ दृष्टि-गोचर होती हैं । भाव और विषयानुकूल शैली है । आरम्भ ही अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग

से करते हैं। 'प्रेमचन्द एक चित्र' का आरम्भ कितना सुन्दर एवं रोचकपूर्ण ढंग से किया है—

> "मूँछे घनी और बड़ी-बड़ी, सिर पर गाधी टोपी-सी दोनों तरफ और गर्दन पर निकले हुए बेतरतीब से बाल आँखों मे अनुभव की चमक—इन तीनो चीजो का विशेष प्रभाव पड़ा, जब अक्टूबर १९३१ मे लखनऊ में प्रेमचन्द से भेट हुई।"[१]

१९५० सन् मे 'वाह कैलाशजी'[२] रेखाचित्र राजेन्द्रलाल हाडा द्वारा लिखा हुआ प्राप्त होता है। इस रेखाचित्र मे राजेन्द्रलाल हाडा ने अपने मित्र कैलाश की एक रेखा पाठको के सम्मुख प्रस्तुत की है।

महादेवी वर्मा

संस्मरणात्मक रेखाचित्र लिखने वालो मे महादेवीजी का नाम अग्रगण्य है। इनके समस्त रेखाचित्रो का संग्रह 'स्मृति की रेखाएँ' (१९४३ ई०), 'अतीत के चल-चित्र' (१९४१ ई०) एवं 'शृंखला की कड़ियाँ' (१९५० ई०) नाम से प्रकाशित है। 'स्मृति की रेखाएँ' पुस्तक के नायक ख्यातनामा साहित्यिक और कलाकार, राजनीतिज्ञ और समाजसेवी नहीं हैं। उनके नायक हमारे गर्वस्फीत समाज से एक प्रकार से निर्वासित निम्न वर्ग के लोग किसान और मजूर हैं। वे सामान्य जन हैं। वे ही वास्तविक भारतीय जनता हैं। उनके चरित्र उदात्त हैं। उनमे मनुष्यता, परदुखकातरता, सौहार्द, करुणा, स्नेह और परस्पर सहयोग की भावना होती है। पुस्तक मे सात रेखाचित्र हैं इन सातो मे दो सबसे प्रभावशाली हैं—बिबिया धोबिन और चीनी कपड़ा बेचने वाला। गुगिया और ठाकुरी बाबा के चरित्र भी बहुत मार्मिक हैं।

'अतीत के चलचित्र' मे भी मेहनतकश और मध्यमवर्ग के लोगों के चित्र हैं। पहला चित्र रामा का है। नौकर भला, स्नेहपूर्ण, ममत्वशील बच्चो के लिए न जाने वह कितने रूप धरता है। दूसरा चित्र उन्नीसवर्षीया भाभी का है। विधवा है पर वैधव्य का भार ढोने के लिए अभी उसके कंधे बहुत कमजोर हैं। हिन्दू सामाजिक रूढ़ियों और कुसंस्कारों के पूर्ण प्रतिफलन का एक चित्र। वह एक फूल है जिसे कुम्हलाने पर मजबूर किया जा रहा है। इस प्रकार महादेवी के सभी पात्र अधिक यथार्थ हैं। इसके अलावा 'अतीत के चलचित्र' मे एक ऐसी ताजगी है जो पाठक में भी ताजगी भर देती है, आशा का संचार करती है और जीवन के साथ उसके सम्बन्ध को गहरा बनाती है। "महादेवी की गद्य शैली बहुत चुभती हुई है। उसमे पच्चीकारी तो नहीं है लेकिन एक धीर प्रवाह है जो लेख की गम्भीरता को बढ़ाता है मगर उसे बोझिल नहीं बनाता। जब वे अपने पात्रो की रूपरेखा या उनके आस-पास के वातावरण का चित्र खींचने लगती हैं तब उनकी शैली का रंग खुलता है। तब उसमे एक तरह की कठोरता भी

१. कला के हस्ताक्षर, ले० देवेन्द्र सत्यार्थी, पृ० ९
२. आजकल, अक्टूबर

आ जाती है वर्ना अक्सर उनके गद्य के दामन मे कविता की गोट-सी लगी जान पडती है।"[1]

सन् १९५१ मे राजकुमार द्वारा लिखा हुआ 'एक परिवार'[2] एव गगाप्रसाद पाडेय द्वारा लिखित 'मैथिलीशरणगुप्त'[3] रेखाचित्र प्राप्त होते है। रामकुमार ने लिगवी मे रहने वाले एक परिवार का चित्र खीचा है। परिवार मे रहने वाले कप्तान राथलू, याकब आदि का सुन्दर वणन है। उधर पाडयजी ने मैथिलीशरण गुप्तजी के अतरग और बाह्य व्यक्तित्व को अपने रेखाचित्र मे स्पष्ट किया है। एक स्थान पर वह लिखते है—

"किसी की उपेक्षा, अवज्ञा करने मे, कडी बात करने मे, डीग हाकने मे, किसी की निन्दा करने मे गुप्तजी एकदम सबसे पीछे है। यह काम उनके बूते का नही इसी कारण वे किसी प्रकार का पदवीधर बनने मे बहुत घबडाते है। यह महादेवीजी की ही महिमा है जिसने इन्हे साहित्यकार ससद का सभापति बना रक्खा है।"[4]

सन् १९५८ मे हर्षनाथ द्वारा लिखे हुए दो रेखाचित्र 'मन्दिर का माली' एव 'रोटी और धरम' प्राप्त होते है।

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

अयोध्याप्रसाद गोयलीय द्वारा लिखे हुए रेखाचित्रो का सग्रह 'गहरे पानी पैठ' नामक पुस्तक मे है। गोयलीय ने अपने रेखाचित्रो मे मानवता के अनेक सजीव चित्र अकित किए हैं। देहली के एक धनी सर्राफ के निर्धन सम्बन्धी जिन्होने अपनी इज्जत बचाने के लिए गाठ की गिन्नी सर्राफ की गिन्नी के ढेर मे मिला दी थी, साधु स्वभाव निरक्षर बिहारी लाल जो जीवन के विष को इसलिए हस-हस कर पीता रहा है कि दूसरो को सदा आदर और प्रेम का अमृत पिला सके, दो भाई जो एक दूसरे की रक्षा के लिए फासी के तख्ते को चूमने को तैयार हो गए, सुन्दरनाम की वह बुढिया हलाल खोरी जिसने लेखक के जेल से छूटने पर दामन फैला कर दुआ दी और जिसने गद्गद् होकर कहा—'मुबारक आज का दिन जो अपने जुध्या के हाथ से मुझे यह नेहना नसीब हुआ' और वह मुशी ऊधमसिंह, जिन्होने २००रु० की असह्य रकम का 'चुपचाप घाटा इसलिए उठाया कि किसी निरपराध मनुष्य पर उनके कारण कही कुछ अत्याचार न हो जाय' यह सब ऐसे चित्र है जिन्हे पढकर दिल भर जाता है और मानवता का इन मूक गरीब स्वाभिमानी प्रतिनिधियो के प्रति मस्तक आदर से झुक

१. नया समीक्षा, ले० अमृतराय, पृ० १३८
२. आजकल, अप्रैल
३. आजकल, अगस्त
४. यही, पृ० २१
५. हस

जाता है। ये सभी रेखाचित्र इनकी कला-कुशलता के प्रतीक हैं। इस पुस्तक का प्रकाशन काल अप्रैल, १९५१ है।

सत्यवती मल्लिक द्वारा लिखे हुए रेखाचित्रो का सग्रह भी 'अमिट रेखाए' नाम से १९५१ सन् मे ही प्रकाशित हुआ। सत्यवती ने अपने इन रेखाचित्रो मे या तो चरित्रो के प्रति अतिरजित दृष्टि अपना ली है या उनमे इतनी भावुकता भर दी है कि वह नाटकीय हो गए हैं रंगविहीन वस्तुपरकता उतनी सफलता नही प्राप्त कर सकी है।[1]

सन् १९५२ में 'राजपथ'[2] एव 'भाराभाई'[3] स्केच चद्रप्रकाश वर्मा एव गयाराय द्वारा लिखित प्राप्त होते हैं। चन्द्रप्रकाश वर्मा ने राजपथ का सुन्दर रेखाचित्र लिखा है। उसका एक उद्धरण उल्लेखनीय है :—

> "और तुम पुजारिणी मदिर जा रही हो। तुम्हें ज्ञात है कैसा अज्ञात आकर्षण तुमने इस राजपथ को दे दिया है। तुम्हारा निर्माल्य तुम्हारे हृदय सौंदर्य की प्रतिच्छवि है। तुम्हारी गति में विश्वास है। तुम्हारे सकेतो में सध्या की सी सौम्यता है। तुम्हारी सघन श्याम केश राशि से सद्यः स्नान के उज्जवल जल बिन्दु चू रहे हैं और तुम्हारे अगो की आर्द्रता में अपूर्व समर्पण की सरसता झलक उठी है।"[4]

इसी प्रकार गयाराय ने भाराभाई का जिसका नाम खमारी सिंह है चित्रात्मक शैली मे सुन्दर चित्र खीचा है। इसी सन् १९५२ मे ही श्री वृन्दावनलाल वर्मा द्वारा लिखा हुआ एक रेखाचित्र 'नया वर्ष · एक भावचित्र'[5] नाम से प्रकाशित हुआ। यह रेखाचित्र वर्माजी की कला-कुशलता का प्रतीक है।

बनारसीदास चतुर्वेदी

बनारसीदास चतुर्वेदी की गणना हिन्दी के प्रसिद्ध रेखाचित्रकारो में की जाती है। इनके रेखाचित्रो का सग्रह 'रेखाचित्र' नाम से १९५२ सन् मे प्रकाशित हुआ। इसमे ४० रेखाचित्रों का सग्रह है। बनारसीदासजी ने जीवन को निकट से देखा है है इसलिए उनके रेखाचित्र सजीव हैं, वे चलते-फिरते दिखाई देते हैं और बोलते-से सुनाई पडते है। रेखचित्रो के क्षे मे इनका महत्वपूर्ण कार्य है। इनके रेखाचित्रों का आरम्भ बहुत ही रोचक एव मनोरजक होता है। श्रीराम शर्मा का परिचय पाठक से करवाते हैं

---

१ हस
२. विशाल भारत, अक्टूबर,
३ विशाल भारत, जून
४. विशाल भारन, अक्टूबर, पृ० २२०
५. सम्मेलन पत्रिका

"आइये आपका परिचय अपने एक भाई और हिन्दी के सुलेखक से करवा दूं। इन्हे आप जानते हैं ? प्रताप सम्पादक स्वर्गीय गणेशशकरजी विद्यार्थी ने एक टोपधारी और बन्दूक लिये हुए मज्जन की ओर इशारा करते हुए पूछा। उस वक्त उनकी बातचीत मगर के शिकार के बारे मे चल रही थी। गणेशजी ने उनका नाम बतलाया श्रीराम शर्मा—मैंने समझा कि ये यूरोपियन प्रवृत्ति के कोई हिन्दुस्तानी साहब है और इनकी तथा हमारी मनोवृत्ति मे एक ऐसी खाई होगी।[1]

इन्होने उन्ही व्यक्तियो के विषय मे रेखाचित्र लिखे हैं जो कि श्रद्धा और प्रेम के पात्र है। इन्होने लिखा है—

> "सच बात तो यह है कि हमने अपने इन रेखाचित्रो मे अपने प्रेम-प्रपचो का ही चित्रण किया है। बकौल एमर्सन मनुष्य अपनी आत्मा के विस्तृत रूप की ही प्रशसा करता है।
>
> नाप तौलकर बावन तोले पाव रत्ती प्रशसा करने का हमे अभ्यास नही और दिल खोलकर दाद देने मे विश्वास करते है।"[2]

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन

वात्स्यायन के यात्रा सम्बन्धी रेखाचित्रो का सग्रह 'अरे यायावर रहेगा याद' पुस्तक मे जुलाई १९५३ मे प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक के सात भाग है 'परशुराम से तरखम', 'किरणो की खोज मे', 'देवताओ के अचल मे', 'मौत की घाटी मे', 'एलरा', 'माझुली' एवं 'बहता पानी निर्मल'। खैबर की सडक का वर्णन एक स्थान पर करते हैं—

> "खैबर की सडक कोटो और दुर्गों से पटी हुई है। जमरूद के बाद फोर्ट माड, शगई और अली मस्जिद के किले मुख्य हैं फिर जिनतारा पार करके लडी पहुँचते हैं जो बडी छावनी है। शगई का किला कच्ची और पक्की सड़क के बीच पडता है।"[3]

इस प्रकार अनेक प्रमुख स्थानो का वर्णन सुन्दर, सजीव एवं साधारण भाषा मे लेखक ने किया है। यात्रा सम्बन्धी ये रेखाचित्र पाठक को अवश्य ही प्रभावित करते हैं।

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर

सस्मरणात्मक रेखाचित्र लिखने वालो मे कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर का नाम भी उल्लेखनीय है। इनके रेखाचित्रो का सग्रह 'जिन्दगी मुसकराई', 'भूले हुए चेहरे'

---

१. रेखाचित्र, ले० बनारसीदास चतुर्वेदी, पृ० १८६
२. वही, पृ० १४
३ अरे यायावर रहेगा याद, ले० सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन, पृ० ७१

नामक संग्रह मे संगृहीत है। इनका प्रकाशन काल १९५४ सन् है। इन्होंने अपने रेखाचित्रो के विषय मे लिखा है—

"इन रचनाओं के सम्बन्ध मे क्या कहूँ सिवाय इसके कि यह मेरा संचित रक्त है जो आज पाठको को भेंट कर रहा हूँ। अपने फक्कड जीवन में इसके सिवाय मैंने और कुछ भी तो संचय नही किया।"[1]

इनके रेखाचित्रो मे कलागत आत्मपरकता होते हुए भी एक ऐसी तटस्थता बनी रहती है कि उनमे चित्रणीय सस्मरणीय ही प्रमुख हुआ है। स्वय लेखक ने उन लोगों के माध्यम से अपने व्यक्तित्व को स्फीत करना चाहा है। उनकी शैली की आत्मीयता एव सहजता पाठक के लिए प्रीतिकर एव हृदयग्राहिणी होती है। 'मैं और मेरा घर' मे इनकी शैली की सहजता द्रष्टव्य है—

"मैं जब लिखते-लिखते खिडकी से बाहर दाहिने हाथ की तरफ झाँकता हूँ तो एक ऊँचा मकान दिखाई देता है। कई मजिलें हैं जिनमें छोटे-बडे कमरे है, बरामदे है, स्नानगृह हैं, शौचालय है। इन कमरों मे पुरुष हैं, स्त्रियाँ हैं, बालक है, हमेशा यहाँ रौनक रहती है। यह एक होटल है।"[2]

सभी रेखाचित्रो मे इनकी शैली की सहजता पाई जाती है।

सन् १९५६ मे नर्मदाप्रसाद त्रिपाठी द्वारा लिखा हुआ 'निराला : एक महा-मानव' रेखाचित्र प्राप्त होता है। जिसमे त्रिपाठीजी ने निराला के व्यक्तित्व की एक झाकी-सी चित्रित की है। सन् १९५६ मे ही शलभ द्वारा लिखा हुआ एक रेखाचित्र 'सरस्वती तेरी छाया मे' प्राप्त होता है।

१९५७ सन् मे सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने 'मास्टर श्यामलाल गुप्ता'[3] रेखाचित्र लिखा। इसमे सक्सेना ने मास्टरजी के जीवन की कुछ प्रमुख-प्रमुख विशेषताओ को रेखाकित किया है। हर्षदेव मालवीय[4] का 'रामकच्छा' रेखाचित्र भी इसी सन् में प्रकाशित हुआ।

१९५८ सन् मे हमे अमृतराय द्वारा लिखे हुए दो स्केच प्राप्त होते हैं। इनके उन रेखाचित्रो का नाम[5] 'चान्सलर की आमद' एव 'गिल्ली मिट्टी' है।[6]

प्रेमनारायण टंडन

प्रेमनारायण टडन के रेखाचित्रों का सग्रह 'रेखाचित्र' नाम से २३ मई, १९५९ सन् मे प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक मे सात रेखाचित्र हैं। इनमे सर्वप्रथम 'कूकी' का

---

१. 'जिन्दगी मुसकराई', ले० कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, पृ० १६
२. वही, पृ० २२
३. कल्पना
४. आजकल
५. आजकल, जून अंक,
६. आजकल, अक्तूबर।

रेखाचित्र है। कूकी उनकी प्रेस मे काम करने वाला व्यक्ति है जिसका पहला नाम 'भगवती' है। इसके चरित्र मे कुछ ऐसी खूबियाँ थी कि लेखक उनसे बहुत प्रभावित हुआ। इसमे लेखक की उत्कृष्ट भाषा एव शैली का दिग्दर्शन होता है। भावानुकूल भाषा का प्रयोग करने मे यह सिद्धहस्त हैं। 'रोगी' रेखाचित्र मे रोगी का एक हृदय-द्रावक चित्र खीचा है।

इसी प्रकार अन्य रेखाचित्रो मे भी इनकी कला-कुशलता का हमे आभास होता है। स्वाभाविकता, यथार्थता, मनोरंजकता एवं चित्रात्मकता आदि गुण इनकी भाषा शैली मे पाए जाते हैं जो कि एक उत्कृष्ट रेखाचित्रकार मे होने चाहिए।

सन् १९५९ में ही भगवतशरण उपाध्याय द्वारा लिखित 'ठूँठा आम' पुस्तक प्रकाशित हुई जिसमे स्केच एव रिपोर्ताजो का सग्रह है। इसके पश्चात् हमे मार्कण्डेय वाजपेयी के रेखाचित्र प्राप्त होते है। इनके रेखाचित्रो का सग्रह 'रेखाचित्र' नाम से ही यूनिवर्सल पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। इन रेखाचित्रो के विषय नित्य प्रति के साधारण जीवन के विषयो से सम्बन्धित हैं। 'मेढक का कोप', 'वैद्यजी के चूहे', 'जबर्दस्त मक्खियाँ', 'पजाब मेल', जैसे रेखाचित्र हैं। विषयानुकूल ही लेखक ने भाषा का प्रयोग किया है।

'अर्थपिशाच' नाम से 'शील' के स्केच और कहानी-सग्रह प्राप्त होता है। इसमे लेखक[1] की आँखोदेखी घटनाओ की अनुभूति है कला के पारखी इसे कुछ भी कहे पर तिल-तिल मिटने वाले मानव के रक्त और अस्थिपेशियो के शिलान्यास पर खडी बलिदानो की यह दीवार आगे आने वाली पीढियो को चौंकाकर सचेत तो करती रहेगी। इसमे 'टेलीफोन', 'मेरी पचिया', 'मोटे देवता', 'आम की गुठलियाँ' आदि रेखाचित्र हैं। इसके प्रकाशन काल के विषय मे कुछ ज्ञात नही है लेकिन जन साहित्य, इलाहाबाद से इसका प्रकाशन हुआ है। एक पुस्तक मे कुछ मिटे हुए से अको मे इसका प्रकाशन काल १९४६ सन् लिखा है।

रामकुमार द्वारा लिखा हुआ एक रेखाचित्र 'मील का पत्थर' प्रतीक द्वैमासिक साहित्यिक सकलन मे प्राप्त होता है। इसमे रामकुमार के नवीन के पहाडी प्रदेश मे जाने की भावना, वहाँ से प्रभावित विचारो का एव मस्तिष्क मे उठने वाले सभी विचारो का एक रेखाचित्र खीचा है।

सन् १९६० मे 'पत्थर का लैम्प पोस्ट' शरद देवडा द्वारा लिखित पुस्तक प्रकाशित हुई। इसमे शरद देवडा द्वारा लिखे हुए 'प्रो० करुणायतन' एव 'रसिकजी' दो रेखाचित्रो का सग्रह है।

सन् १९६२ मे डा० उदयनारायण तिवारी द्वारा लिखा हुआ 'श्री राहुल साकृत्यायन' एक रेखाचित्र प्राप्त होता है। इसमे तिवारीजी ने राहुल के समस्त व्यक्तित्व का प्रभावपूर्ण एव सजीव भाषा शैली मे वर्णन किया है।

---

१. 'अर्थपिशाच', ले० शील, पृ० ५

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी रेखाचित्र साहित्य प्रगति की ओर अग्रसर है। इसकी आशातीत प्रगति हुई है। अभी भी अनेक रेखाचित्र बिखरे हुए पड़े हैं, जितने भी प्रकाशित हुए हैं उन्ही के आधार पर मैंने यह विकास लिखा है। हिन्दी साहित्य मे रेखाचित्र के विकास से स्पष्ट है कि इनकी उन्नति मे हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ का विशेष सहयोग रहा है। इसका भविष्य उज्ज्वल है।

विभाजन

पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित एव प्रकाशित पुस्तकों के आधार पर रेखाचित्र साहित्य का विभाजन निम्न ढग से हो सकता है—

वर्ण्य विषय के अनुसार

हिन्दी रेखाचित्र साहित्य के विकास से स्पष्ट है कि जहाँ हमे हिन्दी साहित्य के लेखकों के जीवन सम्बन्धी रेखाचित्र प्राप्त होते हैं वहाँ कुछ लेखको ने राजनैतिक पुरुषों को भी अपने रेखाचित्रों का विषय बनाया है। कुछ लेखको ने अपनी विभिन्न यात्राओ को भी रेखाचित्र के माध्यम से व्यक्त किया है। कुछ रेखाचित्रकारों ने ऐसे व्यक्तियों के रेखाचित्र खीचे हैं जो है तो साधारण व्यक्ति पर मानवीय गुणो के कारण असाधारण है। इनके अतिरिक्त कई लेखको ने जड या चेतन जगत् सम्बन्धी रेखाचित्र भी लिखे हैं। इस प्रकार सस्मरणों के रेखाचित्र भी अनेक प्रकार के हो सकते है।

साहित्यिक लेखको के रेखाचित्र—हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे रेखाचित्रकार हुए हैं जिनके रेखाचित्रो का विषय हिन्दी के लेखक ही हैं। इस प्रकार के रेखाचित्र कलाकार की आत्मानुभूति से अन्य रेखाचित्रो की अपेक्षा कम अनुरजित करते हैं। इस प्रकार के रेखाचित्र विनिर्मित करते समय कलाकार अपने वर्णन द्वारा विषय सम्बन्धी अतीत की उन मूल और प्रभावपूर्ण रेखाओ को उभारने की चेष्टा करता है जो उसके चित्र को सजीव रूप प्रदान करती है। ऐसे रेखाचित्रों मे लेखक व्यक्ति के चरित्रोद्घाटन के विषय मे बहुत सावधान रहता है। हिन्दी साहित्य मे श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, देवेन्द्र सत्यार्थी एव रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्र इस प्रकार के है। देवेन्द्र सत्यार्थी के इन रेखाचित्रो का सग्रह 'कला के हस्ताक्षर' पुस्तक मे है। यह अपने रेखाचित्रो का आरम्भ बहुत ही रोचक ढग से करते है—

> "आने वाली पीढियाँ सोचा करेंगी कि कैसा था साहित्यकार 'अज्ञेय' जिसने 'शेखर एक जीवनी' लिखकर नाम कमाया और यह भी सोचा करेंगी कि कैसे थे वे लोग जो उसके निकटवर्ती थे। अभी तो यह उपन्यास अधूरा है। प्रथम भाग सन् १६४१ मे प्रकाशित हुआ था, दूसरा भाग ६४४ मे। आज हर कोई पूछता है 'शेखर का शेषाश कब तक प्रकाशित हो जायेगा' उसके उत्तर मे 'अज्ञेय' मुसकरा देता है और कहता है 'प्रतीक्षा कीजिए'। प्रतीक्षा करने कराने की भी तो एक कला है, जिसे 'अज्ञेय' ने समझ लिया है।"[1]

---

१. कला के हस्ताक्षर, ले० देवेन्द्र सत्यार्थी

सिर पर ऊँचे पल्ले की गाधी टोपी जो उनकी ऊँचाई को और भी बढा रही थी। मोटी खादी का खुरदरा कुर्ता, जिसके बटन भी ठीक से नही लगे थे। खादी की ही धोती थी जो मुश्किल से घुटनो के नीचे पहुँच रही थी।"[१]

मानवीय गुणो से सम्पन्न साधारण पुरुषो के रेखाचित्र—इन रेखाचित्रो मे न तो किसी साहित्यिक व्यक्ति के जीवन का आभास होता है और न किसी राजनैतिक के। इनमे तो लेखक ऐसे व्यक्तियो के जीवन का चरित्र पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करता है जोकि न तो जनता मे प्रसिद्ध है न समाज मे लेकिन लेखक के सम्पर्क मे आने से उस साधारण पुरुष मे मानवता एव मानवीय गुण उसे लक्षित होते है उन्ही से प्रभावित होकर रेखाचित्र लिखे है। ऐसे रेखाचित्र लिखने वालो मे महादेवी वर्मा, प्रेमनारायण टडन एव बेनीपुरी का नाम अग्रगण्य है। महादेवीजी ने भी लछमा, रधिया आदि अनेक व्यक्तियो के जीवन को रेखाचित्रो के रूप मे अकित किया है। इसके पश्चात् बेनीपुरी की 'माटी की मूरतें' पुस्तक मे जितने भी रेखाचित्र है वे सभी इसी प्रकार के है। मगर के जीवन मे कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनसे लेखक खूब प्रभावित हुआ है इसीलिए वह उसका रेखाचित्र लिखे बिना न रह सका—

"हट्टा कट्टा शरीर। कमर मे भगवा। कधे पर हल। हाथ मे पैना। आगे-आगे बैल का जोडा। अपनी आवाज के हुहास से ही बैलो को भगाता, मेरे खेत की ओर सुबह-सुबह जाता—जब मे मुझे होश है, मैंने मगर को इसी रूप मे देखा है,—मगर का स्वाभिमान—गरीबी मे भी स्वाभिमान? लेकिन मगर की खूबी यह भी रही है। मगर ने किसी की बात बर्दाश्त नही की, शायद अपने से बडा किसी को, मन से माना भी नही।"[२]

मानवेतर जड़ या चेतन जगत् सम्बन्धी—जब रेखाचित्रकार अपना वर्ण्य विषय मानवेतर सृष्टि से ग्रहण करता है और किसी जड वस्तु का अथवा चेतन पशु पक्षी का रेखाचित्र प्रस्तुत करता है तब रेखाचित्र मानवेतर जगत् सम्बन्धी कहलाता है। इस कोटि के रेखाचित्र का निर्माण करते समय लेखक को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह उस सम्बन्ध पर भी दृष्टिपात करे जो मानव ने उस वर्णित वस्तु के प्रति अपने भावजगत मे स्थापित कर लिया है। अभिप्राय यह है कि यदि वह पेड, उद्यान, झरने आदि का रेखाचित्र उपस्थित करता है तो उसे यह भी स्पष्ट करना चाहिए कि यह वस्तुएँ मानव को किस रूप मे भाती है। इनमे मानव के अन्तर्जगत् मे क्या प्रतिक्रिया होती है। हिन्दी साहित्य मे ऐसे रेखाचित्रो के लेखक अयोध्याप्रसाद गोयलीय एव मार्कण्डेय वाजपेयी है।

मार्कण्डेय वाजपेयी के अपने 'रेखाचित्र' सग्रह मे 'मेढक का कोप', 'वैद्यजी के चूहे', 'बम्बैया कबूतरखाने' एव 'जबर्दस्त मक्खियाँ' आदि रेखाचित्रो के विषय है।

---

१. मील के पत्थर, ले० रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० ४३
२. माटी की मूरतें, ले० रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० २३

'जबर्दस्त मक्खियाँ' रेखाचित्र का आरम्भ ही इस ढग का है कि पाठक पढे बिना नही रह सकता। ऐसे रेखाचित्रों मे मनोरजन के अधिक साधन होते हैं—

"भगवान ने मक्खियाँ कुछ सोचकर ही बनाई होगी। अकसर भगवान की बातें मामूली आदमियो के दिमागो से परे हुआ करती है। आखिर मे कम्बख्त मक्खियाँ उन्होने क्यो बनाई। अगर मशा महज़ यह था कि आदमियो को परेशान करके उन्हे यह याद दिलाई जाये कि आदमी से बडा एक खुदा भी है तो उस काम के लिए क्या खटमल, मच्छर, पिस्सू, मकडी और तमाम और तरह के कीडे-मकौडे काफी न थे क्या।"[1]

प्रकाशचन्द्र गुप्त ने प्राचीन खण्डहरो को ही अपने रेखाचित्रो का विषय बनाया है। 'देहली दरवाजा', 'शेरशाह की सडके' आदि रेखाचित्र लिखे। इनके अतिरिक्त 'पेट्रोलपम्प', 'लेटरबक्स के प्रति' आदि इनके रेखाचित्र प्राप्त होते है। इनके ये सभी रेखाचित्र मानवता से प्रेरणा पाकर लिखे गए थे। जिसमे इन्होने अपने विचार और भाव ऐतिहासिक भग्नावशेषो पर आरोपित किए थे।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी रेखाचित्रकारो ने जहाँ मानव सम्बन्धी रेखाचित्र लिखे है वहाँ जड एव चेतन जगत सम्बन्धी लिखने मे भी इन्होने कोई कमी नही छोडी है।

शैली के आधार पर

प्रत्येक लेखक का अपनी विषयवस्तु को सजाने का अपना-अपना ढग होता है। कोई निबन्धात्मक शैली मे लिखता है तो कोई सस्मरणात्मक रूप मे रेखाचित्र लिखते है। कई लेखको ने प्रतीकात्मक एव कथात्मक शैली मे अपने रेखाचित्र लिखे है। इस प्रकार शैली के अनुसार भी रेखाचित्र कई प्रकार के हो सकते हैं।

कथात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्र—कथात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्रो मे रेखाकार के वर्ण्य पात्रो की जीवन घटनाओ का आलेखन ही प्रमुख होता है। वहाँ उसकी चित्रण शैली वस्तुपरक अधिक होती है आत्मपरक कम। इस शैली का उपयोग अधिकतर ऐतिहासिक एव पौराणिक व्यक्तियो वस्तुओ और घटनाओ आदि के रेखाचित्र प्रस्तुत करते समय किया जाता है। घटना-प्रधान रेखाचित्र जिनको 'रिपोर्ताज़' कहा जाता है उनकी भी यही शैली है। कम-से-कम शब्दो मे घटना या स्थान का मार्मिक और सही-सही चित्रण होना चाहिए। इस शैली मे लेखक अपने विषय को स्पष्ट करने के लिए वर्णन और कथोपकथन दोनो का आश्रय लेता है। इस प्रकार के रेखाचित्र प्रकाशचन्द्र गुप्त, रामवृक्ष बेनीपुरी एव बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखे हैं। बेनीपुरी के सभी रेखाचित्र इसी शैली मे प्राय लिखे गए हैं। एक ही उद्धरण से इनकी शैली की विशेषता स्पष्ट हो जाती है—

---

१. रेखाचित्र, ले० मार्कण्डेय वाजपेयी, पृ० ४

"एकाएक बडे जोरो का हो-हल्ला हुआ। सभी लोग एक ओर दौडे जा रहे हैं और वहाँ लाठियो की खटाखट जारी है। यह खटाखट खेल की नही हैं, कई सिरो से खून के फव्वारे छूट रहे हैं, और यह बीच मे कौन है, बलदेवसिंह। पुराने हँसमुख रसीले बलदेवसिंह नही। बलदेवसिंह, साक्षात् भीम बने हुए।"[1]

सस्मरणात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्र—बहुत से रेखाचित्र सम्मरणात्मक शैली मे लिखे जाते हैं जिन्हे सस्मरणात्मक रेखाचित्र कहते हैं। इनमे किसी वस्तु, घटना या व्यक्ति का स्मृतिमूलक वर्णन किया जाता है। इस प्रकार के रेखाचित्र भी अधिकतर वस्तु वर्णनात्मक ही होते है। किन्तु उनका चित्रण भी कलाकार तटस्थ भाव से नही कर सकता। वे उसकी अनुभूति और आस्थाओ से प्रभावित हुए बिना नही रहते। सस्मरणात्मक रेखाचित्रो के पात्र और उनकी जीवन गाथाओ का सम्बन्ध स्वय लेखक से होने के कारण उनकी आत्मानुभूति का स्वर भी साथ-साथ मुखरित हो उठता है। वह अपने पात्रो तथा उनकी सुख-दु ख की घटनाओ के साथ आत्मीयता का अनुभव करता चलता है। उनके प्रति उसका प्रेम, करुणा, घृणा आदि सहज मे ही अभिव्यक्त होते चलते हैं। इसी से ऐसे रेखाचित्रो मे पाठक को रमाए रखने की अद्भुत शक्ति होती है और पाठक भी लेखक की प्रतिक्रियाओ के साथ भाव-तादात्म्य स्थापित करता चलता है।

घटना या वस्तुपरक सस्मरणात्मक रेखाचित्र रिपोर्ताज या सूचनिका से अधिक साम्य रखते हैं। रिपोर्ताज और इस कोटि के रेखाचित्रो मे केवल यही अन्तर होता है कि रिपोर्ताज मे लेखक का दृष्टिकोण ऐतिहासिक अधिक होता है साहित्यिक कम और घटनापरक सस्मरणात्मक रेखाचित्रकार इतिहासकार कम होता है चित्रकार अधिक। हिन्दी साहित्य मे महादेवी के रेखाचित्र इसी प्रकार के हैं। इनकी 'स्मृति की रेखाएँ' एवं 'अतीत के चलचित्र' पुस्तकें इसी प्रकार की हैं। 'अतीत के चलचित्र' पुस्तक मे इन्होने दस सस्मरणात्मक रेखाचित्र लिखे हैं। प्रत्येक रेखाचित्र मे उनकी कला-कुशलता का पाठक को आभास हो जाता है। आरम्भ मे 'रामा' का रेखाचित्र है, आरम्भ से ही पाठक इनकी शैली से प्रभावित हो जाता है—

"रामा हमारे यहाँ कब आया यह न मैं बता सकती हूँ और न मेरे भाई-बहन। बचपन मे जिस प्रकार हम बाबूजी की विचित्रता भरी मेज से परिचित थे जिसके नीचे दोपहर के सन्नाटे मे हमारे खिलौनो की सृष्टि बसती थी, अपने लोहे के स्प्रिंगदार विशाल पलग को जानते थे, जिस पर सोकर हम कच्छ मत्स्यावतार जैसे लगते थे और माँ के शख घडियाल से घिरे ठाकुरजी को पहचानते थे जिनका भाग अपने मुँह मे अन्तर्धान कर लेने के प्रयत्न मे हम आधी आँखें मीचकर बगुले के मनोयोग से घटी की टन-टन गिनते थे, उसी प्रकार नाटे, काले और गठे शरीर

---

१. रेखाचित्र, ले० रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० ७

वाले रामा के बडे नखो से लम्बी शिखा तक हमारा सनातन परिचय था ।"[1]

यही नही कही-कही महादेवीजी इतनी भावुक हो गई हैं कि पाठक के रोगटे खडे हो जाते हैं—

"गहरे काही रग की पतली ऊनी चादर मे समा न सकने के कारण वर्षा की नन्ही-नन्ही बूंदे ऊपर ही जडी-सी थी जो बिजली के आलोक मे हीरे के चूर मे झिलमिलाने लगी। चादर उतारकर जब वह मेरी दृष्टि का अनुसरण करती हुई सामने की कुर्सी पर बैठ गई तब मेरी कुछ विस्मय और कुछ जिज्ञासा भरी दृष्टि उस मुख की रेखा-रेखा मे न जाने किस शब्दहीन उत्तर की खोज मे भटकने लगीं। आँखो के आस-पास लटकती हुई दो तीन छोटी-छोटी लटो के छोरो से हिलती हुई पानी की बूंदे पारे-सी जान पडती थी। सफेद साडी के कुछ धबीले बैंजनी किनारे से घिरा मुख सुडौल गोरा, पर बहुत मुरझाया हुआ-सा लगा। नाक के अग्रभाग की लाली हाल ही मे पोछे गए आँसुओ की सूचना दे रही थी, उनकी मर्मस्पर्शी व्यथा और भी गहरी हो उठी थी।"[2]

प्रतीकात्मक शैली मे लिखे हुए रेखाचित्र—हिन्दी साहित्य मे कुछ रेखाचित्र-कारो ने प्रतीकात्मक शैली मे अपने रेखाचित्र लिखे हैं। इस शैली मे लेखक किन्ही घटनाओ एव वस्तुओ के चित्रण के माध्यम से कोई लाक्षणिक अर्थ या सदेश व्यजित करना चाहता है। प्रतीकात्मक और रूपकात्मक रेखाचित्र लिखने वालो मे रामवृक्ष बेनीपुरी का नाम अग्रगण्य है। इनकी पुस्तक 'गेहूँ और गुलाब' मे इसी शैली का प्रयोग है। यहाँ गेहूँ उपयोगितावाद का तथा गुलाब आनन्दवाद का प्रीतक वन कर आया है जिनके रेखाचित्र यह निर्देशित करते हैं कि जीवन मे दोनो की आवश्यकता और महत्ता है। यहाँ पर गेहूँ भूख और गुलाब मानसिक अतृप्ति की पूर्ति के साधन के रूप मे चित्रित है। सारे मानव इतिहास का पर्यवलोकन किया है और आज के समाज के लिए यह उपयोगी बताया है कि शारीरिक भूख को मिटा कर हम मानसिक तृप्ति को प्राप्त करें तभी पूर्ण मानव बन सकते हैं। गेहूँ की दुनिया खतम होने जा रही है– वह स्थूल दुनिया जो आर्थिक और राजनैतिक रूप से हम सब पर छाई हुई थी। जो आर्थिक रूप मे रक्त पीती रही, राजनैतिक रूप मे रक्त की धारा बहाती रही अब वह दुनिया आने वाली है जिसे हम गुलाब की दुनिया कहेंगे। गुलाब की दुनिया मानस का ससार —सास्कृतिक जगत्।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनेक शैलियो मे रेखाचित्र लिखे जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे रेखाचित्र भी हैं जिनके लिखने मे साहित्य की अन्य विधाओ की सहायता नही ली जा सकती। इसका उदाहरण बेनीपुरी का 'नथनिया' रेखाचित्र है। ऐसे रेखाचित्रो मे भी अनेक कला-प्रवृतियो का विकास हो चुका है—संवेदना चित्र

---

१. अतीत के चलचित्र, ले० महादेवी, पृ० ६

२. वही, पृ० ७६

एव व्यग्य चित्र आदि । मवेदनात्मक चित्रो मे लेखक किसी यथार्थ सवेदना को काल्पनिक चित्र मे बाँधने का प्रयास करता है । जीवन मे कलाकार अनेक सवेदनाओ से प्रभावित होता है । इनमे से कुछ सवेदनाएँ शाश्वत सत्य खडो के रूप मे उपस्थित होती हैं और कुछ वैयक्तिक अनुभूतियो का रूप धारण कर सामने आती हैं । रेखाचित्रकार दोनो प्रकार की सवेदनाओ को केन्द्रबिन्दु बनाकर कल्पना के सहारे शब्द-रेखाओ मे भावना का रग भरकर सामने रख देता है । इस प्रकार के रेखाचित्र राहुलजी ने अधिक लिखे हैं ।

व्यग्यात्मक रेखाचित्रो की रचना अधिक हुई है । समाज की विभिन्न रूढियो और पाखण्डो का मज़ाक उडाने के लिए व्यग्यात्मक रेखाचित्रो का निर्माण किया जाता है । इस प्रकार के रेखाचित्र कृष्णचन्द्र ने लिखे है । इनके ये रेखाचित्र 'फूल और पत्थर' शीर्षक पुस्तक मे सगृहीत हैं । 'अखबारी ज्योतिषी', 'देशभक्त', 'मेरा दोस्त' आदि इनके नाम हैं ।

संस्मरण

जब लेखक अतीत की अनन्त स्मृतियो मे से कुछ रमणीय अनुभूतियो को अपनी कोमल कल्पना से अनुरंजित कर व्यंजनामूलक संकेत शैली मे अपने व्यक्तित्व की विशेषताओ से विशिष्ट कर रमणीय एव प्रभावशाली रूप से वर्णन करता है उसे 'संस्मरण' कहते हैं। इसका विस्तृत विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया है।

तत्व

वर्ण्य विषय—'संस्मरण' साहित्य का यह प्रमुख तत्व है। संस्मरण साहित्य मे विषय से अभिप्राय है कि लेखक अपने संस्मरणो मे क्या कहना चाहता है। उसके संस्मरण उसके अपने जीवन से सम्बन्धित हैं या किसी अन्य व्यक्ति के जीवन से सम्बन्ध रखते हैं। यदि वह किसी अन्य व्यक्ति के विषय मे संस्मरण लिखता है या उसको अपने संस्मरणो का विषय बनाता है—वह व्यक्ति साहित्यिक है, राजनैतिक है, धार्मिक है या जननेता है। कुछ भी हो विषय चुनाव मे ही उसकी विद्वत्ता प्रदर्शित हो जाती है। प्रसिद्ध व्यक्ति ही संस्मरण लिख सकता है। यदि वह अपने ही जीवन से सम्बन्धित संस्मरण लिखे तो उसको आप प्रसिद्ध होना चाहिए अगर किसी अन्य व्यक्ति के विषय मे लिखना चाहे तो उसको भी प्रसिद्ध व्यक्ति होना चाहिए अगर किसी अन्य व्यक्ति के विषय मे लिखना चाहे तो उसको भी प्रसिद्ध व्यक्ति होना चाहिए। इस प्रकार लेखक एव वर्णित व्यक्ति दोनो का ही प्रसिद्ध होना आवश्यक है। ऐसे संस्मरण ही प्रभावशाली हो सकते हैं।

संस्मरणो के विषय चुनाव के पश्चात् उनमे कुछ गुणो का होना आवश्यक है। विषय वर्णन मे सर्वप्रथम रोचकता का होना नितान्त आवश्यक है। लेखक को अपने विषय का इस ढग से वर्णन करना चाहिए कि वह पाठक को सरस प्रतीत हो। विषय मे रोचकता का होना बहुत आवश्यक है, नीरस विषय को पढने के लिए कोई भी व्यक्ति तैयार नही होता है। हिन्दी साहित्य मे वैसे तो प्राय सभी लेखक रोचकपूर्ण ढग से संस्मरण लिखते हैं पर कन्हैयालाल मिश्र के संस्मरणो मे विशेषतया इस गुण की प्रधानता है। यह तो आरम्भ ही रोचकपूर्ण ढग से करते हैं—

"अपने तीन वर्ष की होश को जरा सँभालकर उन्होंने अपने आस-पास झाँका, तो वे सहम गए। माँ बाप मर चुके थे और उनका पालन-पोषण उनकी चाचा-चाची की देख-रेख में ही रहा था। उनके बचपन के संस्मरणों का सार

है बच्चे खिलाना, मार खाना, कुछ न कहना और सब कुछ सहना। यह कितना अद्भुत है कि इस दमघोटू वातावरण मे उन्होने अपने स्नेही बाबा से ग्यारहवें वर्ष मे पैर रखते न रखते कर्मकांड की कामचलाऊ शिक्षा पा ली और इससे भी अद्भुत है यह कि इस नरक कुंड मे पलकर जो बालक निकला उसके रोम-रोम मे व्याप्त मिला मानव का प्रेम, सभी तरह के भेदभावो के ऊपर जीवन के कण-कण मे छाई ममता और ईश्वर विश्वास। ओह, ऐसा कि सन्तो को भी ईर्ष्या हो। यह थे मेरे स्वर्गीय पिताजी—श्री पंडित रमादत्त मिश्र।"[१]

वर्ण्य विषय मे स्पष्टता का होना भी आवश्यक है। यदि लेखक पूर्ण ईमानदारी के साथ अपने विषय का वर्णन करता है तभी उसमे स्पष्टता का गुण हो सकता है। लेखक मे यह गुण तभी हो सकता है यदि उसका उस व्यक्ति से घनिष्ठ सम्पर्क रहा हो। किसी भी व्यक्ति का संस्मरण तभी सच्चा उतर सकता है जबकि लेखक का संस्मरण-नायक से निकट सम्पर्क रहा हो और उसको उसने हर पहलुओ से देखा और समझा हो। ऐसा न होने से परिणाम यह होता है कि मनुष्य कुछ है और उसका चित्रण उसके बिल्कुल विपरीत होता है। यह संस्मरण-नायक के साथ घोर अन्याय है।[२]

उपेन्द्रनाथ अश्क ने 'होमवती' की कहानियो के विषय मे कितना स्पष्ट चित्रण किया है –

"वे छोटी-छोटी सीधी-साधी घरेलू कहानियाँ लिखने मे दक्ष थी। उनकी इधर की कहानियो की पार्श्वभूमि भी चाहे घरेलू थी पर उनमे काफी तीव्रता आ गयी थी। साम्प्रदायिक दगो, देश के विभाजन और उससे पैदा होने वाली समस्याओ, कांग्रेसी सरकार बनने के बाद कांग्रेसी नेताओ के जीवन के झूठ रिश्वत, ढोल के पोल का अतीव सुन्दर चित्रण उन्होने कुछ कहानियो मे किया था फिर अपने इर्द-गिर्द रहने वालो गरीबो की मनोदशा का वर्णन अनायास उनकी कुछ कहानियो मे आ गया था।"[३]

यही नही अपने स्वभाव का भी इन्होने स्पष्ट वर्णन किया है—

"मेरे दिमाग की नसें न जाने कितनी नाजुक हैं कि जरा-सी बात मुझे खा जाती है और मेरा चैन आराम हराम हो जाता है। माना लोगो ने मुझे इस कमजोरी पर विजय पाने के कई नुस्खे बताए है, मुझे वह कण्ठस्थ भी हैं और मैं सदा उन्हे काम मे लाने के मसूबे बाँधता रहता हूँ पर जब समय आता है वे सब धरे के धरे रह जाते हैं।"[४]

---

१. दीप जले शंख बजे—कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, पृ० ७६
२. बालकृष्ण भट्ट (संस्मरणो मे जीवन)—ब्रजमोहन व्यास
३. रेखाएँ और चित्र : उपेन्द्रनाथ अश्क, पृ० १७८
४ वही, पृ० १८४

"उनका घरेलू जीवन बडा नियमित था। उन्होने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग स्वाध्याय और साहित्याराधन मे किया। यही कारण है कि पत्र-सम्पादन कार्य के अतिरिक्त वे अपनी मौलिक और अनूदित रचनाओं की राशि से हिन्दी के साहित्य भडार की शोभा बढा गए। उनकी बहुत-सी लिखित, अनूदित एव सम्पादित पुस्तकें दूसरे सज्जनो के नाम से भी प्रकाशित हुई हैं। द्रव्योपार्जन के लिए विवश होकर उन्हे ऐसा करना पडा था क्योंकि उनका व्यक्तिगत बजट बहुत लम्बा था, अच्छे-से-अच्छे भोजन, वस्त्र, सुगन्ध आदि के वे बडे शौकीन थे। मगही पान जर्दा, किमाम और सुरती वे बनारस से मँगाते थे—गोरा छरहरा वदन, सिर पर किश्तीनुमा टोपी या साफा, कभी झलमली धोती या चूडीदार पाजामा, पालिशदार जूता, कोट की जेब मे घडी, हाथ मे चिकनी छडी, दो-दो सुवासित रूमाल, मुँह मे पान की गिलौरी—जैसे शाह खर्च वैसे ही मजाकपसन्द भी। बहुत ही अच्छी तबीयत पाई थी पाडेयजी ने।"[1]

प्रत्येक सस्मरण मे लेखक के व्यक्तित्व की आभा होती है। यदि लेखक आलोचक है तो वह अपने चरित्र नायक के व्यक्तित्व की आलोचना किए बिना नही रह सकता। शिवदानसिंह चौहान ने पत के विषय मे जो अपना सस्मरण लिखा है उसमे उनके व्यक्तित्व की आलोचना किए बिना वह नही रह सके—

"पतजी का व्यक्तित्व कुछ इतना बौद्धिक है कि उनके सम्पर्क मे आने वाले व्यक्ति को उनमे वह 'साधारणता' नही मिलती जो आमतौर पर हर व्यक्ति मे होती है। मेरे कहने का यह मतलब नही कि इन्होने 'असाधारणता' का कोई आडम्बर रच रखा है और जो भी व्यक्ति उनके सम्पर्क मे आता है उसको वे केवल अपना बाहरी, असाधारणता का नकाब पहना हुआ चेहरा ही दिखाते हैं। ऐसा कुछ नही है। उनका अन्तर बाहर एक है—सरल सहज और कोमल लेकिन यह सरलता और सहजता या तो हमे अबोध शिशुओ की क्रियाओ मे मिलती हैं या एक ऐसे मनीषी व्यक्ति के चिन्तन और आचरण मे जो जीवन के गरल को पचाकर समदर्शी बन गया है।"[2]

यही नही इलाचन्द्र जोशी जैसे मनोवैज्ञानिक लेखक ने भी पत का मनोवैज्ञानिक ढग से विश्लेषण किया है। इस वर्णन मे मनोविज्ञान के विशेष शब्दो तक का प्रयोग भी किया है। जिस समय पत गहरी बीमारी के पश्चात् इलाहाबाद पहुँच गए हैं उस समय का वर्णन करते हैं—

"महामृत्यु पर दुबारा विजय पाकर नई अग्नि परीक्षाओ के बाद तपे हुए खरे सोने की तरह उभरा हुआ उनका व्यक्तित्व मानवीय हिंसा प्रतिहिंसा से कलुषित वातावरण मे उपचेतना और उर्ध्वचेतना के बीच के इन्द्रधनुषी पुल

---

१. पाडेय स्मृति ग्रन्थ—सम्पादक डा० प्रेमनारायण टडन, पृ० ३७
२. सुमित्रानन्दन पत स्मृति चित्र—प्रकाशक राजकमल प्रकाशन, पृ० १४६

पर खडा होकर चारो ओर उज्जवल जीवनानुभूति की स्वर्णिम किरणें बिखेर रहा था और स्वर्णधूलि उडा रहा था।"[1]

कही-कही लेखक चरित्र का वर्णन करते समय अन्तर्मुखी प्रवृत्ति का हो जाता है। ऐसे समय मे लेखक को चरित्र नायक की प्रत्येक वस्तु मे कुछ छिपी हुई बात का आभास होता है। बच्चन द्वारा लिखा हुआ प्रेमचन्द सम्बन्धी ससमरण इसी भावना का द्योतक है। प्रेमचन्द के व्यक्तित्व वर्णन मे बच्चन ने इसी प्रतिभा का परिचय दिया है—

"प्रेमचन्दजी नगे सिर, खद्दर का कुर्ता पहने खडे हैं। उनके चेहरे पर पडी हुई प्रत्येक पक्ति सघर्षमय जीवन का इतिहास-सा बता रही है। उनकी आँखो की चमक मे उनका उच्चादर्श झलक रहा है। उनके चेहरे की मुस्कराहट मे उनका भोलापन फूटा पडता है। नम्रता, सरलता और निरभिमान उनके रूप मे रसा बसा-सा प्रतीत होता है।"[2]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लेखक अपने चरित्र नायक का चित्रण स्पष्ट एव रमणीय ढग से करता है। प्रत्येक पृष्ठ पर लेखक के व्यक्तित्व की आभा होती है। अपने चरित्र नायक का चित्रण वह मनोवैज्ञानिक ढग से भी कर सकता है। अधिकतर ससमरणो मे व्यक्ति के चरित्र का चित्रण वर्णनात्मक शैली में ही किया जाता है। इसके साथ ही वह अपने चरित्र का विश्लेषण भी स्पष्ट रूप से करता है। एक प्रभावशाली घटना के वर्णन मे सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झाँकी प्रस्तुत करना ही ससमरण साहित्य की विशेषता है।

देशकाल वातावरण—वातावरण उन समस्त परिस्थितियों का सकुल नाम है जिनसे पात्रो को सघर्ष करना पडता है और विषयवस्तु का विकास होता है। ससमरण साहित्य को वास्तविकता का मान देने की कसौटियो मे वातावरण मुख्य उपकरण है। ससमरण लेखक भी देश और काल की जजीर मे जकडे रहते हैं। देश और काल की पृष्ठभूमि के बिना पात्रो का एवं लेखक का व्यक्तित्व स्पष्ट नही होता। घटनाक्रम को समझने मे उलझन होती है। देश और काल मे वास्तविकता लाने के लिए स्थानीय ज्ञान आवश्यक है कि वह कथानक के स्पष्टीकरण का साधन ही रहे, स्वय साध्य न बन जाय। जहाँ वर्णन अनुपात से बढ जाता है वहाँ उससे जी ऊबने लग जाता है।

हिन्दी ससमरण साहित्य मे केवल यशपाल ही ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होने अपने ससमरणों मे तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का वर्णन खूब किया है। उन्होने तो अपने ससमरण लिखे ही तत्कालीन इतिहास को जनता के सम्मुख रखने के लिए हैं। सुखदेव, राजगुरु एव भगतसिह सम्बन्धी सभी ससमरण इनके व्यक्तिगत अनुभवो पर आधरित हैं जैसा कि इन्होने 'परिचय' मे स्पष्ट किया है—

---

१. सुमित्रानन्दन पत स्मृति चित्र—प्रकाशक राजकमल प्रकाशन, पृ० १४३
२. नये पुराने झरोखे, ले० बच्चन, प्रथम सस्करण, १९६२, पृ० ८०

"यह संस्मरण व्यक्तिगत जान पडेगे क्योकि व्याकरण की दृष्टि से प्रथम पुरुष मे या कर्तावाचक मे लिखे गए हैं । इस रूप मे लिखने का प्रयोजन यह है कि इनकी सचाई और वास्तविकता का उत्तरदायित्व मुझ पर है ।···अब तक क्रान्तिकारी प्रयत्नो के विषय मे इतिहास के नाम से जो कुछ लिखा गया वह अधिकाश मे अफवाहो के आधार पर ही लिखा गया है । इसी कहानी के लिए दावा है कि अफवाह का सहारा नही लिया गया ।"

हिन्दी साहित्य मे इनके सस्मरणो के तीन भाग 'सिंहावलोकन' नाम से प्राप्त होते हैं । वर्णन सीमा से अधिक होने पर भी रोचक एव आकर्षक है ।

केवल परिस्थितियो का वर्णन करने से ही लेखक कुशल नही माना जाता बल्कि उनका साहित्य पर प्रभाव दिखलाने मे भी वह अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय देता है। 'बच्चन' जैसे भावुक कवि भी इस विशेषता से शून्य न रह सके—आधुनिक साहित्यिको की दशा का वर्णन भी इन्होने गिरिधरशर्मा नवरत्न के सस्मरण मे किया है—

"जीवन आज अधिक व्यस्त हो गया है, लेखको के दृष्टिकोण बदल गए हैं और साहित्य क्षेत्र अधिक प्रतियोगितापूर्ण है । पहले सब हिन्दी के लिए कुछ न कुछ कर रहे थे, आज सब को दूसरो के पीछे छोडते हुए या पीछे समझते हुए आगे बढना बढवाना है ।"[1]

शान्तिप्रिय द्विवेदी ने भी अपने सस्मरणो मे कही-कही तत्कालीन परिस्थितियो का चित्रण किया हैं । एक स्थान पर वह पूंजीपति वर्ग से प्रभावित गाँव के लोगो का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

"खेती-पाती मे, शादी-ब्याह मे, रोग-शोक मे सब यथाशक्ति शरीर से साथ देने को तैयार रहते हैं किन्तु कठिन से कठिन सकट आ जाने पर भी कोई किसी को अपना एक पैसा नही देना चाहता । ऐसे गाढे मौके पर निष्ठुर न होते हुए भी उनकी रकता उन्हे जड बना देती है । उनके पास दो-चार पैसे होते हैं वे अगल-बगल के पडोसियो को अथवा किसी अन्य गाँव के गरजमन्दो को सूद-दर-सूद के हिसाब से कर्ज देकर जमीदारो और महाजनो की तरह शोषण करने लग । हैं ।"[2]

उपेन्द्रनाथ अश्क जैसे कथा लेखक ने भी मटो सम्बन्धी अपने सस्मरणो मे तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो का चित्रण किया है—

"मुझे सन् याद नही रहा लेकिन वही दिन थे जब अमृतसर मे हर तरफ 'इन्कलाब जिन्दाबाद' के नारे गूंजते थे । उन नारो मे, मुझे अच्छी तरह याद है कि अजीब किस्म का जोश था—वातावरण मे वह जो जलियाँवाला बाग की खूनी दुर्घटना का उदास भय समाया रहता था, उस वक्त लोप था । अब

१. नये पुराने झरोखे—बच्चन (गिरिधरशर्मा नवरत्न—सस्मरण), पृ० ८०
२. पथचिन्ह—शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० ३३

उसकी जगह एक निर्भीक तड़प ने ले ली थी—एक अधाधुध छलांग ने जो अपनी मंजिल से अनभिज्ञ थी।"

"लोग नारे लगाते थे, जलूस निकालते थे और सकडो की तादाद में धडाधड कैद हो रहे थे। गिरफ्तार होना एक दिलचस्प शुगल बन गया था। सुबह कैद हुए, शाम को छोड दिए गए। मामला चला, चन्द महीनो की कैद हुई, वापस आये, एक नारा लगाया, फिर कैद हो गए।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि संस्मरण साहित्य को लिखते समय लेखक का उद्देश्य अपने समय की परिस्थितियो का चित्रण करना नही है। इन परिस्थितियों का चित्रण तो अनायास ही हो जाता है। किसी भी संस्मरण की वास्तविकता व सचाई का प्रमाण देने के लिए लेखक उस समय की परिस्थितियों का थोडा आभास पाठक को अवश्य देना चाहता है। प्रत्येक कलाकार अपने समय से प्रभावित होता है, इस प्रकार उसके साहित्य मे तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन होना स्वाभाविक ही होता है।

कही-कही संस्मरणो मे हम किसी विशेष स्थान या नगर का वर्णन देखते हैं। ऐसे संस्मरण तभी सफल हो सकते हैं यदि लेखक ने उस स्थान या नगर को देखा हो। हिन्दी साहित्य मे राहुल सांकृत्यायन के संस्मरण इस श्रेणी मे आते हैं। इन्होने अपनी पुस्तक 'यात्रा के पन्ने' मे तिब्बत यात्रा सम्बन्धी अनेक संस्मरण लिखे हैं जिनमे अनेक नगरों एवं स्थलो का चित्रण है। हरिवंशराय बच्चन के कुछ संस्मरण इसी प्रकार के हैं। काश्मीर यात्रा संस्मरण इनका एक उच्चकोटि का संस्मरण है। इसमे इन्होने काश्मीर के सभी मुख्य स्थानो का आकर्षक एवं रमणीय चित्र प्रस्तुत किया है।

उद्देश्य—इसमे लेखक की उस सामान्य या विशिष्ट जीवन दृष्टि का विवेचन होता है जो उसकी कृति मे कथावस्तु का विन्यास, पात्रो की योजना, वातावरण के प्रयोग आदि मे सर्वत्र निहित पायी जाती है। इसे लेखक का जीवन दर्शन अथवा उसकी जीवन दृष्टि, जीवन की व्याख्या या जीवन की आलोचना कह सकते हैं। उन कृतियो को छोडकर जिनकी रचना का उद्देश्य मन बहलाव या मनोरंजन मात्र होता है, सभी कलाकृतियो मे लेखक की कोई विशेष विचारधारा प्रकट या निहित रूप मे देखी जा सकती है। बिना इसके साहित्यिक कृतित्व प्रयोजनहीन और व्यर्थ होता है।

जहाँ तक संस्मरण साहित्य का प्रश्न है इसके लेखक का उद्देश्य अन्य लेखको से पृथक् है। इसमे लेखक अपने समय के इतिहास को लिखना चाहता है परन्तु इतिहासकार के वस्तुपरक रूप से वह बिलकुल अलग है। संस्मरण लेखक जो स्वयं देखता है, जिसका वह स्वयं अनुभव करता है उसी का वर्णन करता है। उसके वर्णन मे उसकी अपनी अनुभूतियाँ-संवेदनाएँ भी रहती हैं। इस दृष्टि से शैली मे वह निबन्धकार के

---

१. मटो मेरा दुश्मन—उपेन्द्रनाथ अश्क, पृ० १६६

समीप है। वह वास्तव मे अपने चतुर्दिक के जीवन का सर्जन करता है, सम्पूर्ण भावना और जीवन के साथ। इतिहासकार के समान वह विवरण प्रस्तुत करने वाला नही है।[1]

संस्मरणो मे लेखक अतीत की स्मृतियो को साकार रूप देता है। यह उन्हीं स्मृतियो का वर्णन करता है जिनका प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पडता है। ऐसा करने से उसको सबसे वडा लाभ यह है कि जब भी उसे जीवन मे प्रेरणा की आवश्यकता पडे वह उनको शीघ्रता से पढकर उत्साह प्राप्त कर ले। दूसरी बात यह है कि प्रत्येक लेखक का रचना मे कोइ-न-कोई उद्देश्य तो होता है, कुछ रचनाएँ स्वान्त सुखाय लिखी जाती हैं। ऐसा ही सस्मरणो मे है। कुछ ऐसे लेखक है जिनको सस्मरण लिखकर आत्मिक सतोष प्राप्त होता है। ब्रजमोहन व्यास ने बालकृष्ण भट्ट के सस्मरण इसी उद्देश्य से लिखे थे—

"इन सस्मरणो को मैंने 'स्वान्त सुखाय' लिखा है। लिखने मे मैं सफल हो सका या नही 'आपरितोषाद्विदुषा' कैसे कह सकता हूँ। परन्तु इतना कहना सम्भवत: असगत न होगा कि जब भट्टजी के सुपुत्र प० जनार्दन भट्टजी ने सस्मरणों को पढा तो उन्होने मुझे लिखा—इन सस्मरणो को पढने से अतीत के अनेक दृश्य और घटनाएँ जो विस्मृनि के गर्भ मे छिपी पडी थी सहसा फिर जाग उठी और चलचित्र के समान आँखो के सामने एक-एक कर नाच गयी।"[2]

हिन्दी सस्मरण साहित्य मे कुछ ऐसे लेखक भी हुए है जिन्होने राजनैतिक परिस्थितियो का चित्रण अपने सस्मरणो मे किया है। उन लेखको को हम इतिहास-कार और सस्मरणो की गणना इतिहास की श्रेणी मे नही कर सकते। सस्मरण मे तो लेखक केवल उन्ही घटनाओ का उल्लेख करता है जिनसे लेखक के जीवन मे घटित होने वाले परिवर्तनो का सकेत मिलता है और जो अन्य जनो के कौतूहल को शान्त करने में सहायक हो सकती हैं।[3] हिन्दी सस्मरण साहित्य मे राजनैतिक पुरुषो विषयक संस्मरण लिखने वालो मे यशपाल का नाम प्रमुख है। इन्होने सुखदेव, राजगुरु एव भगतसिह विषयक सस्मरण लिखे हैं। इन सस्मरणो मे पाठक को तत्कालीन सभी परि-स्थितियों का आभास सुचारु रूप से हो जाता है। इन सस्मरणो को लिखने का उद्देश्य यशपालजी ने 'परिचय' मे स्पष्ट किया है—

" 'आत्मकथा' या 'आपबीती' लिखकर मैं पाठको के सम्मुख आदर्श मार्ग रखने का सतोष अनुभव नही कर सकता। इसलिए इस कहानी को केवल स्मृतियो और अनुभवो का विचारार्थ अनुभव ही समझा जाना चाहिए। हम सभी लोग समाज की व्यापक हाडी के एक-एक चावल हैं। हाडी की अवस्था जानने

१. हिन्दी साहित्य कोष
२. बालकृष्ण भट्ट, ब्रजमोहन व्यास, पृ० १६
३. सिद्धांतालोचन, प्रो० धर्मचन्द संत एम० ए०

के लिए कुछ चावलो को निकालकर परख लिया जाता है। इस कहानी के रूप में मैं अपने पाठकों के सम्मुख अपने आपको और अपने साथियों को कुछ चावलो के रूप में प्रस्तुत करने का साहस कर रहा हूँ क्योंकि मैं अपने समाज की हाडी की अवस्था परखी जाने के लिए उत्सुक हूँ।"[1]

इसी प्रकार किशोरीदास वाजपेयी ने भी अपने व्यक्तिगत संस्मरण लिखकर पाठको को यह शिक्षा दी है कि जीवन में असफलता के कारण और सफलता की कुंजी क्या है? यही बात अर्थात् संस्मरण लिखने के उद्देश्य को वाजपेयीजी ने 'निवेदन' में स्पष्ट कर दिया—

"साहित्य क्षेत्र में 'सफलता' चाहने वालो के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है। असफलता के कारण और सफलता की कुंजी दोनों इस पुस्तक में हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस छोटी-सी पुस्तक से हिन्दी जगत का उपकार होगा।"[2]

इसी तरह शान्तिप्रिय द्विवेदी ने भी अपने बहन सम्बन्धी संस्मरण लिखने के उद्देश्य को स्पष्ट किया है—

"पथचिन्ह में मैंने अपनी स्वर्गीया बहिन को भारत माता की आत्मा के रूप में स्मरण किया है। उसी के व्यक्तित्व को केन्द्रबिन्दु बना कर अपने जीवन और युग की समस्या को स्पर्श किया है। इस प्रकार यह पुस्तक व्यष्टि से समष्टि की ओर है।"[3]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि संस्मरण लेखक का उद्देश्य जहाँ स्वान्त:सुखाय रचना करना है वहाँ प्रभावशाली अतीत की स्मृतियों का चित्रण करना भी है जिससे उसे समय-समय पर उत्साह व प्रेरणा मिलती रहे। प्रत्येक व्यक्ति की यह आकांक्षा होती है कि उसको जीवन में जो अनुभव हुए हैं वह दूसरे को बतलाए ताकि वे उनसे लाभ प्राप्त कर सकें। इसी उद्देश्य को लेकर प्रसिद्ध व्यक्ति अपने अनुभवो को संस्मरणो का रूप देकर पाठको के सामने रखते हैं। ऐसा करने से उनको आत्म-संतोष प्राप्त होता है, यही संस्मरण लिखने का उद्देश्य है।

भाषा शैली—शैली अंग्रेजी 'स्टाइल' का अनुवाद है और अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से हिन्दी में आया है। शैली भी एक प्रकार का स्पृहणीय गुण है इसीलिए अच्छे लेखक ही अच्छे शैलीकार होते हैं। शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीकों का नाम है जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एवं प्रभावपूर्ण बनाते हैं। संस्मरण शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ है जिनका होना नितान्त

---

१. सिंहावलोकन, भाग १

२. साहित्यिक जीवन के अनुभव और संस्मरण, किशोरीदास वाजपेयी, प्रथम संस्करण निवेदन (ग)

३. पथचिन्ह, शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० ५

आवश्यक है—

सस्मरण शैली मे सर्वप्रथम प्रभावोत्पादकता का होना आवश्यक है। लेखक को इस प्रकार से सस्मरण लिखने चाहिए कि वह अन्य व्यक्ति पर प्रभाव डाल सकें। यह तभी हो सकता है यदि शैली मे प्रभावोत्पादकता का गुण हो। प्रभावोत्पादकता से ही रोचकता उत्पन्न होती है। शिवपूजन सहाय ने विनोदशकर व्यास का वर्णन रोचकतापूर्ण किया है। इसी से पाठक के मन मे प्रभावोत्पादकता उत्पन्न होती है, यही शैली का एक महत्वपूर्ण गुण है—

"देखा नीचे गली मे एक गोरा-गोरा-सा खूबसूरत सफेदपोश नौजवान खडा है, जिस की विहँसी हुई आँखे ऊपर की ओर, मेरी तरफ देख रही थी। लम्बे-लम्बे बाल नई धज से सँवारे हुए थे। सलोना-सा मुखडा, पतले-पतले होठो पर पान की सुर्खी। मोती से चमकीले दाँत, मूँछे घुटी हुई, हाथ मे पतली-सी नफीस छडी, पैरो मे आबदार पम्पशू, चुनी धोती चुना कुर्त्ता—बडी बाँकी फबन थी। किन्तु इस छैल-छबीलेपन मे भी साहित्यिक छटा थी।"[1]

शैली की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता सुसगठितता का होना है। सस्मरण शैली मे सुसगठितता से मेरा अभिप्राय है कि लेखक जिस भी घटना का वर्णन करता हो उसमे विचारो और भावो का तारतम्य होना आवश्यक है।

आत्मीयता का शैली मे होना आवश्यक है। शैली मे आत्मीयता से अभिप्राय है कि लेखक चाहे अपने जीवन के सम्बन्ध मे लिखता है चाहे अन्य व्यक्ति के सम्बन्ध मे, उसके सस्मरणो मे उसके व्यक्तित्व की छाप पडनी आवश्यक है। इस गुण से सस्मरणो की शैली मे जान पडती है और इसको गद्य की अन्य विधाओ से पृथक् करती है।

अन्य महत्वपूर्ण विशेषता सक्षिप्तता का होना है। लेखक को इस ढग से व्यक्तिगत घटना एव जीवन का वर्णन करना चाहिए कि वह पाठको को आकर्षित कर सके। अधिक विस्तार से वर्णन किया हुआ सस्मरण नीरस हो जाता है। इससे पाठक का मन ऊब जाता है। इस प्रकार शैली मे समास गुण व सक्षिप्तता का होना आवश्यक है।

इस प्रकार सस्मरणो की शैली मे प्रभावोत्पादकता सुसगठितता, रोचकता, स्पष्टवादिता एव आत्मीयता आदि गुणो का होना आवश्यक है। इन गुणो से शैली परिपक्व हो जाती है।

सस्मरण लिखने की कई शैलियाँ हैं। हिन्दी संस्मरण साहित्य को पढने के पश्चात् ज्ञात होता है कि सस्मरण भी कई ढग से लिखे जा सकते हैं। सर्वप्रथम शैली आत्मकथात्मक शैली है। जब लेखक अपने सम्बन्ध मे सस्मरण लिखे तब वह इस शैली का प्रयोग करता है। ऐसे सस्मरणो की शैली आत्मकथा की शैली के समान

1. शिवपूजन रचनावली, चौथा खंड, पृ० ३१५

होता है । इस प्रकार उसकी रचना भी आत्मकथा के निकट होगी । हिन्दी साहित्य मे शान्तिप्रिय द्विवेदी एव किशोरीदास वाजपेयी के सस्मरण इसी शैली के हैं ।

कई सस्मरण लेखकों ने अपने सस्मरण निबन्धात्मक शैली मे लिखे हैं । ऐसी रचनाओं को निबन्धात्मक सस्मरण कहा जा सकता है । 'मेरी असफलताएँ' गुलाबराय के सस्मरणात्मक निबन्धो का सग्रह है ।

कुछ सस्मरण हमे पत्रात्मक शैली मे भी प्राप्त होते हैं । जैनेन्द्र और प्रेमचन्द सम्बन्धी कई सस्मरण पत्रात्मक शैली मे लिखे गए है ।

डायरी शैली मे लिखे हुए सस्मरण हिन्दी सस्मरण साहित्य मे राहुल साकृत्यायन के प्राप्त होते है । इनकी पुस्तक 'यात्रा के पन्ने' मे इसी शैली मे लिखे हुए सस्मरणो का सकलन है ।

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है । यदि भाषा शुद्ध, परिमार्जित एव भावानुकूल होगी तभी वह पाठक को प्रभावित कर सकती है । स्वाभाविक एव प्रसादगुण का भाषा मे होना नितान्त आवश्यक है । यशपाल का कितनी स्वाभाविकता से अश्क ने वर्णन किया है यह उनकी भाषा के प्रसादगुण का ही प्रतीक है—

> "मैंने देखा—बढिया सूट पहने मँझले कद और साँवले रंग का एक युवक सफाई से कटे-छटे छोटे बाल, चौडे खुले-खुले अग, मोटे ओठ, घनी भवें और पिचके हुए कल्ले । किसी क्रान्तिकारी के बदले मुझे यशपाल किसी बिगडे हुए ईसाई युवक से लगे ।"[1]

भावानुकूल भाषा का प्रयोग शैली को उत्कृष्ट बनाता है । शान्तिप्रिय द्विवेदी जी इस विषय मे अपना हिन्दी सस्मरण साहित्य मे प्रमुख स्थान रखते हैं । कही-कहीं तो इतना भावुक हो गए हैं कि उसी प्रकार के शब्दो का प्रयोग उन्होने किया है—

> "छुटपन मे ही वह विधवा हो गई थी । उस अबोध वय मे उसने जाना ही नही कि उसके भाग्य क्षितिज मे क्या पट परिवर्तन हो गया । जन्मकाल से माँ का जो अचल उसके मस्तक पर फैला हुआ था, सयानी होने पर उसने वही अचल अपने मस्तक पर ज्यो का त्यो पाया मानो शैशव ही उसके जीवन मे अक्षुण्ण हो गया ।"[2]

कही-कही अलंकारिक भाषा का प्रयोग खटकने लगता है जैसे कि जैनेन्द्र ने गुप्तजी का विश्लेषण अलकारित भाषा मे किया है—

> "मानव स्वभाव का विकास दोहरा होता है, दो दिशाओ मे होता है । एक ओर उपमा व्यक्तित्व की दी जाती है कि पर्वत की नाई अचल, वज्र की

---

१. (यशपाल) रेखाएँ और चित्र, ले० उपेन्द्रनाथ अश्क, पृ० ४७
२ पथचिह्न, ले० शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० ८

भाँति अनिवार्य और कठोर इत्यादि। ये उपमाएँ सन्त महात्माओ पर फबनी हैं। दूसरी तरह की उपमाएँ हैं कि कुसुमवत कोमल, जल सरीखा तरल आदि। इन उपमाओ के योग्य कवि होते हैं। जैसे बारीक तार का कसा हुआ कोई कोमल वाद्य यन्त्र। तनिक चोट लगी कि उसमे से झकार फूट आई।"

मैथिलीशरण किस कोमल वाद्य यन्त्र के समान है यह तो मैं नही जानता। सवेदन की मूर्च्छना की सूक्ष्मता मे क्या समझें? लेकिन वह अपने आवेश के वश मे रखने वाला महात्मा नही है। आवेगो के साथ बहुत कुछ सम स्वर होकर बज उठने वाला कवि का स्वभाव उनका है।[1]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सस्मरणो की भाषा स्वाभाविक एव भावानुकूल होनी चाहिए। शब्द-चयन भी विषय एव भावानुकूल होना चाहिए।

हिन्दी साहित्य में विकास

सस्मरण साहित्य भी गद्य की एक नवीनतम विधा है। गद्य की यह विधा भी योरोपीय साहित्य की देन है। ये जीवनी का दूसरा रूप कहलाते हैं। इनका निकटतम सम्बन्ध आत्मकथा के साथ है। हिन्दी साहित्य मे जो भी सस्मरण लिखे गए हैं वे अधिकतर १९२० ई० के पश्चात्। सच तो यह है कि सस्मरण लिखने की प्रथा 'माधुरी', 'सुधा', 'विशाल भारत' आदि कुछ ही पत्रो ने डाली। ये सभी पत्र १९२० के बाद प्रकाशित हुए। इन्ही सस्मरण साहित्य का विकास मैंने प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओ एव पुस्तको के आधार पर लिखने का प्रयास किया है।

बालमुकुन्द गुप्त

हिन्दी सस्मरण साहित्य के सर्वप्रथम लेखक बालमुकुन्द गुप्त है। गुप्तजी ने 'प्रतापनारायण मिश्र' सम्बन्धी सस्मरण १९०७ ई० में लिखा। इसमे गुप्तजी ने मिश्रजी के जीवन एव स्वभाव सम्बन्धी लिखा है। आरम्भ अत्यन्त रोचकपूर्ण है—

"हिन्दी साहित्य के आकाश मे हरिश्चन्द्र के उदय से थोडा ही दिन पश्चात् एक ऐसा चमकता हुआ तारा उदय हुआ था, जिसकी चमक-दमक देखकर लोग उसे दूसरा चन्द्र कहने लगे थे। उस चन्द्र के अस्त हो जाने के पश्चात् उस तारे की ज्योति और बढी। बडे हर्ष के साथ कितनो ही के मुख से यह ध्वनि निकलने लगी कि यही उस चन्द्र की जगह लेगा। पर दुःख की बात है कि वैसा होने से पहले ही कुछ दिन बाद वह उज्ज्वल नक्षत्र भी अस्त हो गया।"[2]

ऐसे ही इनकी एक और पुस्तक 'हरिऔधजी के सस्मरण' प्राप्त होती है। प्रकाशित रूप में तो इस पुस्तक के लेखक का नाम वेणीमाधव शर्मा है पर वास्तव मे

---

१. मैथिलीशरण गुप्त, अभिनन्दन ग्रन्थ, प्रकाशक श्री ऋषि जेमिनी बरुआ, पृ० ६५
२. भारत मित्र, १९०७ ई०

जैसाकि 'निवेदन' से स्पष्ट है इन सस्मरणो के लेखक बालमुकुन्द गुप्त ही हैं। इन्होने अपना नाम बदलकर या कल्पित नाम से ये सस्मरण लिखे हैं—श्यामनारायणजी हरिऔधजी से कहते है—

"मैं तो इस लेखक को जानता हूँ। इन लेखो को मुकुन्दजी ने लिखा है। आप उन्हे लिखने के लिए मना करते हैं और डाँटते रहते हैं अत उन्होने इस कल्पित नाम से ही लिखकर इन लेखो को भेजा था मुझे भली-भाँति ज्ञात है।"

इससे मेरा निजी अनुमान है कि ये 'मुकुन्दजी' बालमुकुन्द गुप्त ही हैं। इस पुस्तक मे हरिऔधजी सम्बन्धी पन्द्रह छोटे-छोटे सस्मरण लिख हुए हैं जिनमे उनकी प्रकृति एव जीवन सम्बन्धी कुछ विशेषताओ पर मुकुन्दजी ने प्रकाश डाला है। ये सभी संस्मरण उनके व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित हैं। सस्मरणो मे कही-कही अन्य व्यक्तियो का परिचय लेखक ने जहाँ पाठक को करवाया है उसमे लेखक की शैली एव विद्वत्ता दर्शनीय है। मौलवी साहब के वर्णन मे उनकी भाषा एव शैली की प्रभावोत्पादकता देखने योग्य है—

"बडे रगीन तबीयत के आदमी थे। ठिगना कद था, ठुमक-ठुमककर चलते थे। यदि कोई आदाबअर्ज कर देता तो पचासो बार घूम-घूमकर देखने लगते और मन मे फूले न समाते। उनकी आँखो पर सुनहली कमानी का चश्मा हमेशा चढा रहता।"[1]

डॉ० श्यामसुन्दरदास

गुप्तजी के पश्चात् सस्मरण लेखको मे डॉ० श्यामसुन्दरदास आते हैं। इन्होने[2] 'लाला भगवानदीन' विषयक सस्मरण लिखा। डाक्टर साहब ने लालाजी के सम्पूर्ण जीवन की झाँकी अपने सस्मरण मे सक्षिप्त रूप से लिखी है। प्रत्येक कृति लेखक के व्यक्तित्व से प्रभावित होती है। यह सस्मरण भी डॉक्टर साहब के व्यक्तित्व से प्रभावित है। आलोचक होने के नाते सस्मरण मे भी यह लालाजी के व्यक्तित्व की आलोचना किए बिना नही रह सके—

"कविवर दीन का स्वभाव बडा ही सरल तथा आकर्षक था। वह जब अपने शिष्यो से वार्तालाप करते थे तो जान पडता था मानो वह उनके मित्र तथा बराबरी के हो। सदैव हँसना-हँसाना उनके स्वभाव का सबसे बडा गुण था। उनके स्वभाव का तीसरा गुण स्पष्टवादिता थी।"[3]

श्री रामदास गौड़

सन् १६२८ मे श्री रामदास गौड सस्मरण लेखक हुए हैं। इन्होने '१० श्रीत्र''

---

१. हरिऔध के संस्मरण, पृ० २१
२. साहित्यिको के सस्मरण, सम्पादक ज्योतिलाल भार्गव
३. वही, पृ० ८६

पाठक'[1], 'रायदेवीप्रसाद पूर्ण'[2] सम्बन्धी सस्मरण लिखे हैं। पाठकजी सम्बन्धी लिखा हुआ सस्मरण अत्यन्त रोचक है। इसमे लेखक ने उनके समस्त व्यक्तित्व की झाँकी प्रस्तुत की है। एक स्थान पर उनके साहित्यिक व्यक्तित्व के विषय मे लिखते हैं—

"पाठकजी को जहाँ नैसर्गिक सौन्दर्य मनमोहक लगता था, वहाँ सजावट की कला को भी वह बहुत पसन्द करते थे। उनकी यह पसन्द मन कर्म वचन तीनो मे व्यापक थी। उनके विचारो मे सजावट थी। उनकी रचना मे चुन-चुन कर मधुर कोमल शब्द नग की तरह जटित है। उनकी कविता जडाऊ गहने के सदृश होती थी, और उनके घर की सजावट बाग और मकान—उनकी रुचि को क्रिया के रूप मे परिगत करके दिखाते है।"[3]

इसी प्रकार रायदेवीप्रसाद पूर्ण के विषय मे लिखा हुआ इनका सस्मरण भी इनकी उत्कृष्ट सस्मरण शैली का द्योतक है।

सन् १९२९ मे कई हिन्दी सस्मरण लेखक हुए हैं जिन्होने अपने सस्मरण हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित करवाए। सर्वप्रथम श्री आचार्य रामदेव ने अपने धर्मपिता श्रद्धानन्द के सस्मरण 'मेरी जीवन कथा के कुछ पृष्ठ'[4] नाम से प्रकाशित करवाए। इसमें उनकी जीवन-सम्बन्धी कुछ घटनाएँ सस्मरणात्मक रूप मे लिखी गई हैं। इनके पश्चात् श्री अमृतलाल चक्रवर्ती के बालमुकुन्द गुप्त[5] के सस्मरण प्राप्त होते हैं। इन सस्मरणो मे चक्रवर्ती ने गुप्तजी के साहित्यिक व्यक्तित्व के साथ-साथ निजी व्यक्तिगत अनुभवो पर आधारित गुप्तजी के जीवन पर प्रकाश डाला है। सस्मरण अत्यन्त स्वाभाविक एव रोचक हैं। इनके सस्मरणो के बाद श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी के सस्मरण[6] प्राप्त होते हैं। इन सस्मरणो मे चतुर्वेदीजी ने अपने जीवन की कुछ घटनाओ का वर्णन किया है।

इलाचन्द्र जोशी ने भी अपने जीवन की कुछ घटनाओ को सस्करणात्मक शैली मे इसी सन् मे प्रकाशित किया।[7] 'मेरे प्राथमिक जीवन की स्मृतियाँ' शीर्षक सस्मरणों में जोशीजी ने बचपन की कुछ घटनाओ को रोचकपूर्ण ढग से व्यक्त किया है। आलोचक होने के कारण अपनी आलोचनापूर्ण शैली का परिचय पाठक को सस्मरणों में भी करवा दिया है। इनके अतिरिक्त श्री वृन्दालाल वर्मा ने भी[8] 'कुछ सस्मरण'

१. विशाल भारत, १९२८ ई०
२. विशाल भारत, १९२८ ई०
३ साहित्यिको के सस्मरण, सम्पादक ज्योतिलाल भार्गव, पृ० ९४
४. विशाल भारत
५. विशाल भारत
६. विशाल भारत
७. सुधा, फरवरी, जुलाई
८. सुधा, जुलाई

शीर्षक मे अपने जीवन सम्बन्धी कुछ घटनाओ एव अनुभवो का वर्णन किया है। ये सस्मरण उनकी इतिहास लेखक शैली के प्रतीक हैं।

सन् १९३० मे श्रीनिवास शास्त्री के सस्मरण 'मेरी जीवन स्मृतियाँ'[1] नाम से प्राप्त होते है। इन सस्मरणो मे शास्त्रीजी ने अपने जीवन की प्रमुख-प्रमुख घटनाओ का वर्णन किया है जिनका उनके जीवन पर अमिट प्रभाव है। इसके साथ-साथ जो भी महान् व्यक्ति उनके सम्पर्क मे आए उनका भी इन सस्मरणो मे उन्होने उल्लेख किया है। शास्त्रीजी के ये सस्मरण सक्षिप्त होते हुए भी स्वाभाविक हैं।

सन् १९३१ मे हिन्दी सस्मरण साहित्य के प्रसिद्ध लेखक बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखित 'श्रीधर पाठक के सस्मरण'[2] प्राप्त होते हैं। पाठकजी विषयक लिखे हुए सस्मरण मे निम्नलिखित उद्धरण उल्लेखनीय है—

"पाठकजी की कविता के अतिरिक्त जिन बातो का मुझ पर अधिक प्रभाव पडा, वे थी उनकी सुरुचि, सुप्रबन्ध शक्ति और सौन्दर्य प्रेम। उनकी पद्म-कोट नामक कोठी उक्त तीनो चीजो के सम्मिश्रण का परिणाम थी।"

"साहित्य गोष्ठी के विषय मे भी पाठकजी ने कई बार कहा। उनका विचार यह था कि प्रत्येक मास मे कहीं प्रकृति की गोद मे वृक्षो के नीचे अथवा नदी तट पर साहित्यिक सज्जन इकट्ठे हुआ करें। प्रत्येक व्यक्ति अपना भोजन भी वहाँ साथ लेता जाय और वहाँ साहित्य सम्बन्धी चर्चा हुआ करे।"[3]

श्री सुरेन्द्र शर्मा के शहीद श्री गणेशजी के सस्मरण भी इसी वर्ष मे प्राप्त होते हैं। इन सस्मरणो मे सुरेन्द्र शर्मा ने गणेशजी के जीवन सम्बन्धी घटनाओ का सस्मरणात्मक रूप मे रोचकपूर्ण शैली मे वर्णन किया है।

सन् १९३२ मे प० मंगलदेव शर्मा के सस्मरण हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए। इन्होने पद्मसिह शर्मा एवं मुशी प्रेमचन्द विषयक अपने संस्मरण लिखे हैं। इनके पद्मसिह शर्मा के सम्बन्ध मे 'मेरे कतिपय सस्मरण' 'माधुरी' में प्रकाशित हुए। इनमे शर्माजी ने पद्मसिह शर्मा के जीवन की प्रमुख घटनाओ का सस्मरणात्मक रूप मे वर्णन किया है। 'मुशी प्रेमचन्द' सस्मरण में से निम्नलिखित उद्धरण उल्लेखनीय है—

"समष्टि से पूर्व व्यष्टि का सस्कार नितात आवश्यक है। राष्ट्र निर्माण की गहन समस्या वर्षों के बजाय महीनो मे हल हो सकती है यदि व्यक्ति का चरित्र निर्माण हो जाय, और प्रेमचन्द के प्रत्येक वाक्य मे हमे व्यक्ति को ऊँचा उठाने वाले सामग्री मिलती है। प्रेमचन्द के प्रत्येक शब्द पर राष्ट्रोत्यन्न् की कसकपूर्ण अनुभूति की छाप है। उनके कलाम मे कौम के लिए दर्द और सोजिश है।"

---

१. विशाल भारत
२. विशाल भारत
३. विशाल भारत

"प्रेमचन्द के जीवन से हमे अनेक शिक्षाएँ मिलती है। वह असहाय युवक, जिसमे इट्रेंस से लेकर बी० ए० और सी० टी० प्राईवेट पास किया। घर वालो की नित्य की रोटी कमाते हुए, आज के बाप दादो की कमाई पर यूनीवर्स्टी होस्टलो मे गुलछर्रे उडाने वाले विद्यार्थियो के सम्मुख स्वावलबनपूर्ण स्वाध्याय का एक ज्वलत उदाहरण उपस्थित करता है।[१]"

सन् १६३३ मे श्रीयुन रामनारायण जी मिश्र एव श्रीयुत रूपनारायण पाडेय के सस्मरण प्रकाशित हुए। मिश्र जी के 'श्री अनागारिक धर्मपाल जी[२] के कुछ सस्मरण' एव पाडेय जी के 'सस्मरण'[३] (द्विवेदी जी) नाम से प्राप्त होते हैं। पाडेय जी ने द्विवेदी के जीवन सम्बन्धी कुछ घटनाओ का वर्णन किया है।

सन् १६३४ मे प्रो० चबलानी[४] सम्बन्धी 'सस्मरण' श्रीयुत धर्मवीर एम० ए० के प्राप्त होते हैं। इनके अतिरिक्त १६३५ सन् मे मोहनलाल महतो के डा० गगानाथ झा[५] (सस्मरण) प्रकाशित हुए। सन् १६३६ मे गोपालराम गहमरी के[६] 'साहित्यिक सस्मरण' एव मुशी अव्रजादिकलाल श्रीवास्तव[७] के 'स्वर्गीय महादेव प्रसाद के कुछ सस्मरण' लिखे गए। गहमरी जी के सस्मरण अपनी ही विशेषता लिए हुए हैं। इन्होंने कथावाचको की तरह सस्मरण लिखे हैं। इनकी शैली अधिक प्रभावोत्पादक नही है।

बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखा हुआ[८] मीर साहब सस्मरण सन् १६३७ मे प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त गोपालराम गहमरी ने अपने जीवन सम्बन्धी कुछ घटनाओ को[९] 'मेरे सस्मरण' नाम से प्रकाशित करवाया। इसमे गहमरी जी के जीवन की कुछ घटनाओ का पाठक को आभास मिलता है। इनके पढने से इनके स्वभाव एव साहित्यिक जीवन की कुछ विशेषताओ पर प्रकाश पडता है। उधर मोहनलाल महतो ने मां[१०] शरत् बाबू सस्मरण सन् १६३८ मे लिखा।

सन् १६३६ मे आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी सम्बन्धी दो प्रसिद्ध विद्वानो के सस्मरण प्राप्त होते हैं। कामताप्रसाद गुरु द्वारा लिखित[११] स्व० पडित महावीरप्रसाद

---

१. साहित्यिको के सस्मरण—सपादक ज्योतिलाल भार्गव
२. हस, पृ० ११८, ११६
३ हस,
४. सरस्वती
५. माधुरी
६. सरस्वती
७. विशाल भारत
८. विशाल भारत
६. सरस्वती
१०. माधुरी
११. सरस्वती

द्विवेदी जी के 'सस्मरण' एव सूर्यनारायण दीक्षित द्वारा[1] द्विवेदी जी के कुछ सस्मरण हैं। इन सस्मरणो मे द्विवेदी जी के जीवन सम्बन्धी कुछ घटनाओ का उल्लेख करते हुए उनके साहित्यिक जीवन पर प्रकाश डाला गया है।

राजाराधिकारमण प्रसाद सिह

सन् १६४० के लगभग हिन्दी के सर्वप्रसिद्ध सस्मरण लेखक राजाराधिकारमण प्रसाद सिह के कुछ सस्मरण हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि के रूप मे प्राप्त होते हैं। वे कला की दृष्टि मे अत्यन्त उत्कृष्ट है और जीवन को ऊँचा उठाने वाले हैं। उनकी सस्मरणात्मक रचनाओ मे 'सावनीसमा', 'टूटा तारा' और 'सूरदास, तीन प्रमुख हैं।

'सावनीसमा' मे राजा साहब की बस्ती का ४०, ४५ वर्ष पूर्व का ही चित्र है जो 'लालू बाबा' द्वारा प्रस्तुत किया गया था। रगीन तबीयत वाले इस वृद्ध ने राजा साहब और उनके साथियो को यह कहानी सुनाई थी। इस कहानी के नायक थे गोपाल बाबू। इस कहानी को राजा साहब ने एक नया रूप दिया है और यह लालू बाबा की ओर से ही लिखा गया है। इसका रचनाकाल सन् १६३८ है। सन् १६३८ से ४०-४५ वर्ष पूर्व राजा साहब की बस्ती का क्या स्वरूप था, कैसे शौकीन आदमी थे, खास-खास त्यौहारो पर लोक जीवन मे कैसी मस्ती की घटनाएँ छा जाती थी—ये सब बातें बडी ही मजेदार भाषा मे लिखी गई हैं। 'सावनीसमा' का अर्थ है सावन के दृश्य या सावन के नजारे। गोपाल बाबू के जाने से सावन सूना हो गया। यह कसक पुस्तक के पन्ने-पन्ने पर अकित है। राजा साहब लिखते हैं —

> "आज की मेरी मानस दृष्टि पर यह सावनी चकल्लस की पार्टी चक्कर काटती है। उस विलुप्त गौरव की धुँधली स्मृति गोधूलि की म्लान आभा की तरह स्निग्ध भी है। करुणा भी।"[2]

राजा साहब ने गोपाल बाबू के इस सस्मरण मे केवल तत्कालीन समाज का चित्राकन ही नही किया वरन् अपनी सस्मरण लेखन कला के उत्कृष्ट रूप का परिचय भी दिया है। इस सस्मरण का सबसे बडा आकर्षण चित्राकन शैली, उर्दू मिश्रित भाषा और छोटे-छोटे वाक्यो मे गागर मे सागर भरने का गुण है। चाहे उत्सव की तैयारी का वर्णन हो चाहे नारी के सौंदर्य का, चाहे प्राकृतिक वातावरण का अकन हो चाहे व्यक्तित्व के अन्तर्द्वन्द्व का—राजा साहब एक चित्र सा खडा कर देते हैं सूक्तियाँ तो बराबर चलती हैं।

'टूटा तारा' राजा साहब के कलात्मक सस्मरणो की दूसरी पुस्तक है। राजा साहब स्वय और हम भी उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना मानते है। इस कृति मे राजा साहब ने मौलवी मुरादबख्श और देवी बाबू के सस्मरण लिखे हैं। दोनो ही सामान्य व्यक्ति

---

१. सरस्वती

२. पृष्ठ २

थे पर अपनी मानवीय विशेषताओ के कारण वे असामान्य थे। राजा साहब उच्च वर्ग के सम्माननीय प्रतिनिधि रहे हैं और उनके सम्पर्क मे अनेक सम्पन्न व्यक्तियो का आना स्वाभाविक है परन्तु उन पर लेखनी न चलाकर उन्होने दो ऐसे व्यक्ति चुन हैं जो एक प्रकार से निरीह और नगण्य हैं। राजा साहब ने आरम्भ मे अपने साहित्य और कला सम्बन्धी विचार देते हुए साराश रूप मे अपने दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है—

> "आखिर शरीर माल और मुजतन के रस से तो आप प्रतिदिन परिचित होते ही है पर हाँ कभी-कभी रुचि मे ताजगी लाने के लिए एकाध सूखी बाजरे की रोटी भी बुरी नही।"[1]

मौलवी मुरादबख्श सूरत की दृष्टि से ही नही सीरत की दृष्टि से भी अच्छे थे—

> "काले थे—कुचकुची कोलतार से पुते तो न थे। मगर जो रग था वह गाढा ही था और वह रग हर्गिज खुशरग नही था। चेहरे की बनावट भी कुछ अजब टेढी थी उस पर चमक तो थी नही नमक भी नही था। बकरो की सी दाढी और गर्दन तक जुल्फो की तैयारी छँटाक भर के आदमी थे।"[2]

"देवी बाबा दूसरा सस्मरण है। इसका अपना अलग महत्व है। यह राजा साहब के अपने एक सम्बन्धी का करुण इतिहास है। वह सम्बन्धी अपनी भरी पूरी रियासत से हाथ धोकर अपने परिवार मे आ गया था। उसने अपनी समस्त इच्छाओ को मार कर किस प्रकार त्याग का जीवन बिताया और अन्त मे कैसी उपहासास्पद स्थिति मे परलोक को प्रस्थान किया—यह बडी विषादपूर्ण भाषा मे वर्णन किया गया है। इस सस्मरण के आरम्भ मे राजा साहब ने लिखा है—

> "मुझे इस आसमान के तले से एक से एक पीडित, एक से एक आर्त्त को देखने का अवसर मिला है। पर वह कोई भी दर्द भरी तसवीर देवी बाबा की करुण मूर्ति के सामने खरी नही उतरी। सो बात की बात यह है कि वह अथ से इति तक आँसू और उसाँस की जीवित प्रतिमा है।"[3]

सब मिलाकर 'टूटा तारा' मे राजा साहब की कला, साहित्य और संस्कृति के प्रति दृष्टि का स्पष्टीकरण बडे स्वाभाविक ढग से हुआ है। भाषा शैली मे भी सतुलन है और विषय विवेचन मे भी। घटनाएं रस का बाना पहनकर पाठक को रूलाती, हँसाती और मानवता का बोध कराती हैं। नाम भी बडा सार्थक है। राजा साहब ने 'टूटा तारा' लिखकर सस्मरण लेखन कला का आदर्श प्रस्तुत किया है।

'सूरदास' इस शृखला की तीसरी कडी है। यह अधो की दुनिया की एक निराली झाँकी प्रस्तुत करता है। सूरदास राजा साहब का पखा कुली है। उसका बचपन का नाम मुरारी था पर आँखें चली जाने से सूरदास हो गया।

---

१. पृ० १३
२. पृ० १५
३. पृष्ठ ११७

वास्तव मे 'सूरदास' मे अन्धो के रोमास का चित्रण है। राजा साहब ने यह प्रयत्न किया है कि जिन्हे हम नीच, घृणित और तुच्छ समझते हैं उनकी चारित्रिक दृढता का परिचय पा सके। उच्च, प्रतिष्ठित और महान् कहलाने वालो मे भी सूरदास और धनिया जैसे सयम दुर्लभ हैं।

सामूहिक रूप से ये तीनो सस्मरणात्मक पुस्तके अपनी विशेषता रखती हैं। 'सावनीसमाँ' मे सामन्ती विलासो की ओर सकेत है, 'टूटा तारा' मे दो सामाजिक दृष्टि मे नगण्य परन्तु हृदय की दृष्टि से धनी और आन के पक्के व्यक्तियो की जीवन झाँकी है और 'सूरदास' मे अधो के प्रेम का प्रदर्शन है। इन सस्मरणो के आधारभूत व्यक्तियो मे से प्रत्येक अपनी करुण छाप छोडता है और पाठक उनके प्रति सहानुभूति से भर उठता है। स्वय लेखक की अन्तर्दृष्टि और सवेदना के प्रति भी आकृष्ट हुए बिना नही रहा जाता। उसके व्यक्तित्व की अनेक ज्ञातव्य बाते इनमे पिरोई हुई है। वह इतना आत्मीयता से इन व्यक्तियो के अन्त: बाह्य जीवन को चित्रित करता है कि शब्द-शब्द सजीव होकर लघुता के प्रति उसके अन्तर की सहानुभूति का जय-जयकार करता है। जीवन और जगत को समझने के अमल्य सूत्र इन सस्मरणो मे बिखरे पडे हैं। सब से बडी बात यह है कि ये कथा शैली मे लिखे गए हैं। इनमे यथास्थान मार्मिक सवादो से नाटकीय प्रभाव उत्पन्न किया गया है। साथ ही औपन्यासिक अन्तर्द्वन्द के भी स्थान-स्थान पर दर्शन होते हैं। इनकी जान इनकी भाषा शैली है। 'सावनीसमाँ' और 'टूटा तारा' की भाषा शैली तो बेजोड है।[1]

राजाराधिकारमण प्रसाद सिंह के पश्चात् गुलाबराय के निबन्ध शैली में लिखे हुए सस्मरण 'मेरी असफलताएँ' पुस्तक मे सग्रहीत हैं। अपने जीवन की कुछ घटनाओ को सस्मरणात्मक रूप मे प्रकट करने का इन्होने सफल प्रयास किया है।

महादेवी वर्मा

महादेवी हिन्दी साहित्य की कलापूर्ण कलाकर्त्री हैं। कवियित्री हैं, आलोचिका भी हैं और सफल सस्मरण लेखिका भी। अतीत के चलचित्र (१९४१ ई०), स्मृति की रेखाएँ (१९४३ ई०) एवं श्रृखला की कडियाँ (१९५० ई०) महादेवी जी के तीन संस्मरणात्मक गद्य सग्रह हैं। सामाजिक वैषम्य एव नारी हृदय की करुणा, वेदना, व्यथा का इनमे मर्मस्पर्शी बौद्धिक विश्लेषण है। काव्य जगत की भावुक प्रणयिनी कवियित्री अपने सस्मरणो मे धरती की बेटी बन कर माँ बहन के रूप मे अवतरित हुई है। आत्मनिवेदिता कवियित्री ने स्वात्मपीडन से उन्मुक्त होकर युग सापेक्ष्य गतिवान रूप स्वीकार लिया है और उसका आत्मरुद्ध कलाकार अपने सस्मरण साहित्य मे युगो-युगो से पीडित तिरस्कृत मानवता की वकालत के लिए तनकर खडा हो गया है।

---

१. राजाराधिकारमण प्रसाद सिंह : व्यक्तित्व और कृतित्व—डॉ० कमलेश

समाज के परम उपेक्षित तत्व ही उनके सस्मरणो की कडियाँ है जिन पर उनकी कोमल करुण स्मृतियो का वितान तना है। इन परम उपेक्षित प्राणियो के साथ उन्होने आत्मिक निकटता प्राप्त की है। निम्न मे निम्न और छोटे से छोटे व्यक्तित्व मे भी अपने को लय करके उनके कलाकार ने उन अभिशप्त प्राणियो के हृदयो मे सँजोया है। इन परम उपेक्षित प्राणियो मे भी महादेवीजी का कलाकार तिरस्कृत हिन्दू नारी पर अधिक केन्द्रित रहा है। फलस्वरूप 'सबिया', विधवा मारवाडिन लछमा और बिट्टो उनके सस्मरणो की अमर थाती बन गई है। सस्मरणों की भाषा शैली अद्वितीय है। सस्मरणो मे स्वाभाविकता होने मे पाठको को आनन्द का अनुभव होता है।

डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के 'गुरुदेव के सस्मरण'[1] सन् १९४२ मे एव कैलाशनाथ काटजू के 'मेरे माता जी'[2] सन् १९४४ मे प्राप्त होते है। किशोरीदास वाजपेयी के[3] 'पुरुषोत्तमदास टडन' (कुछ सस्मरण) भी सन् १९४४ मे ही प्रकाशित हुए। उधर सन् १९४५ मे डॉ० सत्यप्रकाश के 'राजनैतिक जीवन सम्बन्धी सस्मरण'[4] भी प्राप्त होते हैं। इन सभी लेखको ने जो भी सस्मरण लिखे है वे सब व्यक्तिगत अनुभवो पर आधारित है।

सन् १९४९ मे पडित रामनारायण मिश्र द्वारा लिखित 'हिन्दी प्रचार सम्बन्धी कुछ सस्मरण'[5], उमाशकर शुक्ल के 'अखिल भारतीय नई तालीम सम्मेलन सस्मरण'[6] एव पद्मसिंह शर्मा द्वारा लिखित 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सस्मरण प्राप्त होते हैं। पडित रामनारायण मिश्र के सस्मरणो मे भट्टजी के जीवन के प्रत्येक पहलू को लिया है—क्या गार्हस्थिक, क्या राजनैतिक, क्या सामाजिक, क्या साहित्यिक और क्या धार्मिक सभी के विषय मे अपने सस्मरणो मे वर्णन किया है। इस के साथ उनके स्वभाव एव व्यक्तित्व आदि पर भी प्रकाश डाला है। इसी वर्ष गगाप्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'प्रेमचद'[7] (सस्मरण) भी प्रकाशित हुआ। इसमे मिश्र जी ने प्रेमचन्द के जीवन की कुछ घटनाओ पर प्रकाश डाला है। राहुल साकृत्यायन के[8] तिब्बत यात्रा के सस्मरण भी इसी सन् मे प्रकाशित हुए। इनमे राहुलजी ने एक अगस्त से लेकर आठ अगस्त तक की तिब्बत यात्रा के सस्मरणो को लिखा है। जो भी स्थान,

---

१ विशाल भारत
२. विशाल भारत
३. माधुरी
४. सरस्वती
५. सरस्वती
६. विशाल भार.।
७ हस
८. आजकल

भवन् एव प्राकृतिक दृश्य लेखक ने देखे उन्ही का वणन इनमे है।

सन् १९५० मे बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा लिखे दो महान् पुरुषो पर सस्मरण प्रकाशित हुए। 'एण्ड्रूज के सस्मरण'[1] एव 'स्वर्गीय रामानन्द चट्टोपाध्याय एक सस्मरण' प्राप्त होते है। यही नही श्री झाबरमल्ल शर्मा एव श्री बनारसीदास चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित 'बालमुकुन्द गुप्त स्मारक ग्रन्थ' भी इसी वर्ष प्रकाशित हुआ।

बालमुकुन्द गुप्त स्मारक ग्रन्थ

गुप्त स्मारक ग्रन्थ का उत्तरार्द्ध विविध सस्मरणो तथा श्रद्धाजलियो का सकलित अश है जिसमे तीन श्रद्धासमर्पण और सैंतीस सस्मरण तथा श्रद्धाजलियाँ हैं। सर्वप्रथम माधुरी सम्पादक प० रूपनारायण पाडेय का श्रद्धासमर्पण है। पाडेयजी ने गुप्तजी का स्थान उन विवेकशील राष्ट्रभक्त तथा देश के सपूतो मे प्रधान माना है जिन्होने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के सुयोग्य बनाया है। पाडेयजी के श्रद्धासमर्पण मे गुप्तजी का सही चित्र अकित हुआ है तथा उनकी काव्यगत विशेषताओ पर सम्यक् प्रकाश पडा है। इसके पश्चात् अयोध्यासिंह उपाध्याय की सस्मरणात्मक तीन पक्तियाँ हैं जिनमे उपाध्यायजी ने गुप्तजी की भारत मित्रकालीन हिन्दी सेवा को सगर्व स्वीकार किया है किन्तु गुप्तजी की हिन्दी की सेवा की यह स्वीकृति शब्द-दारिद्रय की सूचक है। तत्पश्चात् श्री गिरिधर शर्मा का एक सस्कृत श्लोक है जो गुप्तजी की विशेषताओ का उल्लेख करता है।

गुप्तजी विषयक सर्वोत्तम सस्मरण 'जमाना' सम्पादक श्री दयानारायण निगम का है जिसका हिन्दी अनुवाद 'बहुत सी खूबियाँ थी मरने वाले मे' शीर्षक से पडित हरिशकर शर्मा ने 'विशाल भारत' सितम्बर सन् १९२२ ई० मे प्रकाशित कराया था।[3] यही इस ग्रन्थ मे सम्मिलित है, प्रस्तुत संस्मरण अति भावात्मक तथा आत्मीयता से ओतप्रोत है। आलोच्य सस्मरण गुप्त जी के साहित्य का अध्ययन करने मे पथ-प्रदर्शक का काम करता है।

शेष सस्मरणो मे से अमृतलाल चक्रवर्ती का 'तेजस्वी गुप्तजी' 'बाबू गोपालराम गहमरी का 'गुप्तजी का शुभानुसमरण', महावीरप्रसाद का 'सहकारी का अनुभव', अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी का 'गुप्तजी की स्मृति मे', प गिरिधर शर्मा का 'लेखनी का प्रभाव', सेठ कन्हैयालाल पोद्दार का 'गौरवान्वित गुप्तजी', बाबू रामचन्द्र वर्मा का 'मेरे आदर्श', प० श्रीनारायण चतुर्वेदी का 'गुप्तजी का व्यग्य और हास्य', श्री रामधारी सिंह दिनकर का 'गुप्तजी कवि के रूप मे', प० किशोरीदास वाजपेयी का 'समालोचक प्रतिभा और कर्तव्य निष्ठा', प० श्री रामशर्मा का 'पत्रकार पुगव गुप्तजी', आदि संस्मरण इस दृष्टि से अधिक उत्कृष्ट हैं कि इनके द्वारा गुप्तजी की पत्रकारिता

---

१. आजकल

२ विशाल भारत

३ जमाना, लाला बालमुकुन्द गुप्त, अक्तूबर-नवम्बर, १९०७, पृ० २०७

की विशेषता, भाषा शुद्धता, हिन्दी गद्य का निर्माणत्त, उत्तम व्यग्य एव हास्य शैली की परम्परा का स्थापन, कविता की विशेषता तथा भारतेन्दु परम्परा परिपालन का ज्ञान होता है और होना है हिन्दी साहित्य के इतिहास मे गुप्तजी के स्थान का निर्धारण।

उक्त सम्मरण लेखको मे से प्रथम छ तो गुप्त जी के सामयिक लेखक हैं। इन लेखो मे गुप्तजी विषयक कुछ अच्छे सस्मरण आ गए है किन्तु इन्हे सर्वांगीण दृष्टि से उत्कृष्ट नही कहा जा सकता क्योकि इनमे आँखो देखे और अपने व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित गुप्तजी सम्बन्धी अधिक सस्मरणो का अभाव है।[१]

इस प्रकार १९०० से १९५० तक के हिन्दी सस्मरण साहित्य का विकास अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे ही अधिक सम्मरण प्रकाशित हुए हैं। इनकी उन्नति का कारण ये पत्र-पत्रिकाएँ ही है विशेषतया—सरस्वती, माधुरी, हस, विशाल भारत। बनारसीदास चतुर्वेदी ने भी तीन सस्मरण पत्रिकाओ मे प्रकाशित करवाकर अपनी प्रतिभा का परिचय हिन्दी साहित्यिको को दे दिया था। संस्मरणो के विविध विषय भी देखने मे आ गए थे। साहित्यिक लेखको, राजनीतिज्ञों के विषय मे जहाँ सस्मरण लिखे गए वहाँ महादेवी वर्मा एव राजाराधिकारमण प्रसाद सिंह ने ऐसे मनुयो को अपने सस्मरणो का विषय बनाया जो कि साधारण मनुष्य होते हुए भी मानवीय गुणो के कारण असाधारण व्यक्ति हैं। महादेवी एव राजाराधिकारमण प्रसाद सिंह का समस्त सस्मरण साहित्य इस बात का प्रमाण है। इसके अतिरिक्त राहुलजी ने यात्रा विषयक सस्मरण भी लिखे। आत्मकथा की शैली मे लिखे हुए जोशीजी के सस्मरण मिलते हैं। अभी तक हिन्दी सस्मरण साहित्य मे ऐसी पुस्तक नही प्राप्त होती जिसमे किसी साहित्यिक के सम्पूर्ण जीवन को सस्मरणो के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य के किसी भी सस्मरण लेखक ने सस्मरणो के रूप मे अपने जीवन को नहीं लिखा। गोपालराम गहमरी ने कुछ लिखने का प्रयास किया था। परन्तु उनकी शैली और भाषा प्रभावोत्पादक नही दीख पडती। अभी तक केवल एक 'गुप्त स्मारक ग्रन्थ' प्राप्त होता है जिनमे भिन्न-भिन्न लेखको ने उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला। सन् १९२८ से १९५० तक हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ ने सस्मरण साहित्य के उत्थान मे पूर्ण सहायता दी है।

सन् १९५१ मे भदन्त आनन्द कोसल्यायन के 'कहाँ जाओगे कहाँ रहोगे'[२] एव देवेन्द्र सत्यार्थी के 'कोटा अधिवेशन'[३] के सस्मरण प्रकाशित हुए। भदन्त आनन्द कोसल्यायन के सस्मरण मे १६, १७ वष के लडके ओन्सेन का वर्णन है। लडके ने बाल्यकाल की जो कहानी सुनाई थी, लेखक ने उसी का वर्णन किया है।

---

१. बालमुकुन्द गुप्त : जीवन और साहित्य, ले० डा० नत्थनसिंह, प्रथम सस्करण जनवरी १९५९, पृष्ठ २३

२. आजकल

३. आजकल

सन् १९५१ मे हिन्दी सस्मरण साहित्य के दो प्रसिद्ध लेखक—शान्तिप्रिय द्विवेदी एव राहुल साकृत्यायन की कृतियाँ प्राप्त होती हैं।

शान्तिप्रिय द्विवेदी

शान्तिप्रिय द्विवेदीजी हिन्दी के प्रसिद्ध सस्मरण लेखक हैं। इनके सस्मरण हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। इनकी दो ससमरणात्मक रचनाएँ प्राप्त होती हैं—परिव्राजक की प्रजा एव पथचिन्ह।

'परिव्राजक की प्रजा' मे श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी ने छोटे-छोटे अनेक सस्मरणो के रूप मे अपनी आत्मकथा लिखी है। शान्तिप्रिय के पिता सन्यासी हो गए थे। ग्रन्थ मे इन्ही सन्यासी (परिव्राजक) पिता की सन्तान (प्रजा) की जीवनगाथा वर्णित है। इस ग्रन्थ मे दो ही व्यक्ति प्रमुख हैं – एक शान्तिप्रिय दूसरी उनकी बडी बहन। बडी बहन करुणा की सजल मूर्ति है। वह बाल विधवा अपने छोटे-से जीवन मे माता-पिता, छोटी बहन और दो कोमल भाइयो की मृत्यु का आघात झेलती है और बच्चो के समान शान्तिप्रिय का लालन-पालन करती है। शान्तिप्रिय ने उन्हे धार्मिक, सुरुचि-पूर्ण, आचार-विचार का ध्यान रखने वाली और परिश्रमी चित्रित किया है। उनकी तुलना मीरा और स्वर्ण की कल्पलता से की है। इस बहन के प्रति शान्तिप्रिय की अत्यधिक श्रद्धा है अत. वर्णन प्राय अतिशयोक्तिपूर्ण और अतिरजित हो गए है। अपने को बधिर और कृशकाय बतलाया है। इस कृशता की तुलना उन्होने मृगशावक, शशक कुडमल और ओस बिन्दु से की है। ये उपमान उनके लिए कहाँ तक उपयुक्त हैं यह तो वे ही लोग बता सकेंगे जिन्होने इनके भी दर्शन किये हैं।

इस आत्मकथा मे शान्तिप्रिय ने अपने साहित्यिक और सासारिक जीवन के विकास के साथ अपनी बडी बहन के प्रति हृदय की समस्त श्रद्धा उँडेलते हुए अपने अभावो का खुला वर्णन किया है। यद्यपि लेखक के अकर्मण्य होने और विषम परिस्थितियो मे सघर्ष से पलायन करने के कारण इस कृति से पाठको को कोई सामाजिक प्रेरणा नही मिलती फिर भी इसके कुछ स्थल बडे मर्मस्पर्शी और पठनीय बन पडे हैं।

वर्णन की दृष्टि से यह ग्रन्थ बडा महत्वपूर्ण है। शान्तिप्रिय को कवि हृदय मिला है और उसका प्रभाव उनकी गद्य शैली पर भी पडा है। विभिन्न प्रसगो के बीच सरयू तट और सरोवर खेत और अमराईयाँ, शरद चाँदनी और पत्र पर कनेर नीबू नीम और बेर जिस किसी भी वस्तु को इन्होने बाह्य वस्तु वर्णन के रूप में ग्रहण किया है उसे चमका दिया है। काशी तो बहुत ही सजीव इनके सस्मरणो मे पाई गई है।

इन सस्मरणो मे अनेक व्यक्तियो की चर्चा हुई है। राजनैतिक क्षेत्र मे जिन महापुरुषो की चर्चा है उनकी झाँकियाँ ही इस ग्रन्थ मे मिलती हैं। नाम तो इन्होंने बहुत से व्यक्तियो के लिए है जैसे—महात्मा गाधी, नेहरू, राजेन्द्रप्रसाद, सरोजिनी नायडू, गणेशशकर विद्यार्थी, चन्द्रशेखर आजाद आदि पर इसे राजनीतिक महापुरुषों का सम्पर्क नही कह सकते। धर्म के क्षेत्रो मे थियोसोफिकल सोसाइटी, आर्य समाज और

ईसाई प्रचारको की चर्चा मात्र है। इससे इनके मन की किसी गहरी प्रतिक्रिया का पता नही चलता।

साहित्यिको मे प्रसाद और रायकृष्णदास की चर्चा थोडी अधिक है। अन्य साहित्यकारो मे प्रेमचन्द, बनारसीदास चतुर्वेदी, कृष्णबिहारी मिश्र, पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी, उग्र, दुलारेलाल भार्गव, निराला, पन्त, महादेवी, नवीन, भगवतीचरण वर्मा और रामकुमार का उल्लेख हुआ है।

पथचिन्ह

'पथचिन्ह' श्री शान्तिप्रिय द्विवेदी के सस्मरणो और निबन्धो का छोटा-सा संग्रह है। सस्मरण है अपने और अपनी बहन के सम्बन्ध मे, निबन्ध है कला और सस्कृति को लेकर। सस्मरण भावप्रधान है, निबन्ध विचारप्रधान सस्मरणो में शान्तिप्रिय का कवि हृदय लौट आया है। निबन्धो मे आलोचक बोल रहा है।

शोक के गहरे आघात से इस ग्रन्थ का सृजन हुआ है। मृत्यु के आघात और उनकी आशका ने सदैव जीवन्त रचनाओ को जन्म दिया है। इन सस्मरणो मे शान्तिप्रिय ने अपने बचपन की ही चर्चा अधिकतर की है। इससे उनके व्यक्तित्व का अश ही हमारे सामने आता है। वह भी ऐसा है जिसके सम्बन्ध मे वे कह सकते हैं कि मैं अपने को जैसा समझता हूँ वैसा मैंने चित्रित किया है। आप लोग क्या समझते हैं इसकी मैं चिन्ता नही करता। फिर भी पुस्तक मे जीवनी और विचारो के बीच एक बडी खाई-सी दिखाई देती है। अपने सम्बन्ध मे शान्तिप्रिय ने कुछ-कुछ लिखा है उससे उनके जीवन की बहुत-सी बातो पर प्रकाश पडता है। उन उन्होने परिस्थितियो का वर्णन बडी स्पष्टता और तत्परता से किया है जो उनके व्यक्तित्व के विकास या उसे कुचलने में सलग्न रही। इसमे सदेह नही कि यह सस्मरण बहुत भोलेपन के साथ लिखा गया है और हृदय पर इसका सस्कार बहुत कम पडता है।

बनारसीदास चतुर्वेदी

सन् १९५२ मे बनारसीदास चतुर्वेदी के 'सस्मरण' प्रकाशित हुए। इन्होने बहुत ही कलापूर्ण ढंग से सस्मरण लिखे हैं। भाषा बडी ही सजीव तथा वर्णन शैली आकर्षक है। 'सस्मरण' मे २१ व्यक्तियो के सस्मरण २५१ पृष्ठो मे लिखे हैं। इसी पुस्तक मे भवानीदयाल सन्यासी का सस्मरण है। उनके जीवन के सस्मरण के कुछ अंश निम्नलिखित हैं—

"पर स्वामीजी का जीवन एकागी नही था। आर्य समाज, हिन्दी प्रचार, प्रवासी भाइयो की सेवा और साहित्य रचना—इन चारो क्षेत्रो मे स्वामीजी ने बडी सफलतापूर्वक काम किया।"

"स्वामीजी चाय के बड़े शौकीन थे और 'विशाल भारत' आफिस के जब कभी पंडित पद्मसिंह शर्मा तथा स्वामीजी का आगमन होता था तो हमारे

सहकारी श्री ब्रजमोहन वर्मा 'एक्टो घोरचा' तैयार कराते और टोस्ट तो उसके साथ होता ही। स्वामीजी का धूम्रपान भी साथ-साथ चलता ही था।"[1]

राहुल सांकृत्यायन

सन् १९५१ मे राहुलजी की 'यात्रा के पन्ने' पुस्तक प्रकाशित हुई। डायरी शैली में लिखी गई यह सर्वप्रथम सस्मरणात्मक पुस्तक है। इस पुस्तक में लेखक ने तिब्बत यात्रा का वर्णन किया है। यह चार भागो मे विभाजित की गई है—तिब्बत में, अज्ञात तिब्बत प्रवास पत्र एव राजस्थान विहार। प्रत्येक स्थान व घटना का वर्णन तिथि अनुसार किया गया है। निम्नलिखित उद्धरण मे यह स्पष्ट है—

"२६ जुलाई को भोजन करके ७ बजे चले। शनू मे शिगर्चे जाने मे तीन छोटी-छोटी नदियाँ पड़ती हैं। पानी नही बरसा था इसलिए हमे उनके पार करने मे कोई दिक्कत नही हुई और दोपहर को शिगर्चे पहुँच गए।"[2]

किशोरीदास वाजपेयी

सन् १९५३ मे किशोरीदास वाजपेयी की पुस्तक 'साहित्यिक जीवन के अनुभव और सस्मरण' प्रकाशित हुई। समस्त पुस्तक के चार भाग हैं। जीवन मे जो भी अनुभव उन्हे हुए उन सभी का वर्णन इसमे है। जीवन मे असफलता के कारण और सफलता की कुजी दोनो ही इस पुस्तक मे हैं। प्रत्येक घटना का वर्णन शीर्षक देकर किया है। भाषा तथा शैली की अनेक समस्याओ पर भी वाजपेयीजी ने अपने विचार प्रकट किए हैं। भाषा की स्वाभाविकता एव शैली की प्रभावोत्पादकता पठनीय है।

जैनेन्द्र

हिन्दी सस्मरण साहित्य मे जैनेन्द्र का नाम भी उल्लेखनीय है। इनकी सस्मरणो पर लिखी पुस्तक 'ये और वे' नाम से सन् १९५४ मे प्रकाशित हुई। इसमे बारह सस्मरणो का सकलन है। इस पुस्तक मे प्रेमचन्द का भी सस्मरण है। उनके जीवन के कुछ सस्मरण के अश निम्नलिखित हैं—

"उनका जीवन एक आदर्श गृहस्थ का जीवन था। बुद्धि द्वारा उन्होने स्वतन्त्र और निर्बाध चिन्तन के जीवन व्यवसाय को अपनाया सही पर कर्म मे वह अत्यन्त मर्यादाशील रहे। आर्टिस्ट के सकुचित पश्चिमी अर्थो मे उन्होन आर्टिस्ट बनने की स्पर्द्धा नही की। यही मर्यादाशील प्रामाणिकता उनके साहित्य की धुरी है। उनके साहित्य मे जीवन की आलोचना तीव्र है, बहुमुखी है किन्तु एक सर्व-सम्मत आधारशिला है जिसको उन्होने मजबूती से पकडे रक्खा और जिस पर उन्होंने एक भी चोट नही लगने दी।"

१. सस्मरण, प्रथम सस्करण, पृ० सख्या १७६-१७९
२. पृ० ७९

"मानवीय भावनाओ का परनिमित स्नेह का दैन्य प्रेमचन्दजी मे था जिसको कलाकार समझा और जानना चाहता है, उसमे इसकी सम्भावना रहती है। कलाकार इतना आत्मग्रस्त हो जाता है कि औरो के प्रति उपेक्षावृत्ति धारण कर ले। प्रेमचन्दजी आत्मग्रस्त न थे बल्कि वह परव्यस्त थे।"[1]

इसी पुस्तक मे मैथिलीशरण गुप्त का भी सस्मरण है उनके जीवन के सस्मरण के कुछ अश निम्नलिखित हैं—

'अपने मे बडो को बडा मानते है और यह हो सकता है कि इसमे अपने से छोटो को भी बडा मान बैठे। लेकिन जिनको अपने से छोटा मानना होता है, उनसे प्रत्याशा रखते हैं कि छोटो की तरह बडो का मान रखकर वे चले। वय की अवज्ञा उन्हे नापसन्द है और वय की वृद्धता के कारण मूढ भी उनके निकट आदरणीय हो सकता है। विद्या बुद्धि नही, गुण भी उतना नही जितना सामाजिकता के लिहाज से मनुष्य मनुष्य के प्रति अपने व्यवहार मे वह भेद करते हैं। राजा और रक उनके लिए समान नही है। राजा को 'हजूर' कहेगे, रक को 'तू' भी कह देगे। लेकिन दबेगे राजा से नही, दबाएँगे रक को भी नही।"[2]

इन्होने बहुत ही कलापूर्ण ढग से सस्मरण लिखे हैं।

घनश्यामदास बिड़ला

सन् १९५५ मे घनश्यामदास बिडला के 'गाधीजी की छत्रछाया मे' व्यक्तिगत सस्मरण प्रकाशित हुए। इन सस्मरणो मे तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक एव धार्मिक परिस्थितियो का ज्ञान होता है। साथ मे बिडला का गाधीजी के साथ कैसा सम्बन्ध था, गाधीजी उन्हे कैसा व्यक्ति समझते थे, इन सब बातो का आभास हमे सस्मरणो मे मिलता है। बिडलाजी ने अपने जीवन की समस्त घटनाओ की वास्तविकता दिखाने के लिए कुछ पत्र भी दिए हैं—

"इन पृष्ठो मे यह भी देखने को मिलेगा कि किस प्रकार भाँति-भाँति के कामो से घिरे रहने पर भी गाधीजी बिडलो से सम्बन्ध रखने वाली जरा-जरा सी बात मे व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी रखते थे—ठीक वैसे ही जैसे कोई पिता अपनी सन्तान के कार्यकलाप मे रस लेता है।"[3]

सस्मरण सम्बन्धी इनकी दूसरी पुस्तक सन् १९६३ मे 'कुछ देखा कुछ सुना' प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक की सबसे बडी विशेषता यह है कि लेखक ने बडे-से-बडे से लेकर छोटे से-छोटे व्यक्ति तक पर लेखनी उठाई है। एक ओर ठक्करबापा, गाधीजी, नेहरूजी प्रभृति के सस्मरण लिखे हैं तो दूसरी ओर हीरा और नाहरसिंह जैसे व्यक्तियो के विषय मे भी इन्होने लिखा है।

---

१. पृ० ३९, ५४
२. पृ० ७९
३. पृ० ९

यशपाल

हिन्दी सस्मरण साहित्य के प्रसिद्ध लेखको मे यशपाल का नाम भी अग्रगण्य है। इनके सस्मरणो के तीन भाग 'सिंहावलोकन' नाम से १९५२ एव १९५५ सन् मे प्रकाशित हुए। इनके सस्मरणो मे सशस्त्र क्रान्ति की कहानी है। इनमे राजगुरु, सुखदेव एव भगतसिंह सम्बन्धी सस्मरण विशेष रूप से पाए जाते हैं। इनके सस्मरणो मे तत्कालीन राजनैतिक सामाजिक परिस्थितियो का पूर्ण रूप से ज्ञान होता है। इन सस्मरणो को पढने से ज्ञात होता है कि किन-किन कठिनाइयो का सामना करने से हमे यह स्वतन्त्रता की प्राप्ति हुई है। प्रथम भाग मे यशपाल ने अपने जीवन से सम्बन्धित अधिक सस्मरणो का उल्लेख किया है। सस्मरणो मे लेखक की निर्भीकता एव स्पष्ट-वादिता का ज्ञान पाठक को मिल जाता है। भाषा शैली सशक्त होने से सस्मरण अधिक प्रभावोत्पादक बन पडे हैं। चारो ओर क्रान्तिकारी वातावरण होने से भी सस्मरणो मे रोचकता है।

उपेन्द्रनाथ अश्क

सन् १९५५ मे अश्कजी की पुस्तक 'रेखाएँ और चित्र' प्रकाशित हुई। इसमे रेखाचित्र, 'सस्मरण' और हास्य रस के निबन्धो का सग्रह है। सस्मरण केवल दो ही हैं, यशपाल और होमवतीजी। इनकी एक और पुस्तक 'मटो मेरा दुश्मन' सन् १९५६ मे प्रकाशित हुई। इस पुस्तक मे उस महान् लेखक के साथ अश्क द्वारा बिताए गए दिनो की दर्दीली और दिलचस्प कहानी है। अश्क ने बडे ही निकट से उसे पहचाना था, उससे अजहद प्यार किया था और बेहद नफरत की थी। उन्ही बातो और घट-नाओ को एकत्रित करके इस अनूठे सस्मरण मे सँजो दिया गया है। निम्नलिखित उद्धरण उल्लेखनीय हैं—

> "मटो जब गाली देने पर माफी माँग लेता था इतना मादा उसमे था, तब फिर क्या कारण है कि हम मे बराबर खिचाव रहा और हम लड़ते रहे ? मैंने स्वय इस बात पर गौर किया है और मैं हमेशा इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि जिन्दगी की बिसात पर हमे एक-दूसरे के सामने रख दिया गया और हम लडने पर मजबूर रहे। अगर कही बराबर मिलकर बैठे भी तो एक-दूसरे से लडते हुए, एक-दूसरे के पैंतरे को काटकर शिकस्त देने वाले मोहरो की तरह।"[१]
>
> "मटो जिस तरह पीटना जानता था—लेकिन पिटना नही, पढाना जानता था लेकिन पढना नही, उसी तरह मज़ाक करता था पर मज़ाक बर्दाश्त करने की शक्ति उसमे नही थी, उसे बडी जल्दी गुस्सा आता था।"[२]

इस प्रकार सभी सस्मरणो मे लेखक की कला-कुशलता निखर उठी है।

---

१. पृ० ७२
२. पृ० ६२

शिवरानी देवी*

सन् १९५६ मे 'प्रेमचन्द : घर मे' शिवरानी देवी द्वारा लिखित पुस्तक प्रकाशित हुई। इस पुस्तक मे शिवरानी देवी ने प्रेमचन्द के सम्पूर्ण जीवन की एक झाँकी प्रस्तुत की है। इस पुस्तक मे घरेलू सस्मरण मिलते है पर इन सस्मरणो का साहित्यिक मूल्य इस दृष्टि से है कि उस महान् साहित्यिक के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। मानवता की दृष्टि से वह व्यक्ति कितना महान् कितना विशाल था। यही बात इस पुस्तक से स्पष्ट होती है। इसमे लिखित सभी सस्मरण लेखिका ने पूर्ण ईमानदारी और सचाई से लिखे है। सभी सस्मरण स्वाभाविक एव आकर्षक शैली मे लिखे गए हैं। भाषा अत्यन्त सजीव और सशक्त है। स्वाभाविकता लाने के लिए लेखिका ने कही-कही वार्तालाप का भी सहारा लिया है।

सन् १९५७ मे राजनैतिक महापुरुषो के सस्मरण प्राप्त हैं। हरिभाऊ उपाध्याय के 'साधना के पथ पर', 'स्मरणाजलि' जिसके सम्पादक मडल काका साहब कालेलकर, हरिभाऊ उपाध्याय, श्रीमन्नरायण आदि के हैं, प्रकाशित हुए। यही नही श्री कृष्णदत्त भट्ट के सस्मरण भी 'नक्षत्रो की छाया मे' सकलित हैं। इन सभी राजनैतिक पुरुषो के सस्मरण व्यक्तिगत घटनाओ पर आधारित हैं, सभी मे तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन है।

स्मृति ग्रथ

सन् १९५९ मे स्मृति ग्रन्थो द्वारा हिन्दी सस्मरण साहित्य का विकास हुआ। पत, प्रेमचन्द, पाडेय एव मैथिलीशरण गुप्त आदि प्रसिद्ध साहित्यिको पर स्मृति ग्रन्थ प्रकाशित हुए। इनमे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध साहित्यिक लेखको द्वारा लिखे हुए सस्मरण पाए जाते हैं। 'प्रेमचन्द स्मृति ग्रन्थ' का प्रकाशन हस प्रकाशन, इलाहाबाद से हुआ। इस ग्रन्थ मे अमृतराय, इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र, उपेन्द्रनाथ अश्क, बेनीपुरी, वाजपेयी एव चतुर्वेदी द्वारा लिखे हुए सस्मरणो मे प्रेमचन्द के जीवन और कृतित्व का पूर्णतया ज्ञान होता है। इन्होंने प्रेमचन्द के स्वभाव, वेशभूषा, घर रखने का ढग, बोलचाल आदि जीवन के सभी पहलुओ को लिया है।

'श्री सुमित्रानन्दन पत स्मृति चित्र' राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। इस स्मृति ग्रन्थ मे पंत के प्रति अनेक हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वानो ने जिनम आलोचक, कवि एव कथालेखक है अपने सस्मरण लिखे है। श्री जगदीशचन्द्र माथुर, महादेवी, इलाचन्द्र जोशी, आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी, डॉ० नगेन्द्र, शिवदानसिंह चौहान, हरिवशराय बच्चन एव शान्तिप्रिय द्विवेदी जैसे विद्वानो ने अपने सस्मरणो मे पतजी के साहित्यिक व्यक्तित्व एव कृतियो के विषय मे प्रकाश डाला है। पत के अन्तरग एव बाह्य व्यक्तित्व का पूर्णतया चित्रण इन सस्मरणो मे है।

'पाडेय स्मृति ग्रन्थ' हिन्दी साहित्य सगर, लखनऊ से प्रकाशित हुआ। इस स्मृति ग्रन्थ मे प्रेमनारायण टडन, श्रीनारायण चतुर्वेदी, त्रिलोकीनारायण दीक्षित,

अमृतलाल नागर, गणेशदत्त सारस्वत एव शिवपूजन सहाय द्वारा लिखे रूपनारायण पाडेय सम्बन्धी सस्मरण प्राप्त होते हैं। गणेशदत्त सारस्वत द्वारा लिखे सस्मरण का उद्धरण उल्लेखनीय है—

"शान्ति और उदारता को मैंने उनमे स्पष्ट देखा, विद्या तथा ज्ञान की सजीव मूर्ति का दर्शन कर मुझे परमानद अनुभव हुआ, विनय एव नम्रता के गुणो से परिपूर्ण पाया। उनके सामने एक लक्ष्य था—वह था साहित्य सेवा। सचमुच पहले-पहल के मिलन मे मैंने उन्हे गतिमान जागरूक साहित्य देवता के रूप मे देखा था।"[1]

पाडेयजी के सस्मरणो मे उनका कवि रूप, आलोचक, सम्पादक एव अनुवादक रूप पूर्ण रूप से वर्णित है। इनके साथ ही उनकी व्यक्तिगत विशेषताओ का भी वर्णन है।

इन स्मृति ग्रन्थो के अतिरिक्त इसी सन् मे हमे 'राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ' प्राप्त होता है। इस ग्रन्थ मे वृन्दावनलाल वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र, विश्वनाथप्रसाद मिश्र, उदयनारायण तिवारी, पद्मनारायण आचार्य एव श्रीमती सावित्रीदेवी वर्मा के लिखे हुए सस्मरण सग्रहीत हैं। द्विवेदीजी द्वारा लिखे हुए सस्मरण का उद्धरण उल्लेखनीय है—

"गुप्तजी के काव्य सद्गृहस्थ के लिए बहुत ही उपयोगी हैं। वे वस्तुत सद्गृहस्थो को ही ध्यान मे रखकर लिखे गए हैं। उनका प्रधान उद्देश्य युवको मे महान आदर्श और उत्तम चरित्र की प्रतिष्ठा करना है। इसलिए मेरे बाल्य-काल मे गाँव मे पढे-लिखे सात्विक विचार के लोग गुप्तजी की कविताओ को बडे ही आदर्श और प्रेम की दृष्टि से देखते थे।"[2]

'शिवपूजन रचनावली चौथाखड' भी सन् १९५९ मे बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा प्रकाशित हुई। इस पुस्तक मे शिवपूजन सहाय द्वारा लिखे विद्वानो सम्बन्धी सस्मरण सग्रहीत हैं। पडित विनोदशकर व्यास, निराला, बदरीनाथ भट्ट, श्यामसुन्दरदास, माधव शुक्ल, मुशी प्रेमचन्द, श्री पारसनाथ सिंह एव श्रद्धेय विद्यार्थीजी पर लिखे हुए इनके सस्मरण इस पुस्तक मे प्राप्त होते हैं। ये सस्मरण अत्यन्त रोचक एव प्रभावपूर्ण हैं। भाषा भी विषयानुकूल है। शिवपूजन सहाय के सस्मरण लेखन की यह सब से बडी विशेषता है कि वह सस्मरण लिखने के पश्चात् अन्तिम कुछ पक्तियो मे उसके जीवन का साराश एव उसकी व्यक्तिगत विशेषताओ का परिचय देते हैं जो कि उनकी भाषा की सजीवता एव समास शैली का द्योतक है। कही भी वर्णन मे कृत्रिमता नही आने पाई—

"बस इसी एक वाक्य मे शुक्लजी का उज्जवल चरित्र और आदर्श

१. पृ० ४८

२. पृ० ९८

जीवन चमक रहा है। वे सच्चे वीर पुरुष थे। उनके अंग-प्रत्यंग से, उनके प्रत्येक शब्द से पुरुषत्व प्रकट होता था। मैंने पौरुष को साकार और सजीव उसी पुरुष सिंह में देखा। हिन्दी संसार में अब वैसी मूर्ति नहीं दीख पड़ेगी। उनकी सहृदयता, भद्रता और भव्यता भूलती ही नहीं। उनके गुणों का कहाँ तक बखान करूँ। अनेक प्रसंग है। उनका उल्लेख करके सोई व्यथा को जगाना नहीं रुचता।"[1]

भाषा शैली ही इनके संस्मरणों को सजीवता प्रदान करती है। इसी विशेषता के कारण इनमें स्वाभाविकता एवं रोचकता है।

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के संस्मरणों का संग्रह 'दीप जले शंख बजे' के नाम से सन् १९५८ में प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक में मिश्रजी द्वारा लिखे हुए पच्चीस संस्मरण हैं। ये संस्मरण लिखते समय मिश्रजी ने यह नहीं सोचा कि अमुक व्यक्ति जनता में प्रसिद्ध हैं कि नहीं, उनके सम्पर्क में जो व्यक्ति आए और जिनमें उन्होंने मानवीय गुणों का समावेश पाया उन्हीं का वर्णन किया है। मुहम्मद अली कोतवाल, डाक्टर टिंचरप्रसाद, भुल्हड़मिश्र, मुखिया सुचेत, मीरुखलीफा, गोरा दीवान, नंदा गाटा, प० रामेश्वरदयाल आदि पच्चीस संस्मरण प्राप्त होते हैं। मिश्रजी की शैली की यह विशेषता है कि जिस भी व्यक्ति का यह संस्मरण लिखते हैं उसमें कथालेखकों की तरह यह घटनाओं का उल्लेख कर उनमें उसकी मानवीयता दिखाकर अन्तिम पाँच-छः पंक्तियों में सारांश देते है। उनमें उस व्यक्ति के समस्त गुणों का संक्षेप में वर्णन होता है। 'शेष' के व्यक्तित्व का उन्होंने इसी प्रकार से वर्णन किया है—

"शेष कभी वाहवाही के कोल्हू पर नहीं घूमे, जीवन को उन्होंने कभी एकाक्षी होकर नहीं देखा। उनकी आँखें देखती, हृदय महसूस करता और मस्तिष्क सोचता। बस यह दर्शन, अनुभूति और चिन्तन ही उनकी काव्यधारा के उद्गम थे। उनकी पद्धति सम्बन्धी कविताओं में उनका दर्शन है, प्रणय-गीतों में अनुभूति और दार्शनिक गजलों में चिन्तन। वह ठीक तरह सोचते थे। ठीक तरह महसूस करते थे। उनका व्यक्तित्व स्वस्थ था—उनका साहित्य स्वस्थ है, 'शेष' एक साहित्यिक साधक थे ...

यह थे शेषजी, सरल होकर भी सुलझे हुए, सादे होकर भी बाँके, आकांक्षी होकर भी साधना विश्वासी, सब के अपने, अपने को सुलभ, सचमुच कितने अच्छे और प्यारे इन्सान थे शेष भैया।"[1]

सन् १९५९ में ही इन्द्रविद्यावाचस्पति के पन्द्रह संस्मरणों का संग्रह 'मैं इनका

१. पृ २०५ (कविवर माधव शुक्ल)
१. पृ० २०३, २०४

ऋणी हूँ' के नाम से प्रकाशित हुआ। इसमे तिलक, बापू, मोतीलाल नेहरू, लाजपत राय, मदनमोहन मालवीय, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, पटेल, सुभाषचन्द्र बोस, डाक्टर अन्सारी एव मुशी प्रेमचन्द सम्बन्धी सस्मरण हैं। इन सस्मरणो की सबसे बडी बिशेषता यह है कि इनमे किसी प्रकार की औपचारिकता नही है। लेखक ने जिसे जैसा देखा बडे ही स्वमाविक रूप मे उसे वैसा ही चित्रित कर दिया है। इसलिए इन रचनाओ मे बडी ही सहजता तथा स्वाभाविकता है। अपने सस्मरणो के लिए लेखक ने किसी विशेष दल, धर्म अथवा क्षेत्र के व्यक्तियो को नही चुना, उनकी व्यापक सहृदयता ने जिस किसी व्यक्ति मे गुणो का दर्शन किया उसी पर उन्होने लेखनी चलाई। राजनीतिज्ञ, साहित्यकार, समाजसेवी—सभी इसमे आ गए हैं।

सन् १९६० मे ब्रजमोहन व्यास द्वारा लिखित बालकृष्ण भट्ट का सस्मरणो मे जीवन प्रकाशित हुआ। व्यासजी के इन अनूठे सस्मरणो मे भट्टजी के आद्यत जीवन पर नया प्रकाश पडता है—त्याग और तपस्या से परिपूर्ण इनका ज्वलत चित्र मूर्तिमान हो जाता है। उनके व्यक्तित्व के विषय मे लिखते हैं—

"भट्टजी एक सरलचित्त धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। ईश्वरभक्त थे। परन्तु रूढि से, केवल इसलिए कि वह परम्परागत हैं, उन्हें कुढन होती थी। प्रतिदिन सूर्योदय के बहुत पहले उठ, स्नानादिक से निवृत्त होकर सूर्य के निकलते ही उन्हे अर्घ्य देते और सन्ध्योपासन करते थे।"[1]

"भट्टजी को दूध का बडा शौक था। उन्होने एक गाय पाल रक्खी थी। कुडमुडा कर उसके सब नखरे बर्दाशत करते थे। जब भी हरी घास वाली मिलती थी, गाय के लिए अवश्य लेते थे। एक दिन 'हस्ब-मामूल' अपने तख्त पर बैठे थे कि एक घास वाली सामने गली मे जाती दिखलाई पडी। जोर से पुकारा 'ओ घासवाली। कितने की घास देवे?' बोली 'बाबा, तीन पैसा की'। 'बाबा' का सम्बोधन सुनते ही कुढ गये।"[2]

इस प्रकार कितने ही सस्मरण पुस्तक मे भरे पडे हैं जिनसे उनके व्यक्तित्व का स्पष्ट चित्रण होता है। भट्टजी के मकान का वर्णन भी इन्होने किया है—

"मकान के दो विभाग थे। एक मर्दाना, दूसरा जनाना। मर्दाने मे केवल एक कमरा १२×८ का था हालाकि उसे कमरा कहना कमरे की ही नही, कमरे मे रहने वालो की भी तौहीन करना है। कमरे के बगल मे एक छोटी-सी कोठरी थी जिसमे भट्टजी विश्राम करते थे और अपनी पुस्तकें, कपडा-लत्ता रखते थे। कमरे मे गली की तरफ तीन छडदार दरवाजे, सामने एक प्रवेश द्वार, प्रवेश द्वार के सामने एक छोटा-सा चबूतरा। इसी चबूतरे को काटकर एक सीढी बनाई गई थी। कमरे के भीतर सामने दीवार मे एक खुली अलमारी

---

१. पृ० ४०

२ पृ० ४२

थी जिस पर श्रीमद्भागवत् की एक पत्रेदार पोथी वेष्ठन मे बँधी रक्खी थी। अलमारी के ऊपर भट्टजी का, पूजा मे ध्यानमग्न एक छोटा-सा एनलार्जमेट टँगा था।"[1]

इस तरह कितने ही ऐसे रोचक प्रसगो का वर्णन इन्होने सस्मरणो मे किया है। भाषा की स्वाभाविकता एव शैली की सजीवता प्रखर हो उठी है। यही व्यासजी के सस्मरणो की विशेषता है।

पांडेय बेचनशर्मा 'उग्र'

उग्रजी के आत्मकथात्मक शैली मे लिखे हुए सस्मरणो का सग्रह 'अपनी खबर' नाम से १९६० सन् मे प्रकाशित हुआ। इसमे लेखक ने प्रारम्भिक २२ वर्षों का सस्मरणात्मक रूप मे चित्रण किया है। सस्मरण अत्यन्त स्वाभाविक एव रोचक हैं। अपने जीवन मे घटित घटनाओ का ईमानदारी और सचाई से वर्णन करना ही इनकी सस्मरण कला की विशेषता है। इनकी शैली की यह विशेषता है कि जहाँ कही भी किसी घटना या स्थान का वर्णन होता है वहाँ वर्णन के पश्चात् अपना नाम देकर कह देते हैं कि यह (मेरी) राय है—जन्मभूमि के वर्णन मे भी इसी शैली का प्रयोग है—

"रामचन्द्र भगवान सरूप नदी के किनारे पैदा हुए थे, मैं पैदा हुआ गगा सुरसरि के किनारे। मुझे सरयू उतनी अच्छी नही लगती जितनी नर, नाग, विबुध वन्दनी गगा। रामचन्द्र भगवान् अयोध्या नगरी मे पैदा हुए थे, जो पवित्र तीर्थ मानी जाती है। मैं चुनार मे पैदा हुआ, जो काशी के कलेजे और गगातट पर होकर भी त्रिशकु की साया मे होने से तीर्थ नही है। इतना ही नही तीर्थ का पुण्य हरण करने वाला भी है। फिर भी, चुनार मुझे तीर्थ और अयोध्या और साकेत से भी अधिक प्रिय है। यह अपनी जन्मभूमि चुनार के बारे मे पाडेय बेचनशर्मा 'उग्र' की राय है।"[1]

यही नही जो भी व्यक्ति इनके सम्पर्क मे आए उन सभी का वर्णन जीती-जागती भाषा मे इन्होने किया है।

१९६० सन् मे ही मनमोहन गुप्त के सस्मरण एक 'क्रातिकारी के सस्मरण' नाम से प्रकाशित हुए। इस पुस्तक मे उन्होने व्यक्तिगत दृष्टिकोण से अपनी आप-बीती लिखी है। इसका उद्देश्य क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास लिखना नहीं है किन्तु एक क्रान्तिकारी की दृष्टि से उस समय की देश की परिस्थिति का वर्णन करना है। इसमे उन्हें आशातीत सफलता मिली है। उनकी वर्णन शैली अत्यन्त सजीव और रोचक है। उन्होंने इन सस्मरणों मे कही दूर की नहीं हाँकी और न अपना प्रचार ही किया है, तटस्थ भाव से अनुभवों को रोचक भाषा मे लिख दिया है।

---

१. पृ० ६४
२. पृ० ४८

सन् १९६१ मे 'अश्क एक रंगीन व्यक्तित्व' संस्मरण जिनका सकलन कौशल्या अश्क द्वारा हुआ नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित हुए। ये मस्मरण अश्कजी के व्यक्तित्व को विभिन्न कोणों से जाँचते-परखते है। इन सस्मरणो मे कितनी ही शैलियाँ है, कुछ स्मृति चित्रो के से है, कुछ रेखाचित्रो के से, कुछ निबन्धो के से और कुछ बडी ही सुन्दरता से गढे हुए कूजो ऐसे—अत्यन्त कलापूर्ण। फिर इनके लेखको मे भी समय, स्थान और क्षेत्र का बडा अन्तर है—एक ओर आचार्य शिवपूजन सहाय और पतजी है तो दूसरी ओर शेखर जोशी और शानी. एक ओर कृष्णचन्द्र और राजेन्द्रसिह बेदी है तो दूसरी ओर बलवन्तसिह हुनर—और य लेखक जीवन्त हिन्दी-उर्दू साहित्य के एक विशाल और महत्वपूर्ण क्षेत्र को घेरे हुए है। इन सस्मरणो और स्मृति रेखाकनो म अश्कजी के व्यक्तित्व और विचारो की स्पष्ट रेखाएँ भी उभर कर पाठको के सामने आती हैं।

सन् १९६१ मे ही रामवृक्ष बेनीपुरी की पुस्तक का द्वितीय सस्मरण 'मील के पत्थर' नाम से प्रकाशित हुआ। इसमे बेनीपुरीजी के हृदयस्पर्शी रेखाचित्र और सस्मरण सग्रहीत हैं।

सन् १९६२ मे हरिवशराय बच्चन की पुस्तक 'नये पुराने झरोखे' प्रकाशित हुई। इस पुस्तक मे आचार्य चतुरसेन शास्त्री, गिरिधर शर्मा, प्रेमचन्द एव काश्मीर यात्रा पर लिखे हुए सस्मरण हैं। इन सस्मरणो मे लेखक का कवि हृदय भी जागरूक हो गया है। भाषा भी विषयानुकूल है।

सन् १९६३ मे 'साहित्यिको के सस्मरण' पुस्तक प्रकाशित हुई है। इसके सम्पादक ज्योतिलाल भार्गव है। इसमे पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित सस्मरणो का सकलन है। ये सस्मरण हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वानो द्वारा लिखे गए हैं। शिवपूजन सहाय, पं० हरिशकर शर्मा, रमाशकर शुक्ल, वेकटेश्वरनारायण तिवारी, दिनकर, वियोगी हरि जैसे विद्वानो के लिखे हुए सस्मरण हैं। एक और पुस्तक जिसके सम्पादक क्षेमेन्द्र सुमन हैं 'जैसा हमने देखा' नाम से अभी प्रकाशित हुई है। इसका प्रकाशन काल भी सन् १९६३ ही है। इसमे लक्ष्मीप्रसाद पाण्डेय, कृष्णानन्दन गुप्त, रामकृष्णदास, महादेवी वर्मा, डा० पद्मसिह शर्मा कमलेश, डा० भगवतशरण उपाध्याय, विष्णु प्रभाकर, डा० सुधीन्द्र, हरिभाऊ उपाध्याय, द्वारिकाप्रसाद शर्मा, विनोदशकर व्यास एव लक्ष्मीनारायण सिंह, 'सुधाशु' द्वारा लिखे विभिन्न साहित्यिको के विषय मे सस्मरण हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी सस्मरण साहित्य प्रगति की ओर अग्रसर है। इसकी आशातीत उन्नति हुई है। इसके विकास मे हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ का बहुत सहयोग रहा है। मुझे पूर्ण आशा है कि गद्य की यह विधा भविष्य मे और भी विकसित होगी।

विभाजन

हिन्दी सस्मरण साहित्य गद्य की नवीनतम विधा है फिर भी इसकी प्रगति

आशा से अधिक हुई है। पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित एव प्रकाशित पुस्तको के आधार पर सस्मरण साहित्य का निम्नलिखित प्रकार से विभाजन हो सकता है—

(क) संस्मरण लेखको के आधार पर

हिन्दी सस्मरण साहित्य के विकास से स्पष्ट है कि सस्मरण केवल साहित्यिक व्यक्तियो द्वारा ही नही लिखे गए अपितु राजनैतिक एव क्रान्तिकारी व्यक्तियो द्वारा लिखे हुए सस्मरण भी प्राप्त होते हैं। साहित्यिक व्यक्तियो से मेरा अभिप्राय उन व्यक्तियो से है जिन्होंने हिन्दी साहित्य के विकास मे अपनी कृतियो द्वारा विद्वता का परिचय दिया है। ऐसी श्रेणी मे कवि, कथालेखक एव आलोचकगण आते है।

कवि हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे सस्मरण प्राप्त होते हैं जिनके लेखक प्रसिद्ध कविगण है। इन कवियो मे हरिवशराय बच्चन, रामधारीसिंह दिनकर, सुमित्रानन्दन पन एव महादेवी वर्मा हैं। इनके संस्मरणों मे इनका कवि हृदय साक्षात रूप से दृष्टिगोचर होता है। महादेवी वर्मा द्वारा लिखा हुआ 'सुमित्रानदन पत' पर सस्मरण मे से निम्नलिखित उद्धरण उल्लेखनीय है—

"आज से साठ वर्ष पूर्व हिमालय के हिमावृत शिखरो के छोटे बडे ऊँचे-नीचे दर्पण खण्डो मे अपनी शबल हरित छवि देखने मे तल्लीन कौसानी मे कवि ने प्रथम आँखे खोली थी। यदि उसे हिमालय की उर्ध्व अचल साधना और धरती की आकुल सजलता का दाय एक साथ मिल गया तो आश्चर्य नही।"

"उनके कोमलकात शरीर को अनेक रोगो से जूझना पडा है और उनके सरल अनुभूतिप्रवण मन ने युग की अनन्त समस्याओ से सघर्ष किया है, परन्तु न शरीर ने पराजय स्वीकार की है, न मन ने।"[1]

सस्मरणो में भी कवि होने के कारण बच्चन भावुक से दीख पडते हैं—

"दो वर्ष हुए मैं काश्मीर फिर गया था, पर मैं स्पष्ट कर दूं, काश्मीर का प्राकृतिक सौंदर्य मुझे वहाँ नही खीच ले गया था। मुझे खीच ले गई थी वहाँ के मेरे कुछ मित्रो की मुहब्बत और आगे भी कभी मेरा जाना हुआ तो काश्मीर से अधिक काश्मीरियो के प्रति मेरा आकर्षण ही मुझे वहाँ ले जायगा।"[2]

बच्चन ने कवि होने के कारण एक कवि के हृदय, स्वभाव एव व्यक्तित्व को जानने में अच्छी कुशलता का परिचय दिया है। इनकी भाषा शैली ही इनके साहित्यिक व्यक्तित्व का परिचय देती है। नवीनजी के समस्त व्यक्तित्व को इन्होने कुछ ही पक्तियो मे कह डाला है—

"वे जीवन की ठोस अनुभूतियाँ, विदग्ध भावनाओ, क्रान्तिकारी विचारो, सहज कल्पनाओं एव सरल अभिव्यक्तियो के कवि थे। उन्हें जीवन के हल-हुलास

---

१. अन्त स्मृति चित्र, पृ० १७१
२. नए पुराने झरोखे, पृ० २६२

ने ही रोने गाने को विवश किया था। उन्होंने अपनी कविता के सम्बन्ध मे जो कहा था वह कोई विनम्रता प्रदर्शन नही था, वह बिल्कुल सत्य था—उनकी हर कविता के पीछे एक इतिहास है, एक घटना है, चलते फिरते व्यक्ति हैं, भावो का ऊहा-पोह है। और है एक भावुक हृदय, जिसे सबसे लपटते, झपटने, उलझते और मरते खपते हुए गुनगुनाते भी जाना है। नवीनजी ने अपनी कविताएँ विवेक से नही लिखी उन्होंने अपने प्रभु, स्वेद रक्त मे अपनी लेखनी डुबाकर लिखा है जिसमे जग का बहुत सा गर्द गुबार भी आकर पड गया है।"[1]

कथालेखक—कई कथालेखको ने भी हिन्दी सस्मरण' साहित्य के विकास मे योग दिया है। इन कथालेखको मे उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र, यशपाल एव वृन्दावनलाल वर्मा प्रमुख हैं। उपेन्द्रनाथ अश्क ने तो कथालेखको जैसी वर्णनात्मक शैली मे ही अपने सस्मरण लिखे हैं। 'होमवतीजी के सस्मरण, मे कथा। लेखको जैसी शैली मे सुन्दर वार्तालाप प्रस्तुत किया है—

"बाते करते-करते हम एक किसान की झोपडी के पास से गुजरे। वह झोपडी पगडडी के तनिक नीचे, खेतो के इस छोर पर बनी थी। किसान मटर या सेम की छीमियाँ टोकरे मे भर रहा था। होमवतीजी ने तनिक रुक कर उससे भाव पूछा, "क्यों भइये कैसे दी है ?" वही टोकरी पर झुके-झुके बिना हमारी ओर देखे उसने पत्थर सा उत्तर फेंका 'ग्यारह आने'।

मैंने कहा, "सब्जी तरकारी की तो आपको मौज है।" "अरे कहाँ, देख तो लिये इनके तेवर।" वे बोली, "ये लोग मडी मे इकट्ठी बेचते हैं, सेर दो सेर के झमेले मे नही पडते। मडी मे इससे सस्ती मिलती हैं।"[2]

जैनेन्द्र के सभी सस्मरणो का सग्रह 'ये आँखें' नामक पुस्तक मे है। महात्मा भगवानदीन पर लिखे सस्मरणो का उद्धरण उल्लेखनीय है—

"उनका जीवन स्फूर्ति से और कम से भरा रहा है। आडम्बर और आकाक्षा जैसी वस्तु उनमे नहीं है। परिणाम यह है कि ऊँची-नीची नाना परिस्थितियों मे रहकर भी वह अपनेपन से दूर नहीं गये हैं। सदा प्रतिशत सहज और सरल बने रहे हैं। दुनियादारी एक क्षण भी उन पर ठहर नहीं सकी है, उनसे एकदम अलग उतरी दिखाई देती है।"[3]

सभी कथालेखको ने अपने सस्मरण प्रभावोत्पादक शैली मे लिखे हैं। सभी लेखको के सस्मरणो पर उनके अपने-अपने व्यक्तित्व का प्रभाव है। भाषा शैली सजीव होने से ही सस्मरण रोचक बन पडे हैं।

आलोचक—जहाँ कवि और कथालेखको ने सस्मरण लिखे हैं वहाँ

---

१. नये पुराने झरोखे, पृ० २४, २५

२. रेखाएँ और चित्र, अश्क, पृ० १८१

३ पृ० १३५

आलोचकगण भी पीछे नही रहे। डा० श्यामसुन्दरदास,नन्ददुलारे वाजपेयी, शिवदानसिंह चौहान एव डा० पदमसिंह शर्मा कमलेश आदि आलोचको के लिखे हुए सस्मरण भी प्राप्त होते हैं। गुलाबराय के सभी सस्मरण 'मेरी असफलताएँ' पुस्तक मे सगृहीत हैं। इस पुस्तक मे लेखक ने अपने जीवन की घटनाओ का नि सकोच विश्लेषण किया है। ये सभी घटनाएँ सस्मरणात्मक रूप मे लिखी गई है। जीवन की प्रत्येक घटना का विशद रूप से वर्णन करने का भी उनका प्रयत्न सराहनीय है। भाषा मुहावरेदार और रोचक है। उनके बाल्य जीवन के वर्णन का एक उद्धरण निम्नलिखित है—

"हम लोग एक ब्राह्मणी बुढिया के घर के दूसरे भाग मे रहते थे। उसका नाम था दिवारी की माँ। अपेक्षाकृत अभावो की दुनियाँ मे पला था। न तो मेरी महत्वाकाक्षाएँ ही बढी हुई थी और न सुविधाओ का नितान्त अभाव था। 'चहिए अमिय जग जुरै न छाछी' की तो बात न थी फिर भी उन बालको मे से न था जो कि गर्व से कह सके कि मेरा जन्म सम्पन्न घराने मे हुआ था।

मेरे यहाँ चाँदी का चम्मच तो क्या पीतल का भी न होगा। यदि मुझे ऊपरी दूध भी मिल गया तो सिपी से जो मोती की भी जन्मदात्री है। खैर मुझे गरीबी के कारण कभी-कभी रसना का सयम करना पडता था। दिवारी आलू कचालू की चाट बेचा करता था। मुझे याद है मैं एक बार चाट के लिए मचला था। दिवारी को पडोसी धर्म और मैत्री धर्म का उपदेश दिया था, 'भाई बाँट कर खाया करो' ऐसी ममता भरी शिक्षा भी उसे दी थी। जब वह सब 'कामी बचन-सती मन जैसे' बेकार गए तब माता से पैसे के लिए अनुनय-विनय की और फिर कहीं अपनी रुचि की तृप्ति कर सका था। अच्छे खाने की कमजोरी श्रवण समीप ही नहीं, सारे बाल सफेदप्राय हो जाने पर भी बनी हुई है। उस घर की बाल क्रीडाओ मे अधे बन कर चलने और भाई-भाई खेलने की स्पष्ट स्मृति है। इस बात का उल्लेख अपनी माताजी से वारबार सुनने से उसकी स्मृति और भी उभार मे आ गई थी।"[1]

लेखक की प्रत्येक कृति पर उसके व्यक्तित्व का अवश्य प्रभाव पडता है। आलोचक होने के कारण शिवदानसिंह चौहान पत के व्यक्तित्व की आलोचना किए बिना न रह सके। इनके लिखे सस्मरण का एक उद्धरण उल्लेखनीय है—

"पतजी का व्यक्तित्व ही कुछ इतना बौद्धिक है कि उनके सम्पर्क मे आने वाले व्यक्ति को उनमे वह साधारणता नही मिलती जो आम तौर पर हर व्यक्ति मे होती है। मेरे कहने का यह मतलब नही कि उन्होने असाधारणता का कोई आडम्बर रच रखा है और जो भी व्यक्ति उनके सम्पर्क मे आता है उसको वे केवल अपना बाहरी, असाधारणता का नकाब पहना हुआ चेहरा ही दिखाते हैं। ऐसा कुछ नहीं है। उनका अन्तर बाहर एक है—सरल, सहज और

---

1. मेरी असफलताएँ, गुलाबराय, द्वितीय सस्करण, १९४६, पृ० ३, ४

कोमल। लेकिन यह सरलता और सहजता या तो हमे अबोध शिशुओ की क्रियाओं मे मिलती है या एक मनीषी व्यक्ति के चिन्तन और आचरण मे, जो जीवन के गरल को पचाकर समदर्शी बन गया है, जिसे बोलचाल के मुहावरे मे पहुँचा हुआ आदमी कहते हैं, जिसे राग, द्वेष और अभाव छूते तो हैं लेकिन जो उनमे बह नहीं जाता, जिसका विवेक और जिसकी भावनाएँ और सवेदन जीवन के कदम मे कमल की तरह निर्लिप्त रहकर दूसरो को केवल सुरभि और सौंदर्य का ही वरदान देते है। यह शुचिता और शिवता पत के व्यक्तित्व मे है।"[1]

राजनैतिक पुरुष—हिन्दी सस्मरण साहित्य की उन्नति मे केवल साहित्यिक पुरुषो ने ही सहयोग नही दिया अपितु राजनीतिज्ञो ने भी पूर्ण सहायता दी है। हिन्दी साहित्य मे घनश्यामदास बिडला, कृष्णदत्त भट्ट, हरिभाऊ उपाध्याय, डा० राजेन्द्रप्रसाद एव कैलाशनाथ काटजू जैसे प्रसिद्ध व्यक्तियो के द्वारा लिखे हुए सस्मरण प्राप्त होते हैं। घनश्यामदास बिडला की सस्मरणो की दो पुस्तकें 'कुछ देखा, कुछ सुना' एव 'गांधीजी की छत्र छाया मे' प्राप्त होती है। बिडला ने जहाँ अपने राजनैतिक जीवन से सम्बन्धित सस्मरणो का सग्रह 'गाधीजी की छत्रछाया' मे किया है वहाँ अन्य राजनैतिक पुरुषों के विषय मे लिखे हुए चौदह सस्मरणो का सग्रह 'कुछ देखा कुछ सुना' में है। घनश्यामदास बिडला सस्मरण लिखने मे इतने सिद्धहस्त हैं कि उन्होंने मणि बहन के समस्त व्यक्तित्व को कुछ ही पक्तियो मे कह डाला है—

> "कुछ-कुछ अधपके बाल, कद की नाटी और बदन की अत्यन्त हल्की, जीर्णकाय मणीबेन यदि मुह पर सफेद पट्टी बाँध लेती तो वह जैन साध्वी मे भी खप सकती थी। व्यवस्था-प्रिय मणीबेन हर चीज को अपने कमरे मे व्यवस्थित रखती थी और सग्दार की भी व्यवस्था करती थी। बाप बेटी समय के इतने पाबन्द थे, मेजबान की सुविधा-असुविधा का उन्हें इतना ख्याल रहता था कि उसे सकोच मे डाल देते।"[2]

डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के 'गुरुदेव के सस्मरण' एव कैलाशनाथ काटजू के 'मेरे भ्राताजी' सस्मरण हमे प्राप्त होते हैं। इन सभी सस्मरणो मे इन राजनैतिक पुरुषो की जिन्दादिली टपकती है।

(ख) विषयवस्तु के अनुसार

हिन्दी सस्मरण साहित्य के विकास से स्पष्ट है कि जहाँ हमें हिन्दी साहित्य लेखकों के जीवन सम्बन्धी सस्मरण प्राप्त होते हैं वहाँ कुछ राजनीतिज्ञो को भी कुछ लेखकों ने अपने सस्मरणो का विषय बनाया है। इसके साथ ही कुछ लेखको ने यात्रा सम्बन्धी संस्मरण भी लिखे हैं। वास्तव में तथ्य यह है कि जो भी व्यक्ति जिससे प्रभावित

---

१. पत स्मृति चित्र पृ० १४६
२. कुछ देखा कुछ सुना—घनश्यामदास बिडला, प्रथम संस्करण, पृ० १२६

होता है चाहे वह जनता मे प्रसिद्ध हो या न हो उसके विषय मे अवश्य श्रद्धा रखता है। यही बात इन लेखको के साथ भी है। इनमे से कुछ लेखको ने ऐसे व्यक्तियो को अपने सस्मरणो का विषय बनाया है जो हैं तो साधारण व्यक्ति परन्तु मानवीय गुणो के कारण असाधारण हैं। इस प्रकार सस्मरणो के अनेक विषय हो सकते है।

साहित्यिक लेखको के सस्मरण– हिन्दी सस्मरण साहित्य मे अधिक सस्मरण साहित्यिक लेखको के जीवन सम्बन्धी ही लिखे गए हैं। साहित्यिक लेखको के सस्मरण भी दो प्रकार से लिखे जाते हैं—एक तो कोई भी साहित्यिक लेखक अपने जीवन को सस्मरणो मे लिख डाले, दूसरे अन्य व्यक्ति किसी साहित्यिक के जीवन के विषय मे लिखे। प्रथम श्रेणी के सस्मरणो मे शान्तिप्रिय द्विवेदी की सस्मरणात्मक रूप मे लिखी हुई आत्मकथा 'परिव्राजक की प्रजा' एव गुलाबराय की 'मेरी असफलताएँ' पुस्तक आती हैं। दूसरी श्रेणी मे ब्रजमोहन व्यास द्वारा लिखित 'बालकृष्ण भट्ट', शिवरानी देवी द्वारा लिखित 'प्रेमचन्द : घर मे' एव अश्क की पुस्तक 'मटो मेरा दुश्मन' आती है। सम्पूर्ण जीवन की झाँकी तो कुछ ही पुस्तको म पायी जाती है वैसे अनेक लेखको ने अनेक साहित्यिको के जीवन की कुछ स्मृतियाँ कुछ ही पन्नो मे लिखी हैं। सब स्मृति ग्रन्थ इसी श्रेणी मे आते हैं। शान्तिप्रिय द्विवेदी की बाल्यकाल की घटनाओ के कई प्रसग अत्यन्त ही मार्मिक हैं। इनका वर्णन करते समय लेखक का दु खी हृदय व्यथित हो उठा है -

> "छोटा बालक—जिसे न तो शिशु ही कहा जा सकता है और न सयाना ही—वह दोनो का स्वायत्त कर लेना चाहता है। ऐसा वह किसी लोभ या चालाकी से नहीं करता। उसमे जीवन की जो स्पष्ट आकाक्षा उत्पन्न हो जाती है वही उसे कुछ पाने, कुछ ग्रहण करने के लिए प्रेरित कर देती है। यहाँ तक कि दुधमुँहा शिशु भी कभी मिट्टी तो कभी अँगूठा मुँह मे डाल लेता है। फिर मेरी आकाक्षा तो भूख-प्यास मे स्पष्ट हो रही थी। बहिन बडी थी, इसलिए उसे भूख-प्यास लगती नही होगी, मानो वह मुझे देने के लिए ही बडी है और यह नन्हा भाई हीरा ? इसे भला क्या चाहिए ? वह बौना तो अभी अपना मुँह भी नही खोल सकता था, 'निरे साँसो का पिंजर द्वार था'। अपने सिवा शेष सृष्टि से नादान और अबोध मेरा बुभुक्षित मन भरण-पोषण के लिए लालायित रहता था।
>
> एक दिन रात के समय माँ का दूध पीने के लिए मैं बहुत हठ करने लगा। बहिन ने समझाया—माँ की तबीयत ठीक नहीं है उसे दिक मत करो भाई। मैं मान गया। दूसरे दिन तो माँ की मृत्यु हो गयी। मैं तब तक यही जानता था कि लल्लू (साँप) के काटने से ही लोग मर जाते हैं।"[1]

बालकृष्ण भट्ट के जीवन को सस्मरणो के रूप मे व्यासजी ने चित्रण किया है। उन्होंने जीवनी में कुछ ऐसी घटनाओं का वर्णन किया है जो उनके अपने जीवन

---

१. परिव्राजक की प्रजा—शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० १८

के अनुभव पर आधारित है। एक घटना से ही उनके व्यक्तित्व का आभास हो जाता है—

"एक बार कई दिन मैं भट्टजी से पढने नहीं गया। मैं जानता था कि इस पर वे भुन्नाये होगे क्योकि सस्कृत मे मैं कुछ तेज हो गया था और मुझे पढाने मे उन्हे आनन्द होता था। उस दिन जैसे ही मैंने सीढी पर कदम रक्खा तो देखा कि भट्टजी अपने पुत्र महादेव पर बिगड रहे हैं। उस दिन महादेवजी को कालिक (शूल) का बडे जोर का दौरा हुआ था। पहिले तो दर्द थोडा था, पर महादेवजी ने बहुत-सा दही मीठा खा लिया था। महादेवजी बडे चटोरे थे। दही खाने से दर्द असह्य हो गया और वे चारपाई पर छटपटाने लगे। उनकी चारपाई के पास एक तख्त था जिस पर भट्टजी सदा बैठते थे। उनके कराहने पर भट्टजी भभक उठे, उसी समय मैं वहाँ पहुँचा था। गुस्सा कराहने पर नही था बल्कि दही खाने पर। कडककर बोले—'जब दर्द शुरू होय गवा रहा तो फिर दही काहे खायेव ?'···भट्टजी ने पीठ फेरी तो मैं सामने पड गया। 'धोबी से न जीते तो गदहे का कान उमेठे' मुझी पर उबल पडे। उस समय भट्टजी का वक्षस्थल वाक्-युद्ध के परिश्रम से लाल और नेत्र रक्तवर्ण थे। बडी रुखाई से बोले 'कहाँ चलेव सरकार ?' इस प्रश्न मे मेरे कई दिन न आने का गुबार भरा हुआ था। मैंने बडी विनम्रता से कहा कि पढने आये हैं। मेरा कहना था कि बडे तीव्र स्वर मे बोले, 'तुम क्या पढोगे जी ? बेवकूफ बनाते आते हो। इम्तहान लेत हो कि एका कुछ आवत जात है कि नाही।"[१]

राजनैतिक पुरुषों के सस्मरण—प्रत्येक व्यक्ति के जीवन मे कोई-न-कोई ऐसा व्यक्ति सम्पर्क मे आता है जिसका प्रभाव स्थायी रूप से उस पर रहता है। यदि वह इतना योग्य हो कि अपने विचारो को अन्य व्यक्तियो के सम्मुख रख सके तो वह रखता है। जब वह उस व्यक्ति के व्यक्तित्व की महत्ता को अपने जीवन मे घटित घटनाओ के आधार पर व्यक्त करता है तो वह सस्मरण की कोटि मे आ जाती हैं। किसी भी व्यक्ति का व्यक्तित्व अन्य पुरुष को प्रभावित कर सकता है यह कोई आवश्यक नही कि किसी लेखक या कवि का ही व्यक्तित्व लोगों को प्रभावित करना है। कोई भी देशभक्त किसी भी लेखक से प्रभावित हो सकता है ऐसे ही कोई भी लेखक राजनैतिक पुरुष से प्रभावित हो सकता है। इस प्रकार हिन्दी सस्मरण साहित्य में जहाँ साहित्यिक लोगो के जीवन सम्बन्धी सस्मरण मिलते हैं वहाँ राजनैतिक पुरुषों के भी जीवन सम्बन्धी सस्मरण प्राप्त होते हैं। हिन्दी साहित्य मे यशपाल के सुखदेव, राजगुरु एव भगतसिंह सम्बन्धी सस्मरण 'सिंहावलोकन' नाम से पाए जाते हैं—इनके तीन भाग हैं। इसी प्रकार इन्द्रविद्यावाचस्पति के राजनीतिज्ञो पर लिखे हुए सस्मरण 'मैं इनका ऋणी हूँ' के नाम से प्रकाशित हुए हैं। हरिभाऊ उपाध्याय के 'साधना के

१. बालकृष्ण भट्ट, ब्रजमोहन व्यास, पृ० ३८, ३६

पथ पर' एवं घनश्यामदास बिडला के 'कुछ देखा कुछ सुना' संस्मरण भी इसी प्रकार के हैं। 'स्मरणाजलि' मे अनेक महापुरुषो एव साहित्यिक व्यक्तियो द्वारा लिखे हुए जमनालाल बजाज पर सस्मरण सगृहीत हैं। कन्हैयालाल मा० मुशी का जमनालाल बजाज पर लिखा हुआ सस्मरण अत्यन्त सजीव एवं प्रभावोत्पादक है। अन्तिम पाँच-सात पक्तियो मे उनके समस्त व्यक्तित्व की झाँकी प्रस्तुत की है—

"व्यापार-बुद्धि और नीति, लक्ष्मी और सरस्वती की तरह, साथ नही रहती, परन्तु जमनालालजी इसके अपवाद थे। इनकी व्यवहार बुद्धि पर जीती-जागती जोत की तरह नैतिक बल हमेशा पहरा देता था। छोटी-बडी हर बात मे वह उस्ताद व्यापारी नैतिक अपूर्वता की खोज मे रहता था।

वे व्यापारी थे, देशभक्त त्यागी दानवीर थे सौजन्य मूर्ति थे पर इन सब से भी संस्मरणीय उनकी सिद्धि थी व्यावहारिकता और नीति का सुयोग। सत्यनारायण की कथा के 'साधु वणिक' शब्द को उन्होने सार्थक कर दिया था।"[1]

घनश्यामदास बिडला का 'महादेव देसाई' पर लिखा हुआ सस्मरण अत्यन्त रोचक है। उनके व्यक्तित्व का स्पष्ट चित्रण इन्होने अपने संस्मरण मे किया है—

"गाधीजी के अनन्य उपासक होते हुए भी महादेव भाई के अपने स्वतंत्र विचार थे। गाधीजी के विचारो का विरोध करने की उनमे क्षमता थी। गाँधीजी से भिड जाने की उनमे शक्ति थी और गाधीजी पर उनका खूब असर पड़ता था। वह कभी-कभी बापू की कडी आलोचना करते थे, पर शुद्ध भक्ति भाव-पूर्वक। लेकिन जहाँ गाधीजी ने एक अन्तिम निर्णय किया बस महादेव भाई अडिग निश्चय के साथ गाधीजी की 'योजना मे कूद पडे'। सशय कल्लोल मे खेलना उन्हें पसन्द नही था।

"गांधीजी की चेष्टाओ और वेशभूषा की महादेव भाई ने कभी नकल नहीं की। उन्हें कभी 'उपगांधी' बनने का शौक पैदा नही हुआ। आजीवन वह गाधीजी के अनन्य अनुचर रहे और उनके विचारों को रोम-रोम मे भरकर उनके साथ अभिन्न भी हो गए थे।"[2]

हरिभाऊ उपाध्याय ने 'साधना के पथ पर' पुस्तक मे अपने समस्त जीवन को सस्मरणो के रूप मे चित्रण किया है। जीवन के सभी भागों के वर्णन मे इनकी जिन्दा-दिली टपकती है। एक स्थान पर ईश्वरीय विश्वास के विषय मे लिखते हैं—

"इस निर्भयता का मूल ईश्वर श्रद्धा मे है। जब मैं छाती पर हाथ धर कर यह देख लेता हूँ कि मेरी भावना शुद्ध है काम भला है तो मेरे मन में यह विचार ही नही आता कि लोग क्या कहेंगे, इसमे लोगों के लिए कुछ शका करने

---

१. स्मरणांजलि, पृ० ५५

२. कुछ देखा कुछ सुना : घनश्यामदास बिड़ला, पृ० ११८

जैसी बात भी हो सकती है। हाँ, कुछ कटु अनुभवों ने अधिक सावधान तो बना दिया है फिर भी लोगों की आलोचनाओं व निंदाओं के बीच अविचल रहने की प्रवृत्ति अडिग है। क्षणिक प्रभाव हुआ भी तो वह परमात्मा का आश्रय लेते ही नष्ट हो जाता है।"[1]

इस प्रकार राजनैतिक पुरुषों के सस्मरण भी अत्यन्त रोचक एव प्रभावशाली बन पडे हैं।

यात्रा सम्बन्धी सस्मरण—हिन्दी सस्मरण साहित्य के विकास मे स्पष्ट है कि कुछ लेखकों ने अपने सस्मरणों का विषय अपनी यात्रा को लिया है। वे जिस स्थान व जिस जगह भ्रमण करते रहे उन सभी का वर्णन उन्होने सम्मरणात्मक रूप मे किया है। राहुलजी के यात्रा सम्बन्धी सस्मरण 'यात्रा के पन्ने' पुस्तक मे सग्रहीत हैं। इसके अतिरिक्त बच्चन ने अपनी काश्मीर यात्रा का एव गुलाबराय ने कसौली यात्रा का सस्मरणात्मक रूप मे वर्णन किया है।

हरिवशराय बच्चन ने झील के किनारे का वर्णन अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग से किया है—

"सुबह होते ही झील की सतह पर काश्मीर का जीवन देखिए। एक शिकारा आ रहा है, तरह-तरह के फूलो से लदा है। एक फल बेचने वाले का, एक मेवे बेचने वाले का, किसी मे लकडी का सामान, किसी मे शाल दुशाले, किसी मे पेपरमेशी की चीजे, किसी मे सुई, कढाई के बारीक काम। श्रीनगर मे कोई चीज़ खरीदना बहुत होशियारी का काम है। व्यापारी कभी-कभी चौगुना दाम कहता है। आप सकोच मे कितना कम करेंगे, नतीजा होगा आप ठगे जाएँगे। चीजो का ठीक दाम आप तभी देंगे जब या तो आप अनुभवी हो यानी कई बार काश्मीर आए गए हो या किसी काश्मीरी से आपकी जान-पहचान हो जो चीजो का वाज़बी दाम जानता हो।'[2]

गुलाबराय ने अपनी कसौली यात्रा मे कसौली नगर का वर्णन अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग से किया है—

"कसौली कुत्ते के काटे वालो के लिए तो प्रधान तीर्थस्थान है ही किन्तु यहाँ जो लोग रहते हैं वे सब कुत्ते के काटे हुए ही नहीं रहते। यहाँ पर एक बहुत सुन्दर छावनी है। यहाँ की सडकें रमणीक हैं। चढाव-उतार की और चक्करदार अवश्य हैं, किन्तु उनके दोनो ओर खूब हरियाली रहती है। कुछ स्वाभाविक उपज है और कुछ लगाई हुई है। बाजार भी अच्छा है। यहाँ पर गिरिजाघर, क्लबघर, बैंक, डेरी आदि देखने योग्य हैं। सकी पाइन्ट अर्थात्

---

१. साधना के पथ पर—हरिभाऊ उपाध्याय, पृ० ७२
२. नए पुराने झरोखे—बच्चन, पृ० २६१

बानर शृग यहाँ का उच्चतम शिखर है। जाडो मे खूब बरफ पडती और आबादी कम हो जाती है।"[1]

इसी प्रकार राहुल साकृत्यायन ने अपनी पुस्तक मे तिब्बत की समस्त यात्रा का वर्णन सस्मरणो मे किया है। यही नही, वहाँ पर सभी देखने योग्य स्थानों का, नगरो एव पर्वतो का वर्णनात्मक शैली मे किया हुआ वर्णन प्राप्त होता है। भाषा भी विषयानुकूल है। शैली प्रभावोत्पादक है।

मानवीय गुणों से सम्पन्न साधारण पुरुषों के संस्मरण—इन सस्मरणो मे न तो किसी साहित्यिक व्यक्ति के जीवन का आभास होता है और न किसी राजनैतिक के, इनमे तो लेखक ऐसे व्यक्तियो के जीवन का चरित्र पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करता है जोकि न जनता मे प्रसिद्ध है न समाज मे। लेकिन लेखक के सम्पर्क मे आने से उस साधारण पुरुष मे जो मानवता एव मानवीय गुण उसे लक्षित होते हैं उन्ही से प्रभावित होकर उसने उसे पाठको के सम्मुख सस्मरण रूप मे रक्खा है। ऐसे सस्मरण लेखको मे राजाराधिकारमण प्रसाद सिह, महादेवी वर्मा एव गुलाबराय हैं। राजाराधिकारमण प्रसाद सिह की तो तीनो मस्मरणात्मक पुस्तकें 'सावनीसमाँ', 'टूटा तारा' एव 'सूरदास' ऐसे व्यक्तियो के ही जीवन का प्रतीक हैं। महादेवीजी ने भी लछमा, रधिया आदि के समस्त जीवन को अपनी पुस्तकों मे सस्मरण के रूप मे चित्रित किया है। यही नहीं, गुलाबराय ने एक नाई का सस्मरण 'मेरे नापिताचार्य' नाम से लिखा है। उसके व्यक्तित्व का दिग्दर्शन पाठको को भलीभाँति करवाते हैं—

> "मेरे नापित देव न तो वामन हैं और न विशालकाय। मेरी बुद्धि की भाँति वे भी मध्य श्रेणी के हैं, और कुछ लघुता की ओर झुके हुए हैं। उनका छोटे अण्डाकार शीशो वाला, डेढ कमानी का चश्मा उनके गाम्भीर्य और वार्द्धक्य को बढाता है। जैसे मैं अपनी पोशाक की व्यवस्था सम्हालने मे असमर्थ रहता हूँ वैसे ही वे अपनी पेटी जो उनके स्वरूपानुरूप है। पेटी का आवरण पट जो बाल कटाने वाले यजमानों का भी बालो की बाण वर्षा से सुरक्षित रखने मे रक्षा कवच बनता है, साबुन के प्रयोग से उतना ही अछूता रहता है जितना कि आजकल का विद्यार्थी भगवन्नाम से। उसको स्वच्छ रखने के उपदेश उनके ऊपर उतना ही प्रभाव रखते हैं जितना कि 'कामी वचन सती मन जैसे' फिर भी मैं उनका स्वागत करता हूँ, क्योंकि वे मुझे स्वरक्तपात से बचाए रखते हैं··· अपनी जाति के अन्य व्यक्तियो की भाँति वे भी चलते फिरते समाचार पत्र हैं और चूंकि मैं कोई स्थानीय पत्र नही खरीदता मैं उनकी इस वृत्ति का स्वागत करता हूँ। विशेषकर साम्प्रदायिक झगडो के दिनो मे उनकी यह सेवाए बहुमूल्य थी।"[2]

---

१. मेरी असफलताए, गुलाबराय, पृ० २४१

२. वही, पृ० २०५

घनश्यामदास बिडला ने भी अपने नौकर हीरा का संस्मरण अत्यन्त रोचक एवं भावुकतापूर्ण शैली में लिखा है। उसके विषय में एक स्थान पर लिखते हैं—

"कर्ण का महाभारत में बड़ा स्थान है। और हीरा का कोई ग्रन्थ नहीं बना, इसी बुनियाद में हीरा परख में कम नहीं उतरा। तीन बार हीरा ने अपना खजाना खाली कर दिया। यह उदारता कर्ण से किस बात में कम उतरती थी? और हीरा की वफादारी तो लाजबाब। बड़े-बड़े श्लोकों से भरे ग्रन्थों से चौंधिया जाने में यदि हम इन्कार करें तो मैं कहूंगा कि हीरा का शौर्य, उसकी दान-शूरता और उसकी वफादारी बेमिसाल चीजें हैं।"[1]

इसी प्रकार कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ने अपनी पुस्तक 'दीप जले शंख बजे' में मुखिया सुचेत, नन्दा गाटा, गोरा दीवान, बल्देव बाबा, मल्हड़ मिश्र एवं डाक्टर टिंचरप्रसाद जैसे व्यक्तियों के विषय में भी संस्मरण लिखे हैं। शैली अत्यन्त प्रभावोत्पादक है।

शैली के आधार पर

हिन्दी संस्मरण साहित्य का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि प्रत्येक लेखक का अपने और दूसरे के व्यक्तित्व को स्पष्ट करने का अपना-अपना ढंग है। किसी ने आत्मकथात्मक शैली को अपनाया है तो किसी ने निबन्धात्मक को। किसी लेखक ने इन दोनों के अतिरिक्त डायरी व पत्रात्मक शैली में संस्मरण लिखे हैं। इस प्रकार शैली के आधार पर संस्मरणों का विभाजन निम्नलिखित ढंग से हो सकता है—

आत्मकथात्मक शैली में लिखे हुए संस्मरण—हिन्दी साहित्य में कुछ ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होंने अपने जीवन का वर्णन आत्मकथात्मक शैली में संस्मरणों के रूप में किया है। इनमें शान्तिप्रिय द्विवेदी, किशोरीदास वाजपेयी एवं पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' हैं।

शान्तिप्रिय द्विवेदी की पुस्तक 'परिव्राजक की प्रजा' है। संस्मरणों के रूप में इन्होंने अपनी आत्मकथा लिखी है। इसलिए इसमें एक प्रभावोत्पादक आत्मकथात्मक शैली प्राप्त होती है। इस शैली की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें लेखक अपने जीवन का विश्लेषण अपने-आप संकोचरहित करता है। जीवन की सभी अच्छाइयों और बुराइयों को वह अपनी आत्मकथा में व्यक्त करता है। द्विवेदीजी ने भी कहीं-कहीं स्पष्ट रूप से विश्लेषण किया है—

'मेरे स्वभाव में चापल्य नहीं था, परिस्थितियों ने मुझे समय के पहले ही गम्भीर बना दिया था। चंचल और नटवर बनने का अवसर ही नहीं मिला। कशमकश और खींचतान से मेरे जीवन का व्यायाम नहीं हो सका। यदि हाई स्कूल तक पढ़ जाता तो शायद लड़कों की क्रीड़ा-कुशलता और लोकपटुता

---

१. कुछ देखा कुछ सुना—बिडला, पृ० २४६

से मैं भी सुदक्ष हो जाता, सासारिक दृष्टि से बुद्धु नही रह जाता। किन्तु ससार मे कल के लडके ही तो सयाने होकर अधिक होशियारी से दाव-पेच खेलते हैं, उनसे भी तो मैं कुछ सीख सकता था। कहाँ सीख सका। अभाव और भावुकता ने बचपन से ही मेरा जो अतल-सजल स्वभाव बना दिया वह जीवन मे स्थायी हो गया।"[1]

इसी प्रकार पाण्डेय बेचनशर्मा 'उग्र' ने भी 'अपनी खबर' मे चोरी का वर्णन स्पष्ट रूप से किया है—

"सुना था हनुमानचालीसा का पाठ करने से सारे दुःख दूर, ममले स्वयमेव हल हो जाते हैं। लेकिन हनुमानचालीसा मेरे पास कहाँ। साथ ही पास मे 'पीसा' कहाँ कि हनुमानचालीसा खरीदा जा सके। मैं जिस दरजे मे पढता था उसी मे एक काला-सा लडका था किसी छोटी जाति का। वह अपने बस्ते मे रोज हनुमानचालीसा की एक प्रति ले आता था और मैं ललचाकर तडपकर रह जाता था उस दो पैसे की विख्यात पुस्तक के लिए। अन्त मे मैंने चोरी करने का निश्चय किया। मैं ऊँच लडका, वह नीच लेकिन मैंने उसकी हनुमानचालीसा चुरा ली और बडे चाव से मैं उसका पाठ करने लगा।"[2]

आत्मकथा शैली के सभी गुण—स्पष्ट कथन, स्पष्ट आत्मविश्लेषण, प्रभावोत्पादकता एव स्वाभाविकता आदि इन लेखको की आत्मकथाओ मे पाए जाते हैं। १२ वर्ष का उग्रजी ने सस्मरणो मे अपना जीवन अत्यन्त स्वाभाविक एव स्पष्ट रूप से वर्णन किया है। यही नही शान्तिप्रिय द्विवेदीजी तो आत्मकथा लिखते समय इतने भावुक हो गए हैं कि इनके जीवन की घटनाओ को पढते-पढते पाठक के रोगटे खडे हो जाते हैं। इस प्रकार आत्मकथात्मक शैली मे लिखे हुए इनके जीवन के सस्मरण अत्यन्त रोचक एव प्रभावशाली बन पडे हैं।

निबन्धात्मक शैली में लिखे हुए सस्मरण—हिन्दी साहित्य मे कुछ सस्मरण लेखकों ने अपने व अन्य व्यक्ति के जीवन-चरित्र को लिखने के लिए निबन्धात्मक शैली को अपनाया है। इस शैली का अधिक प्रयोग अन्य व्यक्तियो के जीवन-चरित्र लिखने के लिए होता है। हिन्दी साहित्य मे गुलाबराय ने अपने जीवन के कुछ संस्मरणो को निबन्धात्मक शैली मे 'मेरी असफलताएँ' पुस्तक मे लिखा है। इस शैली में लेखक वर्णनात्मक एव विवरणात्मक दोनो ही प्रकार के वर्णन प्रस्तुत कर सकता है। गुलाबराय ने अपने व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित कुछ घटनाओ का वर्णन जहाँ निबन्धात्मक शैली मे किया है वहाँ इनकी कसौली यात्रा मे हमे वर्णनात्मक शैली के भी दर्शन होते हैं।

---

१. परिव्राजक की प्रजा—शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० १२३
२. अपनी खबर—पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', पृ० २१

शान्तिप्रिय द्विवेदी के अपनी बहन सम्बन्धी लिखे हुए सस्मरण 'पथचिन्ह' नामक पुस्तक मे हैं। इसमे भी लेखक ने इसी शैली का प्रयोग किया है। शान्तिप्रिय के सस्मरणो मे भावुकतामयी शैली का आभास होता है—

"छुटपन मे ही वह विधवा हो गई थी। उस अबोधवय मे उसने जाना ही नही उसके भाग्य क्षितिज मे क्या पट-परिवर्तन हो गया। जन्मकाल से माँ का जो अचल उसके मस्तक पर फैला था, सयानी होने पर उसने वही अचल अपने मस्तक पर ज्यों-का-त्यो पाया। मानो शैशव ही उसके जीवन मे अक्षुण्ण हो गया। अचानक एक दिन जब वह अचल भी मस्तक पर से छाया की तरह तिरोहित हो गया तब उसके जीवन मे मध्यान्ह की प्रखर ज्वाला के सिवा और क्या शेष रह गया था।"[1]

पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित सस्मरणो मे भी इसी शैली का दिग्दर्शन होता है। ब्रजमोहन व्यास, शिवरानी देवी, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर एवं उपेन्द्रनाथ अश्क जैसे प्रसिद्ध लेखको ने भी इसी शैली मे अपने एव अन्य लेखको के जीवन सम्बन्धी सस्मरण लिखे हैं।

डायरी शैली में लिखे हुए सस्मरण—हिन्दी साहित्य मे केवल राहुल साकृत्यायन के सस्मरण डायरी शैली मे लिखे हुए हैं। 'यात्रा के पन्ने' पुस्तक मे इन्होने अपनी समस्त यात्रा का वर्णन संस्मरणो मे समय एव तिथि के अनुसार किया है। इनकी शैली की विशेषता निम्नलिखित उद्धरण से स्पष्ट हो जाती है—

"१४ तारीख को ब्रजनन्दन बाबू के यहाँ भोजन करके ११ बजे मोटर पकडी। उधर गेशे धर्मवर्द्धन को कालिम्पोङ् तार दे दिया था, जो कि उसी दिन शाम को ७ बजे हमारे सिलीगुडी पहुँचने के एक घण्टे बाद आ गए। ९ बजे रात को कलकत्ता मेल पकडा और दूसरे दिन सवेरे ७ बजे को इस सारी यात्रा में साथ लिए होते, तो कितना अच्छा रहता। १५ से १९ नवम्बर तक कलकत्ता मे बिताकर २० को हम पटना पहुँच गए। जायसवाल ने गद्गद् हो स्वागत किया और अब जाडों का समय हमारा भारत के लिए था।"[2]

पत्रात्मक शैली में लिखे हुए संस्मरण—राहुलजी के कुछ सस्मरण पत्रात्मक शैली मे लिखे हुए हैं। इसी पुस्तक 'यात्रा के पन्ने' मे 'प्रवास के पत्र' नामक शीर्षक मे इनकी इसी शैली का दिग्दर्शन होता है। इसी प्रकार जैनेन्द्र के कुछ सस्मरण भी इसी शैली मे लिखे गए हैं। प्रेमचन्द सम्बन्धी कुछ सस्मरणो का आभास इनके पत्रो द्वारा ही होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सस्मरण लिखने के भी अनेक ढग होते हैं। प्रत्येक लेखक अपनी रुचि अनुसार उनका प्रयोग करता है।

---

१. पथचिन्ह, ले० शान्तिप्रिय द्विवेदी, पृ० ८

२. यात्रा के पन्ने, ले० राहुल साकृत्यायन, पृ० १३४

7 पत्र एवं डायरी

(क) पत्र

पत्र वह लेख है जो किसी दूर रहने वाले व्यक्ति विशेष को प्रेषित किया जाता है और जिसमे उस दूरस्थ व्यक्ति के प्रति अपनी भावनाओ का उसकी रुचि, समझ एव योग्यता के अनुसार कलात्मक ढग से प्रकाशन किया जाता है। इसका विस्तृत विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया है। जो भी पुस्तकें अभी तक प्रकाशित हुई हैं तदनुसार पत्र साहित्य के तत्व निम्नलिखित हैं—

तत्व

वर्ण्य विषय—किसी महान् साहित्यिक के वास्तविक व्यक्तित्व की जानकारी के लिए उसकी साहित्यिक कृतियाँ जितनी उपादेय हैं उनसे कही अधिक उपादेय उसके वैयक्तिक पत्र हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन मे अपने इष्ट-मित्रो, परिचित व्यक्तियो आदि को पत्र लिखता है। इनमे विभिन्न प्रकार के पत्र हो सकते हैं—जीवन की जटिल समस्याओं से सम्बद्ध पत्र, रोजमर्रा के कामकाज के पत्र, व्यावसायिक धन्धो से सम्बद्ध पत्र या किन्ही दार्शनिक, साहित्यिक, कलात्मक अथवा राजनैतिक पहलुओ से सम्बन्धित पत्र। विषय कुछ भी हो परन्तु लेखक के व्यक्तित्व की अमिट छाप रहती है। विषय चाहे राजनैतिक, सामाजिक, सास्कृतिक एव व्यक्तिगत हो पर लेखक की कला-कुशलता का आभास लगाने के लिए उसमे कुछ गुणो का होना आवश्यक है।

सर्वप्रथम विषय मे रोचकता का होना आवश्यक है। नाटक एवं उपन्यास की तरह से पत्र मे कोई लम्बी गाथा नही होती, यह तो मुक्तक काव्य की तरह से आकार मे छोटा होता है। इसीलिए लेखक को पत्र प्रभावशाली ढग से लिखना चाहिए, तभी उसमे रोचकता एव स्वाभाविकता आ सकती है। श्रीधर पाठक द्वारा बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे पत्र मे रोचकता एव स्वाभाविकता द्रष्टव्य है—

यह पत्र चतुर्वेदीजी के पत्र का उत्तर है जिसमें उन्होंने पाठकजी को जीवन-चरित् लिखने के लिए कहा था—

> "आपकी लिखी हुई जीवनियाँ मुझे सभी पसन्द हैं, परन्तु विशेषतः तोता राम वाली रुचती है। सबसे अधिक उपयोगी भी वही हुई है। मेरी अधम जीवनी भी आप लिखना चाहते हैं, इस प्रस्ताव के विरुद्ध मुझे बहुत कुछ वक्तव्य

है, परन्तु मुझे प्रतीत होता है कि यह सब व्यर्थ जाएगा, अत मैं निषेध न करूँगा "[१]

स्वाभाविक ढग से वर्णन करने मे रोचकता तो आती ही है परन्तु इसके साथ स्पष्टता का भी होना आवश्यक है। यदि लेखक अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण पूर्ण ईमानदारी से वर्णन करता है तभी उसमें रसास्वादन सम्भव होता है। प्रत्येक व्यक्तिगत घटना का वर्णन स्पष्ट रूप से होना चाहिए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने केदारनाथ पाठक को लिखे २५-११-०५ के पत्र में अपने परिवार मे घटी घटना का वर्णन स्पष्ट रूप मे किया है—

"प्रियवर, आजकल मेरे ऊपर ईश्वर की अथवा शनैश्चर की बुरी दृष्टि है। एक के उपरान्त दूसरी, दूसरी के उपरान्त तीसरी विपत्ति में आ फँसता हूँ। सुनिए मैं काशी जाने की पूरी तैयारी कर चुका था परन्तु बीच मे मेरे घर ही मे एक विलक्षण षडचक्र रचा गया। हरिश्चन्द्र का गौना ६ या सात दिन मे आने वाला है। मेरे पिताजी इधर कई दिनो से दौरे पर हैं। इसी बीच मे मेरी विमाता जी को भी भयकर मूर्ति धारण करने की सूझी। ४०० रु० का जेवर गायब करके कह दिया कि मेरे पास ही से घर मे से चोरी हो गया।"[२]

यही नही भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा राधाचरण गोस्वामीजी को लिखे पत्र मे स्पष्टता दृष्टव्य है—

"मैं तीन चार दिन मे शायद श्रीवन आऊँ, कृपापूर्वक एक स्थान अपने प्रति निकट रखिए, दो बात मुख्य आराम देख लीजिएगा। एक तो पाखाना स्वच्छ हो और दूसरे दिन को गर्म न हो चाहे अति छोटा हो।"[३]

इस प्रकार प्रत्येक कुशल पत्र लेखक के पत्रो मे स्वाभाविकता, रोचकता, स्पष्टता, एव सक्षिप्तता का होना आवश्यक है। इन गुणो के साथ ही पत्र, साहित्यिक पत्र कहला सकते हैं। विषय का चुनाव एव लेखक की सफलता इन्ही पर निर्भर है।

पात्रों और घटनाओं से सम्बन्ध और उनके प्रति प्रतिक्रिया पत्र मे वर्णित प्रत्येक घटना और व्यक्ति के प्रति लेखक का व्यक्तिगत सम्बन्ध होता है। जिस व्यक्ति को वह पत्र लिखता है या जिस घटना के विषय मे वह लिखता है उससे वह स्वय प्रभावित होता है। पत्र मे वर्णित प्रत्येक विषय का वह वर्णन करना ही अपना उद्देश्य नही समझता अपितु उसके प्रति अपनी टीका-टिप्पणी भी निर्भीकता से प्रस्तुत करता है। यही दशा किसी व्यक्ति के वर्णन मे भी कही जा सकती है। यदि वह सच्चा

१. श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य, रामचन्द्र मिश्र, भूमिका—बनारसीदास चतुर्वेदी।
२. द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र—बैजनाथसिंह विनोद, पृ० २१८
३. भारतेन्दु ग्रन्थावली, तीसरा भाग—ब्रजरत्नदास, बी० ए० एल० एल० बी०, पृष्ठ ६७, पत्र २

पत्र लेखक है तो वह पूर्ण ईमानदारी से उस व्यक्ति का चाहे वह उसका मित्र है या सम्बन्धी वर्णन करेगा। उदाहरण के लिए यदि द्विवेदीजी को लें तो हम देखते हैं कि जहाँ इनके पत्र-साहित्य मे हमे इनके व्यक्तित्व की पूर्ण झलक प्राप्त होती है वहाँ अनेक मित्रो एवं सम्बन्धियो का वर्णन भी है। मित्र की प्रशसा भी करते हैं और समय आने पर झिडक भी देते हैं। गुप्तजी को लिखे पत्र मे यही देखने मे आता है—

"हम लोग सिद्ध कवि नही। बहुत परिश्रम और विचारपूर्वक लिखने से ही हमारे पद्य पढने योग्य बन जाते हैं। आप दो बातो मे से एक भी नही चाहते। कुछ लिखकर छपा देना ही आपका उद्देश्य जान पडता है।"

यही बात पद्मसिंह शर्मा मे भी पाई जाती है। बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे २१-४-२८ के पत्र मे सम्पादकीय मद होने की कडी आलोचना की है—

"मालूम होता है कि अब आप पूरे सम्पादक बन गए हैं तभी तो हमारी पसन्द की कविताएँ नापसन्द करके छापने से इनकार कर दिया। यह सम्पादकीय मद प्रायः आ ही जाता है।"[१]

इससे स्पष्ट है कि प्रत्येक लेखक अपने पत्रो मे जिन घटनाओ एव व्यक्तियो को विषय बनाता है उनके प्रति मन मे उठी हुई प्रतिक्रियाओ का भी उल्लेख करता है।

उद्देश्य—इसमे लेखक की उस सामान्य या विशिष्ट जीवन दृष्टि का विवेचन होता है जो उसकी कृति मे कथावस्तु का विन्यास, पात्रो की योजना, वातावरण के प्रयोग आदि में सर्वत्र निहित पायी जाती है। इसे लेखक का जीवन-दर्शन अथवा उसकी जीवन दृष्टि, जीवन की व्याख्या या जीवन की आलोचना कह सकते हैं। उन कृतियो को छोडकर जिनकी रचना का उद्देश्य मन-बहलाव या मनोरजन मात्र होता है, सभी कलाकृतियों मे लेखक की कोई विशेष विचारधारा प्रकट या निहित रूप मे देखी जा सकती है। बिना इसके साहित्यिक कृतित्व प्रयोजनहीन और व्यर्थ होता है।

उद्देश्य की दृष्टि से पत्र साहित्य गद्य के अन्य रूपो से कुछ भिन्न होता है। जहाँ यह निर्दिष्ट व्यक्ति को किसी विशिष्ट विषय का ज्ञान मात्र देना चाहता है तब उसका उद्देश्य अन्य साहित्यिकों के सदृश होता है। उसमे आत्मीयता की मात्रा कम रहने से निबन्ध रूप के समीप हो जाता है। जब वह अपना वृत्तान्त ही प्रेषित करना चाहता है तब उसमे मानसिक प्रतिक्रियाओ की बहुलता से आत्मीयता बढ जाती है। इस स्थिति मे लेखक का उद्देश्य सामान्य मानव जीवन की व्याख्या न होकर आत्म-जीवन की व्याख्या होती है।[२]

हिन्दी पत्र साहित्य पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि जितने भी पत्र लेखक हुए हैं उन्होंने जहाँ आत्माभिव्यक्ति पत्रों में वर्णन की है वहाँ

१. पद्मसिंह शर्मा के पत्र—सम्पादक बनारसीदास चतुर्वेदी, हरिशंकर शर्मा
२. सिद्धान्तालोचन—पद्मचन्द बलदेवकृष्ण

अनेक अन्य विषयो पर भी आपने विचार प्रकट किए हैं। उदाहरणतया यदि हम द्विवेदी-जी को लें तो हमे इनके पत्रो को पढकर पता चलता है कि जहाँ इन्होने अपने जीवन के प्रत्येक पहलू का चित्रण अपने मित्रो को किया है वहाँ अनेक साहित्यिक विषयों पर भी अपने विचार प्रकट किए हैं। इनके अधिकाश पत्रो का सम्बन्ध व्याकरण से है। सम्पादक होने के कारण व्याकरण सम्वन्धी त्रुटियो को दूर करना ही इनका उद्देश्य था। इसलिए उन्ही के सुझाव इनके पत्रो मे पाए जाते हैं।

देशकाल वातावरण– वातावरण उन समस्त परिस्थितियो का सकुल नाम है जिनसे पात्रो को सघर्ष करना पडता है और विषयवस्तु का विकास होता है। पत्रो को वास्तविकता का मान देने की कसौटियो मे वातावरण मुख्य उपकरण है। पत्र लेखक भी देशकाल की जजीर मे जकडे रहते हैं। देश और काल की पृष्ठभूमि के बिना पात्रो का एव लेखक का व्यक्तित्व स्पष्ट नही होता। देशकाल के चित्रण मे इस बात का ध्यान रहना आवश्यक है कि वह कथानक के स्पष्टीकरण का साधन ही रहे स्वय साध्य न बन जाय। जहाँ वर्णन अनुपात से बढ जाता है वहाँ उससे जी ऊबने लग जाता है।

हिन्दी साहित्य मे जितने भी पत्र लेखक हुए हैं सभी अपने समय की परि-स्थितियो से प्रभावित हैं। उदाहरणतया यदि हम मुशी प्रेमचन्द को लें तो हम देखते हैं कि इन्होने अपने पत्रो मे तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव साहित्यिक परिस्थितियो का स्वाभाविक रूप मे यत्र-तत्र वर्णन किया है। श्री जैनेन्द्र के ११ मई, १९३० के लिखे पत्र के प्रश्नो का उत्तर देते हुए उस समय की राजनैतिक परिस्थिति का चित्रण भी इन्होने किया है

"पहली तारीख को आया तो यहाँ काग्रेस को उलझनो मे पडा रहा। शहर पर फौज का कब्जा है। अमीनाबाद मे दोनो पार्कों मे सिपाही और गोरे डेरे डाले पडे हैं, १४४ धारा लगी हुई है, पुलिस लोगो को गिरफ्तार कर रही है और काग्रेस तो १४४ धारा तोडने की फिक्र मे है। डडे की नई पालिसी ने लोगो की हिम्मत तोड दी है।"[1]

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी जैसे साहित्यिक व्यक्ति भी देश की परिस्थि-तियो से प्रभावित हुए बिना न रह सके। उन्होने भी वर्णन किया है—

"रियासतों की हालत बडी खराब हो रही है। जिनके पास पृथ्वी है वे आलसी हो रहे हैं। उनसे उसका प्रबन्ध नहीं बन पडता। पर जिनमें वह शक्ति है उनके पास डब्बल भर भी जमीन नहीं। ईश्वर की गति तो देखिए। यदि हमारे प्रभु अग्रेज आप ही इस देश को छोडकर इग्लैंड जाने लगें और जहाज पर सवार हो जाएँ तो हमको विश्वास है कि हम अकर्मण्य हिन्दुस्तानियो को तार भेजना पडे कि आप लौट आइये, हम पर जैसा शासन कीजिए हम चूँ नहीं करेंगे।"

---

१. प्रेमचन्द चिट्ठी-पत्री, भाग २, पृ० ७५

गांधी का पत्र साहित्य तो है ही अपने युग का इतिहास । इनके पत्रो मे भी हमें तत्कालीन सभी राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक, घरेलू आदि सभी परिस्थितियों का पता चलता है । कमलापति त्रिपाठी ने भी अपने पत्रो मे तत्कालीन सभी परिस्थितियो का चित्रण किया है । इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रत्येक पत्र लेखक अपने समय की परिस्थितियो से प्रभावित होकर उनका स्वाभाविक रूप से अपने पत्रो मे वर्णन करता है ।

शैली—शैली अंग्रेजी 'स्टाइल' का अनुवाद है और अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से हिन्दी मे आया है । शैली भी एक प्रकार का स्पृहणीय गुण है इसलिए अच्छे लेखक अच्छे शैलीकार होते हैं । शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते है । पत्र लेखक की शैली अन्य विधाओ से पृथक होती है । इसमे लेखक का मुख्य उद्देश्य आत्माख्यान ही होता है इसलिए इस शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ है—

> "सर्वप्रथम इस शैली की विशेषता आत्मीयता है । पत्र मे लेखक की आत्मीयता प्रकट होनी चाहिये । वर्ण्य विषय की दृष्टि से जब लेखक लिखता है तब उसका अपनापन दबा रहता है, वह सीधे रूप मे सम्मुख नही आता । पत्र साहित्य मे आत्मीयता अर्थात् सापेक्ष दृष्टि की अत्यन्त आवश्यकता होती है । आत्मीयता का सम्बन्ध लेखक के अपने व्यक्तित्व के साथ भी है और दूरस्थ व्यक्ति के साथ भी ।"[1]

लेखक की आत्मीयता सरल एवं सहज रीति से अभिव्यक्त होनी चाहिए । पत्र की भाषा इस रूप मे निर्मित होनी चाहिये कि वह पत्र ही समझा जाय । उसके शब्दो में इतनी शक्ति रहनी चाहिये कि वह भाव ग्राहक को वशीभूत कर सके ।[2] इस प्रकार शैली मे स्वाभाविकता का होना आवश्यक है ।

मुक्तक काव्य की तरह पत्र का आकार छोटा होता है । इसलिए लेखक को अपनी विचारधारा संक्षिप्त रूप से प्रकट करनी चाहिये । अधिक लम्बे आकार का पत्र, पत्र नही बल्कि कोई निबन्ध कहलाता है । अपने विषय को रोचक एवं प्रभावशाली बनाने के लिए लेखक को पत्र संक्षिप्त रूप से लिखना चाहिये ।

बात को थोडे शब्दों मे अधिक-से-अधिक स्पष्टता देना पत्र की सबसे बडी माँग है । पत्रों में कुछ लोग तो अपना सारा व्यक्तित्व उँडेल देना चाहते हैं और कुछ उनको निर्वैयक्तिक तथा रंगीनी से खाली रखना चाहते हैं । इस सम्बन्ध मे मध्यम मार्ग का अनुसरण श्रेयस्कर है ।"[3] अत पत्र लेखक मे गागर मे सागर भरने वाली क्षमता होनी चाहिये ।

---

१. सिद्धान्तालोचन—धर्मचन्द बलदेवकृष्ण

२. सिद्धान्तालोचन—धर्मचन्द बलदेवकृष्ण

३. काव्य के रूप, गुलाबराय

अन्तिम विशेषता इस शैली की यह है कि पत्र लेखक को इस बात का पूर्ण ध्यान रखना चाहिये कि यह पत्र भावग्राहक के अनुकूल है या नही। यदि पत्र मे किसी ऐसे विषय का वर्णन है जो उसकी समझ के बाहर है तो वह प्रभावहीन हो जायेगा। इस प्रकार इस शैली की यह महत्त्वपूर्ण विशेषता है कि पत्र भावग्राहक के अनुकूल होना चाहिये।

पत्र साहित्य का विकास

पत्र लेखन एक कला है यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति के पत्र कला की ऊँचाई को नही छू पाते। किसी पत्र का सौष्ठव और महत्त्व लेखक के व्यक्तित्व पर अवलम्बित है। लेखक का प्रयोजन, रुचि और योग्यता आदि तत्त्व ही किसी पत्र को कला की वस्तु बनाकर सुरक्षित रख सकते हैं। पत्रो की अपील कुछ क्षण के लिए व्यक्तिगत होते हुए भी उसका मूल स्रोत लेखक के कलात्मक व्यक्तित्व मे होता है।

भारतेन्दु कालीन पत्र साहित्य—हिन्दी साहित्य मे सर्वप्रथम पत्र लेखक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हुए हैं। इनके कुछ पत्रो का सग्रह ब्रजरत्नदास ने 'भारतेन्दु ग्रन्थावली' तीसरा भाग मे दिया है। इनके ये पत्र गोस्वामी श्री राधाचरण एव श्री बद्रीनारायण श्री उपाध्याय प्रेमघन को लिखे हुए हैं। इन समस्त पत्रो मे भारतेन्दुजी के साहित्यिक व्यक्तित्व के विषय मे ही ज्ञान होता है। केवल एक पत्र जो इन्होने 'प्रेमघन' को लिखा है उसमे इन्होने एक व्यक्तिगत गोपनीय घटना का वर्णन किया है। श्री राधाचरण को लिखे हुए इनके पत्रो से इनकी स्पष्टवादिता, तटस्थ वृत्ति एव अलौकिक पुरुषो एव चित्रो के प्रति रुचि का आभास होता है। केवल एक पत्र मे जो कि इन्होने श्री बदरीनारायण प्रेमघन को लिखा था उसमे इनकी दार्शनिक विचारधारा का पता चलता है

> "आपका कृपा पत्र आया। यह ससार दु ख का सागर है और अपनी-अपनी विपत्ति मे सब फँसे हैं पर मैं सोचता हूँ कि जितना मैं चारो तरफ से दु ख मे जकडा हूँ इतना और कोई कम जकडा होगा। पर क्या करूँ खैर चला ही जाता है। बाबूजी का यह तुक बहुत ही ठीक है—'है ससार का यह मजा, घन सरिस दुःख तडितसम सुख मोह छाजन छजा।' इन्ही झझटो से आजकल पत्र नही लिखा। क्षमा कीजियेगा। चित वैसा ही है। इसमे सन्देह न कीजियेगा। 'सौ युग पानी में रहे मिटे न चकमक आग'।"[1]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पश्चात् दूसरे पत्र लेखक श्रीधर पाठक हैं। इनके समस्त पत्रो का सग्रह किसी एक पुस्तक मे नही प्राप्त होता। फुटकर रूप मे इनके पत्र प्राप्त होते हैं। इनका पत्र-व्यवहार श्री पिन्काट, बालमुकन्द गुप्त, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, रायदेवीप्रसाद 'पूर्ण' लोचनदास पाण्डेय, बनारसीदास चतुर्वेदी एव भारतेन्दु आदि से हुआ था। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी से जो पत्र-व्यवहार हुआ था उन पत्रो

---

१. भारतेन्दु ग्रन्थावली, तीसरा भाग—ब्रजरत्नदास, पृ० ६७६

का सग्रह श्री बैंजनाथसिह विनोद ने अपनी पुस्तक 'द्विवेदी युग के साहित्यकारो के कुछ पत्र' मे किया है। इस पुस्तक का प्रथम सस्करण सन् १९५८ मे हुआ। द्विवेदीजी को लिखे पत्रो मे उस काल की लेखन प्रणाली एव व्याकरण सम्बन्धी विवाद है। श्रीधर पाठकजी ने एक स्थान पर स्पष्ट लिखा है कि —

> "कर्त्ता को प्राय सर्वत्रैव प्रकट रखना अर्थात् जहाँ उसे पुरानी प्रथा के अनुसार गुप्त रखना चाहिये वहाँ भी उसका लाना, इससे अरोचकता उत्पन्न होती है और मुहाविरे का मजा मारा जाता है।"[1]

इसके बाद अनेक उदाहरण हैं द्विवेदीजी के विचारो का खंडन करते हुए अन्त मे उन्होने लिखा है—

> "मैं कोई नवीन प्रणाली निकालना नही चाहता, परन्तु शिष्ट क्षुस्य प्रथा का परम पक्षपाती हूँ—मुझे राजा शिवप्रसाद, पं० राधाचरण गोस्वामी, लाला बालमुकुन्द गुप्त की लेख शैली बहुत रुचती है और मुझे असीम प्रसन्नता हो यदि आप इन सुलेखको का अनुसरण कर सके।"[2]

इनके चतुर्वेदी, पाण्डेय, भारतेन्दु, गगाप्रसाद अग्निहोत्री एव बालमुकुन्द गुप्तजी को लिखे पत्रो का सग्रह रामचन्द्र मिश्र ने अपनी पुस्तक 'श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य' मे किया है। आ० स्वामी भगीरथपुरी के लिए लिखित पत्र मे एक छात्र की-सी विनम्रता, बालमुकुन्द गुप्त एव गगाप्रसाद अग्निहोत्री के लिए लिखे हुए पत्रो मे मैत्री भाव एव बनारसीदास चतुर्वेदी के प्रति लिखित पत्रो मे आत्मीयता स्पष्ट व्यक्त होती है।[3] भाषा और साहित्य के निर्माण के सम्बन्ध मे पाठकजी के ये पत्र बडे महत्वपूर्ण हैं। इनके पत्र गद्य एव पद्य दोनो मे लिखे हुए हैं।

भारतेन्दु युग के अन्य पत्र लेखको मे पडित बालकृष्ण भट्ट एव बालमुकुन्द गुप्त का नाम आता है। भट्टजी के श्रीधर पाठक को लिखे हुए कुछ पत्रो का सग्रह विनोदजी ने अपनी पुस्तक 'द्विवेदी युग के साहित्यकारो के कुछ पत्र' मे किया है। ये पत्र गद्य और पद्य मे लिखे गए हैं। बालमुकुन्द गुप्तजी के लिखे हुए उन सभी पत्रो का सग्रह है जो कि उन्होने श्रीधर पाठक को लिखे थे। गुप्तजी के पत्रो मे सुदूर अतीत की अनेक जानने योग्य बातें हैं। उस काल की साहित्यिक चोरी, साहित्यिक विवाद और एक-दूसरे के प्रति प्रेम और आदर के अनेक उदाहरण गुप्तजी के पत्रो मे भरे पडे हैं। ये पत्र ऐसे हैं कि जिनका महत्व आज भी कम नही हुआ है। हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास को स्पष्ट करने के लिए इन पत्रो को प्रमाण रूप मे रक्खा जा सकता है।[4]

---

१. द्विवेदी युग के साहित्यकारो के कुछ पत्र—बैंजनाथसिह विनोद, पृ० १९८
२. वही, पृ० १८९
३. श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य, रामचन्द्र मिश्र, पृ० ३३३
४. द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र —बैंजनाथसिह विनोद, भूमिका 'घ'

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतेन्दु युग मे जितने भी पत्र लेखक हुए हैं उन सब लेखको के पत्रो का विषय विशेष रूप से साहित्यिक ही है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालमुकुन्द गुप्त एव श्रीधर पाठक के सभी पत्रो का अध्ययन करने से यही ज्ञात होता है कि ये पत्र हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास को स्पष्ट रूप से व्यक्त करते हैं। इन सभी लेखको के साहित्यिक व्यक्तित्व की जानकारी तो हो जाती है परन्तु व्यक्तिगत जीवन के विषय मे कुछ कम ही आभास होता है। केवल एक-दो पत्र ही इन्होंने ऐसे लिखे है जिनसे इनके व्यक्तिगत जीवन के कुछ अश का पता चलता है।

द्विवेदीकालीन पत्र साहित्य—द्विवेदी युग के पत्र लेखकों मे सर्वप्रथम आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी का नाम आता है। इनके समस्त पत्रो का सकलन बैजनाथसिंह विनोद ने सन् १९४८ मे 'द्विवेदी पत्रावली' नाम से प्रकाशित किया। इनके पत्रों से हमे इनके साहित्यिक एव व्यक्तिगत जीवन की झाँकी प्राप्त होती है। कुछ व्यक्तिगत प्रसगो को छोडकर द्विवेदीजी के पत्र किसी-न-किसी भाषा सम्बन्धी प्रश्न अथवा साहित्यिक समस्या पर लिखे गए हैं फलत. आधुनिक हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास पर इन पत्रो से काफी प्रकाश पडता है। व्यक्तिगत जीवन में से उनकी निर्भीकता, स्पष्टवादिता, दृढ निश्चय, मितव्ययिता आदि गुणों का पत्रो में वर्णित छोटे-छोटे प्रसगो से पता चलता है।

आचार्य द्विवेदी के पश्चात् पद्मसिंह शर्मा के पत्र प्राप्त होते हैं। इनके पत्रों का सग्रह पडित बनारसीदास चतुर्वेदी एव हरिशकर शर्मा ने सन् १९५६ मे 'पद्मसिंह शर्मा के पत्र' नाम से प्रकाशित किया। शर्माजी के पत्रो से हमे उनके मानव रूप एव साहित्यिक रूप दोनो का परिचय मिलता है। इनके पत्रो को पढकर यह स्पष्ट हो जाता है कि पडितजी केवल प्रकाण्ड पडित ही नही थे वरन् उनमे व्यवहार-बुद्धि, साहस, निर्भीकता, विचारो की दृढता और स्वाभिमान था और सर्वोपरि उनका मानव रूप इन पत्रों से भलीभाँति विदित हो जाता है। लगभग प्रत्येक पत्र से इनकी जिन्दादिली टपकती है। इनकी रचनाओ के सम्बन्ध मे भी अनेक आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। इनके पत्रो से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह प्रत्येक घडी रस मे डूबे रहते थे।

इनकी साफगोई, दिखावट से घृणा, दम्भ से अरुचि, आत्मगौरव, निर्भीकता, आदर्शपालन, साहित्य सेवा, बहुज्ञता, भाषाधिकार आदि अनेक बातो का इन पत्रो से पता चलता है। उनके लिए यह कहा गया है कि सरस्वती की रक्षा के लिए तो वे 'बरतना शमशेर' थे। प्रस्तुत सग्रह से इस कथन की सार्थकता पूर्णत. प्रमाणित होती है।[1]

द्विवेदी युग के अन्य प्रसिद्ध पत्र लेखको मे मुशी प्रेमचन्द का नाम उल्लेखनीय है। इनके पत्रो का सग्रह 'प्रेमचन्द : चिट्ठी पत्री भाग प्रथम' एवं 'प्रेमचन्द : चिट्ठी पत्री भाग द्वितीय' के नाम से अमृतराय ने सन् १९६१ मे प्रकाशित किया। मुशीजी के

---

१. पद्मसिंह शर्मा के पत्र—लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय, आलोचना, अक्तूबर, १९५६

समस्त व्यक्तित्व का ज्ञान हमे इनके पत्रो से होता है। जितने भी पत्र इन्होने अपने-अपने मित्रो को लिखे वे प्रकाशित करवाने के उद्देश्य से तो लिखे न थे, इसलिए उनमे कई ऐसी घटनाओ का वर्णन किया है जो कि इनके व्यक्तितव को समझने मे पूर्णतया सहायक सिद्ध हुई है। अपने परिवार, स्त्री एव व्यक्तिगत विचारो का जैसा नग्न चित्र इन्होने अपने पत्रो मे खीचा हैं वैसा शायद ही आजतक कोई खीच सका हो। श्री जैनेन्द्र को लिखे इनके पत्र विशेषतया महत्वपूर्ण हैं। उनसे इनके व्यक्तिगत जीवन एवं विचारो को समझने मे विशेष सहायता प्राप्त होती है। समस्त पत्रो मे इनका भोलापन झलकता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा श्री केदारनाथ पाठक को लिखे कुछ पत्र विनोदजी ने अपनी पुस्तक 'द्विवेदी युग के साहित्यकारो के कुछ पत्र' मे प्रकाशित किए हैं। इन पत्रो से शुक्लजी की स्पष्टवादिता एव साहित्यिक व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त होती है।

सन् १९३५ मे 'माधुरी' पत्रिका मे चन्द्रगुप्त विद्यालकार के पत्र 'एक सप्ताह' एव मैथिलीशरण गुप्तजी का एक पत्र 'साकेत पर महात्माजी' पत्र-व्यवहार नाम से प्रकाशित हुए। विद्यालकारजी के १३ श्रावण से १९ श्रावण तक के लिखे पत्र हैं। इन पत्रो से इनकी भावुकता दृष्टिगोचर होती है। गुप्तजी ने अपने पत्र मे 'साकेत' लिखने का उद्देश्य, उसका नामकरण, कला एव भाव पक्ष पर अपने विचार रक्खे हैं।

इसके पश्चात् डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा के कुछ पत्र 'सुधा' पत्रिका मे सन् १९३६ एव सन् १९३८ मे प्रकाशित हुए। ये पत्र उन्होने अरब, इटली, पैरिस, बैल्जियम आदि से लिखे हैं। इन पत्रो मे इन्होंने अपनी समस्त यात्रा का वर्णन किया है। सन् १९४८ में भदन्त आनन्द कोसल्यायन द्वारा लिखे भिक्षु के पत्र प्रकाशित हुए।

इनके अतिरिक्त कमलापति त्रिपाठी के पत्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके पत्रों का सग्रह 'बन्दी की चेतना' नाम से सन् १९४८ मे प्रकाशित हुआ। त्रिपाठीजी ने ये पत्र नैनी जेल से अपने आत्मज श्री लोकपति त्रिपाठी को लिखे हैं। यद्यपि ये पत्र व्यक्तिगत हैं तो भी आदर्श, नैतिकता, अध्यात्म, मानवता एव भारतीय जीवनदर्शन के प्रति अगाध रूप से आस्थावान् गम्भीर अध्येता तथा विचारक की अनुभूति होने के कारण इन पत्रो मे अर्थ, काम, धर्म, विज्ञान, दर्शन एवं समाजशास्त्र की दृष्टि से जीवन एव जगत के सामान्यत· प्रत्येक पहलू पर जो सम्यक् एव मूल्यवान् विचार प्रस्तुत किए हैं उनके कारण इनका महत्व सार्वलौकिक हो उठा है। विषमता की पीडा से त्रस्त तथा समाज और जीवन तथा जगत मे समता एवं सामजस्य की स्थापना के लिए विचार पथ का सुस्पष्ट निर्देश भी इस कृति मे है।

सन् १९५७ मे शिवचन्द्र नागर द्वारा लिखे मानव को पत्र 'महादेवी : विचार और व्यक्तितत्व' नाम से प्रकाशित हुए। इन पत्रों का विषय महादेवी ही हैं।

आधुनिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित पत्र साहित्य

हिन्दी पत्र साहित्य के विकास में पत्र-पत्रिकाओं ने भी बहुत सहयोग दिया है।

आजकल हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। सन् १९६२ मे श्रीराम शर्मा का 'श्री नेहरू को एक पत्र' 'विशाल भारत' मे प्रकाशित हुआ। सन् १९६३ मे सुरेशचन्द्र द्वारा लिखे पत्र—'वृन्दावनलाल वर्मा पत्र के दर्पण मे', 'पत्र-व्यवहार जिनका सुखद व्यसन है'—प० बनारसीदास चतुर्वेदी के दो पत्र 'विशाल भारत' में प्रकाशित हुए। इसके अतिरिक्त बनारसीदास चतुर्वेदी ने स्वर्गीय पीर मुहम्मद यूनिस के पत्र 'सम्मेलन पत्रिका' मे प्रकाशित किए हैं। यही नही सन् १९६४ मे नीरज के लिखे 'लिख भेजत पाती' पत्रो का सग्रह प्रकाशित हुआ है। इस प्रकार हिन्दी पत्र साहित्य प्रगति पर है।

अनूदित पत्र साहित्य—इन पत्रो के अतिरिक्त कुछ अनूदित पत्र संग्रह भी हिन्दी मे प्राप्त होते हैं। बापू के समस्त पत्रो का हिन्दी अनुवाद रामनारायण चौधरी ने किया है। इनके जमनालाल बजाज को, मणिबहन को, आश्रम की बहनो को लिखे समस्त पत्रो का हिन्दी अनुवाद प्राप्त है। इसके अतिरिक्त अबीलार्ड और हेलोज के प्रेमपत्रो का 'प्रायश्चित' नाम से अनुवाद सत्यजीवन वर्मा ने सन् १९२९ में किया। श्री अरविन्द के पत्र भी बगला से हिन्दी मे अनुवाद रूप मे पाए जाते हैं। 'पत्राजलि' श्री सतीश चक्रवर्ती की बगला पुस्तक स्वामी स्त्रीर-पत्र का हिन्दी रूपान्तर पडित काव्यायनीदत्त त्रिवेदी ने सवत् १९७९ मे किया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर एव श्री नेहरू के पत्रो का भी हिन्दी अनुवाद प्राप्त है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतेन्दु युग का पत्र साहित्य द्विवेदी युग के पत्र साहित्य से भिन्न है। भारतेन्दु युग मे जितने भी पत्र लेखक हुए हैं उन सबका विषय विशेष रूप से साहित्यिक ही था। द्विवेदी युग के पत्र लेखको ने अपने पत्रो का विषय जहाँ साहित्यिको को लिया वहाँ व्यक्तिगत जीवन मे घटी घटनाओ पर भी प्रकाश डाला है। इस प्रकार पत्र लिखने मे जो कला-कुशलता द्विवेदी-युगीन लेखको मे प्राप्त होती है वह भारतेन्दु युग के लेखको मे नहीं। वर्तमान काल मे कुछ पत्र हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो रहे हैं। इससे अनुमान है कि हिन्दी पत्र साहित्य विकासोन्मुख है। इसकी प्रगति मे साहित्यिक ही नही प्रत्युत राजनैतिक, सामाजिक एव धार्मिक व्यक्ति भी सहयोग दे रहे हैं। पत्र साहित्य का यह विकास मैंने प्रकाशित पुस्तको एव पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित पत्रो के आधार पर लिखा है।

विभाजन

हिन्दी पत्र साहित्य पर दृष्टिपात करने के पश्चात् उसको निम्नलिखित ढग से विभाजित किया जा सकता है—

साहित्यिक पत्र—इन पत्रो का विषय साहित्य से सम्बन्धित होता है। साहित्य से मेरा अभिप्राय भाषा, व्याकरण शैली एव पुस्तक आदि से है। ऐसे पत्रो मे लेखक का मुख्य उद्देश्य विषय को समझाकर उसके प्रति अपने विचार प्रकट करना होता है। ऐसे पत्रों मे लेखक का व्यक्तित्व गौण एव विषय मुख्य रूप से प्रधान होता है। आचार्य

द्विवेदी, पद्मसिंह शर्मा एव श्रीधर पाठक के पत्र इसी श्रेणी के हैं। श्रीधर पाठकजी के अधिकाश पत्रो का विषय साहित्यिक है। इनके पत्रो मे उस काल की लेखन प्रणाली एव व्याकरण सम्बन्धी विवाद है। एक पत्र मे सर्वनाम सम्बन्धी लिखते हैं—

"सर्वनाम आदि के व्यवहार की नई रीति जी मे बहुत दिनो से खटक रही थी। थोडे से उदाहरण यहाँ देता हूँ—१. उसने कहा 'हरे कृष्ण' और (वह) चल दिया—यहाँ 'वह' का प्रयोग प्रचारविरुद्ध है यद्यपि व्याकरण से शुद्ध है। २. जब वह चीखा (तब) मैं चौंक पडा। यहाँ 'तब' मैं मुहाविरा है 'तो' होना चाहिए। प्राय. 'तब' (प्रचार के अनुसार) जब के बाद छोड दिया जाता है—परन्तु अब उसके निरन्तर वा निर्विकल्प व्यवहार की परिपाटी पडती जाती है ··।"[1]

भारतेन्दुजी के भी कुछ पत्रो के विषय का सम्बन्ध साहित्य से ही है। गोस्वामी श्रीराधाचरण जी को लिखते हैं—

"महात्माओ ने जो पद बनाए हैं उनमे प्रिया-प्रियतम का जो संवाद है वा अन्य सखियो की उक्ति है उन्ही सबो के यथास्थान नियोजन से एक रूपक बने तो बहुत ही चमत्कार हो अर्थात् नाटक की और जितनी बातें हैं अमुक आया गया इत्यादि अक दृश्य इत्यादि मात्र तो अपनी सृष्टि रहे किन्तु संवाद मात्र उन्ही प्रवीनो के पदो की योजना से हो। जहाँ कही पूरा पद रहे वहाँ पूरा कहीं आधा चौथाई एक टुकडा जितना आवश्यक हो उतना मात्र उनमे से ले लिया जाय। यह भी यो ही कि एक बेर पदो मे से चुन-चुन कर अत्यन्त चोखे-चोखे जो हों वा जिन में कोई एक टुकडा भी अपूर्व हो वह चिन्हित रहे फिर यथा-स्थान उनकी नियोजना हो, ऐसा ही गीत गोविन्द से एक संस्कृत मे हो, बहुत ही उत्तम ग्रन्थ होगा।"[2]

आचार्य द्विवेदीजी 'तुलसी दर्शन-पुस्तक के विषय मे विचार प्रकट करते हुए लिखते हैं—

"तुलसी दर्शन की कापी आपने क्या भेजी मुझे सजीवनी का दान दे डाला। मैंने उसका कुछ अश अब तक पढा कर सुना है विशेषकर भक्ति विषयक। मैं मुग्ध हो गया। आप धन्य हैं। ऐसी पुस्तक लिखी जैसी तुलसी पर आज तक किसी ने न लिखी थी और न यही आशा है कि आगे कोई लिखेगा।

आपने अनेक दृष्टियो से रामचरितमानस पर विचार किया है। समन्वय भी यथास्थान ठीक-ठीक कर दिया है। आपने इस विषय मे जो विद्वता प्रकट की है वह दुर्लभ है। मेरे मन मे आया था कि शाडिल्य और नारद के भक्ति सूत्रों की याद आपको दिलाऊं। पर पुस्तकात में जो सूची देखी तो लज्जित हो गया।

१. द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र—सम्पादक बैजनाथसिंह विनोद, पृ० १९७
२. भारतेन्दु ग्रन्थावली, तीसरा भाग, संकलनकर्त्ता ब्रजरत्नदास, पृ० ६६९

मुझे ज्ञात हुआ कि आप इस विषय मे मुझ से हजार गुना अधिक जानते हैं।"[1]

इसी प्रकार बालमुकुन्द गुप्त के पत्रो मे भी सुदूर अतीत की अनेक जानने योग्य बातें है। उस काल की साहित्यिक चोरी, साहित्यिक विवाद और एक दूसरे के प्रति प्रेम और आदर के अनेक उदाहरण गुप्तजी के पत्रो मे भरे पडे हैं। हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास को स्पष्ट करने के लिए इन पत्रो को प्रमाण रूप मे रखा जा सकता है।

आत्मकथात्मक पत्र—इन पत्रो मे लेखक अपने व्यक्तित्व का परिचय स्पष्ट रूप से आत्मकथात्मक शैली मे अपने मित्र व सम्बन्धी को वर्णन करता है। ऐसे पत्रो मे लेखक का व्यक्तित्व पूर्ण रूप से दृष्टिगोचर होता है। स्वाभाविकता, स्पष्टता आदि विशेषताएँ इन पत्रो की होती हैं। ऐसे पत्र आत्मकथा एव जीवनी के लिए सहायक होते हैं। गोपनीय घटनाओ का वर्णन होने से ये हृदय का पूर्ण दर्पण होते है। हिन्दी साहित्य मे मुशी प्रेमचन्द, आचार्य द्विवेदीजी, पद्मसिंह शर्मा, रामचन्द्र शुक्ल आदि साहित्यिको के कई पत्र इसी श्रेणी के हैं।

मुशी प्रेमचन्द एक पत्र मे अपने हालात के विषय मे लिखते हैं—

"मेरे हालात नोट कर लें। तारीख पैदायश सवत् १६३७। बाप का नाम मुशी अजायबलाल। सुकूनत मौजा मढवा लमही। मुत्तसिल पाण्डेपुर। बनारस। इब्तदाअन आठ साल तक फारसी पढी। फिर अग्रेजी शुरू की। बनारस के कालेजिएट स्कूल से एन्ट्रेंस पास किया। वालिद का इन्तकाल पद्रह साल की उम्र मे हो गया। वालिदा सातवे साल गुजर चुकी थी। फिर तालीम के सीगे मे मुलाजिमत की। सन् १६०१ ई० से लिटरेरी जिन्दगी शुरु की। रिसाला 'जमाना' मे लिखता रहा। कई साल तक मुतफर्रिक मजामीन लिखे। सन् १६०४ में एक हिन्दी नाविल प्रेमा लिखकर इण्डियन प्रेस से शाया कराया। सन् १२ मे जल्वए ईसार और सन् १८ मे बाजारे हुस्न लिखा। हिन्दी मे सेवासदन, प्रेमाश्रम रगभूमि, कायाकल्प—चारो नाविल दो-दो साल के वक्फे बाद लिखे—अब खाना खशी है। बाकी उमर आपको खुद मालूम है।"[2]

इसी प्रकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल एक पत्र मे अपने घर के हालात के विषय मे लिखते हैं—

"प्रिय आजकल मेरे ऊपर ईश्वर की अथवा शनैश्चर की बुरी दृष्टि है। एक के उपरान्त दूसरी, दूसरी के उपरान्त तीसरी विपत्ति मे आ फँसता हूँ। सुनिए मैं काशी जाने की पूरी तैयारी कर चुका था परन्तु बीच मे मेरे घर ही मे एक विलक्षण षडचक्र रचा गया? हरिश्चन्द्र का गौना छ या सात दिन मे आने वाला है। इधर मेरे पिताजी कई दिनो से दौरे पर हैं। इसी बीच मे मेरी

---

१. द्विवेदी युग के साहित्यकारो के कुछ पत्र, पृ० ५६, ६०

२. प्रेमचन्द . चिट्ठी-पत्री भाग १, पृ० १६१

विमाता को भी भयकर मूर्ति धारण करने की सूझी। ४०० रु० का जेवर गायब करके कह दिया कि मेरे पास ही से घर मे से चोरी हो गया। वे जेवर प्राय वही थे जो हरिश्चन्द्र के विवाह मे मिले थे—मेरे पिताजी को खबर दी जा चुकी है, आज वह आने वाले हैं।"[1]

इस प्रकार अनेक पत्रो मे जहाँ लेखक ने अपने व्यक्तित्व के विषय मे लिखा है वहाँ उस पर पडने वाले वातावरण एव व्यक्तिगत घटनाओ का भी स्पष्ट रूप से वर्णन है। ऐसे अनेको पत्र आचार्य द्विवेदी आदि साहित्यिको के भी प्राप्त होते हैं। उनमे लेखक की ईमानदारी एव जिन्दादिली प्राप्त होती है।

अन्य चरित्रमूलक पत्र—हिन्दी पत्र साहित्य मे कुछ ऐसे पत्र भी हैं जिनमे लेखको ने अन्य व्यक्तियो के चरित्र के विषय मे लिखा है। ऐसे पत्र अन्य चरित्रमूलक कहलाते हैं। आचार्य द्विवेदी, पद्मसिह, शर्मा मुशी प्रेमचन्द एव शिवचन्द्र नागर द्वारा प्रकाशित पत्र इसी श्रेणी के हैं। ऐसे पत्रो की शैली समास शैली होती है। द्विवेदीजी ने एक पत्र मे श्रीमान् राजा कमलानन्द के विषय मे लिखा है—

"श्रीमान् राजा कमलानन्द सिह की उदारता, गुणग्राहकता और सामर्थ्य का और क्या उदाहरण हो सकता है। आपके उदाहरण से कर्णबलि और दधीचि आदि की कथा सब सच जान पडती है।...श्रीमान् की प्रतिष्ठा, कीर्ति और ख्याति, अनन्य परिमेय और दिव्यव्यापिनी है उनकी रचना हमारी समझ मे है ही नहीं, उसकी किस तरह वृद्धि होगी या कौन कार्य करने से वृद्धि होगी यह बतलाना हमारी सामर्थ्य के बाहर है।"

प० पद्मसिह शर्मा भी चतुर्वेदीजी को पन्तजी के विषय मे लिखते हैं—

"इस बार पहली बार पडित सुमित्रानन्द पत से बिजनौर मे मुलाकात हुई। आदमी तबीयत के साफ और 'जेंटिलमैन' साबित हुए। 'पल्लव' की भूमिका मे जो पहले कवियो के विषय मे अन्ट सन्ट, अनाप-शनाप, ऊल-जलूल लिख गए हैं उसे वापिस लेने को कहते थे। यह भी कहते थे कि 'ब्रजभाषा का विरोध करने के लिए मुझे खास तौर से कहा गया था। इसी से वैसा लिखना पडा। सुरीला गला है। सुरताल से वाकिफ हैं। राग रागिनियो के नाम जानते हैं। आज-कल मे एक आदर्श छायावादी कवि मे जो गुण होने चाहिए सब हैं।"

इस प्रकार अनेक पत्र इन व्यक्तियो ने अन्य चरित्र विषयक लिखे है।

वर्णनात्मक पत्र—इस प्रकार के पत्रो मे लेखक किसी नगर-स्थान या किसी विशेष भवन का वर्णन अपने पत्रो मे वर्णनात्मक शैली मे करता है। डा० धीरेन्द्र वर्मा के सभी पत्र इस श्रेणी मे आते हैं। इनके योरप, पैरिस, इटली, बेल्जियम आदि से लिखे पत्र इसी प्रकार के हैं। ऐसे पत्रो में लेखक की वर्णन शैली मे सजीवता एव स्वाभाविकता का होना परमावश्यक है। सैक्सनी राज्य के मुख्य नगर ड्रेस्डेन का वर्णन एक

---

१. द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र, पृ० २१८

पत्र मे डाक्टर साहब ने किया है—

"ड्रेस्डेन नगर बर्लिन की अपेक्षा पुराना और शान्त है। एल्ब नदी के किनारे पहाड़ियो से घिरा होने की वजह से रमणीक मालूम होता है। चारो ओर का दृश्य अजमेर की याद दिलाता है और नदी के किनारे का दृश्य आगरा की जमना का।"

नगर व स्थान के वर्णन की अपेक्षा वहाँ रहने वाले स्त्री-पुरुषो के विषय मे भी डाक्टर साहब ने लिखा है। बेल्जियम के स्त्री-पुरुषो के विषय मे लिखते हैं—

"बेल्जियम के स्त्री पुरुषो के मुख और व्यवहार से शराफत टपकती है· इगलैण्ड के लोगो का अक्खडपन तथा पेरिस वालो की कामुकता यहाँ नही दिखलाई पडती। लोग बहुत मीठे ढग से बात करते हैं। अगर उन्हे अनुमान भी हो जाता था कि हम लोगो को किसी वजह की तलाश है तो खुद पूछ लेते थे। दौड-भाग भी ब्रूसेल्ज मे लन्दन या पेरिस की सी नही है। यो साम्राज्य रखने वाले देशो के दिमाग कुछ फिरे हुए होना स्वाभाविक है।"

इस प्रकार अनेक पत्रो मे नगरो का, विशेष स्थानो का वर्णन प्रमुख रूप से पाया जाता है।

विचारप्रधान पत्र—विचारप्रधान पत्रों मे किसी भी विषय एव समस्या पर प्रकाश डाला जाता है। पत्र का विषय सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एव नैतिक कुछ भी हो सकता है। इस प्रकार के पत्रो मे उपदेशात्मकता अधिक होती है। वैसे तो सभी लेखको के कुछ पत्र विचारप्रधान हैं परन्तु विशेषतया कमलापति त्रिपाठीजी के पत्र इस कोटि के हैं। यद्यपि त्रिपाठीजी के पत्र व्यक्तिगत हैं तो भी आदर्श नैतिकता, अध्यात्म, मानवता एव भारतीय जीवन दर्शन के प्रति अगाध रूप से आस्थावान् गभीर अध्येता तथा विचारक की अनुभूत कृति होने के कारण इन पत्रो मे अर्थ, धर्म, काम, विज्ञान दर्शन एव समाजशास्त्र की दृष्टि से जीवन एव जगत के सामान्यत. प्रत्येक पहलू पर जो सम्यक् तथा मूल्यवान् विचार प्रस्तुत किए है उनके कारण इसका महत्व सार्वलौकिक हो उठा है। विषमता की पीड़ा स त्रस्त व्यक्ति तथा समाज और जीवन तथा जगत से समता एव सामजस्य की स्थापना के लिए विचार पथ का सुस्पष्ट निर्देश भी इस कृति मे है।

स्वामी विवेकानन्द के पत्र भी विचारात्मक पत्रो की श्रेणी मे आते हैं उनके सभी पत्र धर्म, दर्शन, सस्कृत, शिक्षा, कला, भ्रमण, समाज तथा राष्ट्रनिर्माण आदि महत्वपूर्ण विषयो से सम्बन्धित है।

डायरी

डायरी वह आत्मीय पुस्तक है जिसमे लेखक प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं का ही वर्णन नही करता अपितु इसके साथ ही साथ मानवीय प्रतिक्रियाओ का वर्णन भी सक्षिप्त, रोचक एवं सुसगठित रूप से करता है। इसका विस्तृत विवेचन द्वितीय अध्याय मे किया गया है।

तत्व

हिन्दी साहित्य मे जो भी डायरियाँ एव डायरियो के पन्ने पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए हैं उनके अनुसार डायरी के तत्व निम्नलिखित हैं—

विषयवस्तु का विस्तार—डायरी का यह महत्वपूर्ण तत्व है। विषय से अभिप्राय लेखक के केवल खाने पीने सोने एव उठने से नही है प्रत्युत जीवन में अनुभव की हुई कोई ऐसी घटना, नई अनुभूति, विचित्र वस्तु आदि का विवरण है जो सामान्यत मानव समाज के लिए भी शिक्षाप्रद नवीन अद्भुत रुचिकर तथा लाभकर हो।[1] डायरी लेखक का बहुत कुछ कौशल उसके विषय चुनाव मे है। साधारण घटनाओ का वर्णन करने मे कोई लाभ नही, यद्यपि वर्णन कौशल द्वारा साधारण विषय मे भी सुन्दरता लाई जा सकती है। तथापि रचना की उत्तमता अधिकाश मे सामग्री की उत्तमता पर निर्भर रहती है। जीवन के जिस भी भाग का वर्णन लेखक अपनी रचना मे करे वह सामग्री ऐसी होनी चाहिए जिसका प्रभाव लोगो पर भी पडे, लेखक पर तो होता है। विषय चुनाव डायरी में कृत्रिम नही होना चाहिए। यहाँ पर चुनाव से मेरा अभिप्राय छोटी-छोटी बातो एवं घटनाओ के वर्णन से है।

विषय वर्णन मे सर्वप्रथम रोचकता का होना आवश्यक है। दैनिकी लेखक को अपने जीवन की घटनाओं का इस ढग से वर्णन करना चाहिए जिससे वह पाठक के मन को अपनी ओर खीच सके। रोचकता दो ही बातो से हो सकती है—कौतूहलता एव नवीनता। पाठक कुछेक घटनाएँ पढकर सोच मे पड जाए कि इस जीवन की घटना के पश्चात् लेखक का क्या होगा। नवीनता होने के कारण पाठक का मन उचरता नही। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अपनी डायरी मे जीवन के जिन सात वर्षो का वर्णन किया है वह अत्यन्त रोचक है। सत्य असत्य, धर्म, विवाह, शिक्षा आदि समस्याओ पर विचार प्रकट करते हुए भी लेखक ने वर्णन शैली मे रोचकता का ध्यान रक्खा है। 'सत्य क्या है' इस विषय को भी कितनी रोचकपूर्ण भाषा मे व्यक्त किया है —

> "ससार मे इतने बहुत से धर्म हैं इससे ही मालूम होना है कि सत्य का जानना कितना कठिन है। एक ओर एक बूढा मनुष्य जनेऊ पहने माथे पर चन्दन लगाए, स्नान करके कुशासन पर बैठा गायत्री का जाप कर रहा है। दूसरी ओर बूते और कपडे पहने गिरिजाघर मे खडा हुआ एक मनुष्य आँखे मूँदकर ईसा मसीह से पापो को क्षमा करने की प्रार्थना कर रहा है। तीसरी जगह बकरे को मारकर झटपट हाथ धो कधे पर के सुर्ख अगोछे से मुँह पोछ, मुल्ला साहब मसजिद मे घुटनो के बल बैठे हुए या मोहम्मद रसूल अल्लाह श्रद्धापूर्वक कह रहे हैं। इसमे कौन ठीक है ?"[2]

आत्मकथा की भाँति डायरी में क्रमबद्ध सुगठित सुविस्तृत जीवनवृत नहीं रहता

---

१. शैली और कौशल-सीताराम चतुर्वेदी

२. मेरी कालिज डायरी—डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृ० १२

इसमे अपेक्षाकृत अधिक 'क्षिप्तता रहती है।'[1] इस प्रकार विषय मे संक्षिप्तता का होना भी परमावश्यक है अत्यधिक विस्तार विषय को नीरस बना देना है मुक्तिबोधजी ने केशव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को कुछ ही पक्तियो मे कह डाला है—

"वह बालक सचमुच बहुत दयालु, धीर-गम्भीर, भीषण कष्टो को सहज ही सह लेने वाला अत्यन्त क्षमाशील था। किन्तु साथ ही वह शिथिल, स्थिर, अचचल यन्त्रवत् और सहजस्नेही था। उसमे सबसे बडा दोष यह था कि उसमे बालकोचित बालसुलभ गुण-दोष नही थे। मुझे हमेशा लगा उसका विवेक वृद्धता का लक्षण है।"[2]

विषय वर्णन का तीसरा गुण स्पष्टता है। डायरी मे लेखक को अपने व्यक्तित्व का स्पष्ट रूप के विश्लेषण करना चाहिए—क्योंकि डायरी[3] लेखक अपने जीवन या जीवन के किसी महत्वपूर्ण प्रसंग को लेकर डायरी लिखता है। डायरी लेखन मे वह यथार्थ घटनाओ को इस प्रकार सक्षेप मे व्यक्त करता है कि सारी बात भी स्पष्ट हो जाय और विस्तार भी न हो। इस प्रकार वही डायरी सफल हो सकती है जिसमे लेखक की पूर्ण रूप से ईमानदारी है। स्पष्ट वर्णन से ही लेखक की पूर्ण सत्यता का अनुमान हो जाता है।

इस प्रकार विषयवस्तु मे रोचकता, सक्षिप्तता, स्पष्टता एव सुसगठितता आदि गुणो का होना आवश्यक है। विषयवस्तु भी कई प्रकार की हो सकती है। लेखक केवल दैनन्दिनी मे अपने जीवन मे घटित घटनाओ का ही वर्णन करना अपना उद्देश्य नही समझता, उसके मन मे जो भी विचार चाहे वह राजनैतिक हो, सामाजिक हो, धार्मिक हो एवं साहित्यिक हों सभी को अपनी डायरी में लिख सकता है। इसके साथ शर्त यह है कि एक तो उनमे लेखक का व्यक्तित्व झलकता हो और दूसरा वह पाठक को लाभ दे सके। विषयानुसार हिन्दी साहित्य मे कई प्रकार की डायरियाँ प्राप्त होती हैं। गाधीजी की 'दिल्ली डायरी' जिसमे १०-६-४७ से ३०-१-४८ तक के प्रार्थना प्रवचनो का सग्रह है—राजनीतिक डायरी है। 'प्रवचन डायरी' भाग प्रथम एवं द्वितीय श्री आचार्य तुलसी की धार्मिक डायरियाँ हैं। इनका विषय धार्मिक है। इलाचन्द्र जोशी के कुछ डायरी के पन्ने ऐसे हैं जिनका विषय साहित्य से सम्बन्धित है। कुछ ऐसी डायरियाँ हैं जिनमे नगरों एव स्थान विशेष का वर्णन है। डॉ० रामकुमार वर्मा की 'वाराणसी की डायरी' एवं वाल्मीकि चौधरी की 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' ऐसी ही डायरियाँ हैं।

डायरी लेखक विषयवस्तु को दो प्रकार से लिख सकता है। जब व्यक्ति स्वय अपनी डायरी लिखता है तो वह आत्मचरित्र का रूप हो जाता है और जब कोई

---

१. सिद्धांतालोचन—धर्मचन्द सन्त बलदेव कृष्ण
२. एक साहित्यिक की डायरी—गजाननमाधव मुक्तिबोध, पृ० ३
३. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त—डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत

अन्य व्यक्ति डायरी किसी अन्य के सम्बन्ध मे लिखता है तो वह जीवन-चरित्र की श्रेणी मे आ जाता है।[1] हिन्दी साहित्य मे आत्मचरित्र की श्रेणी मे डा० धीरेन्द्र वर्मा की 'मेरी कालिज डायरी, गजानन माधव मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी' एव सुन्दरलाल त्रिपाठी की 'दैनन्दिनी' आती हैं। जीवन-चरित्र की श्रेणी मे वाल्मीकि चौधरी की 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' है। इस प्रकार विषयवस्तु लिखने के दो ही ढंग हो सकते हैं।

सम्पर्क में आए हुए व्यक्तियों एवं घटनाओं से लेखक का सम्बन्ध और उनके प्रति प्रतिक्रियाएं—दैनिकी मे लेखक उन्ही व्यक्तियो का तथा उन्ही घटनाओ का वर्णन करता है जिनसे उसका सम्बन्ध होता है। वह केवल वर्णन ही नही बल्कि स्वेच्छानुसार उस व्यक्ति के व्यक्तित्व का विश्लेषण भी करता है। वह घटनाओं का वर्णन ही नहीं बल्कि कुछ उनमे से जो उसके जीवन पर गहरा प्रभाव डालती है डायरी मे स्पष्ट रूप से पता चल जाता है। जहाँ तक पात्रो का प्रश्न है डायरी लेखक एक उपन्यासकार या नाटककार की तरह काल्पनिक पात्र या अधिक पात्र लाने का इच्छुक नहीं होता। वह तो स्वय ही प्रमुख पात्र है जिसके चारो ओर सभी कुछ घूमता है। सर्वत्र उसी के व्यक्तित्व की शोभा है।

यदि लेखक अपनी डायरी मे तत्कालीन राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का वर्णन करता है तो साथ ही उनका प्रभाव अपने व्यक्तित्व पर पडता भी दिखलाएगा। यदि वह किसी पारिवारिक घटना का वर्णन करता है तो भी अपने को अवश्य प्रभावित दिखलाएगा। उदाहरणतया 'मेरी कालिज डायरी' मे डा० धीरेन्द्र वर्मा ने जहाँ अपनी दादी के देहान्त का वर्णन किया है वहाँ कुछ ही पक्तियो मे उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए अपनी मानसिक प्रतिक्रियाओ का भी साथ मे वर्णन किया है—

> "उनके गुणो के बारे मे क्या कहूँ। पिताजी के लिए वह पिता की तरह थी। मुझे करीब-करीब उन्होने ही पाला था। समझदारी मे मैंने उनके बराबर आज तक कोई अन्य स्त्री नहीं देखी थी। प्रबन्ध करने मे वे पुरुषो से भी अधिक दक्ष थीं। काम करने की रुचि उनकी इतनी अधिक थी कि वे खाली बैठना जानती ही नही थीं।"

वहाँ मृत्यु को प्रत्यक्ष देखकर उसके मन पर पड़े प्रभाव का विश्लेषण भी लेखक ने किया है—

> "मेरा अनुभव यह हो रहा है कि मृत्यु के दुःख को आदमी इसलिए धीरे-धीरे भूल जाता है कि अन्तिम समय के कष्टो की तसवीर धुधली होती जाती है। मेरे हृदय में सबसे अधिक उद्वेग जिया के अन्तिम दिन की असह्य अन्तर

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास—चन्द्रावती सिंह, पृ० २१

वेदना को याद करके होता है। उसका स्मरण आते ही वह पीडाजनक दृश्य चित्र की भाँति आँखो के आगे खिंच जाता है। वास्तव मे मृत्यु मे बहुत ही कष्ट होता है। मैं तो मृत्यु से बहुत ही डरने लगा हूँ—अपने लिए भी और दूसरो के लिए भी।"[1]

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि लेखक ने दादी की मृत्यु की घटना के वर्णन से उसके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए उसके प्रभाव को भी व्यक्त किया है। इससे स्पष्ट है कि डायरी मे लेखक घटनाओ का ही वर्णन नही करता अपितु उसके प्रभाव को भी व्यक्त करता है।

प्रत्येक घटना के वर्णन और उसके प्रभाव के साथ-साथ लेखक उन व्यक्तियों का वर्णन भी मनोविश्लेषणात्मक ढग से करता है जिनसे उसका सम्बन्ध होता है। सुन्दरलाल त्रिपाठीजी ने अपने भागिनेय विद्यापति का वर्णन अपनी 'दैनन्दिनी' मे इसी प्रकार से किया है—

"शिरा-शिरा और अवयव-अवयव के कोमल विशाल सृजन मे नाम की महिमा से मूर्त्त सिद्ध कवि हैं न विद्यापति। आवेग विह्वले, आर्द्र, अपलक, विपुल, निविड नेत्रो से, एक मगी से विच्छेद कष्ट का जमीन कठिन, मूक रहस्य शायद मुझसे उद्घाटित कर रहे हो विद्यापति······राधा की तन्मयना, मीरा की एक निष्ठा वैष्णव कवियो की निविडता, सुनता हूँ अध्यात्म का सौंध है, सो चाहे जो हो किन्तु निर्विवाद तुम इन सबसे परे, ऊँचे रहस्यमय सीमातीत वर्णनातीत, वेदनामय, कोमल, सुन्दर दीख पडते हो साधक। एक निमेष के 'स्नेप' के अवसर के तुम इतनी ममत्व वेदना से युक्त ···· इतने निविड······इतने शाश्वत हो।"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी मे लेखक केवल अपने व्यक्तित्व का ही विश्लेषण नही करता अपितु अपने जीवन से सम्बन्धित घटनाओं एव पात्रों का भी मनोविश्लेषणात्मक ढग से वर्णन करता है।

देशकाल वातावरण

वातावरण उन समस्त परिस्थितियो का सकुल नाम है जिनसे पात्रो को सघर्ष करना पडता है और विषयवस्तु का विकास होता है। डायरी को वास्तविकता का ज्ञान देने की कसौटियो मे वातावरण मुख्य उपकरण है। डायरी लेखक भी देश और काल की जंजीर मे जकडे रहते हैं। देश और काल की पृष्ठभूमि के बिना पात्रो का एव लेखक का व्यक्तित्व स्पष्ट नही होता। घटनाक्रम को समझने मे उलझन होती है। देश और काल में वास्तविकता लाने के लिए स्थानीय ज्ञान आवश्यक है कि वह कथानक के स्पष्टीकरण का साधन ही रहे, स्वय साध्य न बन जाय। जहाँ वर्णन

---

१. मेरी कालिज डायरी—डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृ० ५८

अनुपात से बढ जाती है वहाँ उससे जी ऊबने लग जाता है।

हिन्दी साहित्य मे हमे जितनी भी डायरियाँ प्राप्त हैं सभी मे डायरी लेखक ने तत्कालीन परिस्थितियो का स्वाभाविकता से वर्णन किया है। पर कहीं-कहीं राजनैतिक परिस्थितियो के अत्यधिक वर्णन ने रोचकता मे कमी ला दी है। उदाहरणतया हम गाधीजी की 'दिल्ली डायरी' को ले सकते हैं। इसमे १९४७ से १९४८ तक की परिस्थितियो का चित्रण है। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अपनी डायरी मे १९२१ से १९२२ तक की देश-दशा का चित्रण सात शीर्षको मे बाँटकर किया है। समस्त डायरी के एक चौथाई भाग मे देश दशा का चित्रण है। वर्णन सीमा से अधिक न होने पर रोचक है।

केवल परिस्थितियो का वर्णन करने मे ही लेखक कुशल नही माना जाता बल्कि उनका साहित्य पर प्रभाव दिखलाने मे भी वह अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय दे सकता है। धर्मवीर भारती ने अपनी डायरी के पन्नो मे आधुनिक साहित्य को परिस्थितियों से प्रभावित दिखलाया है—

"आज का युग मानव चेतना के लिए कितना भयानक रेगिस्तान साबित हुआ है, उसमे कितनी पथभ्रष्ट करने वाली मृग-मरीचिकाएँ रही हैं। (जिनमें से कुछ की असलियत वर्षों पहले खुल गई है और कुछ की अब खुल रही है) कितने भयानक अन्धड चलते रहे हैं और मानव की सहज रस-स्निग्धता को निगलने के लिए कितने भूखे पशु विचरण कर रहे हैं...मनुष्य को जड बनाने वाला पूंजीवाद, विचार स्वातन्त्र्य का अपहरण कर मनुष्य को पशुधर्मी बनाकर व्यक्ति-पूजा कराने वाला तथाकथित समष्टिवाद और जाने कितनी ही पद्धतियाँ और सत्ताएँ जो इस जडवादी युग की देन हैं वे मनुष्य से उसकी सहज रागात्मकता, श्रद्धामयता तथा उसके विकास की अमित सम्भावनाएँ छीनने मे तत्पर हैं। आज दार्शनिक, वैज्ञानिक, समाजशास्त्री सभी इस व्यापक सकट के प्रति सचेत हैं और अपनी दिशा मे इसके निराकरण के उपाय ढूँढ़ रहे हैं। आधुनिक साहित्य दृष्टि भी इसका सामना कर रही है। उसने इस चुनौती को स्वीकार किया है। जो इस चुनौती की वास्तविक प्रकृति को समझते हैं वे इस नए सौन्दर्य बोध को भी समझ सकते हैं। जो इस आधुनिक युग मे मानवीय संकट की विडम्बना को ही नहीं समझ पाए हैं वे अगर किसी चीज़ को सही तौर पर समझने की जिद करें, पचास वर्ष पूर्व की धारणाओ को ही अपनी कसौटी बनाए रहें तो वे इस आधुनिक साहित्य दृष्टि से बुरी तरह चौंक भी सकते हैं।"[1]

डायरी में कहीं-कहीं लेखक राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियो का चित्रण करता हुआ तत्कालीन साहित्यिक लोगों की अवस्था का भी चित्रण करता है। गजानन-माधव मुक्तिबोध ने अपनी डायरी में किया है—

---

1. ठेले पर हिमालय—धर्मवीर भारती, पृ० ८४

'आज के साहित्यकार का आयुक्रम क्या है ? विद्यार्जन, डिग्री और इसी बीच साहित्यिक प्रयास, विवाह, घर, सोफासेट, ऐरिस्ट्रोक्रैटिक लिविंग, महानो से व्यक्तिगत सम्पर्क, श्रेष्ठ प्रकाशको द्वारा अपनी पुस्तको का प्रकाशन, सरकारी पुरस्कार अथवा ऐसी ही कोई विशेष उपलब्धि और चालीसवें वर्ष के आस-पास अमेरिका या रूस जाने की तैयारी, किसी व्यक्ति या सस्था की सहायता से अपनी कृतियो का अंग्रेजी या रूसी मे अनुवाद। किसी बडे भारी सेठ के यहाँ या सरकार के यहाँ किस्म की नौकरी।"[१]

साहित्यिक पुरुषो का ही नही राजनैतिक पुरुषो की नैतिकता का भी इन्होने नग्न चित्र खीचा है—

"बडे-बडे आदर्शवादी आज रावण के यहाँ पानी भरते हैं और हाँ मे हाँ मिलाते हैं। बडे प्रगतिशील महानुभाव भी इसी मर्ज मे गिरफ्तार हैं। जो व्यक्ति रावण के यहाँ पानी भरने से इनकार करता है उसके बच्चे मारे-मारे फिरते हैं। और आप जानते हैं कि ख्याति प्राप्त यशोदीप्त प्रगतिशील महानुभाव भी (मैं सब की नही कह सकता) उन पर हँस पडते हैं या कभी-कभी तुच्छ के प्रति दया के भाव से परिलुप्त हो उठते हैं। तो सक्षेप मे जो व्यक्ति फटे हाल और फटीचर है, उसे मान्यता देने के लिए कोई तैयार नही चाहे वह कितना ही नैतिक क्यों न हो।"[२]

कही-कही हम डायरी में विशेष स्थान या नगर का वर्णन भी देखते हैं। इस प्रकार के वर्णन मे सफलता तभी हो सकती है यदि लेखक ने उस स्थान या नगर को देखा हो। रामकुमार वर्मा की 'वाराणसी' की डायरी एव वाल्मीकि चौधरी की 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' ऐसी ही डायरियाँ हैं। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी लेखक अपने समय की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव साहित्यिक परिस्थितियो का वर्णन ही नही करता अपितु उनका प्रभाव व्यक्तिगत जीवन पर ही नही समस्त जाति पर स्पष्ट रूप से वर्णन करता है। इसके साथ ही जहाँ उसे नगर एव किसी विशेष स्थान के वर्णन की आवश्यकता पडती है वह भी करता है।

उद्देश्य—डायरी मे लेखक जीवन मे घटित होने वाली घटनाओ का ही वर्णन नहीं करता प्रत्युत उससे घटित होने वाली मानसिक प्रतिक्रियाओ का भी उल्लेख करता है। इससे यह अभिप्राय है कि डायरी मे केवल सोना, खाना-पीना एव उठना आदि दैनिकचर्या का ही वर्णन नही करता अपितु वह कुछ ऐसी घटनाओ का भी वर्णन करता है जिनका उसके जीवन पर अटल एवं स्थायी प्रभाव होता है। वे घटनाएँ यदि वह व्यक्ति राजनैतिक है तो वह राजनैतिक भी हो सकती हैं, यदि सामाजिक है तो सामाजिक भी हो सकती हैं, यदि धार्मिक है तो धार्मिक भी हो सकती हैं एव यदि

---

१. ठेले पर हिमालय—धर्मवीर भारती, पृ० ३७।

२. वही, पृ० ३६।

साहित्यिक है तो साहित्यिक भी हो सकती हैं। मुख्य उद्देश्य तो डायरी लेखक का आत्मविश्लेषण ही होता है। प्रत्येक लेखक अपने समय की परिस्थितियो से प्रभावित होता है। डायरी मे लेखक का उद्देश्य परिस्थितियो का वर्णन करना नही है। यदि ऐसा होता है तो वह इतिहास की श्रेणी मे आ जाती है। इससे स्पष्ट है कि डायरी लेखक का उद्देश्य अपने जीवन की ऐसी घटनाओ का उल्लेख करना है जिनका प्रभाव मानव समाज पर पडे। इसके साथ-साथ वह उन घटनाओ से उत्पन्न होने वाली मानसिक प्रतिक्रियाओ का भी स्पष्ट रूप से वर्णन करता है। वे घटनाएँ किसी भी प्रकार की हो सकती हैं।

'मेरी कालिज डायरी' मे डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने अपने डायरी लिखने के उद्देश्य को प्रकट करते हुए लिखा है—

'मन मे अनेक प्रकार के तूफान उठते थे, सन्देह पैदा करते थे, व्यक्तिगत समस्याएँ सामने आती थी और ये सब अन्दर-ही-अन्दर घुटती थी। आरम्भ से ही चुप्पे स्वभाव का होने के कारण कोई ऐसा मित्र नही बना सका था जिसके सामने इन सबको रख कर हृदय का भार कुछ हल्का कर पाता। ऐसी स्थिति मे मैंने मार्च १९१७ से एक पृथक् कापी रखनी शुरू की, जिसमे मन की उलझने और अन्तरग बाते स्पष्टतया लिख सकूँ। दैनिक डायरी के समान इस कापी मे नित्य नही लिखता था, बल्कि जब कभी विचारो के तूफान उठकर बवण्डर का रूप धारण करने लगते थे तभी उन्हे लिखकर मन को शान्त कर लेता था। लिखने के बाद ऐसा मालूम होता था जैसे अपने किसी अत्यन्त घनिष्ठ मित्र से मन की गुप्त बातें कहके आदमी हल्कापन अनुभव करता हो।"[1]

इससे स्पष्ट है कि डॉ० साहब का डायरी लिखने का उद्देश्य आत्मविश्लेषण ही है जिससे उनको मानसिक शान्ति प्राप्त होती है। डायरी के समस्त विषय—सत्य, धर्म, शिक्षा, १९२१ से १९२२ तक की देश-दशा आदि सभी लेखक के व्यक्तित्व से प्रभावित हैं।

गजाननमाधव मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी' मे भी लेखक का उद्देश्य आत्माख्यान एव आत्मविश्लेषण ही है। इसके अतिरिक्त गजाननजी ने आधुनिक काल के राजनैतिक पुरुषो की नैतिकता, नवयुवकों की अवस्था, बुजुर्गों की अवस्था एव लेखक वर्ग की अवस्था पर भी अपने विचार नग्न रूप से प्रस्तुत किए हैं। प्रत्येक वर्णन में तर्क एव मनोविज्ञान आदि का सहारा लिया है।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि प्रत्येक डायरी लेखक का उद्देश्य आत्माख्यान, आत्मनिरीक्षण एव आत्मविश्लेषण होता है। इसी से उसे मानसिक सन्तोष प्राप्त होता है।

भाषा शैली—शैली अंग्रेजी 'स्टाइल' का अनुवाद है और अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से हिन्दी में आया है। शैली भी एक प्रकार का स्पृहणीय गुण है इसीलिए

---

१. परिचय

अच्छे लेखक ही अच्छे शैलीकार भी होते हैं। प्रसिद्ध यूनानी लेखक प्लैटो का भी यही मत है। 'जब विचार को तात्विक रूपाकार दे दिया जाता है तो शैली का उदय होता है।' बर्नार्डशॉ का भी यह विचार है कि 'प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति ही शैली का अर्थ और इति है।' कोई भी रचना अभीष्ट प्रभाव को उत्पन्न कर रही है या नही, शैली से जाना जा सकता है। इस प्रकार शैली को एक गुण मानते हुए इसकी परिभाषा इस प्रकार करनी चाहिए—

"शैली अनुभूत विषयवस्तु को सजाने के उन तरीको का नाम है जो उस विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एव प्रभावपूर्ण बनाते हैं।"

इस दृष्टि से देखने पर यह जान पडेगा कि शैली न तो केवल अनुभूत विषय-वस्तु का धर्म है और न कहने का तरीका ही। शैली का आत्मा मुख्यत वे सम्बन्ध हैं, जिनके ढाँचे मे अनुभूत विषयवस्तु को समाहित या व्यवस्थित किया जाता है। विषयवस्तु मे उक्त सम्बन्ध की स्थापना रस की उत्पत्ति के लिए की जाती है। काव्य साहित्य की रसात्मकता को उसके प्रभाव से अलग नही किया जा सकता। जिस विभावात्मक विषयवस्तु को साहित्यकार सँजोकर पाठको के सामने रखता है, उसमे प्रभाव या रस के उत्पादन की क्षमता निहित रहती है। किन्तु यह क्षमता सम्बद्ध विषयवस्तु का ही धर्म है। साहित्यकार अनुभूत विषयस्वतु को नए सम्बन्धो में ग्रथित करके उसमे नए प्रभाव मे उत्पन्न करने की क्षमता स्थापित कर देता है। इस प्रकार की क्षमता उत्पन्न करने के उपादान ही शैली के मूल तत्व होते है।[1]

डायरी मे लेखक दिनचर्या के रूप मे ही जीवन की घटनाओ और मानसिक विचारो का लेखा-जोखा रखता है तो इसकी शैली गद्य की अन्य विधाओ की अपेक्षा पृथक् होती है। इसमे लेखक का मुख्य उद्देश्य आत्मनिरीक्षण एव आत्मविश्लेषण ही है। डायरी शैली की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं जिनका होना अत्यन्त आवश्यक है।

सर्वप्रथम विशेषता निस्सकोच आत्मविश्लेषण है।[2] दिनचर्या के रूप मे लेखक अपने जीवन की घटनाओ और मानसिक विचारो का लेखा रखता जाता है यद्यपि इन सब का विवरण भी वह बिल्कुल तटस्थ होकर नही कर सकता परन्तु आत्मचरित्र की अपेक्षा उसका सकोच इस शैली की व्याख्या मे कम रहता है। लेखक जानता है कि उसके विवरण दूसरो के काम आएँगे अतएव वह अपने मर्म को विशेषकर अवाछित प्रसग को ज्यादा टेलता नही। उसका आवरणहीन वर्णन सत्यवर्णन की तरह अकित होता रहता है। घटनाओ एव विचारो मे असम्बद्धता भी उसे अपने चेतन को काम मे लाने से रोक लेती है। प्राय. देखा जाता है कि सकोच का उद्भव तभी होता है जब घटनाओ का सामूहिक प्रभाव दिखाया जाय। डायरी शैली मे यह स्थिति होने नहीं पाती। परिणामत. तटस्थ रूप से लेखक अपेक्षाकृत अधिक आत्मविश्लेषण कर

---

१. हिन्दी साहित्य कोष
२. वही

डाल[1]ता है ।

अंग्रेजी भाषा के डायरी लेखक सेमुएल पेपीस ने अपनी डायरी मे अपने जीवन की सभी घटनाओ का नग्न रूप से चित्र खीचा है। उसने अपने चरित्र की समस्त दुर्बलताओ – स्त्रीविषयक कुविचार, अन्य महिलाओ से प्रेम-व्यवहार आदि का चित्रण स्पष्ट रूप से किया है । इनकी डायरी मे इनके व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू के दर्शन होते हैं । इन्होने स्वतत्रता से लिखा, इतनी स्वतंत्रता से कि उसका कुछ भाग प्रकाशित भी नहीं हुआ । हिन्दी साहित्य मे अभी इस प्रकार की डायरियाँ नही प्राप्त होती । कुछेक लेखक हैं जिन्होने ऐसा करने का प्रयास किया है । गुलाबराय ने अपने व्यक्तित्व के विषय मे स्पष्ट लिखा है—

> "मैं उन लोगो मे से हूँ जो अपने निजी निबन्धो के लिए बिना कुछ पढ़े नही लिख सकता, वास्तव मे मेरे लेखन मे एक तिहाई दूसरो से पढा होता है, एक बटा छह उसके आधार से स्वय प्रकाशित और ध्वनित विचार होते हैं, एक बटा छह सप्रयत्न सोचे हुए विचार रहते है और एक तिहाई मलाई के लड्डू की बर्फी बना चोरी को छिपाने वाली अभिव्यक्ति की कला रहती है—मैं गलत पढाने का पाप नही करता किन्तु जो मुझे नही आता उसे कभी-कभी कौशल के साथ छोड देता हूँ । यदि कोई छन्द इम्तहान मे आने लायक हुआ तो मैं बेईमानी नही करता ।"[2]

इतना ही नही लेखक ने घर के अभावो का वर्णन, भैस को चारा न मिलना, पडोसी के खेत मे चारे का होना, उसका खूँटा उखाड कर भाग जाना, घर मे कभी चीनी की समस्या कभी कपडे की—सभी घटनाओ का वर्णन लेखक ने नग्न एव स्पष्ट रूप से किया है ।

डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा ने अपरी डायरी मे अपने कालिज के सात वर्षों का पूर्ण रूप से चित्र खीचा है । इन्होने स्पष्ट रूप से कहा है—

> "व्यक्तिगत होते हुए भी यह डायरी किसी भी सवेदनशील आदर्शवादी किन्तु सकोची १८, १९ से २५, २६ वर्ष तक की आयु के नवयुवक के हृदय का चित्र हो सकती है, व्यक्तिगत अशो को भी इसी रूप मे देखा जा सकता है ।"[3]

नि सकोच आत्मविश्लेषण मे ही स्पष्ट कथन एव पर्याप्त सत्यता होती है । डा० रघुवश ने अपने स्वभाव के विषय मे कितनी स्पष्टता से वर्णन किया है—

> "सहज परिचित परिस्थितियो से अकुला उठना और किसी परिचित अज्ञात के लिए उत्सुक होना" लेकिन उसकी खोज मे निकलकर पा जाने पर फिर परिचितो के लिए अकुला उठना यही मेरा स्वभाव है ।"'अपने स्वभाव के इसी विरोध के बीच मैं जी रहा हूँ—स्थिरता से असतुष्ट, परिवर्तन के लिए आकुल

---

१. आलोचना · उसके सिद्धान्त, डा० सोमनाथ गुप्त
२. मेरी असफलताएँ, गुलाबराय
३. परिचय

और नवीनता के बीच उद्विग्न, स्थियत की कामना से स्फुरित।"[1]

घटनाओ मे सम्बद्धता का होना परमावश्यक है। जब तक प्रत्येक घटना का क्रमानुसार वर्णन नही होगा तब तक पाठक रसास्वादन नही कर सकता। घटनाओ की सुसम्बद्धता के साथ-साथ लेखक को समय एव तिथि का भी ध्यान रखना चाहिए। अनावश्यक घटनाओ का विस्तार, आवश्यक घटनाओ का अल्पवर्णन डायरी को प्रभावहीन बना देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी शैली मे निस्सकोच आत्मनिरीक्षण, घटनाओ मे सम्बद्धता स्पष्टता, सजीवता, मानसिक प्रतिक्रियाओ का सक्षिप्त विवरण, पर्याप्त सत्यता एव स्वाभाविकता आदि गुणो का होना अत्यन्त आवश्यक है।

जहाँ तक भाषा का प्रश्न है—भाषा ही भावाभिव्यक्ति का साधन है। यदि भाषा शुद्ध, परिमार्जित एव भावानुकूल होगी तभी वह पाठक को प्रभावित कर सकती है। स्वाभाविकता एव प्रसाद गुण का भाषा मे होना आवश्यक है। अलंकारिक भाषा का प्रयोग कही-कही खटकने लगता है—

"शिशु सी अनजान—अकपट और जब तुतलाती सी, मुसकाती सी, नगी, मटमैली सी ज आने को होती है वह कलिका सी, किशोरी सी, कुछ मुकलिता सी और कुछ विकसिता सी आने को होती है जब स्फुटिता सी प्रौढा सी तब उसे इसीलिए शायद डरना सकुचाना और सोचना पड जाता है।"[2]

भावानुकूल भाषा का प्रयोग शैली को उत्कृष्ट बनाता है। रामकुमार वर्मा ने भी दशाश्वमेध घाट का वर्णन भावानुकूल भाषा में किया है—

"जाडो की वह रात, रात का वह साय-साय करता सन्नाटा और गंगा मे विलीन होती हुई घाट की सीढियो मे छिपा इतिहास जिसके पन्ने हवा मे उडते रहे और हम खाली हाथ सब कुछ हाथो से उड़ता देख रहे हैं, उसे पकडने की कोशिश भी नही करते। कहने के कुछ नही अनकहे ही जैसे सब कुछ कह दिया। उस रात वह कौन सी छाया थी जिसने अपनी अनागनत नरो मे हमे लपेट लिया।"

भाषा मे स्वाभाविकता का होना भी आवश्यक है। गजाननमाधव मुक्तिबोध ने अपनी डायरी मे अत्यन्त स्वाभाविक भाषा का प्रयोग किया है—

"यह मुसकराहट मुझे चुभ गई। तो क्या मैं इतना पागल हूँ कि बात करने मे भटक जाता हूँ। इस साले ने बहुत ध्यानपूर्वक मेरे स्वभाव का अध्ययन किया होगा शायद मैं भी इसे बहुत 'बोर' करता रहूँगा।"[3]

भाषा मे स्वाभाविकता लाने के लिए इन्होने अग्रेजी भाषा के शब्दो का प्रयोग भी किया है।

---

१. हरी घाटी—डा॰ रघुवश
२. दैनन्दिनी—सुन्दरलाल त्रिपाठी
३. पृष्ठ ८

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी की भाषा स्वाभाविक एव भावानुकूल होनी चाहिए। प्रसाद गुण का होना अत्यन्त आवश्यक है। शब्द-चयन भी भावानुकूल होना चाहिए। जैसा कि डायरी लेखक का मुख्य उद्देश्य आत्मविश्लेषण, आत्मनिरीक्षण एव आत्माख्यान होता है इसलिए इसकी शैली भी प्रमुखतया मनोविश्लेषणात्मक होती है।

हिन्दी साहित्य में विकास

आधुनिक काल मे डायरी साहित्य गद्य की एक नवीनतम विधा है। हिन्दी साहित्य मे इसका आविर्भाव योरोपीय साहित्य की देन है। अभी हमारे साहित्य में उस कोटि की डायरियाँ नही प्राप्त होती जैसी कि पाश्चात्य साहित्य मे हैं। अभी तक जो डायरियाँ एवं डायरियो के पन्ने पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए है उनके अनुसार डायरी साहित्य का विकास मैंने लिखने का प्रयास किया है।

हिन्दी साहित्य मे सर्वप्रथम डायरी लेखक भारतेन्दु युग के प्रसिद्ध व्यक्ति बालमुकुन्द गुप्त हैं। इनकी डायरी के कुछ पृष्ठ जो कि इन्होने १८९२ सन् से १९०७ सन् तक लिखे है श्री बनारसीदास चतुर्वेदी एवं श्री झाबरमल्ल शर्मा ने 'बालमुकुन्द गुप्त स्मारक ग्रन्थ' मे प्रकाशित किए है। इनकी डायरी के प्राप्त पृष्ठो से केवल इनकी दिनचर्या का ही पता चलता है। प्रात काल से लेकर सायकाल तक इनका क्या कार्यक्रम था केवल यही कुछ यह अपनी डायरी मे लिखते थे। किसी भी किस्म की कोई व्यक्तिगत घटना या इनके व्यक्तिगत परिचय का कुछ भी पता नही चलता। इनकी डायरी के पन्ने तो सर्वधारण से हैं।

सन् १९०९ मे सत्यदेव अमेरिका के 'मेरी डायरी के कुछ पृष्ठ'[1] प्राप्त होते हैं। डायरी के ये पृष्ठ अमेरिका से लिखे गए हैं। इनमे २७, २८ एव २९ मई के दिवसों की चर्या का वर्णन है। धन का अभाव, नौकरी की तलाश एव तत्कालीन समाज का चित्रण है।

सन् १९११ मे भी इनकी डायरी के पृष्ठ 'मेरी दिनचर्या'[2] नाम से प्रकाशित हुए हैं। इनमे लेखक ने ५ व ६ जून की दिनचर्या का वर्णन किया है। इनमे टकोमा, स्टीमर आदि नगरो का वर्णन है। सन् १९११ से १९३३ तक हमे न तो डायरी के कुछ पृष्ठ ही प्राप्त होन हैं और न डायरियाँ। केवल सन् १९३३ मे प्रोफेसर भगवद्दयाल वर्मा एम० ए० पूना द्वारा लिखित 'सिंधिया व हुलकर की डायरी'[3] के पृष्ठ प्राप्त होते हैं। इनमे प्रोफेसर भगवद्दयालजी ने पूना दफ्तर मे प्राप्त सौ वर्ष पूर्व के प्राचीन ३,००० पत्र जो कि फारसी भाषा मे लिखे हुए हैं जिनमे उत्तर भारत के

---

१. सरस्वती, सितम्बर
२. सरस्वती, अप्रैल
३. माधुरी, फरवरी-जुलाई, १९३३

राजाओं एवं नवाबो के विषय मे पता चलता है मे से कुछ राजाओ की दिनचर्या का वर्णन उन पत्रो की सहायता से किया है।

सन् १९४० मे 'बुकसेलर की डायरी'[1] जिसके लेखक रावीजी हैं प्राप्त होती है। इस डायरी के लेखक साहित्य-सेवी है जिन्होने जीविका के लिए घूम-घूमकर पुस्तकें बेचने का प्रयास किया। इस प्रयोग मे लेखक को जो भी मीठे-कडवे अनुभव हुए उन सबका वर्णन है। इसमे वर्णित व्यक्तियो के प्रति लेखक के मन मे कोई बुरी भावना नहीं है। जो धारणाएँ लेखक की हुई – जो चित्र उसके हृदय-पटल पर चित्रित हुआ उन्होने उसी को अंकित करने का प्रयास किया हे। लेखक का यह दौरा दो दिन कम दो महीने का है।

सन् १९४७ मे श्री लक्ष्मीचन्द्र वाजपेयी का 'डायरी का एक पृष्ठ'[2] एवं भगवतीचरण शर्मा का भी 'डायरी का एक पृष्ठ'[3] प्राप्त होता है। वाजपेयीजी ने २४ अक्तूबर १९४६ का वर्णन किया है जिस दिन लेखक का जन्मदिवस एव दीवाली है। इन पृष्ठो मे लेखक ने तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियो के प्रति चिन्ता प्रकट करते हुए अनेक व्यक्तिगत सुझाव भी दिए है। शर्माजी ने 'देवाई' पूजन के विषय मे एवं हरिजनो की कथा एव अर्चना के विषय मे लिखा है। तिथि ६ जनवरी, १९४७ की है।

सन् १९४८ मे गाधीजी की 'दिल्ली डायरी' प्रकाशित हुई। इस डायरी मे १०-९-४७ से ३०-१-४८ तक के गाधीजी के प्रवचनो का सग्रह है। इस डायरी मे हमे तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, एव धार्मिक परिस्थितियो का ज्ञान होता है। गाधीजी की इस डायरी मे अनेक क्षेत्रो के अनेक विषयो की चर्चा है। सब प्रवचन तिथि अनुसार दिए गए हैं।

सन् १९५० मे महादेव भाई की डायरी के प्रथम एव द्वितीय भाग प्रकाशित हुए। इसके अनुवादक रामनारायण चौधरी एव श्री नरहरिदास पारिख हैं।

सन् १९५१ मे इलाचन्द्र जोशी के 'डायरी के नीरस पृष्ठ' एव आचार्य विनय मोहन शर्मा द्वारा लिखित 'डायरी के कुछ पन्ने' प्रकाशित हुए। आचार्यजी ने अपनी डायरी के इन पन्नो मे जब इन्हें १९ वर्ष की अवस्था मे टाइफाइड हो गया था उसका एव प्रकृति के पथ पर चलने की योग्यता का परिचय हो जाना एव इसके साथ-ही-साथ जहाँ कही भी इन्हे प्राकृतिक स्वास्थ्य एव चिकित्सा पर उपयोगी सामग्री प्राप्त होती है उसका वर्णन किया है।

सन् १९५१ मे घनश्यामदास बिडला के 'डायरी के कुछ पन्ने' प्रकाशित हुए। डायरी के इन पन्नो मे बिडलाजी ने दूसरी गोलमेज कान्फ्रेंस का जीवित चित्र खींचा है।

---

१ विशाल भारत

२. विशाल भारत

३. वही

सन् १९५३ मे अजितकुमार द्वारा लिखित 'डायरी के कुछ पृष्ठ' प्राप्त होते हैं। १३ जनवरी एव १६ फरवरी दोनों दिनो की चर्या का वर्णन लेखक ने इन पृष्ठों मे किया है। सन् १९५४ मे श्री तुलसीदास द्वारा लिखित 'प्रवचन डायरी' प्रथम भाग प्राप्त होती है। इसमे श्री तुलसीजी के जनवरी १९५३ से दिसम्बर १९५३ तक के प्रवचनो का सग्रह है।

सन् १९५४ मे इलाचन्द्र जोशी की 'साहित्य चिन्तन' पुस्तक प्रकाशित हुई। इस पुस्तक मे अन्य सग्रहो के साथ जोशीजी के कुछ डायरी के पृष्ठो को भी संग्रहीत किया गया है। इन पन्नो मे जोशीजी का विषय साहित्यिक है। इन्होने 'काव्य की सर्जनात्मक कला की कसौटी क्या है' पर अपने विचार प्रकट करते हुए चेतना, प्रतिभा आगे उसकी तीन-तीन परिस्थितियो एव अवचेतना का वर्णन कर यह सिद्ध कर दिया है कि वही लेखक उच्चतम कृतियो की रचना कर सकता है जो अंधशक्तियो से ऊपर उठकर अतिचेतना के स्तर पर पहुँच जाता है। चेता की स्थिति को प्राप्त कर चेतना के निम्नरूपो को स्वय परिचालित करने लगता है।

सन् १९५६ मे पुनः श्री तुलसी की 'प्रवचन डायरी' द्वितीय भाग प्रकाशित हुई। इसका विषय भी धार्मिक है।

सन् १९५७ मे श्री कृष्णदत्त भट्ट की 'नक्षत्रों की छाया' पुस्तक प्रकाशित हुई। इसमे सग्रहीत भट्टजी की डायरी के पृष्ठों मे हमे उनकी डायरी लिखने की कुशलता का परिचय मिलता है। डायरी के साँचे मे निबन्धलेखन की यह नई शैली है। विषया-नुकूल भाषा एव शब्दो का प्रयोग किया है, वैयक्तिकता की छाप चारो ओर है।

दैनन्दिनी—सुन्दरलाल त्रिपाठी की सन् १९५८ मे प्रकाशित हुई। इस डायरी में अनेक विषय अनेक प्रकार से आए हैं। आरम्भ मे कुछ व्यक्तिगत, आत्मीय और पारिवारिक चर्चा है जिसमे लेखक की वेदनाकातर भावुक लेखनी स्पष्ट हो उठी है। आगे चलकर शरच्चन्द्र और गाधीजी पर दो निबन्ध मिलते हैं जो भावापन्न, चचल और कुशल लेखनी की सृष्टि हैं। एक मे लेखक की अनुकूल और दूसरी मे प्रतिकूल विचारधारा होते हुए भी दोनो निबन्ध सुन्दरतम लेखन के उदाहरण हैं।

इसके पश्चात् अधिकाश लेख हिन्दी के साहित्यिको की चर्चा में लिखे गए हैं जिनमे उनकी कृतियो की भी समीक्षा की गई है। यहाँ लेखक के सम्मुख परिस्थिति कुछ कठिन रही है क्योकि सुन्दरलालजी हिन्दी साहित्यिको के प्रति बहुत अच्छी धारणा नहीं रखते। ऐसी अवस्था मे उन्हे अपनी टिप्पणियाँ ऐसे ढग से करनी पडी है कि कहीं भी विरोध प्रत्यक्ष न हो पावे। फिर भी लेखक अपनी बात किसी-न-किसी रूप में कह ही गया है।

प्रत्येक निबन्ध मे विषय चर्चा के साथ प्रासगिक उल्लेखो और विवरणो की भरमार है जिससे दैनन्दिनी में सुन्दर अनुरजकता आ गई है और कोरा विषय विवेचन अपनी शुष्कता खो बैठा है। कहीं भी लेखन इतिवृत्तात्मक नही हुआ है जो सुन्दरलालजी की साहित्यिकता का सबसे सुन्दर प्रमाण है। लेखक की व्यक्तिगत छाप

प्राय सब लेखो मे मौजूद है जिससे ये निबन्ध ललित साहित्य की श्रेणी मे ऊँचे स्थान के अधिकारी हैं। भले ही सब निबन्ध एक ही धारा मे न लिखे गए हों और भले ही उनके साथ तादात्म्य स्थापित करने मे एक-सी सुगमता न हो, किन्तु एक बार और आत्मीय भावना से प्रवेश करने हर इनमें वह सवेदनीय सामग्री मिलेगी जो हिन्दी के निबन्ध साहित्य मे बहुत ढूँढने पर भी नही प्राप्त होती।

'दैनन्दिनी' के अधिकाश निबन्ध बडी ही मनोरम और परिष्कृत भावना से लिखे गए हैं। उनमे भावुकता और शैली चमत्कार के साथ ही सूक्ष्म विवेचन और मार्मिकता भी कम नही है। उनकी शैली मे व्यग्य और गूढोक्ति का अच्छा पुट है। डायरी के साँचे मे निबन्धलेखन की यह नई शैली है। 'दैनन्दिनी' मे एक से अधिक दिन की चर्चा एक स्थान पर जहाँ कही की गई है मिति का स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है। साथ ही ऐसा उन्ही स्थानो पर दिया गया है जहाँ कई दिन की घटनाएँ मिलकर एक प्रसग का निर्माण करती हैं। 'दैनन्दिनी' मे इस नियम का पालन भी सर्वत्र मिलता है कि जिस दिन की घटना है उसी दिन वह लिख ली गई है।

मेरी कालिज डायरी – डा० धीरेन्द्र वर्मा—हिन्दी साहित्य की सर्वश्रेष्ठ डायरी सन् १९५८ मे प्राप्त होती है जिसके लेखक डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा हैं। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इन्होने अपने कालिज जीवन के सात वर्षों का नग्न चित्र उपस्थित किया है। 'परिचय' मे इन्होने स्वय कहा है—

> "यह डायरी मेरे मानसिक जीवन के लगभग सात मूल्यवान् वर्षों का सच्चा आत्मचरित है, जो आज नही लिखा जा रहा है बल्कि उसी कच्चे-पक्के रूप मे है जिसमे यह तभी लिखा गया था जब मैं कालिज का एक साधारण विद्यार्थी था और यही नही जानता था कि जीवन की नदी के थपेडे मुझे किधर ले जायेंगे। इसकी अपूर्णता और सचाई मे ही इसका महत्त्व है। यदि शेष आत्मचरित किसी रूप मे भी लिखा गया तो वह जीवन का सिंहावलोकन मात्र होगा। वह अधिक प्रौढ़, परिमार्जित और परिपक्व हो सकता है किन्तु उसमे मन के इस कच्चेपन और गदरेपन का आनन्द नही प्राप्त हो सकेगा जो इस डायरी मे मिलेगा।"

डॉक्टर साहब ने अपनी डायरी के समस्त विषय को चार भागो मे विभाजित किया है। सन्देह, ससार, देश-दशा एव मायाजाल – ये चार खण्ड है। कालिज जीवन मे लेखक के मन मे जो भी समस्याएँ उत्पन्न हुई थी उन सभी का उल्लेख एव समाधान लेखक ने वर्णन किया है। सत्य, अहिंसा, विवाह, शिक्षा, विद्यार्थी जीवन आदि अनेक विषयो पर लेखक ने अपने विचार अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग से लिखे हैं। ये सब विषय लेखक की व्यक्तिगत घटनाओ से सम्बन्धित हैं। डॉक्टर साहब ने व्यक्तिगत घटनाओं का वर्णन ही नही किया अपितु उनमे उत्पन्न होने वाली मानसिक प्रतिक्रियाओ का भी उल्लेख किया है। यही नहीं १९२१ से १९२२ तक की देश-दशा का वर्णन भी लेखक ने अत्यन्त कुशलता से किया है। समस्त राजनैतिक परिस्थितियो को अपने से प्रभावित दिखलाया है इसलिए वैयक्तिकता की छाप चारो ओर है। देश-दशा का खण्ड

पढ़ते हुए कहीं भी पाठक को यह अनुभव नहीं होता कि वह इतिहास पढ रहा है या उसे पढ़ते हुए आनन्द नहीं प्राप्त हो रहा। यह सब डॉक्टर साहब की कला-कुशलता का प्रमाण है। इसके साथ ही 'ससार' खण्ड मे लेखक ने अपनी कुछ ऐसी व्यक्तिगत घटनाओ का वर्णन किया है जो अत्यन्त मार्मिक हैं। नौकरी की तलाश एव दादी के देहावसान का वर्णन लेखक ने मार्मिकतापूर्ण किया है। प्रत्येक घटना के वर्णन मे लेखक की स्पष्टवादिता दृष्टिगोचर होती है।

जहाँ तक डायरी शैली का प्रश्न है इनकी डायरी मे शैली सम्बन्धी सभी गुण हैं। नि सकोच आत्मविश्लेषण, मानसिक प्रतिक्रियाओ का सक्षिप्त विवरण, मार्मिकता, रोचकता एव सुसगठितता आदि सभी गुण दृष्टिगोचर होते हैं। त्रिपाठीजी की भाँति कहीं भी अलकारिता का प्रयोग देखने मे नहीं आता। डॉक्टर साहब ने किसी भी व्यक्ति का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन अपनी डायरी मे नही किया, लेकिन त्रिपाठीजी की डायरी मे यह बहुधा देखने मे आता है। डॉक्टर साहब ने अपनी डायरी में जहाँ व्यक्तिगत घटनाओ का वर्णन अधिक किया है वहाँ त्रिपाठीजी ने व्यक्तिगत परिचय कम दिया है। साहित्यिको एव उनकी कृतियो के विषय मे अधिक विचार रखे हैं। इसमे कोई सन्देह नही कि त्रिपाठीजी ने जिन साहित्यिको एव उनकी कृतियो के विषय मे अपने विचार रखे हैं उनमे किसी प्रकार का बनावटीपन नही है, जो कुछ भी वह कहना चाहते हैं खुले रूप से कहा है।

सन् १९५८ मे ही धर्मवीर भारती की पुस्तक 'ठेले पर हिमालय' प्राप्त होती है। इसमे सग्रहीत 'डायरी' एव 'साहित्यिक डायरी' मे लेखक ने निबन्धात्मक शैली में अपने विचारो को प्रकट किया है। आधुनिक नवयुवको, साहित्यिको, पूँजीपतियो एव बुजुर्गों का स्पष्ट वर्णन लेखक ने अपनी डायरी मे किया है।

सन् १९५९ मे उपेन्द्रनाथ अश्कजी की 'ज्यादा अपनी कम परायी' पुस्तक प्रकाशित हुई। इसमे अश्कजी की नई पुरानी डायरी के पन्नो मे लेखक ने जीवन के गूढ़तम रहस्यो को भावावेश मे आकर काव्यमयी भाषा मे रखा है। शब्दो की सुकुमारता, भाषा की सौंदर्यता अद्वितीय है। नई डायरी के पृष्ठो मे लेखक ने अपने जीवन की घटित घटनाओ को सस्मरणात्मक रूप मे प्रकट किया है। समस्त घटनाओ के शीर्षक दिये हैं। तिथि एव दिवस का विशेष रूप से ध्यान रखा है।

सन् १९६० मे स्वामी सत्यभक्त द्वारा लिखित 'डायरी के पृष्ठो मे भगवान महावीर का अन्तस्तल' एव गुलाबराय द्वारा लिखित 'मेरी असफलताएँ' पु तक प्रकाशित हुई। स्वामीजी ने भगवान महावीर के विचारो का रोचकपूर्ण शैली मे वर्णन किया है। गुलाबरायजी की प्रकाशित पुस्तक मे सग्रहीत 'मेरी दैनिकी का एक पृष्ठ' में लेखक ने २१ सितम्बर सन् १९४५ का चित्र खीचा है। डायरी के इन पाँच पृष्ठों मे लेखक ने अपने व्यक्तित्व का खुला चित्रण किया है।

सन् १९६० मे वाल्मीकि चौधरी द्वारा लिखित 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' प्राप्त होती है। इस डायरी मे डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद की दिनचर्या पर प्रकाश डाला

गया है। वैसे तो चौधरीजी ने अपने 'वक्तव्य' मे कहा है—

> "इस पुस्तक मे राष्ट्रपति भवन मे रोजमर्रे की घटनाओ, तत्सम्बन्धी क्रियाकलापो — राजनीति के चित्रपट के बनने-बनाने में जो तरह-तरह के दृश्य मेरे सामने आये उन्हे मैंने गूँथने का प्रयास किया है।"

यह डायरी सस्मरणात्मक शैली मे लिखी गई है। भाषा सरल एवं वर्णन शैली सुहावनी है।

सन् १९६१ मे रामकुमार वर्मा द्वारा लिखित[1] 'वाराणसी की डायरी' सीताराम सेक्सरिया द्वारा लिखित[2] 'डायरी के पन्नो मे बसन्त पचमी' एव रघुवश द्वारा लिखित 'हरी घाटी' पुस्तक प्रकाशित हुई। रामकुमार वर्मा ने 'वाराणसी की डायरी' में वाराणसी का वर्णन अत्यन्त चित्रात्मक शैली मे किया है। डायरी शैली मे लिखा हुआ यह एक स्केच है। सेक्सरिया जी ने तीन वर्षों की बसन्त पचमी का वर्णन किया है। तीन वर्षों के उत्सव पर तीन प्रकार की मन स्थितियो का वर्णन लेखक ने किया है। प्रथम बार वह जेल मे था इसलिए स्वतन्त्र बसन्त के प्रति उसे ईर्ष्या थी। दूसरी बार वह छुटा हुआ था तो और भाई जेल मे थे तभी वह उत्सव धूमधाम से न मना सका। तीसरी बार स्वतन्त्र हो जाने पर भी बापू की मृत्यु का शोक था। रघुवशजी ने अपनी पुस्तक मे अपने जीवन की कुछ घटनाओ पर प्रकाश डाला है — जीवन में आर्थिक विषमता, हाथ मे विकार का होना, प्रगतिशील विचारधारा का होना, पर्वताटन का शौक, निडर स्वभाव आदि का स्पष्ट रूप से चित्रण है।

एक साहित्यिक की डायरी—सन् १९६४ मे गजाननमाधव मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी' प्रकाशित हुई। यह डायरी शैली गुण एव विचार तत्व दोनो दृष्टियो से अद्वितीय है। यह निबन्धात्मक डायरी है। निबन्ध पढे न जाय इन्हें पढने की सहज ललक रहती है। सीधा-सादा आरम्भ फिर कही शकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्र से वार्तालाप पर आदि से अन्त तक भाव और स्वर डायरी का है। प्रत्येक प्रकरण का प्रत्येक क्षण और प्रत्येक चरण इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए कि विषय की परतें हलके-हलके खुलती हुई प्रश्नो और प्रश्नो के भीतर के प्रश्नों से साक्षात्कार करा दे और फिर हम भी सोचें और समाधान के अन्वेषी हो।

कुल दस प्रकरण डायरी मे हैं। पर कोई नही इनमे जो आहत आत्मा की पीडा मे पिरोया हुआ न हो और जिसके स्वरो मे फिर भी विजित का करुण भाव न होकर चुनौती स्वीकार करने वाले शूर सैनिक का ओज न हो। कही तो शायद इसीलिए इसमे एक विचित्र-सा व्यग्य तक झकारता मिलता है। हिन्दी मे डायरी विधा की यह पहली कृति है जो फैंटेसी, मनोविश्लेषण, तर्क, कविता, आत्माख्यान के

---

१. कादम्बिनी, मार्च १९६१ सन्

२. ज्ञानोदय, फरवरी १९६१ सन्

विविध स्तरो पर एक साथ चलती है या यो कहे कि इन सबको एक मे समन्वित करके एक नई ही विधा सम्भावना की ओर इगित करती है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी डायरी साहित्य उस सीमा तक नही पहुँच सका जैसा कि हम अग्रेजी भाषा के साहित्य मे दृष्टिपात करते है । केवल एक-दो डायरियो की अपेक्षा हमे सभी फुटकर पन्ने ही प्राप्त होते हैं । हिन्दी साहित्य मे कोई भी ऐसी डायरी नही जो कि लेखक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झाँकी प्रस्तुत कर सके । प्राप्त डायरियो मे सर्वश्रेष्ठ डायरी 'मेरी कालिज डायरी' डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा की है । अभी तक कोई भी ऐसी डायरी नही प्राप्त होती जिसकी तुलना हम सेमुएल् पेपीस की डायरी से कर सके । सेमुएल पेपीस ने अपने जीवन का पूर्ण रूप से जैसा खुला व स्पष्ट चित्रण किया है वैसा अभी तक कोई नही कर सका है ।

If there is in all the literature of the world a book which can be called 'unique' with strict prooriety it is this. Confessions, diaries, journals, autobiographics abcund, but such a revelation of a man's self has not yet been discovered The diary is a thing apart by virtue of three qualities which are rarely found in perfection When separate and nowhere else in combination. It was secret, it was full and it was honest [१]

अर्थात् यदि किसी पुस्तक को विश्व साहित्य मे ठीक ढग से अद्वितीय कहा जा सकता है तो यह है—डायरी । पत्र एव आत्मकथाओ मे खोज करने पर भी मनुष्य का ऐसा व्यक्तिगत प्रकाशन अभी तक नही प्राप्त होता जो कि पूर्ण रूप से बहुत ही कम पाए जाते है पर यहाँ सब एकत्रित रूप मे हैं । यह गुप्त, पूर्ण एव सुस्पष्ट है ।

इन्होने अपने जीवन के विषय मे अर्थात् जीवन सम्बन्धी घटनाओ का अत्यन्त खुले रूप मे चित्रण किया है । यहाँ तक कि अन्य स्त्री विषयक प्रेम को भी पूर्णतया लिखा है । अपनी स्त्री से कुव्यवहार का भी स्पष्ट वर्णन है ।

He wrote so frankly that part of it not printed [२]

अर्थात् उन्होने इतना स्पष्ट लिखा कि उसका कुछ भाग प्रकाशित भी नही किया गया । ऐसा स्पष्ट और नग्न चित्र अभी हमे हिन्दी डायरी साहित्य मे देखने मे नहीं आता । फिर भी कुछ लेखको ने प्रयास किया है । आशा है गद्य की यह विधा भविष्य मे पूर्ण प्रगति के पथ पर अग्रसर होगी ।

विभाजन

डायरी साहित्य के विकास से स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य मे बहुत कम डायरियाँ प्राप्त होती हैं । जो भी डायरियाँ या डायरी के पन्ने हमे पत्र-पत्रिकाओ मे प्राप्त होते हैं उनके अनुसार समस्त डायरी साहित्य का विभाजन निम्नलिखित ढग से हो सकता है—

---

1. The Encyoclopedia Britannica, Thirteenth Edition.
2 Samuel Pepys In the Diary—Percival Hunt, P. 2

(क) डायरी लेखकों के आधार पर

हिन्दी साहित्य मे डायरी लेखक केवल साहित्यिक व्यक्ति ही नही हैं प्रत्युत अनेको राजनैतिक, धार्मिक व्यक्तियो की डायरियाँ भी प्राप्त होती हैं। साहित्यिक व्यक्ति से मेरा अभिप्राय उन व्यक्तियो से है जिन्होने हिन्दी साहित्य के विकास मे अपनी कृतियो द्वारा विद्वत्ता का परिचय दिया है। ऐसी श्रेणी मे कवि, कथालेखक एव आलोचकगण आते हैं।

कवि—हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे कवि हुए हैं जिन्होने अपनी डायरियाँ लिखी हैं। धर्मवीर भारती, उपेन्द्रनाथ अश्क एव गजानन्नमाधव मुक्तिबोध इसी श्रेणी मे आते हैं। भारतीजी ने अपने जीवन की जिन घटनाओ का वर्णन किया है उन सबके शीर्षक दिए हैं जैसे—एक सपना और उसके बाद, चाँदनी मे कोकाबेली, उचटी नीद आदि। जैसे कवि लोग भावुक वृत्ति के होते हैं डायरी मे भी यह भावुक ही दृष्टिगोचर होते हैं। प्रकृति के दृश्यो को देखकर मन का मचलना एव फिर उनके साथ अपनी भावनाओ का तादात्म्य स्थापित करना इनको बहुत आता है। कवि ने अपने आशावादी विचारो का प्रकृति के साथ कैसे तादात्म्य किया है—

> "मैंने कभी मृत्यु के बारे मे नही सोचा पर कभी यह जरूर सोचता हूँ कि जिये जाने वाले क्षणो की यह जो अन्तर्ग्रथित शृखला है इसका कही न कहीं तो अन्त होगा ही और जब होगा तब कुछ खास नही होगा।......मैं तो स्वर्ण-पराग-सा उसी तरह महकता रहूँगा सिर्फ नीले क्षण पाखुरियो की तरह ऊपर से घिरने लगेंगे, सिमटने लगेंगे और धीरे-धीरे फूल मुँद जाएगा और फिर सब शान्त हो जाएगा। सिर्फ डूबती साँझ मे मुँदे कमल की हल्की उदास छाँह थोडी देर तक सरोवर मे काँपती रहेगी···और बस।"

गजाननमाधव मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी' भी इसी श्रेणी मे आती है। यह डायरी शैलीगुण एव विचारतत्व दोनो की विशेषता के कारण हिन्दी साहित्य मे अपना स्थान रखती है। मुक्तिबोध जी स्वय भी आलोचक एव कवि हैं तो इनके व्यक्तित्व की इन दोनो विशेषताओ का प्रभाव डायरी पर अवश्य पडना था। डायरी विधा का यह रूप तो इसी मे मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे ही यह निबन्धात्मक डायरी है। निबन्ध पढने के लिए तो मन कुछ घबरा-सा जाता है परन्तु इसमे पढने की ललक रहती है। डायरी का आरम्भ सीधा-सादा है, कही एकालाप एव कही काल्पनिक पात्र से वार्तालाप दृष्टिगोचर होता है। डायरी का आरम्भ ही बड़ा सीधा है—

> "आज से कोई बीस साल पहले की बात है मेरा एक मित्र केशव और मैं दोनो जगल-जगल घूमने जाया करते। पहाड पहाड चढा करते। नदी नदी पार किया करते। केशव मेरे जैसा ही पन्द्रह वर्ष का बालक था। किन्तु वह मुझे बहुत ही रहस्यपूर्ण मालूम होता। उसका रहस्य बडा ही अजीब था।"

कुल दस प्रकरण डायरी मे है, कोई नही इनमे जो एक आहत आत्मा की पीडा मे पिरोया हुआ न हो और जिसके स्वरो मे फिर भी विजित का करुण भाव न होकर चुनौती स्वीकार करने वाले शूर सैनिक का ओज न हो। हिन्दी डायरी विधा की यह पहली कृति है जो फैण्टेसी, मनोविश्लेषण, तर्क, कविता, आत्माख्यान के विविध स्तरो पर एक साथ चलती है या कहें कि इन सबको एक मे समन्वित करके एक नयी ही विधा की सम्भावना की ओर इगित करती है।

कथालेखक—कथालेखको मे से उपेन्द्रनाथ अश्क एव इलाचन्द्र जोशीजी की डायरियो के पन्ने प्राप्त होते हैं। अश्क की पुस्तक 'ज्यादा अपनी कम परायी' मे इनकी नई पुरानी डायरी' के पन्ने प्राप्त होते हैं। जोशीजी की प्रकाशित पुस्तक 'साहित्य चिन्तन' मे इनकी 'डायरी के पन्ने' सग्रहीत हैं। अश्कजी ने पुरानी डायरी के पन्नो मे जीवन के गूढतम रहस्यो को भावावेश मे आकर काव्यमयी भाषा मे रक्खा है। जो भी तरग इनके मस्तिष्क में पैदा हुई उसी को इन्होने डायरी रूप में लिख दिया है। इस प्रकार ग्यारह छोटे-छोटे भाव जिनकी नैतिकता अमूल्य है वर्णन किए हैं। प्रत्येक विचार प्रकट करने मे तिथि का विशेष रूप से ध्यान रक्खा गया है। नई डायरी मे जीवन मे घटित छोटी-छोटी घटनाओ का वर्णन है। उनकी शैली मे सक्षिप्तता, रोचकता एव सुसगठितता आदि गुणो का समावेश है। भाषा विषयानुकूल एवं भावानुकूल है। चारों ओर वैयक्तिकता की छाप है। जोशीजी ने अपनी डायरी के पन्नो मे साहित्यिक विषय को लिया है, इन्होने 'काव्य की सर्जनात्मक कला की कसौटी क्या है' पर अपने विचार प्रकट किए हैं। डायरी के ये पन्ने निबन्धात्मक शैली मे लिखे गए हैं। अपने विचारो को प्रकट करने के लिए लेखक ने तर्क एव मनोविज्ञान का सहारा लिया है।

आलोचक—आलोचको मे से गुलाबराय एवं डॉ० विनयमोहन शर्मा की डायरियो के कुछ पृष्ठ प्रकाशित हुए हैं। गुलाबराय ने वैसे तो कोई डायरी नही लिखी केवल उनकी पुस्तक 'मेरी असफलताएँ' मे संग्रहीत 'मेरी दैनिकी का एक पृष्ठ' मे उनके समस्त व्यक्तित्व की झाँकी प्राप्त होती है। इसमे लेखक ने केवल एक ही दिन २१ सितम्बर सन् १९४५ का वर्णन किया है। आलोचक होने के कारण डायरी के इन पाँच पृष्ठो मे लेखक ने समस्त व्यक्तित्व की आलोचना स्पष्ट रूप से की है। व्यक्तिगत समस्याओ का गुलाबरायजी ने अत्यन्त खुला चित्रण किया है। घर के अभावो के विषय मे कहते हैं—

> "घर पहुँचते ही शेखर के अन्तिम दिन की भाँति घर के सारे अभावो का ध्यान आ गया। किन्तु बाजार मे कोई स्थान नहीं है जहाँ कल्पवृक्ष की भाँति सब अभावो की एक साथ पूर्ति हो जाय। अगर अच्छा साबुन राजा मण्डी मे मिलता है तो अच्छा रावक पाडे में। किन्तु वहाँ भैंस के लिए भूसे का अभाव था। बाल-बच्चों की दवा के बाद अगर किसी वस्तु को मुख्यता मिलती है तो भैंस मूल को, क्योंकि उसके बिना काले अक्षरों की सृष्टि नहीं होती। मेरी काली भैंस धवल दुग्ध का ही सृजन नहीं करती, वरन् उसके सहारे ही धवल यश के

सृजन मे भी सहायक होती है। इस गुण के होते हुए भी वह मेरे जीवन की एक बडी ममस्या हो गई है। मैं हर साल उसके लिए अपने घर के पास खेत मे चरी कर लेता था। इस साल वर्षा के होते हुए भी मेरा यहाँ चरी नहीं हुई—'भाग्य फलति सर्वत्र, न विद्या न च पौरुष'।"[1]

इतना ही नहीं लेखक ने इस एक ही दिन के वर्णन मे अपने जीवन मे घटित पारिवारिक समस्याओं का वर्णन करते हुए यह सिद्ध किया है कि मनुष्य को जीवन मे बाधाओ से भागना नही चाहिए बल्कि उनका डटकर सामना करना चाहिए। आचार्य विनयमोहन शर्मा ने अपनी डायरी के पन्नो मे बचपन मे टाइफाइड होने की घटना का वर्णन किया है।

राजनैतिक पुरुष हिन्दी मे कुछ राजनैतिक पुरुषो की डायरियाँ प्राप्त होती हैं। उनमे से कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो राजनीतिज्ञ होते हुए जननेता भी हैं। इस प्रकार राजनैतिक एव जननेता दो प्रकार के व्यक्ति इस श्रेणी मे आते हैं। राजनैतिक मे हमारे सम्मुख घनश्यामदास बिडला, कृष्णदत्त भट्ट एव सुन्दरलाल त्रिपाठीजी आते हैं। बिडलाजी की 'डायरी के पन्ने' पुस्तक है। इसमे इन्होने गाधीजी के साथ जो दूसरी गोलमेज परिषद् मे भाग लिया था उसी का वर्णन किया है। इतने विस्तृत विषय को कम-से-कम शब्दो मे वर्णन करना इनकी शैली की विशेषता है। परिषद् का वह जीता जागता चित्रण इन्होने किया है कि पाठक को पढकर ही आनन्द आता है। डायरी के इन पृष्ठो मे राजनैतिक परिस्थितियो का आभास तो है ही परन्तु वैयक्तिकता के चारो ओर आच्छादित होने से रोचकता मे कमी नही आने पाई है। जननेता मे गाधीजी आते हैं। इनकी 'दिल्ली डायरी' है। इसमे गाधीजी के १०-९-४७ से ३०-१-४८ तक के प्रार्थना प्रवचनो का सग्रह है। राजनैतिक पुरुषो मे से कृष्णदत्त भट्ट एव त्रिपाठीजी की डायरियाँ भी हिन्दी साहित्य मे विशेष स्थान रखती हैं। त्रिपाठीजी की 'दैनन्दिनी' अपनी विषयवस्तु एव शैली की दृष्टि से अद्वितीय है।

(ख) विषयवस्तु के अनुसार

हिन्दी साहित्य मे जितने भी डायरी लेखक हुए हैं उन सभी की डायरियों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि वैसे तो लेखक का उद्देश्य एव प्रमुख विषय आत्मनिरीक्षण एव आत्मविश्लेषण ही है पर हम देखते हैं कि कुछ लेखको ने अपने विचारो को एव घटनाओ को प्रकट करन के लिए विशेषतया प्रकृति का सहारा लिया है। किसी ने साहित्यिक आलोचना का, किसी ने अपने जीवन की किसी विशेष अवस्था का चित्रण करने के लिए सस्मरणात्मक शैली को अपनाया है तो किसी ने सामाजिक एवं सास्कृतिक विषय को अपनाया है। ये सभी विषय लेखकों की अपनी-अपनी रुचि एव व्यक्तित्व के अनुसार हैं—

---

१. मेरी असफलताएँ, ले० गुलाबराय, पृ० ४०

प्रकृति चित्रण प्रधान—हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे डायरी लेखक हुए हैं जिन्होंने अपन व्यक्तित्व का विश्लेषण प्रकृति के माध्यम से किया है। ऐसी डायरियाँ जिनमे डायरी लेखक प्रकृति की ओर अधिक उन्मुख दिखलाई पडता है प्रकृति चित्रण प्रधान डायरियाँ कहलवाती हैं। सीताराम सेक्सरिया की 'डायरी के पन्नो मे बसन्त पचमी' एव डॉ० रघुवश की 'हरी घाटी' इसी प्रकार की डायरियाँ है। इनके अतिरिक्त धर्मवीर भारती, गजाननमाधव मुक्तिबोध आदि लेखको ने भी प्रकृति को अपनी विचारधारा प्रकट करने का साधन माना है। रघुवशजी ने जहाँ विद्यार्थियो के चले जाने से समस्त प्रयाग को उदास दिखलाया है वहाँ प्रकृति को भी वैसा ही दिखलाया है —

"वासन्ती बयार के स्पर्श के साथ जो नवीन कोपलो की शृगार चतुर्दिक पापड, बरगद, पीपल तथा आम ने किया था वह भी गहरे होते रग के साथ मद हो चुका है। गरम हवा के झोंके अवश्य किसी तप्त स्मृति के समान अन्तर को झकझोर जाते हैं। शिरीष की उत्फुल्लता गहरी होकर जरठ हो गई है। नीम जरूर झूम रहा हैं, हँस रहा है, खिला हुआ है। वह हँसता हुआ जीवन की क्षणिकता मे उदास होने वाले हम जैसों का मानों उपहास करता हो।"

सीताराम सेक्सरिया ने अपनी डायरी के पृष्ठों मे तीन वर्षों की बसन्त ऋतु का चित्रण किया है। अधिकतर लेखको ने प्रकृति के मधुर सुकोमल वातावरण पर दृष्टिपात कर मन में उठी हुई भावनाओं का ही विशेष रूप से वर्णन किया है—गजानन-माधव मुक्तिबोध ने अपनी मन.स्थिति का ऐसे ही चित्रण किया है—

"मेरे भीतर वातवरण की मस्ती छाने लगी। वृक्ष के रोम पुलकित हो रहे थे। जाँघो मे किरणो की सुनहली धारा सी बहने लगी। बाहुओ की मास-पेशियो मे से मानो कोई नशा बहकर, दौड़ कर हृदय मे शराब बन रहा था। एकमात्र प्राकृतिक शारिरिक आनन्द मुझ पर हावी हो रहा था। एक उन्मत्त स्फूर्ति, एक सहज शक्ति चेतना मेरी आँखो को निर्मल एवं दीप्त कर रही थी।"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डायरी लेखक का प्रमुख विषय आत्माख्यान ही होता है। वह इसको प्रकृति के माध्यम से वर्णन कर सकता है। अधिकतर वह प्रकृति के वातावरण से उत्पन्न हुई मन स्थिति का ही चित्रण करता है।

साहित्यिक आलोचना प्रधान – विषय की दृष्टि से हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसी भी 'डायरियो के पन्ने' प्राप्त होते हैं जिनका विषय साहित्य की आलोचना एव साहित्यिक रस का प्रतिपादन करना है। ऐसे डायरी लेखको मे इलाचन्द्र जोशी, लक्ष्मीचन्द्र वाजपेयी, अजितकुमार, भगवतीचरण वर्मा एव धर्मवीर भारती जैसे लेखक आते हैं। इन लेखको की शैली भावनुकूल एवं विषयानुकूल है। आलोचना-प्रधान होते हुए भी लेखक की वैयक्तिकता चारो ओर दृष्टिगोचर होती है।

संस्मरण प्रधान—कुछ ऐसे डायरी लेखक भी हुए है जिन्होंने अपनी किसी विशेष अवस्था का वर्णन संस्मरण रूप में किया है। इस प्रकार में वह लेखक भी आते हैं जिन्होंने किसी अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति के जीवन का चित्रण डायरी शैली में संस्मरणों

के रूप मे किया है। प्रथम श्रेणी मे अश्क ने नई पुरानी डायरी के पन्ने एवं डॉक्टर विनयमोहन शर्मा ने बचपन की एक दो घटनाएँ इसी रूप मे लिखी हैं। दूसरी श्रेणी मे वाल्मीकि चौधरी की 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' है। चौधरीजी ने राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद का जीवन-चरित्र डायरी शैली मे संस्मरणो के रूपमे खीचा है।

सामाजिक एव सास्कृतिक विषय सम्बन्धी कुछ ऐसी डायरियाँ भी हिन्दी डायरी साहित्य मे पायी जाती हैं जिनका विषय सामाजिक एवं सास्कृतिक है। ऐसी डायरियो मे लेखक विवाह, शिक्षा, जीवन आदि सामाजिक विषयो पर एवं धर्म, अहिसा, सत्य आदि धार्मिक विषयो सम्बन्धी अपने विचार प्रस्तुत करता है। इन सबके साथ वह तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन भी करता है। वैसे तो सभी लेखक अपनी डायरियो मे इन विषयो को किसी न किसी रूप मे व्यक्त करते हैं परन्तु विशेषतया हिन्दी साहित्य मे सास्कृतिक विषय को लेकर लिखी गई आचार्य तुलसी की 'प्रवचन डायरियाँ' प्राप्त होती हैं। इन डायरियो का विषय धर्म से सम्बन्धित है। इनके अतिरिक्त डॉ० धीरेन्द्र वर्मा की 'मेरी कालिज डायरी' मे अनेक सामाजिक समस्याओ पर विचार प्रकट किया गया है।

(ग) स्थानहेतुकादि के आधार पर

हिन्दी साहित्य मे कुछ ऐसे डायरी लेखक भी हुए हैं जिन्होंने विशेष स्थान एव नगर को दृष्टि मे रखते हुए अपनी डायरियाँ लिखी हैं। रामकुमार ने 'वाराणसी की डायरी' मे वाराणसी का एक जीवित चित्र खीचा है। इन्होने गगा के घाटो का वणन आरम्भ से अन्त तक विस्तारपूर्वक किया है। यही नही, नगर के बाजारो का, उसमे घूमने वाले लोगो का वर्णन अत्यन्त रोचकपूर्ण ढग से किया है। वहाँ सड़क की भीड को देखकर लेखक चाहता है—

"न भीड मे खो जाना चाहता हूँ अपना अस्तित्व अलग बचाकर रखने का मोह नही है।"

वाराणसी के दूर-दूर तक बिखरे हुए मकान, मकानो के भीतर आँगन मे सूखते हुए कपडे एव गगा की नीले शात जल की धारा, लम्बे बाजार एव मन्दिरो का लेखक ने एक सुन्दर चित्र खीचा है। लेखक की शैली मे सरसता, सक्षिप्तता एव स्वाभाविकता आदि गुण स्पष्ट रूप से लक्षित होते हैं।

किसी विशेष स्थल को लेकर लिखने वालों मे डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा एव वाल्मीकि चौधरी आते हैं। डाक्टर साहब ने 'मेरी कालिज डायरी' मे अपने कालिज जीवन के सात वर्षों का चित्र खीचा है। उधर चौधरीजी ने राष्ट्रपति भवन मे घटित सभी दैनिक घटनाओ का वर्णन, तत्सम्बन्धी क्रियाकलापो एव राजनीति के चित्रपट के बनने में जो चित्र उनके सामने आए है उन सभी का वर्णन किया है। डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद का जीवन इन्होंने सस्मरणात्मक रूप में वर्णन किया है। वर्णन शैली में रोचकता है। भाषा भी विषयानुकूल एवं परिष्कृत है।

हिन्दी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में इन जीवनीपरक साहित्य रूपों के अन्तर्बन्ध

साहित्य और जीवन का घनिष्ठ सम्बन्ध है । मनुष्य जीवन साहित्य का मूल स्रोत है और साहित्य जीवन को व्यक्त करने का साधन है । जीवन का ऐसा कोई भाग नहीं जिसका साहित्य में उल्लेख न हो । जिस भी साहित्य मे जीवन के तत्वो का विवेचन नही होता महत्व का स्थान और आकर्षण नही रखता है । इसीलिए जीवन मे साहित्य का जो स्थान है वह उतना ही महत्वपूर्ण है जितना जीवन स्वय । इस प्रकार स्पष्ट है कि जीवन और साहित्य का अविच्छिन्न सम्बन्ध है । इसीलिए साहित्य में इन जीवनीपरक साहित्य रूपो की प्रवृत्ति पाई जाती है ।

साहित्य मे जीवन को अभिव्यक्त करने की दो विधाएँ हैं गद्य और पद्य । गद्य मे जहाँ लेखक अपने व्यक्तित्व एव विचारो को उपन्यास, नाटक एव कहानी आदि विधाओ द्वारा परोक्ष रूप से व्यक्त करता है वहाँ वह स्वतत्र रूप से भी अपने एवं अन्य व्यक्ति के जीवन का विवेचन कर सकता है । इसीलिए इस जीवनीपरक साहित्य की उत्पत्ति हुई है । इस प्रकार के साहित्य मे व्यक्ति की प्रधानता होती है समष्टि की नहीं । ऐसे साहित्य मे लेखक अपने व अन्य व्यक्ति के जीवन की विशेष विचारधारा, अनुभव एव जीवन के उत्थान-पतन को इस क्रम से प्रस्तुत करता है कि पाठकगण उससे प्रेरणा ग्रहण कर सकें । इस प्रकार के साहित्य के लेखक का व्यक्तित्व निर्भी-कता और ईमानदारी से ओतप्रोत होता है । इसलिए आत्मीयता, स्पष्टता, निर्भीकता इस साहित्य के प्रमुख तत्व हैं । इसमे लेखक का उद्देश्य जीवन के उन गुह्य एव गोपनीय तत्वो को उभारना होता है जिनका किसी को अनुभव भी नहीं होता । इन तत्वो के उभारने से एक तो लेखक को मानसिक सतोष का अनुभव होता है और दूसरे पाठक उनसे प्रेरणा ग्रहण करते हैं । कुछ ऐतिहासिक एव पौराणिक व्यक्तियो की जीवनियाँ प्रेम और श्रद्धापूर्वक लिखी जाती हैं । ऐसी जीवनियों मे लेखक प्राय. उनके गुणों का ही विवेचन करते हैं। इस प्रकार जीवनीपरक साहित्य, साहित्य मे अपना विशेष महत्व-पूर्ण स्थान रखता है ।

जीवनीपरक साहित्य में जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी एवं पत्र विधाओं का समावेश है । साहित्य अपने युग की विचारधारा का प्रतिबिम्ब होता

इसी प्रकार जीवनीपरक साहित्य की इन पृथक्-पृथक् विधाओं का विकास भी अपने समय की परिस्थितियो के अनुसार ही हुआ है।

भारतेन्दु युग में जीवनीपरक साहित्य

हिन्दी साहित्य मे आधुनिक काल सन् १८७५ के आस-पास से आरम्भ होता है। जब तक मध्ययुगीन जीवन की जडता भग हो चुकी थी और भारतीय पुनर्जागरण अपने बाल्यकाल मे था। ब्रिटिश साम्राज्य का प्रसार हो चुका था, पश्चिमी विचार और जीवन मानो से भारतीय प्रभावित हो रहे थे, यातायात और डाकतार की सुविधा और उच्च शिक्षा की व्यवस्था ने भारत मे एक क्रियाशील जागृति का संचार किया। छापेखाने ने समाचार पत्रो को जन्म दिया और भारतीय जनजीवन मे एकता आने लगी, विचार-विमर्श के लिए अनेक सुविधाएँ मिल गई। १८५७ के बाद अंग्रेज सरकार को विश्वास हो चुका था कि इस देश मे सुशासन स्थापित किए बिना रहना सम्भव नहीं अत. उन्होंने प्रत्येक क्षेत्र मे महत्वपूर्ण कार्यों को पहले निपटाया। महारानी विक्टोरिया के घोषणा पत्र से जनता आश्वस्त हो गई।[1] इसके बावजूद भी भारतीय जनता अपने अधिकारो के प्रति सतर्क थी और राजनैतिक क्षेत्रो में क्रियात्मक भाग से ले रही थी। यह सर्वथा नए वातावरण की सूचना थी। इस महत्वपूर्ण तथ्य ने जीवन के स्वरूप का ही परिवर्तन कर दिया और साहित्य को गम्भीरतापूर्वक प्रभावित किया। अतीत काल मे साहित्य थोडे से सुखी सम्पन्न लोगों से ही सम्बन्धित था, प्रजातान्त्रिक प्रवृत्तियो के विकास के साथ-साथ वह अधिकाधिक जनता की चीज बनने लगा। अब वह सामन्ती विलासिता से पूर्ण अभिजात्य जीवन की अभिव्यजना मात्र न रह गया, प्रत्युत पूरे युग की अनावरत बुद्धिशील आशा आकाक्षाओ शकाओ आपदाओ को चित्रित करने लगा। एक शब्द में नये युग का साहित्य विविध और प्रजातांत्रिक होकर आता है।[2]

साहित्य का क्षेत्र इस युग मे विस्तृत होता है। १९वीं शती में स्थिति बदल गई। जीवन मे बहुमुखता आई और साहित्य मे उसका प्रतिफलन हुआ। लेखकों ने गद्य को विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम तो बनाया परन्तु काव्य को छोडा नहीं। गद्य साहित्य मे नाटक, उपन्यास, कहानी के सभी साहित्यांग जो प्राचीन काल में अविकसित रहे आधुनिक काल मे अधिक तीव्रता के साथ उभरे। इसे हम युगगत आवश्यकताओं का परिणाम मात्र कह सकते हैं। इनके परिपार्श्व मे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की साहित्य साधना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। सामाजिक, सास्कृतिक, धार्मिक और नैतिक विचारो का यह परिवर्तन साहित्य मे एकदम तो न आ सका पर भारतेन्दु की क्रियाशीलता और प्रोत्साहन देने की प्रवृत्ति ने आधुनिक युग को खड़ी बोली और उसके विभिन्न साहित्यागो से परिपूर्ण किया। कतिपय विचारक इस युग को स्वच्छन्दतावाद

---

१. भारतेन्दु युग डॉ० रामविलास शर्मा, पृ० २

२. हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा : डॉ० रामअवध द्विवेदी, पृ० १३६

की पृष्ठभूमि कहते हैं।[1]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आधुनिक हिन्दी साहित्य के सिंहद्वार पर स्थित हैं। उनका व्यक्तित्व अन्यतम है। प्राचीन परम्पराओं में मग्न रहकर भी वे उनके दास न बने। उन्होंने अतीत की अपेक्षा भविष्य का अधिक चिन्तन किया और हिन्दी के भावी पथ निर्माण में अकेले और किसी व्यक्ति से अधिक काम किया।[2] व्यक्तित्व से आकर्षक और सुसंस्कृत होने के कारण वे साहित्यिक सक्रियता के केन्द्र बन गए। अपने से प्रतिकूल वातावरण में उन्होंने अनेक साहित्यिक रचनाएँ प्रस्तुत की और अधिकाधिक संख्या में मित्रों को प्रोत्साहित किया। इसी कारण नवीन प्रवृत्तियों की सशक्त अभिव्यक्ति इनकी कृतियों में हुई।[3] साहित्यकार द्वारा ही देश में जनजीवन का संस्कार होता है।[4] इस रूप में भारतेन्दु की देशभक्ति का रूप सांस्कृतिक उत्थान और जागृति का रूप था। यह बात उनके साहित्य के अवलोकन में स्पष्ट हो जाती है कि उनका विशेष बल सांस्कृतिक उद्बोधन पर ही अधिक था। एक ओर जहाँ उस समय देश में सांस्कृतिक पुनर्जागरण की लहर दौड़ रही थी वहीं दूसरी ओर पुरानी रूढियों और देश के प्रतिक्रियावादी तत्त्व उनका विरोध कर रहे थे। ऐसे समय में व्यक्ति चेतना ही अधिक मुखर थी। व्यक्ति चेतना भारतेन्दुजी को सांस्कृतिक नवसंस्कार में लगाए थी।

हिन्दी साहित्य के जैसे अन्य क्षेत्रों में भारतेन्दु द्वारा नवीनता की सृष्टि हुई वैसे ही उन्होंने जीवनीपरक साहित्य में यथार्थवादी परम्परा स्थापित की। जीवनी-साहित्य में विशेषतया इन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया है। वैसे तो भारतेन्दुजी ने कोई भी जीवनी-ग्रन्थ नहीं लिखा। उन्होंने अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन किया था, फिर भी अंग्रेजी में उस समय जो जीवन-साहित्य का स्तर था, उसका प्रभाव भारतेन्दु के जीवन-लेखों में नहीं है। उन्होंने जीवन-चरित्र का ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं लिखा है जैसा आज लिखा जाता है और अंग्रेजी साहित्य में जैसा उस समय भी लिखा जाता था। भारतेन्दु ने छोटे-छोटे लेखों के रूप में संतों की, पौराणिक व्यक्तियों की, मुसलमान बादशाहों और महापुरुषों आदि की जीवनी लिखी है। 'उत्तरार्द्ध भक्तमाल' में लगभग दो सौ भक्तों का वर्णन केवल एक सौ छियानवे छप्पयों में किया है। इसी प्रकार 'चरितावली' में सोलह जीवन-चरित्र एक सौ छब्बीस पृष्ठों में लिखे गए हैं। भारतेन्दु द्वारा लिखे अन्यचरित्रों का वर्णन भी आठ-दस पृष्ठों तक ही सीमित है। इन जीवनियों में उनका पूर्ण चित्र उपस्थित नहीं हो पाया है जिनका जीवन-चरित्र लिखा गया है।"[5] भारतेन्दु की धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक प्रवृत्तियाँ चरित्र-चित्रण में स्पष्ट दीख पड़ती हैं। तटस्थ रीति से चरित्र लिखन की शैली का प्रादुर्भाव इनकी लेखनी से नहीं पाया।

---

१. हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा. डॉ० रामअवध द्विवेदी, पृ० ५७, ५८

२ वही, पृ० १३९

३. हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य शुक्ल, पृ० ३११

४ भारतेन्दु साहित्य, ले० श्री रामगोपाल सिंह चौहान, पृ० ३१

"भक्तो के चरित्रो का भक्तिपूर्ण वर्णन तथा नृप यश-कीर्तन की प्राचीन सीमा, परम्परा तथा शैली पार कर भारतेन्दु ने जीवनी साहित्य को मानवीय स्तर पर लाकर लोगो के सम्मुख प्रस्तुत किया।" उन्होने जीवनी के सम्बन्ध मे व्यापक दृष्टिकोण से विचारने की प्रेरणा दी और भक्तो तथा दरबारी कवियो की परिधि से निकाल जीवनी साहित्य को उस धरातल पर ला बिठाया जहाँ साहित्य वास्तविक रूप धारणकर विकास की ओर अग्रसर होता है।[1]

भारतेन्दु का समस्त जीवन साहित्य तत्कालीन परिस्थितियों से प्रभावित होकर लिखा गया है। इन्होने यह सब कार्य हिन्दी साहित्य की उन्नति के लिए और हिन्दी पाठको को भारतीय चरित्रो और दूसरे उल्लेखनीय व्यक्तियो तथा आरम्भिक इतिहास और वृत्तान्त से परिचित कराने के लिए किया जो कि उस समय की परिस्थितियो के अनुकूल था।

इस युग मे जितने भी जीवनी लेखक हुए हैं वे सभी अपने समय की परिस्थितियो से प्रभावित थे। रमाशकर व्यास, काशीनाथ खत्री, कार्तिकप्रसाद खत्री, प्रेमचन्द, राधाकृष्णदास, बालमुकुन्द गुप्त इस समय के जीवनी लेखक हैं। केवल कार्तिकप्रसाद खत्री ने ही 'मीराबाई का जीवन चरित्र' लिखकर साहित्यक व्यक्ति के चरित्र पर प्रकाश डाला है और वह भी पूर्ण व्यक्तित्व का परिचायक नही अन्यथा सभी जीवनी लेखको ने पौराणिक, धार्मिक एव ऐतिहासिक पुरुषों के जीवन-चरित्र लिखे हैं।

इसके अतिरिक्त जिन भी अन्य भाषाओ के जीवन-चरित्रो का हिन्दी में अनुवाद हुआ वे भी इसी प्रकार के हैं।

आत्मकथा साहित्य की उपयोगिता को भी इस काल के लेखको ने अनुभव करना आरम्भ किया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, राधाचरण गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र, अम्बिकादत्त व्यास एव श्रीधर पाठक ने आत्मचरित लिखने का प्रयास किया पर थोडे से पृष्ठ लिखकर ही रह गए। इनको पूर्ण सफलता नही मिली, केवल जन्मस्थान, जन्मतिथि एव बंश-परिचय से ये लोग आगे नही बढे। इससे स्पष्ट है कि आत्मकथा साहित्य भी इस काल मे प्रगति न कर सका। जो कुछ लिखा गया वह नही के समान है।

भारतेन्दु युग मे पत्र साहित्य का भी विकास हुआ। स्वयं भारतेन्दु के लिखे हुए पत्र प्राप्त होते हैं। इन पत्रो का विषय व्यक्तिगत होने के साथ-साथ साहित्यिक है। इनके अतिरिक्त श्रीधर पाठक, बालमुकुन्द गुप्त एवं बालकृष्ण भट्ट इस काल के पत्र लेखक हैं। इनके पत्रो का विषय भी साहित्यिक है। ये पत्र हिन्दी भाषा के इतिहास को एवं साहित्य को स्पष्ट रूप से व्यक्त करते हैं। इन पत्रो से इनके साहित्यिक व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त हो जाती है, हिन्दी भाषा के उन्नति के लिए जो प्रबाध प्रयत्न किया उसका सब ज्ञान हमे हो जाता है। केवल दो-एक पत्र ही इन्होने ऐसे

---

१. हिन्दी साहित्य मे जीवन-चरित का विकास . चन्द्रावती सिंह, पृ० १२४

लिखे हैं जिनसे इनके व्यक्तिगत जीवन के कुछ अशो का ज्ञान मिलता है। इस प्रकार हम देखते हैं इस काल मे पत्र साहित्य भी उस सीमा तक था। डायरी साहित्य भी पनप न सका, केवल बालमुकुन्द गुप्त के ही डायरी के कुछ पृष्ठ प्राप्त होते है जिनसे इनके जीवन के विषय में कुछ भी नही पता चलता। ये पृष्ठ सर्वसाधारण से हैं जिनमें केवल दिनचर्या का उल्लेख है। 'सस्मरण' भी गुप्तजी ने ही लिखे है। सस्मरण साहित्य भी इस काल में विकास को न प्राप्त हो सका।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतेन्दु युग मे जीवनी साहित्य ही विशेष रूप से लिखा गया यद्यपि इस विधा का वह विकास न हो सका जैसा कि अब देखने में आता है। गद्य की अन्य विधाओ पत्र, डायरी, संस्मरण व आत्मकथा लिखने का प्रयास किया गया। तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल ही लेखको ने रचना का आविर्भाव करना था तो जीवन चरित ही उनके उद्देश्य को पूर्ण कर सकते थे इसीलिए उन्होंने जीवन चरित्र भी विशेष व्यक्तियो के लिखे गए जिनसे वह अपने उद्देश्य को पूर्ण कर सकते थे। इसके अतिरिक्त इनके द्वारा ही हिन्दी भाषा का प्रचार हो सकता था। अन्य विधाओ के विकसित न होने का कारण यह है कि भारतीय दृष्टिकोण व्यक्तिगत जीवन की चर्चा और चरित्र-चित्रण के सकोच की प्राचीन परम्परा से अभी तक मुक्ति पाने मे असमर्थ था। क्योंकि जो भी जीवन चरित्र लिखे गए थे उनके लिखने में लेखक ने जन-श्रुति और किवदतियो का आश्रय लिया और सभी जीवनियों मे जीवन की कुछ स्थूल घटनाओं का वर्णन मात्र कर दिया है। विश्लेषण और छानबीन की है। गद्य की इन सभी विधाओ का आरम्भिक रूप इस काल में देखने को मिलता है।

द्विवेदी युग

भारतेन्दु युग प्राचीन काव्य से सर्वथा भिन्न भावभूमि पर आया। उसमें नवोत्थान की द्विमुखी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं—अतीत के गौरव की ओर तथा भविष्य की आशा में सलग्न होने की। सामाजिक एव धार्मिक आन्दोलनो ने नवोत्थान के मध्य नवीन मार्ग का निर्माण किया था और धर्म के विशुद्ध मूल रूप पर जोर दिया था।[1] द्विवेदी युग में संशोधन तथा व्यवस्था का आवश्यक कार्य किया गया है, परन्तु साहित्यिक मूल्य की वस्तुएँ अधिक उपस्थित न की जा सकीं। १८५७ के विद्रोह के कठोर धक्के ने भारतेन्दु युग को जगा दिया था और १९२२ के असहयोग आन्दोलन ने एक उत्साह की सृष्टि कर दी थी, जो छायावाद के निर्माणकाल मे निविष्ट था। इन दो महान् घटनाओं के मध्य में द्विवेदी युग मान्य स्वीकृति और आत्मसंतोष का युग था जो महान् साहित्य के निर्माण का प्रेरक नहीं था, न कोई लेखक ही ऐसी देदीप्यमान साहित्य प्रतिभा का हुआ, जो अपनी वैयक्तिक उपलब्धियों से इस युग को असामान्य

१. भारतेन्दु की विचारधारा, ले० डॉ० लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय, पृ०१५६

स्तर पर पहुंचा देता । तो भी इस युग के उन गद्यकारों के महान् कार्य को नगण्य नहीं कह सकते, जिन्होने अव्यवस्था के समय सुव्यवस्था के स्थापन के लिए श्रम किया और हिन्दी साहित्य को अनुवादो तथा मौलिक रचनाओं द्वारा समृद्ध बनाने का प्रयत्न किया ।[1] इस व्यवस्था मे कतिपय आदर्शों का पालन किया गया । आदर्शों के निर्माता और निर्धारित द्विवेदीजी का कार्य पुनरुत्थानवादी कार्यकर्त्ता का है । उन्होंने साहित्य में कठोर नियमानुशासन, दृढ सयम आदि को प्रश्रय दिया और प्राचीन गौरव के चित्रों को प्रस्तुत किया । समष्टि हित चेतना, धर्मप्रियता और समाज के सुव्यवस्थित रूप को उपस्थित करने की प्रवृत्ति मे वे समष्टिवादी विचारक के रूप में आते हैं । आचार्य द्विवेदी ने उसे गूढ़ तथा तथ्यपूर्ण विषयो और विचारों को व्यक्त करने का साधन बना दिया । यद्यपि बहुत कुछ होना अभी शेष था, परन्तु हिन्दी भाषा ने प्रौढ़, सुसंगठित और मर्यादित रूप धारण कर अपनी मान्यता और भावी स्वरूप से सम्बन्ध रखने वाली अनेक आशाओं और विवादों को निर्मूल कर दिया । आचार्य द्विवेदी ने एक जागृत चेतना तथा आत्मविश्वास के साथ इस क्षेत्र मे कार्य किया । भाषा, व्याकरण, शैली और वाक्य-विन्यासो पर ध्यान देते हुए उन्होंने साहित्यिक समालोचना, इतिहास प्रथाशास्त्र, राजनीति और जीवन चरित्र आदि विषयों पर गम्भीरता, तल्लीनता तथा परिश्रम के साथ लिखना अपना कर्तव्य निर्धारित कर लिया ।[2] इस युग के जीवनी-परक साहित्य का अध्ययन करने के लिए भी देश के भीतर चलने वाले विभिन्न आन्दोलनों के फलस्वरूप ही इस युग का प्रचुर जीवनीपरक साहित्य प्रस्तुत हुआ ।

राजनैतिक क्षेत्र मे राष्ट्रीय चेतना विशेष अग्रसर हो चली थी । अनेक गुप्त और प्रकट आन्दोलन हो रहे थे । स्वदेशी वस्तुओ के व्यवहार और विदेशी वस्तुओं के त्याग करने का आन्दोलन राष्ट्रीयता का मुख्य अंग बन गया था । इन राष्ट्रीय आन्दोलनो का केन्द्रस्थान बंगाल था । अंग्रेजो ने इसके दो टुकड़े कर दिए। लार्ड कर्जन का शासन काल अनुसार तथा प्रतिक्रियावादी था । भारतीय जनता ने बंग-भंग का विरोध करके उसको पूर्व की स्थिति में बदला। इस आन्दोलन का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि अंग्रेजो को इस बात का निश्चय हो गया कि भारतीय जनता आत्मसम्मान के लिए सभी कुछ बलिदान दे सकती है । देश में राष्ट्रीयता की अभूत-पूर्व लहर दौड गई । नई शक्ति, नई आत्मा और नए जीवन का विकास हुआ । इसके अतिरिक्त १९०६ ई० मे मुस्लिम लीग की स्थापना हुई । मुस्लिम लीग की स्थापना से राष्ट्रीयता के मार्ग मे बाधा उपस्थित हुई । इसकी नींव की प्रेरणा अंग्रेजों द्वारा ही हुई। १९१६ ई० में हिन्दू-मुस्लिम समस्या को सुलझाने के लिए लखनऊ में अधि-वेशन हुआ । यह समस्या कुछ वर्षों के लिए तो दब गई । 'बंग-भंग' आन्दोलन ने देश में बड़ी शक्ति उत्पन्न कर दी थी । देश के भीतर दो प्रकार के आन्दोलन हो रहे थे—

---

१. हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा: डॉ० द्विवेदी, पृ० १५१

२. हिन्दी साहित्य में जीवन-चरित का विकास: चन्द्रावती सिंह, पृ० १४०

भीतर आतकवादी हिंसात्मक आन्दोलन का सगठन हो रहा था। यह सगठन बीच में शिथिल होकर १६१४-१६१५ में बढा। देश मे अभूतपूर्व जीवनी शक्ति आ गई। दूसरे प्रकार का आन्दोलन काग्रेस द्वारा बढता गया। १८८५ ई० के वाद काग्रेस का स्तर राष्ट्रीय सस्था के रूप मे विद्यमान हो गया। १६०६ मे सूरत के अधिवेशन का नेतृत्व तिलक ने किया। इसमे काग्रेस के दो दल बने—नर्म एव उग्र। तिलक जैसे देशभक्तो के राजनैतिक क्षेत्र मे पदार्पण के साथ देश मे स्वाधीनता आन्दोलन को विशेष बल मिला। इधर इसी समय एशिया के इतिहास मे एक रोमाचकारी घटना घटित हुई जिसने कि सम्पूर्ण एशिया मे जागरण की लहर को उत्पन्न कर दिया। सन् १६०५ मे रूस जैसे विशाल राष्ट्र को जापान जैसे छोटे से राज्य ने पराजित कर यूरोपीय शक्तियो की अजेयता की पोल खोल दी। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् भारत के राजनैतिक रगमच पर महात्मागाधी का आविर्भाव हुआ और उन्होंने अपनी अलौकिक आत्मशक्ति से सम्पूर्ण देश मे स्वाधीनता प्राप्ति के लिए एक विशेष उत्साह तथा तडप को उत्पन्न कर दिया। भारत की पीडित तथा शोषित जनता मे एक बार फिर अदम्य आत्मविश्वास की भावना उत्पन्न हो गई और उसने महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलनो मे सहयोग दे अनेक बार ब्रिटिश सरकार से टक्कर ली।

इसी दौरान मे ब्रिटिश सरकार ने देश की वास्तविक सत्ता को अपने हाथ मे रखते हुए अनेक वैधानिक तथा शासन सम्बन्धी सुधार कर देश में स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए चल रहे इन उग्र आन्दोलनो को शान्त करने के प्रयत्न किए।[1]

सामाजिक क्षेत्र मे इस काल मे आर्य समाज अत्यन्त क्रियाशील तथा प्रगतिशील सस्था थी। बीसवी सदी का यह युग धार्मिक अन्धविश्वासो को दूर करने मे अधिक सफल था। जनता रूढियो के जाल से निकलने लगी थी। आर्य समाज ने भी इस दिशा मे महत्वपूर्ण कार्य किया। छुआछूत दूर करने मे भी आर्य समाज ने कार्य किया। विधवा-विवाह और बहु-विवाह आदि कुरीतियो को हटाने मे साहसपूर्ण कार्य किया। आर्य समाज के कार्यकर्त्ता काग्रेस के तथा अन्य राष्ट्रीय क्षेत्रो के कार्यकर्त्ता थे। कुछ आर्यसमाजी जो समय की प्रगति के साथ नही चल सके वे रूढ़िवादी धर्मप्रचारक रह गए।

सरकार का दमन बहुमुखी था। भाषण और लेख पर प्रेस एक्ट द्वारा प्रतिबन्ध था। पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तकें आए दिन जब्त होती रहती थी, प्रेस और सम्पादक से जमानते इतनी अधिक माँगी जाती थी कि उनको पूरा करना प्राय असम्भव हो जाता था। सम्पादको पर मुकदमा चलाना एक साधारण बात थी। ऐसी परिस्थिति में अनेक लेखक, सम्पादक, साहित्यिक और विशाल जनवर्ग आतंक और भय से अपने मन के भावो को व्यक्त नहीं कर सकते थे।[2]

---

१. हिन्दी साहित्य की परम्परा, हसराज अग्रवाल, पृ० ३२७
२. हिन्दी साहित्य में जीवन-चरित का विकास, चन्द्रावती सिंह, पृ० १५२

द्विवेदी युग का जीवनी साहित्य अपने समय से प्रभावित है। स्वय द्विवेदीजी ने कवि, लेखक, वादशाह, राजनीतिज्ञ, देशोद्धारक, राजकीय उत्तराधिकारी एव नूतन पथ-प्रदर्शको को अपने जीवनी साहित्य का विषय बनाया। द्विवेदीजी का जीवनी लिखने का उद्देश्य शिक्षात्मक है। हिन्दी साहित्य के प्रसार के लिए इन्होने इस साहित्य को लिखा। आचार्य द्विवेदीजी ने जो जीवनी लेख लिखे वे युग चेतना के अनुसार न थे। वे अत्यन्त साधारण लेख थे। जीवनी साहित्य की प्रगति मे वे आगे नही बढ सके। इसका एक साधारण कारण तो यह है कि भारतीय जनजीवनी साहित्य की ओर रुचि नही रखते थे। दूसरा कारण यह है कि द्विवेदीजी 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक थे। उनका उद्देश्य पत्रिका द्वारा प्रचार करना था इसलिए वह सरकार के विरुद्ध नही जाते थे। उन्होने उच्च वर्ग के व्यक्तियो का जीवन-चरित्र लिखा, राष्ट्रीय आन्दोलन में लगे किसी भी व्यक्ति के विषय मे नही लिखा। ऐसे आन्दोलनो की ओर उनका झुकाव न था, वे तो राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत थे।

द्विवेदी युग मे जो भी जीवनी साहित्य लिखा गया उनमे सबसे अधिक ऋषि दयानन्द के विषय में लिखा गया। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय एव ऐतिहासिक पुरुषो के चरित्र लिखे गए। बाबू शिवनन्दन सहाय ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और गोस्वामी तुलसीदास के जीवन-चरित्र लिखकर हिन्दी जीवनी साहित्य के विकास मे विशेष योग दिया। इनके अतिरिक्त बनारसीदास चतुर्वेदी ने भी सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी लिखी। डा० श्यामसुन्दरदास द्वारा लिखी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जीवनी भी इस बात की द्योतक है कि जहाँ इस युग मे ऐतिहासिक, राष्ट्रीय एव धार्मिक व्यक्तियो के जीवन चरित्र लिखे गए वहाँ साहित्यिक व्यक्तियो को भी अच्छे लेखको ने अपने जीवनी साहित्य का विषय बनाया। भारतेन्दु युग की अपेक्षा इस काल में जीवनी साहित्य अधिक पनपा। वह अपनी उत्कृष्ट अवस्था तक पहुँच गया, इसमे वे सभी तत्व आ गए जिनका जीवनी साहित्य मे होना आवश्यक है। शिवनन्दन सहाय, बनारसीदास चतुर्वेदी एव डा० श्यामसुन्दरदास के प्रयत्न सराहनीय हैं। इसके अतिरिक्त अनेक अनूदित जीवनियाँ भी लिखी गई। इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट है कि द्विवेदी युग मे जीवनी साहित्य प्रचुर मात्रा मे लिखा गया। लेखको ने सभी क्षेत्रो से अपने जीवनी के विषय को लिया। शैली भी परिपक्व एव सुदृढ हो गई थी। जितनी साहित्यिक जीवनियाँ लिखी गईं वे सभी प्रामाणिक एव उत्कृष्ट कोटि की लिखी गई।

जहाँ तक जीवनीपरक साहित्य की अन्य विधाओ का प्रश्न है उनमे से रेखाचित्र साहित्य का आविर्भाव इस युग मे पद्मसिह शर्मा के द्वारा हो गया था यद्यपि इनके रेखाचित्रो मे कला का वह रूप दृष्टिगोचर नही होता जैसा कि आज है। इसके अतिरिक्त इस युग मे अधिक रेखाचित्र धार्मिक स्थानो के विषय मे लिखे गए। संतराम बी० ए०, रामाज्ञासमीर एव शीतलसहाय ने इसी प्रकार के रेखाचित्र लिखे। केवल मोहनलाल महतो ने अपने बच्चो का जो चित्र अपने रेखाचित्रो मे अकित किया वह इस काल के रेखाचित्र साहित्य की प्रगति को लक्षित करता है। फिर भी यह

रेखाचित्र साहित्य का प्रारम्भिक काल है।

संस्मरण साहित्य का प्रादुर्भाव ही भारतेन्दु काल के पश्चात् हुआ है। द्विवेदी युग मे साहित्य की इस विधा की उत्पत्ति हुई और साथ मे इस थोडे से समय मे ही बहुत से लेखको ने संस्मरण लिखे। संस्मरण साहित्य की प्रगति हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओ द्वारा हुई जिनका कि इस समय मे विकास हो गया था। विषय की दृष्टि से ये संस्मरण दो प्रकार के हैं—आत्मकथा से सम्बन्धित एव अन्य व्यक्ति के चरित्र से सम्बन्धित। आत्मकथा से सम्बन्धित संस्मरणो मे लेखको ने अपने व्यक्तित्व पर संस्मरणात्मक शैली मे प्रकाश डाला है। ऐसे लेखक इलाचन्द्र जोशी, वृन्दावनलाल वर्मा एव श्रीनिवास शास्त्री हैं।

दूसरी प्रकार के संस्मरण लेखक बालमुकुन्द गुप्त, डा० श्यामसुन्दरदास एव श्री रामदास गौड और अमृतलाल चक्रवर्ती हैं। इन सभी संस्मरणो मे लेखकों ने केवल साहित्यिक लेखको के व्यक्तित्व के विषय में प्रकाश डाला है। संस्मरण साहित्य अभी प्रौढ अवस्था तक नही पहुँचा था पर जितना भी लिखा गया वह उत्कृष्ट कोटि का है।

द्विवेदी युग में पत्र साहित्य की प्रगति सबसे अधिक हुई है। 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक होने के कारण आचार्य द्विवेदी ने हिन्दी भाषा मे जो अशुद्धियाँ थी उनको दूर करके उसको परिनिष्ठित एव परिपक्व भाषा बनाना था। इसलिए उनके पास जो भी लेख पत्रिका मे छपने आते थे उनकी अशुद्धियो को वह उनके लेखको को पत्रों द्वारा बतलाते थे इसलिए उनके बहुत से पत्र प्राप्त होते हैं। इनके अधिक पत्रो का विषय साहित्यिक है जिनमे तत्कालीन व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियो पर ध्यान दिया है। इनके अतिरिक्त इस युग के प्रसिद्ध पत्र लेखको मे पद्मसिंह शर्मा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल एव मुशी प्रेमचन्द हैं। ये सभी लेखक पत्र लेखन मे सिद्धहस्त थे। इनके पत्रों मे इनका व्यक्तित्व तो उभरा हुआ है ही साथ मे तत्कालीन राजनैतिक, साहित्यिक एव धार्मिक परिस्थितियो पर भी आवश्यकतानुसार प्रकाश डाला है। इनके अधिकांश पत्रों का विषय साहित्य से ही सम्बन्धित है। जिन भी पत्रो मे इन्होने अपने व्यक्तित्व का विश्लेषण भी किया है वह इनकी निर्भीकता एव स्पष्टवादिता का द्योतक है। मुशी प्रेमचन्द के पत्र तो अपना ही स्थान रखते हैं। इन समस्त लेखकों ने अपने चारित्रिक गुण दोषों का विवेचन अपने पत्रों मे बडी निर्भीकता से किया है। इनके पत्र तत्कालीन परिस्थितियों के द्योतक एव उनके व्यक्तित्व का प्रकाशन भलीभाँति करते हैं। इस युग में सब से अधिक प्रगति पत्र साहित्य की हुई है। जैसा पत्र साहित्य इस युग में पनप सका वैसा अन्य किसी भी समय में नहीं। इस युग के पत्र साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि पत्र लेखकों ने अपने पत्रों मे विविध विषय को लिया है। कुछ पत्र साहित्यिक लिखे गए जिनमें साहित्य से सम्बन्धित विषयो पर प्रकाश डाला गया। हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास को स्पष्ट करने के लिए ये पत्र बहुत सहायता देते हैं। कुछ पत्रों में इन लेखकों ने अपने व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला

है। ऐसे पत्र आत्मकथा एवं जीवन के लिए सहायक होते हैं। ऐसे पत्रों मे लेखक की ईमानदारी और जिन्दादिली प्राप्त होती है। कुछ पत्र ऐसे लिखे गए हैं जिनमे इन्होंने किसी अन्य व्यक्ति के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है। ऐसे पत्रों मे इन्होने नायक के गुण-दोषो का विवेचन स्पष्ट रूप से किया है। द्विवेदी युग का पत्र साहित्य हिन्दी साहित्य मे अद्वितीय स्थान रखता है।

इस युग मे आत्मकथा लिखने का प्रयास द्विवेदीजी ने ही किया। इन्होंने कुछ पन्ने अपने जीवन के विषम मे लिखे हैं। उनमे जो कुछ भी इन्होंने लिखा है वह इनकी उत्कृष्ट शैली का परिचायक है परन्तु यह पूरी आत्मकथा न लिख सके। अन्य किसी भी लेखक ने यह प्रयाम नही किया। आत्मकथा का अश इस काल के पत्र साहित्य मे ही दृष्टिगोचर होता है। अन्य कि ी भी लेखक ने स्वतन्त्र रूप से आत्मकथा नहीं लिखी। डायरी लिखने की प्रथा भी इस युग मे प्रचलित न हो सकी।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि द्विवेदी युग मे जीवनी साहित्य एवं पत्र साहित्य की विशेष रूप से लिखा गया। पत्र साहित्य का तो अधिक विकास इस समय में ही हुआ है।

वर्तमान युग

द्विवेदी युग के समाप्त होते ही भारतीय जनता मे उथल-पुथल समाप्त-सी होने लगी। १९३० ई० का आरम्भ एक विशेष घटना से हुआ। कांग्रेस का अधिवेशन लाहौर मे पडित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता मे हुआ। कांग्रेस ने पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी थी। सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ हुआ, समस्त जनता इससे प्रभावित हुई। इसके पश्चात् लार्ड इरविन से गाधीजी का समझौता हुआ। इस समझौते का यह परिणाम हुआ कि महात्मा गाधी गोलमेज कान्फ्रेंस मे सम्मिलित होने के लिए इग्लैंड गए। इतने मे ही ब्रिटिश सरकार ने भारतीय जनता पर भीषण दमन का चक्र चलाया। कांग्रेस ने सत्याग्रह और लगानबन्दी आन्दोलन का अनुसरण किया। १९३५ ई० मे गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट द्वारा भारतवासियो को जो कुछ भी शासन अधिकार मिला उससे भारतीय लोगो की शक्ति और भी सुदृढ हो गई। १९३७ में चुनाव हुआ और उसमे कांग्रेस की विजय हुई। सन् १९३९ ई० में योरोप दूसरे विश्वयुद्ध का केन्द्र बना और फिर सारा ससार प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से युद्ध की ज्वाला में जलने लगा। ब्रिटेन ने भारत को युद्ध मे मिलाना चाहा परन्तु भारत के नेताओं ने इनकार कर दिया, इसके साथ ही त्यागपत्र दे दिया। गाधीजी ने सत्याग्रह आन्दोलन चलाया। परिस्थितियाँ धीरे-धीरे घनीभूत हो रही थीं। साम्राज्य ने साम्प्रदायिकता को उत्तेजित कर भारतीय राष्ट्रशक्ति को छिन्न-भिन्न करने का पुराना और परीक्षित अस्त्र प्रयोग किया। मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा दोनों जो जनता का समर्थन किसी अंश में नहीं प्राप्त कर सकी थीं ब्रिटिश सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त करने लगीं। १९४० ई० में मुहम्मद अली जिन्ना ने पाकिस्तान की माँग की। महात्मा गांधी के

नेतृत्व मे १६४२ मे भारतीय जनता ने 'भारत छोडो' का प्रस्ताव रक्खा। देश का सम्पूर्ण वातावरण जनवर्ग और जनभावना तथा चिन्तन त्याग के उच्चादर्श देश के लिए सम्पूर्ण बलिदान से ओतप्रोत था। भारत का जीवन एक ऐसे साँचे मे ढल चुका था जहाँ मनुष्य और समाज का उत्कृष्ट रूप दीख पडता है।

१६४५ मे ई० मे युद्ध समाप्त हो गया। भारत की राष्ट्रीय चेतना इतनी जागृत थी कि इसको १५ अगस्त १६४७ को स्वतन्त्रता मिली। साम्प्रदायिकता का स्वरूप भारत और पाकिस्तान मे दृष्टिगोचर हुआ। गाधीजी ने इसको बहुत अश तक शान्त करना चाहा। अन्त मे ३० जनवरी १६४८ को इनकी भी मृत्यु हो गई। स्वतन्त्र भारत के सविधान को २६ जनवरी १६५० को लागू किया गया, इसके साथ ही हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा घोषित किया गया।

सन् १६३० से १६५० तक साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि इस समय का साहित्य अपने देश की परिस्थितियो से प्रभावित था। उच्चकोटि के विद्वान और राजनीतिज्ञ अपना योग प्रदान करने लगे। लोग उन व्यक्तियो के चरित्रो को पढने की उत्सुकता में थे जिन्होने स्वतन्त्रता युद्ध मे अपनी जान को न्यौछावर कर दिया। पत्र-पत्रिकाओ ने ऐसे व्यक्तियो के जीवन-चरित्र प्रकाशित करने मे सहयोग दिया।

इस काल में आत्मकथा साहित्य की विशेष रूप से प्रगति हुई। महात्मा गाधी ने अपनी आत्मकथा लिखी जिसका हिन्दी रूपान्तर हरिभाऊ उपाध्याय ने किया। इसके साथ ही डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, कन्हैयालाल माणिक्लाल मुशी, भवानीदयाल सन्यासी एव सत्यदेव परिव्राजक जैसे महापुरुषो ने अपने जीवन-चरित्र लिखे। इन आत्मकथाओ को उत्कृष्ट कोटि की श्रेणी मे रखा जा सकता है। इनमे लेखकों ने अपने व्यक्तित्व के सभी पक्षो का तदनुकूल विश्लेषण करते हुए स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जो सहयोग दिया, उसमे जो भी उलझने सामने आईं, उनका वर्णन किया है। इन राजनैतिक व्यक्तियों ने अपनी आत्मकथाओ की रचना तत्कालीन परिस्थितियो के अनुकूल होने से ही की थी। जनता यह चाहती थी कि उसे इन महापुरुषों के जीवन पढ़ने को मिलें। इन आत्मकथाओ मे उनके आदर्श, उनकी विचारधारा और राष्ट्रीय सग्राम की छाप दृष्टिगोचर होती है।

इस समय मे राजनीतिज्ञो ने ही आत्मकथाएँ नहीं लिखी अपितु साहित्यिक व्यक्तियों ने भी इस दिशा मे कम सहयोग नही दिया। डॉ० श्यामसुन्दरदास, वियोगी हरि, गणेशप्रसादजी वर्णी एव राहुल साकृत्यायन ने अपनी आत्मकथाएँ लिखीं। स्फुट रूप से अनेक लेखको ने अपने जीवन सम्बन्धी घटनाओ को लिखा। इनके ये आत्मकथा सम्बन्धी लेख विशेषतया पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होते थे। १६३१ के आत्मकथा अंक 'हंस' पत्रिका मे अनेकों लेखकों ने इस प्रकार के निबन्ध छपवाए थे। आत्मकथा सम्बन्धी घटनाओं को स्फुट रूप से वर्णन करने वाले लेखकों में से मुशी

प्रेमचन्द, गुलाबराय, अम्बिकादत्त व्यास, पद्मलाल पुन्नालाल बख्शी का नाम अग्रणीय है। इनके अतिरिक्त मूलचन्द अग्रवाल की आत्मकथा भी इसी समय मे प्राप्त होती है। इस प्रकार आत्मकथा साहित्य का स्तर उत्कृष्ट कोटि का हो गया। इसमे उन सभी विशेषताओ एव गुणो का समावेश हो गया था जो कि एक आत्मकथा लेखक की शैली मे होना चाहिए था। भारतेन्दु युग मे तो आत्मकथा साहित्य की उपयोगिता का अनुमान लेखको को हो गया था। द्विवेदी युग मे पत्र या जीवनी साहित्य की प्रगति ही होती गई और वर्तमान काल मे १९३० से १९५० तक के समय मे देश एवं समाज की परिस्थितियो ने देश एव साहित्य के महान् पुरुषो को अपनी आत्मकथा लिखने के लिए विवश कर दिया था। इस प्रकार आत्मकथा साहित्य का पूर्ण विकास इस युग मे लक्षित होता है।

जीवनीपरक साहित्य की अन्य विधाओ मे से रेखाचित्र साहित्य की भी प्रगति पर्याप्त मात्रा मे हुई है। इस युग के रेखाचित्रकारो मे से श्रीराम शर्मा, प्रकाशचन्द्र गुप्त, रामवृक्ष बेनीपुरी, देवेन्द्र सत्यार्थी एव महादेवी वर्मा का नाम प्रमुख है। विषय की दृष्टि से यदि देखा जाय तो चार प्रकार के रेखाचित्र लिखे गए—साहित्यिक लेखको के रेखाचित्र, राजनैतिक पुरुषो के रेखाचित्र, मानवीय गुणों से सम्पन्न साधारण पुरुषो के रेखाचित्र एव मानवेतर जड या चेतन सम्बन्धी रेखाचित्र। प्रत्येक साहित्य अपने समय की विचारधारा का प्रतिबिम्ब होता है। रेखाचित्र साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि इस समय के रेखाचित्रकारो ने भी तत्कालीन महापुरुषो को अपने रेखाचित्रो का विषय बनाया। देवेन्द्र सत्यार्थी ने तो बहुत से रेखाचित्रो मे बापू की चर्चा की है। यही नही, कोई भी रेखाचित्र लेखक ऐसा नही था जिसने उस समय के प्रसिद्ध राजनैतिक पुरुषो के विषय मे नही लिखा। यहाँ कहने का अभिप्राय यह है कि प्रत्येक लेखक अपने समय की परिस्थितियो से प्रभावित था, अपनी रुचि अनुसार उन्होने रेखाचित्र लिखे। कई रेखाचित्र साधारण से व्यक्तियो के लिखे गए हैं, यह भी समय की माँग थी। स्वतन्त्रता प्राप्त करने के पश्चात् हमारे सविधान मे जात-पात, छुआ-छूत को को हटा दिया। इसका प्रभाव गया सभी लोगो पर पडा। उन्होंने उन साधारण पुरुषो व पात्रो का ग्रहण किया जो कि मानवीय गुणो से सम्पन्न थे। महादेवी वर्मा ऐसे रेखाचित्र लिखने मे सफल रही हैं। इसके अतिरिक्त कुछ लेखको ने ऐसे रेखाचित्र लिखे हैं जिनमे तत्कालीन सामाजिक एव ग्रामीण अवस्था का पूर्ण चित्र है। रामवृक्ष बेनीपुरी ने तत्कालीन ग्रामीण अवस्था का चित्र 'माटी की मूरतें' पुस्तक मे बहुत अच्छा खीचा है। प्रकाशचन्द्र गुप्त के रेखाचित्र अधिकतर प्राचीन खण्डहरो एव विशेष स्थानो को लेकर लिखे गए हैं। १९३८ के 'हस' रेखाचित्र अक द्वारा भी रेखाचित्र साहित्य का विकास हुआ। इसमे अनेक प्रमुख लेखको के रेखाचित्र लिखे गए हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि इस काल में रेखाचित्र साहित्य का विकास भी प्रचुर मात्रा मे हुआ है। विषय एव शैली की दृष्टि से रेखाचित्र साहित्य

परिपक्व अवस्था तक पहुँच गया । हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ प्रचुर मात्रा मे निकलने लगी थी इसलिए लेखकों ने इसमें अपने रेखाचित्र प्रचुर मात्रा मे प्रकाशित करवाने आरम्भ कर दिये थे । लोगो ने लेखकों को साहित्य की इस विधा की प्रगति के लिए प्रेरित किया क्योकि उनको थोड़े से पृष्ठो मे ही किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का चित्र मिल जाता था । पाठको की समय की बचत तो होती ही थी, इसके साथ पर्याप्त मनोरजन भी होता था ।

जहाँ तक जीवनी साहित्य की प्रगति का प्रश्न है, इस काल मे जितनी भी जीवनियाँ लिखी गईं वे भी समय की माँग के अनुसार ही लिखी गई । राष्ट्रीय, ऐतिहासिक एव राजनैतिक पुरुषो के जीवन चरित्र ही अधिक लिखे गये । अधिकतर लेखको ने उन पुरुषों के जीवन चरित्र लिखे हैं जिन्होने भारत को स्वतन्त्र बनाने के लिए विशेष योग दिया । इनमे महात्मा गाधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, सुभाषचन्द्र बोस, सरदार भगतसिंह एव राजर्षि टण्डन मुख्य हैं । कुछ ऐतिहासिक पुरुषो की जीवनियाँ भी लिखी गई । साहित्यिक पुरुषो की जीवनियाँ केवल दो ही प्राप्त होती हैं— ब्रजरत्नदास द्वारा लिखित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जीवनी एव शिवरानी देवी की 'प्रेमचन्द : घर में' । इस समय मे जीवनी साहित्य अधिक पनप न सका क्योकि लोगो के हाथों मे प्रसिद्ध पुरुषो की आत्मकथाएँ आ गई थीं, उनके पढने मे उनको अधिक रुचि थी ।

हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने जीवनीपरक साहित्य की उन्नति मे विशेष योग दिया है । सस्मरण साहित्य तो पनपा ही इनके कारण है । १९३० से १९५० तक जितने भी सस्मरण लिखे गये उन सभी का विषय भी राष्ट्रीय पुरुषो से सम्बन्धित है, कुछ संस्मरण ही आचार्य द्विवेदी के विषय में लिखे गये हैं । राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह एक ऐसे लेखक हुए हैं जिन्होने अपने सस्मरणो मे साधारण पुरुषों के चित्रण द्वारा अपने समय की परिस्थितियों का चित्रण किया है । 'सावनीसमा' मे इन्होने सामन्ती विलासों की ओर सकेत किया है, 'टूटा तारा' मे सामाजिक दृष्टि से नगण्य परन्तु हृदय की दृष्टि से धनी और आन के पक्के व्यक्तियों का चित्रण है । 'सूरदास' मे अन्धों के प्रेम का प्रदर्शन है । कुछेक संस्मरण पद्मसिंह शर्मा, श्रीधर पाठक एवं मुशी प्रेमचन्द के विषय मे भी प्रकाशित हुए । इस समय में बनारसीदास चतुर्वेदी ने पाठको को अपनी सस्मरण कला का कुछ सस्मरण लिखकर परिचय दे दिया था परन्तु पूर्ण परिचय तो १९५० के पश्चात् ही प्राप्त होता है । इस काल मे संस्मरण साहित्य भारतेन्दु और द्विवेदी युग से अधिक विकसित हुआ है परन्तु प्रौढावस्था मे तो इसके पश्चात् ही पहुँच सका । डायरी और पत्र साहित्य की प्रगति भी इस समय में कोई विशेष नही हुई है । कमलापति त्रिपाठी के पत्र, जो इन्होंने जेल में लिखे थे, 'बन्दी की चेतना' से प्राप्त होते हैं । उनमें भी व्यक्तिगत चित्रण के साथ-साथ तत्कालीन परिस्थितियों का चित्रण है ।

१९५० सन् के पश्चात् जीवनीपरक साहित्य की प्रगति विशेष रूप से होने

लगी। जीवनी सस्मरण, आत्मकथा, रेखाचित्र, डायरी एव पत्र साहित्य का विकास प्रचुर मात्रा मे लक्षित होता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् नये संविधान के निश्चित होने से हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया गया था, इससे हिन्दी लेखको को बहुत प्रोत्साहन मिला। नेहरूजी की पचशील की योजना का प्रभाव समस्त साहित्य पर पडा। अनेक देशो से मैत्री सम्बन्ध स्थापित हो चुका था। जिन देशों से हमारा दृढ सम्बन्ध स्थापित हुआ था उनके महान् व्यक्तियो के विषय मे भी जीवन चरित्र लिखे गये। इसके साथ ही हमारा साहित्य भी उनके साहित्य से प्रभावित हुआ। इन जीवनीपरक साहित्यिक रूपो का आगमन पाश्चात्य साहित्य की ही देन है। इसके विकसित होने का सबसे बडा कारण यह है कि जीवन स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद बहुत जटिल बन गया था। जनता का अधिक समय जीविकोपार्जन मे व्यतीत होने लगा। अधिक काम करने के पश्चात् मनोरजन की आवश्यकता पडी, इसलिए उन्हें ऐसे साहित्य की आवश्यकता थी जो थोडे समय मे पढा जाय और पर्याप्त मनोरजन हो। ये रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी एव पत्र साहित्य इसी दृष्टिकोण से लिखे गये। इस युग के प्रसिद्ध जीवनी लेखको मे से राहुल साकृत्यायन, रागेयराघव, रामवृक्ष बेनीपुरी, ऋषि जेमिनी कौशिक बरुआ एव अमृतराय प्रमुख हैं। अमृतराय द्वारा लिखी हुई 'प्रेमचन्द : कलम का सिपाही' जीवनी उत्कृष्ट श्रेणी की जीवनी है। शिवनन्दन सहाय एवं डॉ० श्याम-सुन्दरदास के पश्चात् साहित्यिक जीवनी लेखको मे से अमृतराय सर्वश्रेष्ठ जीवनी लेखक हैं। हिन्दी जीवनी साहित्य मे यह अपना सर्वश्रेष्ठ स्थान रखती है। इसमे लेखक की शैली भी नवीन ही है। घनश्यामदास बिडला के सस्मरण अधिकतर गाधीजी के जीवन से सम्बन्धित हैं। इनके अतिरिक्त स्मृति ग्रन्थो एव अभिनन्दन ग्रंथो द्वारा ही इस विधा का विशेष विकास हुआ है। इस प्रकार हम देखते हैं विषय और शैली की दृष्टि से इस काल का संस्मरण साहित्य विशेष रूप से प्रफुल्लित हुआ।

रेखाचित्र साहित्य की प्रगति भी इस काल में कम नहीं हुई। इस समय के प्रसिद्ध रेखाचित्रकार अयोध्याप्रसाद गोयलीय, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, बनारसी-दास चतुर्वेदी, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन एव प्रेमनारायण टण्डन हैं। इनके द्वारा लिखे हुए रेखाचित्र उच्चकोटि के हैं। विषय और शैली की परिपक्वता इनमे दृष्टिगोचर होती है।

डायरी साहित्य का विकास हिन्दी साहित्य के सभी कालों की अपेक्षा इन १४ वर्षों में ही हुआ है यद्यपि इसका थोडा-बहुत रूप हम भारतेन्दु काल मे पाते हैं। इस काल मे सुन्दरलाल त्रिपाठी, डा० वीरेन्द्र वर्मा एव गजाननमाधव मुक्तिबोध ने अपनी डायरियाँ लिखी हैं। डायरी लिखने की कुछ प्रथा ही चल पडी है। कई लेखको ने अपनी डायरी के पन्ने पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित करवाये हैं। कुछ लेखको ने अपने जीवन के कुछ ही दिनो का चित्रण अपनी डायरी में किया है। इससे हमे उनके

सम्पूर्ण जीवन का अनुभव नही होता। धर्मवीर भारती, उपेन्द्रनाथ अश्क, रामकुमार वर्मा एव भगवतीचरण वर्मा का नाम इनमे आता है। १९४८ सन् तक जो कुछ भी हमे डायरी साहित्य के विषय मे प्राप्त होता है वह न के समान ही है। केवल १९४२ मे बुकसेलर रावी ने जो प्रयास किया था उसे कुछ सफल कहा जा सकता है। १९५८ सन् के पश्चात् ही हमे इन साहित्यिक व्यक्तियो की पूर्ण जीवनियाँ प्राप्त होती हैं। जहाँ तक आत्मकथा साहित्य के विकास का प्रश्न है इन चौदह वर्षो मे तीन आत्मकथाएँ लिखी गई हैं जिनके लेखक कालिदास कपूर, संतराम बी० ए० एव आचार्य चतुरसेन शास्त्री हैं। इनमे शास्त्रीजी की आत्मकहानी सर्वश्रेष्ठ है। इसमे लेखक ने अपने जीवन के सभी पक्षो का वर्णन विस्तारपूर्वक किया है। इसके अतिरिक्त स्फुट रूप मे कुछ लेखको ने आत्मकथा सम्बन्धी लेख लिखे हैं। महादेवी वर्मा, पत, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, मैथिलीशरण गुप्त विशेष रूप से अग्रणीय हैं।

इस समय मे सस्मरण, रेखाचित्र एवं डायरी साहित्य का विकास अधिक दृष्टिगोचर होता है। सस्मरण लेखको में शातिप्रिय द्विवेदी, बनारसीदास चतुर्वेदी, किशोरीदास वाजपेयी, जैनेन्द्र, घनश्यामदास बिडला, यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क का नाम तो लिया ही जाता है। इनके अतिरिक्त कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, पाडेय बेचनशर्मा उग्र, ब्रजमोहन व्यास एवं रामवृक्ष बेनीपुरी का कम सहयोग नही है। विषय और शैली की दृष्टि मे इस साहित्य मे परिपक्वता दृष्टिगोचर होती है। कुछ लेखको ने तो अपनी आत्मकथा ही इस सस्मरणात्मक शैली मे लिखी है। इस प्रकार का प्रयोग शान्तिप्रिय द्विवेदी एव किशोरीदास वाजपेयी ने किया है। पाण्डेय बेचनशर्मा उग्र ने भी अपनी आत्मकथा सस्मरणात्मक शैली मे लिखी है। अन्य व्यक्तियो के चरित्रो के विषय मे जो सस्मरण लिखे हैं उनमे सम्पूर्ण व्यक्तित्व का चित्रण करने वालो मे ब्रजमोहन व्यास का प्रयास सराहनीय है। इन्होंने बालकृष्ण भट्ट का जीवन चरित्र इसी शैली मे लिखा है। यशपाल के सस्मरण भी हिन्दी साहित्य मे अपना विशेष स्थान रखते हैं। इनमे लेखक ने तात्कालीन परिस्थितियों का चित्र खीचते हुए अपने जीवन का वर्णन इसी शैली मे किया है।

इसके पश्चात डायरियाँ प्राप्त होती हैं। इनमे डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा की 'मेरी कालिज डायरी' यद्यपि इनके सम्पूर्ण जीवन का पता नही देती फिर भी यह एक विशेष सफल एवं सराहनीय कार्य है। अभी तक हिन्दी साहित्य में कोई भी डायरी ऐसी नही जिसमे लेखक के सम्पूर्ण जीवन का उल्लेख हो। धार्मिक एव राजनैतिक पुरुषो की डायरियाँ तो मिल जाती हैं। वाल्मीकि चौधरी की 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' एव श्री तुलसी की प्रवचन डायरियाँ इसी प्रकार की हैं। डायरी साहित्य का भविष्य उज्ज्वल है। आधुनिक लेखक इस विधा को विकसित करने के लिए विशेष इच्छुक हैं। आशा है कुछ वर्षों में हमें और भी अच्छी डायरियाँ प्राप्त होंगी।

पत्र साहित्य को विकसित करने के लिए नवीनतम आधुनिक लेखक भारतेन्दु एव द्विवेदी युग के साहित्यकारों के पत्रों को पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित करवा रहे हैं

जिससे लेखको को पत्र साहित्य की उपयोगिता का अनुमान हो जाय और वह अपने पत्रो को आगामी साहित्यिको के लिए सम्भालकर रखे । अन्य भाषाओ के पत्र साहित्य का अनुवाद भी इस काल मे किया गया । पत्र साहित्य का जो रूप हमे द्विवेदी काल मे देखने को मिलता है वह इस काल मे नही ।

इस प्रकार उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि विशिष्ट समय मे जीवनीपरक साहित्य की किस विधा का विकास हुआ और क्यो हुआ । समय और परिस्थितियो के अनुकूल ही साहित्य की रचना होती है, प्रत्येक साहित्य अपने युग की विचारधारा का प्रतिबिम्ब होता है—यह उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है ।

साहित्येतिहासों के आलोक में जीवनीपरक साहित्य का महत्व

साहित्य अपने युग की विचारधारा का प्रतिबिम्ब होता है । साहित्य मे लेखक अपने समय की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव आर्थिक परिस्थितियो का उल्लेख करते हुए उनका तत्कालीन साहित्य पर प्रभाव दिखाता है । इसके पश्चात् वह साहित्य की विशेपताओ का उल्लेख जहाँ करता है वहाँ उस काल के उन विशेषताओ से युक्त प्रमुख लेखको का परिचय पाठको को करवा देता है । लेखको का वह परिचय उनके साहित्यिक व्यक्तित्व का ही पाठको को ज्ञान करवाता है, जीवनीपरक साहित्य के लेखक की भाँति वह प्रत्येक लेखक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विश्लेपण अपने साहित्य में नही करता । जीवनीपरक साहित्य तो एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन है । मनुष्य का व्यक्तित्व मानसिक क्रियाओ का परिणाम होता है । वास्तव मे मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन मन की क्रियाओ का निर्माण है । इसीलिए व्यक्तित्व का वास्तविक चित्र समझने के लिए मन का विश्लेषण आवश्यक है । जीवनीपरक साहित्य की यह सबसे बडी विशेषता है । हिन्दी साहित्य के इतिहास का लेखक जीवन के इन तत्वो की ओर ध्यान नही देता, उसका कार्य तो तत्कालीन परिस्थितियो का वर्णन करते हुए उस युग की साहित्यिक धाराओं की विशेषताओ का उल्लेख एव उन धाराओ के लेखको का वर्णन है । यही कारण है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास जितने भी अभी तक प्रकाशित हुए हैं उनमे जीवनीपरक साहित्य के तत्वो का समावेश नही हो पाया है ।

हिन्दी साहित्य के इतिहास अभी तक जितने प्रकाशित हुए हैं उनमे गार्सा दतासी, शिवसिंह सेंगर और ग्रियर्सन के इतिहास प्राचीन हैं । गार्सा दतासी के इतिहास का अनुवाद लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय ने किया । इस इतिहास के अनुशीलन से भी ज्ञात है कि लेखक ने जिन कवियो का उल्लेख अपने इतिहास मे किया है उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षो पर विचार न करके लेखक ने वश, जन्मस्थान, जन्मतिथि का उल्लेख तो अवश्य किया है परन्तु अधिक ध्यान इनकी कृतियो की ओर दिया है । इस प्रकार इस साहित्य मे भी जीवनीपरक तत्वों का समावेश नही आ पाया । हिन्दी साहित्य के प्रथम लेखक शिवसिंह सेंगर की पुस्तक 'शिवसिंह सरोज' मे जिन कवियो का परिचय दिया गया है वह भी अपूर्ण है । उनसे पाठक को केवल यह अनुमान होता

है कि देश की परिस्थितियो के भिन्न होने से ही कवियो के व्यक्तित्व मे भी अन्तर आ जाता है। इन्होने जिन कवियो के जीवन-परिचय देने का प्रयास किया है उनके वंश, जन्मस्थान एवं साहित्यिक व्यक्तित्व को ही स्पर्श किया है, किसी भी ऐसी घटना का वर्णन नही जिसमे किसी उनके व्यक्तित्व की गोपनीय घटना का वर्णन हो। ग्रियर्सन के साहित्य के इतिहास मे भी इतिहास की प्रवृत्तियो की ओर अधिक ध्यान दिया गया है।

इनके पश्चात् मिश्रबन्धुओ द्वारा लिखा हुआ हिन्दी साहित्य का इतिहास 'मिश्रबन्धुविनोद' नाम से प्रकाशित हुआ। इसके तीन भाग मिलते हैं। तीनों मे जिन भी कवियो और लेखको के विषय मे इन्होने लिखा है वह पन्द्रह-पन्द्रह पंक्तियो से अधिक परिचय नही है। केवल इनकी साहित्यिक कृतियो के विषय मे, वह भी लेखक व कवि के व्यक्तित्व की महानता को दृष्टि में रखते हुए, कुछ अधिक लिख पाए हैं। इसलिए इनके साहित्य में भी जीवनीपरक साहित्य की गहराई नही है। इन चारो इतिहासों मे अतिप्राकृत घटनाओ और चमत्कारिक अनुभूतियो का अनपेक्षित सकलन करके कवि परिचय के कलेवर को बढा दिया गया है। बाद के दोनो इतिहासो मे विवरण की पूर्णता और ऐतिहासिकता का भी ध्यान रक्खा गया है। उपलब्ध सामग्री के वैज्ञानिक वर्गीकरण की प्रवृत्ति भी उक्त ग्रन्थों मे नही मिलती। इसके अतिरिक्त इनमें कवियो की आलोचना और प्रवृत्तियो का सकेत तो यत्र तत्र भले ही मिल जाय परन्तु उस व्यापक एकसूत्रता का अभाव है।

इनके पश्चात आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का इतिहास प्रकाशित होता है। शुक्लजी ने आरम्भ मे ही यह सिद्ध किया है कि 'साहित्य जनता की विचारधारा का प्रतिबिम्ब होता है।' इस उक्ति को उन्होंने समस्त साहित्य के इतिहास का विवेचन करते हुए सिद्ध कर दिया है कि हिन्दी साहित्य मे जितने भी प्रकार का साहित्य प्राप्त होता है वह समयानुकूल रचा गया। इसके पश्चात् इन्होंने प्रवृत्तियो के विवेचन का जहाँ वर्णन किया है वहाँ तत्कालीन प्रसिद्ध कवियो और लेखकों का भी वर्णन किया है। शुक्लजी ने अधिकतर इनके सामाजिक व्यक्तित्व पर ही प्रकाश डाला है। उनके व्यक्तित्व को तत्कालीन समय से प्रभावित दिखाते हुए उनकी साहित्यिक कृतियों के विषय में विचार रक्खे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि शुक्लजी के इतिहास मे भी कवियो एवं लेखको के जीवन चरित्रों को इस ढग से नही लिखा गया जिनसे उनकी गुप्त एवं गोपनीय बातों का विश्लेषण हो।

डॉ० श्यामसुन्दरदास ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में हिन्दी की प्रमुख धाराओं, उनके विकास और विस्तार का निरूपण किया है। सामाजिक, राजनैतिक एव धार्मिक परिस्थितियों के साथ-साथ इन्होंने मुख्य कवियों का वर्णन किया है। इनके परिचय में लेखक ने इनके व्यक्तित्व को समाज से प्रभावित दिखला कर उनकी साहित्यिक कृतियों का उल्लेख कर दिया है। इससे आगे नहीं बढ़े, आवश्यकतानुसार उनकी कृतियों के उदाहरण दिए हैं।

अयोध्यासिंह उपाध्याय ने भी अपनी पुस्तक 'हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास' मे समय की परिस्थितियो का वर्णन करते हुए हिन्दी भाषा की प्रगति की ओर अधिक ध्यान दिया है। जिन कवियो और लेखकों का इन्होंने नामोल्लेख किया है उनके साहित्यिक पक्ष पर ही प्रकाश डाला है। उनकी कृतियों मे से उदाहरण देकर उनकी कला-कुशलता का परिचय दिया है। इसके अतिरिक्त और कुछ इसमें नहीं है। सूर्यकान्त शास्त्री ने भी 'हिन्दी साहित्य के विवेचनात्मक इतिहास' मे महान् कवियो को समझने की अच्छी चेष्टा की है। इस साहित्य मे लेखक ने अधिकतर अंग्रेजी साहित्य के भावों का प्रमाण देते हुए हिन्दी साहित्य का समझाने की चेष्टा की है। रमाशकर शुक्ल रसाल ने भी अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में हिन्दी साहित्य की सभी ज्ञातव्य बातो का परिचय दिया है। लेखक ने उन्हें वैज्ञानिक ढग से नहीं समझाया। कवियों एव लेखको का वर्णन इन्होने प्राप्त सामग्री के आधार पर किया, इनका अपना कोई निर्णय नहीं है। पडित कृष्णशकर शुक्ल एम० ए० ने अपने 'आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास' में जिन लेखको एव कवियो का वर्णन किया उनके व्यक्तित्व की ज्ञातव्य बातें लिख दी हैं, जीवन परिचय देने मे इनका कोई विशेष सफल प्रयास नहीं है।

सवत् १९९३ मे श्री गौरीशकर सत्येन्द्र ने 'साहित्य की झाँकी' पुस्तक प्रस्तुत की। इस पुस्तक मे सात निबन्ध हैं। कहीं भी किसी कवि के जीवन पर कोई विशेष प्रकाश नही डाला गया है, साधारण-सा वर्णन है।

संवत् १९९४ मे पडित राहुल साकृत्यायन द्वारा लिखित 'पुरातत्त्व निबन्धावली' पुस्तक प्राप्त होती है। इस पुस्तक मे लेखक ने महायान बौद्धधर्म की उत्पत्ति, बज्रयान और प्राचीन चौरासी सिद्ध, हिन्दी के प्राचीनतम कवि और उनकी कविताओ पर प्रकाश डाला है। यद्यपि चौरासी सिद्धो का वर्णन इन्होने उनके चित्रों के साथ दिया है फिर भी उनके व्यक्तिगत जीवन का विश्लेषण वह अपनी पुस्तक मे न कर सके।

संवत् १९९३ में डॉ० इन्द्रनाथ मदान द्वारा लिखित 'माडर्न हिन्दी लिटरेचर' पुस्तक प्राप्त होती है। इसमें इन्होंने सक्षिप्त रूप से आधुनिक हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक विवेचन किया है। कहीं भी किसी विशेष कवि व लेखक के जीवन चरित्र को विस्तारपूर्वक नहीं लिखा जिससे कि उनके व्यक्तित्व का ज्ञान पाठक को हो जाय। यही बात मोतीलाल मेनारिया के 'राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा' मे, हीरालाल जैन की 'जैन इतिहास की पूर्व पीठिका और हमारा अभ्युदान' में, श्री ब्रजरत्नदास की 'खड़ी बोली हिन्दी साहित्य के इतिहास' में एवं भुवनेश्वरप्रसाद मिश्र के 'सत साहित्य' में देखी जाती है। साहित्य के विशेषकाल के अध्ययन में भी जीवनीपरक साहित्य के तत्त्व दृष्टिगोचर नहीं होते। डॉ० रामकुमार वर्मा ने भी अपने 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' मे जिन कवियो का परिचय दिया है वह प्राप्त प्रमाणो के आधार पर दिया है। अधिकतर उन्होंने इनके जन्म, जन्मतिथि एव साहित्यिक कृतियों के उदाहरण देकर उनके साहित्यिक व्यक्तित्व को स्पष्ट किया है। डॉ० कृष्णलाल एव लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के इतिहासों में भी आधुनिक काल की प्रवृत्तियों का वर्णन करते

हुए उस काल के कवियों का नामोल्लेख किया है। आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के साहित्य मे भी जीवनीपरक महत्ता देखने को नही मिलती है। माताप्रसाद गुप्त ने तो अपनी 'हिन्दी पुस्तक साहित्य' मे कवियो एव लेखको की मात्र सूची दी है। उन्हें जीवन-चरित्र का वर्णन तो क्या करना था, इन सभी इतिहासो के पश्चात् भवानीशकर त्रिवेदी एव डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का इतिहास हमारे सम्मुख आता है। त्रिवेदीजी ने तो अपने साहित्य मे कवियो का साधारण-सा परिचय देकर उनकी कृतियो मे से चुनकर उदाहरण दिए हैं परन्तु डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी का इस दिशा मे सफल प्रयोग है। द्विवेदीजी ने साहित्य की प्रवृत्तियो के विषय मे तो लिखा ही है परन्तु कवियों और लेखकों का परिचय वह जितना अधिक दे सकते थे दिया है। जीवन परिचय देने में उन्हें जो भी प्रमाण मिल सके उन सभी के आधार पर इन्होंने उनके चरित्र को आँका है।

इस तरह गार्सा द तासी के इतिहास से लेकर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी तक के इतिहास के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि इतिहास मे लेखक का उद्देश्य अपने समय की परिस्थितियों का वर्णन करते हुए उसका प्रभाव साहित्य पर दिखाना है और उस युग के प्रसिद्ध लेखक कवि एवं आलोचकों का वर्णन करते हुए उनके साहित्यिक व्यक्तित्व की ओर प्रकाश डालना है। इनकी सीमा वंश, जन्मतिथि, जन्मस्थान तक ही सीमित रही है। व्यक्तिगत जीवन का पूर्णतया विश्लेषण यह नहीं कर सके हैं, यहाँ तक कि जिन लेखकों ने किसी विशेष काल के विषय में ही अपनी लेखनी उठायी है उनमे भी वह व्यक्ति का चित्रण पूर्ण नहीं दे पाए हैं। इसका कारण यह है कि इतिहासकार का कर्त्तव्य तो देश की परिस्थितियों का वर्णन करना होता है और उसका प्रभाव साहित्य पर दिखाना होता है। देश उसमें अंगी रहता है व्यक्ति उसमे अंग होकर आता है। जीवनीपरक साहित्य में प्रधानता व्यक्ति की होती है देश की घटनाएँ उसकी अनुवर्तिनी होकर चलती हैं। इसमे मुख्य लक्ष्य नायक के चरित्र का चित्रण होता है। देश एवं साहित्य की परिस्थितियों का वर्णन तो उसके चरित्र को उभारने के लिए किया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दी साहित्य के इतिहास से जीवनी-परक साहित्य का इतना ही सम्बन्ध है कि दोनों में घटनाओं की सत्यता होती है।

जीवनीपरक साहित्य के आधार पर साहित्य के इतिहास मे नए तत्त्वो एव नए दृष्टिकोणों का समावेश हो सकता है। जीवनीपरक साहित्य मे रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी, पत्र एव आत्मकथा साहित्य का समावेश है। इतिहासकार अपने साहित्य मे जिन कवि या लेखक के विषय में अपने विचार प्रस्तुत करता है वह जनश्रुतियों एवं किंवदंतियों पर अधिकतर आश्रित होते हैं। किसी भी व्यक्ति के विषय मे जो भी लिखा जाता है यह आवश्यक नहीं होता कि पूर्णतया सत्य ही हो परन्तु जीवनपरक साहित्य का लेखक नायक स्वयं होता है इसलिए उसके विषय में किसी भी प्रकार का संदेह नहीं होता। जीवनपरक साहित्य में लेखक अपने विचारों एव व्यक्तित्व का विवेचन ही नहीं करता अपितु उसमे गुण-दोषो का विश्लेषण भी करता है, इसलिए

उनके पढने से बहुत लोगो की भ्रान्तियाँ दूर होती हैं और साहित्य के इतिहास में नवीन तत्त्वों का समावेश होता है। लेखक अपने व्यक्तितत्व की स्वय आलोचना करता है वह अपने समय की परिस्थितियो का स्वय वर्णन करता है। वर्णन ही नही अपितु विवेचन करता है। इसलिए हम देखते हैं कि जीवनीपरक साहित्य से इतिहास मे नए दृष्टिकोण एव नए तत्त्वो का समावेश हो सकता है।

उपसंहार

हिन्दी में जीवनीपरक साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि इसमे केवल साहित्यिक व्यक्तियो के ही जीवन की झाँकी प्राप्त नही होती, प्रत्युत साहित्य से भिन्न व्यक्तियो के विषय मे भी प्रचुर मात्रा मे सामग्री मिलती है। साहित्यिक व्यक्तियो ने जहाँ अपने जीवन के विषय मे लिखा है और अन्य साहित्यप्रेमियो के जीवन चरित्रों को चित्रित किया है, वहाँ उन्होने राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक एव ऐतिहासिक पुरुषों पर भी लेखनी उठाई है। महात्मा गाधी, लाला लाजनतराय, भगतसिह, डा० राजेन्द्रप्रसाद, जवाहरलाल नेहरू एव राजा राममोहनराय की जीवनियाँ इस बात की प्रतीक हैं कि हिन्दी मे जीवनी-साहित्य मे अनेक उत्कृष्ट श्रेणी के राष्ट्रीय जीवन चरित्र भी लिखे गए हैं। इनके अतिरिक्त गगाप्रसाद मेहता कृत 'चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य', राहुल साकृत्यायन कृत 'अकबर' एव लाला लाजपतराय द्वारा लिखी गई 'छत्रपति शिवाजी' आदि जीवनियाँ इस बात की प्रतीक हैं कि हिन्दी जीवनीपरक साहित्य मे ऐतिहासिक वीर पुरुषो के जीवन चरित्र भी प्राप्त होते हैं। इनके अतिरिक्त महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द आदि जैसे समाज सुधारको के जीवन-चरित्रो की भी कमी नहीं है। धार्मिक व्यक्तियो के जीवन-चरित्र तो कई मिलते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि जीवनीपरक साहित्य मे जहाँ शिवनन्दन सहाय द्वारा लिखी हुई 'गोस्वामी तुलसीदास', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र'; श्यामसुन्दरदास एव ब्रजरत्नदास द्वारा लिखी हुई 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' की जीवनियाँ एव अमृतराय की 'प्रेमचन्द : कलम का सिपाही' जैसी साहित्यिक जीवनियाँ प्राप्त होती है, वहाँ साहित्यिक व्यक्तियो के जीवन-चरित्र भी प्राप्त होते हैं। यही बात आत्मकथा-साहित्य एवं जीवनीपरक साहित्य की अन्य विधाओ मे भी पाई जाती है।

अन्य महत्वपूर्ण बात इस साहित्य मे यह भी देखने को मिलती है कि इसमें कुछ ऐसे व्यक्तियों को लेखको ने अपना नायक चुना है जो उक्त सभी महान् व्यक्तियो से भिन्न हैं। लेखक को उन व्यक्तियो के व्यक्तित्व ने पूर्णतया प्रभावित किया है। वे व्यक्ति साधारण होते हुए भी अपने मानवीय गुणो के कारण असाधारण से दिखाई पड़ रहे है। ऐसे लेखकों मे महादेवो वर्मा, राजा राधिकारमणप्रसाद सिह, रामवृक्ष बेनीपुरी एव प्रेमनारायण टडन हैं जिन्होंने लोकजनो को भी चुना है। ऐसे साधारण जन न तो समाज में प्रसिद्ध होते हैं और न जनता में, लेकिन लेखक के सम्पर्क में आने पर उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं का जब लेखक को अनुभव हो जाता है

तब वह उन्हे अपना नायक बना लेता है। महादेवी ने लछमा, रधिया आदि का जो चित्रण किया है वह इसी बात का द्योतक है। राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह ने भी 'सावनीसमा' 'टूटा तारा' एव 'सूरदास' शीर्षक पुस्तको मे ऐसे ही व्यक्तियों को नायक चुना है। इस प्रकार हम देखते है कि हिन्दी मे जीवनीपरक साहित्य के लेखकों ने जहाँ राजनैनिक, सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक एव साहित्यक व्यक्तियो को नायक चुना वहाँ इन्होने एक विलक्षण प्रकार के लोकजनो को भी अपना नायक चुना है जिनके व्यक्तित्व इन सभी प्रकार के व्यक्तियो से भिन्न हैं।

जीवनीपरक साहित्य पाठक और लेखक के बीच एक स्वाभाविक सम्बन्ध स्थापित करता है। पाठक अपने साहित्यकार के प्रति प्रेम और सहृदयता की भावना रखने लगते हैं। दोनो का पारस्परिक दुराव हट जाता है जिसके बजाय एक नितान्त वैयक्तिक स्वाभाविक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। पाठक पढते-पढते यह भूल जाता है कि यह किसी अन्य व्यक्ति की जीवनी है क्योंकि उसकी भावनाओ का साक्षात्कार लेखक से हो जाता है, उसके कष्टो को वह अपने कष्ट समझने लगता है और उसके सुखो को वह अपना सुख समझता है, अर्थात वह उसके सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझने लगता है। वह 'जीवन-रस' मे इतना तल्लीन हो जाता है कि अपने आपको भूल जाता है कि मैं पाठक हूँ। यही इस साहित्य की विशेषता है। इस प्रकार जीवनीपरक साहित्य मे लेखक और पाठक का एक स्वाभाविक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

इस जीवनीपरक साहित्य का सबसे बडा लाभ यह होता है कि हमे किसी भी साहित्यकार की कृतियो को सहजतः समझने मे सुविधा हो जाती है। जब तक हम उसके जीवन का अनुशीलन न करे तब तक उसकी साहित्यिक रचनाओ को समझना हमारे लिए कठिन हो जाता है। साहित्यकार की प्रत्येक कृति उसके जीवन के उन क्षणो मे लिखी हुई होती है। इसलिये जब तक हम उसके जीवन के उन क्षणो का अध्ययन नही कर लेते तब तक उसको पूर्ण रूप से समझ नही सकेगे। इस प्रकार जीवनीपरक साहित्य के अध्ययन से हम साहित्यकार की सृजनात्मक साहित्यिक कृतियो को भी समझ सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि प्रेमचन्द : कलम का सिपाही शीर्षक जीवन चरित्र पढ लिया जाय, तो हम उनकी समस्त कृतियो को बडी आसानी से समझ सकते है। उन्होने किस उपन्यास को कब लिखा, कैसे वातावरण मे लिखा, उनके लिखने का क्या उद्देश्य था और उसका उसके जीवन से क्या सम्बन्ध है इन सभी बातो का ज्ञान हमे उनके जीवन-चरित्र के अध्ययन से हो जाता है। यही बात सभी लेखको के विषय मे कही जा सकती है इसके अतिरिक्त और सबसे महत्वपूर्ण बात यह देखी जाती है कि पाठको को यह अनुभव हो जाता है कि उसकी रुचियाँ साहित्यकार के साथ कहाँ तक मिलती हैं। यदि पाठक की रुचियाँ लेखक के साथ प्रचुर मात्रा मे मिल जाती हैं तो उसको अध्ययन का और भी आनन्द आने लगता है। उससे पाठक और लेखक मे एक रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

विशेष रूप से पत्र, डायरियाँ और आत्मकथाएँ पाठक को साहित्यकार के जीवन के सभी पक्षो का, उसके प्रेरणा स्रोतो का ज्ञान करा देती हैं। पाठक को यह पता चल जाता है कि लेखक के जीवन के प्रेरणा स्रोत कौन-कौन से हैं और इसके साथ ही वह उसके मानसिक विकास से भली प्रकार परिचित हो जाता है। इसके व्यक्तित्व की सभी विशेषताएँ उसे दृष्टिगोचर होने लगती हैं। वह लेखक के व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण दोषो को भली प्रकार जानने लगता है। उसे यह पता चल जाता है कि लेखक का जीवन किन-किन व्यक्तियो आन्दोलनो, परिस्थितियो आदि से प्रभावित हुआ है। इस प्रकार पाठक लेखक के मानसिक एव भावात्मक जीवन से भली भाँति परिचित हो जाता है।

जीवनीपरक साहित्य द्वारा हिन्दी साहित्य मे—इतिहास लेखन शास्त्र (Historography) के क्षेत्र मे एक नया परिवर्तन आ सकता है। जिन साहित्य की विशेषताओं को हम साहित्यकारो की कृतियो के अध्ययन से जान सकते हैं अर्थात् जिनका अनुमान हम उनकी कृतियो से करते हैं, उन सभी का वर्णन हमें उनके हाथो से लिखा हुआ प्राप्त होता है, जो कि तत्कालीन विशेषताओ को प्रामाणिक सत्य के रूप में घोषित करेगा। इससे स्पष्ट है कि हम कृतियो की अपेक्षा कृतिकारो के माध्यम से साहित्यिक और सास्कृतिक इतिहास को समझने का एक नया दृष्टिकोण पा सकते हैं। इस दृष्टि से जो भी इतिहास लिखा जाएगा वह बिल्कुल ठीक होगा।

इस प्रकार के साहित्य के द्वारा हम विशेष व्यक्ति द्वारा वर्णित इतिहास को समझ सकते हैं। इसके साथ ही हमें यह पता चल सकता है कि अमुक व्यक्ति का तत्कालीन परिस्थितियों मे क्या स्थान है, वह कहाँ तक उससे प्रभावित है और कहाँ तक उसका व्यक्तित्व उन परिस्थितियों से पृथक् है। इसके दो लाभ होते हैं: एक तो व्यक्ति के जीवन-चरित्र का अनुमान हो सकता है; और दूसरे पाठक को तत्कालीन इतिहास-विषयक जानकारी होने की अधिकाधिक सम्भावनाएँ प्राप्त होती है।

इस प्रकार के साहित्य द्वारा लेखक साहित्य और समाज का सम्बन्ध, एव साहित्य और इतिहास का सम्बन्ध भी प्रकट कर सकता है। इससे पाठक को यह पता चल सकता है कि साहित्य और समाज का कहाँ तक सम्बन्ध तत्कालीन लेखकों ने निभाया है तथा किन-किन लेखको ने समाज के प्रतिकूल होकर अपने जीवन को अपनाया है। इसके अतिरिक्त यह भी अनुभव हो सकता है कि साहित्य से समाज प्रभावित हुआ है अथवा समाज से साहित्य। विज्ञान एव इतिहास का साहित्य मे क्या स्थान रहा है? क्या साहित्यकार वैज्ञानिक दृष्टि से भी प्रभावित हुआ है? यदि हुआ है तो कहाँ तक हुआ है? इन सभी बातो की सम्भावना हमे इस प्रकार के साहित्य से प्राप्त हो सकती है।

इसके अतिरिक्त इस जीवनीपरक साहित्य को प्रकाश में लाने से साहित्यिक आलोचना में अधिकाधिक मनोवैज्ञानिक गहराई, सामाजिक गहनता, कृतियों की प्रामाणिकता तथा यथार्थता का स्वस्थ विकास हो सकता है। अस्तु।

पुस्तकालयों की सूची

१ काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
२. मारवाडी पुस्तकालय, दिल्ली
३ दिल्ली विश्वविद्यालय पुस्तकालय
४ पजाब विश्वविद्यालय पुस्तकालय
५. सेंट्रल पब्लिक लाइब्रेरी, पटियाला
६ पजाबी विश्वविद्यालय पुस्तकालय
७ दिल्ली पब्लिक पुस्तकालय
८ ब्रिटिश कौंसिल लाइब्रेरी, दिल्ली

चुनी हुई पत्र-पत्रिकाओं की सूची

१ अजन्ता	१९४९ ई० से १९५५ ई० तक
२. अग्रवाल सन्देश	१९४४ ई० से १९५१ ई० तक
३. अग्रदूत	१९५० ई० से १९५२ ई० तक
४. अखड ज्योति	१९४० ई०
५. अग्रवाल	१९२२ वि० से १९३६ ई० तक
६ अवन्तिका	१९५२ ई० से १९६३ ई० तक
७. आजकल	१९४७ ई० से १९६४ ई० तक
८. आकाशवाणी प्रसारिका	१९५४ ई० से १९५६ ई० तक
९. आलोचना	
१०. कल्पना	१९५० सन् से १९६४ सन् तक
११. कादम्बिनी	१९६१ सन् से १९६४ सन् तक
१२. चाँद	१९२३ सन् से १९४५ सन् तक
१३. निकष	१९५५ सन् से १९५७ सन् तक
१४. नया समाज	१९४८ सन् से १९५८ सन् तक
१५. नागरी प्रचारिणी पत्रिका	
१६. प्रतिमा	स० १९७४ से १९७७ सं० तक
१७. प्रभा	१९९० से १९२४ई ० तक
१८. प्रतीक	१९४९ सन् से १९५१ सन् तक
१९. प्रसारिका	१९५४ सन् से १९५६ सन् तक
२०. भारतीय साहित्य	१९५६ सन् से १९५७ सन् तक
२१. माधुरी	१९२३ सन् से १९४८ सन् तक
२२. माया	१९४० सन् से १९६३ सन् तक

२३. युग चेतना •	१९५६ सन् से १९५८ सन् तक
२४ राष्ट्र भारती	१९५६ सन् से १९६२ सन् तक
२५. विश्वमित्र	१९३२ सन् से १९४६ सन् तक
२६: वीणा	१९५७ सन् से १९६१ सन् तक
२७. विशाल भारत	१९२८ सन् से १९६४ सन् तक
२८. विद्या विनोद	१९०१ सन् से १९०२ सन् तक
२९. सरस्वती	१९०० सन् से १९६४ सन् तक
३० साहित्य	२००७ स० से १९५० सन् तक
३१. सम्मेलन पत्रिका	
३२. साहित्य सन्देश	१९४९ सन् से १९६२ सन् तक
३३. सुधा	१९२६ सन् से १९३४ सन् तक
३४. हंस	१९३२ सन् से १९५० सन् तक
३५. हिन्दुस्तानी	१९३१ सन् से १९६० सन् तक
३६. ज्ञानोदय	१९५२ सन् से १९६४ सन् तक

चुनी हुई पुस्तकों की सूची

१. आत्मकथा — महात्मा गांधी
२. आत्मकथा — डॉ० राजेन्द्रप्रसाद
३. अमिट रेखाएँ — सत्यवती मल्लिक
४. अरे यायावर रहेगा याद — सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन
५. अर्थपिशाच — शील
६. अकबर — रागेयराघव
७. अपनी खबर — पाडेय बेचन शर्मा 'उग्र'
८. अश्क एक रंगीन व्यक्तित्व — कौशल्या अश्क
९. आचार्य द्विवेदी — सम्पादिका निर्मल तलवार
१०. आत्मचरित चम्पू — अक्षयवट मिश्र
११. आलोचना उसके सिद्धान्त — डॉ० सोमनाथ गुप्त
१२. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास — डॉ० कृष्णलाल
१३. वही — डॉ० भोलानाथ तिवारी
१४. वही — डॉ० लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय
१५. वही — पं० कृष्णशंकर शुक्ल
१६. आधे रास्ते — कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी

१७.	अतीत के चलचित्र	महादेवी
१८.	एक आत्मकथा	देवीदत्त शुक्ल
१९.	एक पत्रकार की आत्मकथा	मूलचन्द अग्रवाल
२०.	एक युग एक प्रतीक	देवेन्द्र सत्यार्थी
२१	एक क्रान्तिकारी के सस्मरण	मनमोहन गुप्त
२२	एक साहित्यिक की डायरी	गजाननमाधव मुक्तिबोध
२३	काव्य के रूप	गुलाबराय
२४	कुछ देखा कुछ सुना	घनश्यामदास बिड़ला
२५.	गहरे पानी पैठ	अयोध्याप्रसाद गोयलीय
२६.	गाधीजी की छत्रछाया मे	घनश्यामदास बिड़ला
२७.	गुप्त निबन्धावली	बालमुकुन्द
२८.	गोस्वामी तुलसीदास	शिवनन्दन सहाय
२९	गेहूँ और गुलाब	रामवृक्ष बेनीपुरी
३०	घुमक्कड़ स्वामी	राहुल सांकृत्यायन
३१.	चरितावली	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
३२	चरित चर्चा	महावीरप्रसाद द्विवेदी
३३.	चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य	गगाप्रसाद मेहता
३४.	जीवन स्मृतियाँ	सं० क्षेमेन्द्र सुमन
३५	जैसा हमने देखा	स० क्षेमेन्द्र सुमन
३६.	जिन्दगी मुस्कराई	कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर
३७.	टूटा तारा	राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह
३८.	ठेले पर हिमालय	धर्मवीर भारती
३९.	दीप जले शंख बजे	कन्हैयालाल मिश्र
४०.	दैनन्दिनी	सुन्दरलाल त्रिपाठी
४१.	द्विवेदी युग के साहित्यकारों के कुछ पत्र	स० बैजनाथसिंह विनोद
४२.	दिवेदी पत्रावली	स०बैजनाथसिंह विनोद
४३.	दो धारा	उपेन्द्रनाथ अश्क
४४.	नक्षत्रो की छाया मे	कृष्णदत्त भट्ट
४५	नये पुराने झरोखे	बच्चन
४६	नेपोलियन बोनापार्ट का जीवन-चरित्र	रमाशंकर व्यास
४७	पद्मपराग	पद्मसिंह शर्मा
४८.	पुरानी स्मृतियाँ	प्रकाशचन्द्र गुप्त

४९.	प्रेमचन्द : क़लम का सिपाही	अमृतराय
५०.	पद्मसिंह शर्मा के पत्र	स० बनारसीदास चतुर्वेदी
५१.	प्रेमचन्द चिट्ठी-पत्री भाग-१	
५२.	प्रेमचन्द चिट्ठी-पत्री भाग-२	
५३.	पुरातत्त्व निबन्धावली	राहुल साकृत्यायन
५४.	परिव्राजक की प्रजा	शान्तिप्रिय द्विवेदी
५५.	पथचिह्न	शान्तिप्रिय द्विवेदी
५६.	पाडेय स्मृति-ग्रन्थ	स० प्रेमनारायण टडन
५७.	प्रेमचन्द स्मृति-ग्रन्थ	
५८.	प्रेमचन्द घर मे	शिवरानी देवी
५९.	प्रवासी की आत्मकथा	भवानीदयाल सन्यासी
६०.	बालमुकुन्द गुप्त . जीवन और साहित्य	डॉ० नत्थनसिंह
६१.	बादशाह दर्पण	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
६२.	बन्दी की चेतना	कमलापति त्रिपाठी
६३.	बालकृष्ण भट्ट (सस्मरणो मे जीवन)	ब्रजमोहन व्यास
६४.	भारतेन्दु ग्रन्थावली, तीसरा भाग	ब्रजरत्नदास
६५	भारतेन्दु युग	डॉ० रामविलास शर्मा
६६	भारतेन्दु साहित्य	रामगोपालसिंह चौहान
६७.	भारतेन्दु की विचारधारा	लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय
६८.	भारतेन्दु के निबन्ध	सग्रहकर्त्ता और सम्पादक केसरीनारायण शुक्ल
६९.	भूले हुए चेहरे	कन्हैयालाल मिश्र
७०.	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	शिवनन्दन सहाय
७१.	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	डॉ० श्याम सुन्दरदास
७२.	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	ब्रजरत्नदास
७३.	मेरी असफलताएँ	गुलाबराय
७४.	मिश्रबन्धु विनोद	मिश्र बन्धु
७५	मेरे निबन्ध (जीवन और जगत)	गुलाबराय
७६.	मेरी कहानी	नेहरू
७७.	मेरा जीवन-प्रवाह	वियोगी हरि
७८.	मेरी जीवन यात्रा	राहुल साकृत्यायन
७९.	मुर्दरिस की रामकहानी	कालिदास कपूर
८०.	मेरे जीवन के अनुभव	संतराम बी० ए०

८१ मीराबाई	कार्त्तिकप्रसाद खत्री
८२. माखनलाल चतुर्वेदी	ऋषि जैमिनी बरुआ
८३ मेरी कालिज डायरी	धीरेन्द्र वर्मा
८४. माडर्न हिन्दी लिटरेचर	डॉ० मदान
८५ मटो मेरा दुश्मन	अश्क
८६. मैं इनका ऋणी हूँ	इन्द्रविद्यावाचस्पति
८७. मील के पत्थर	रामवृक्ष बेनीपुरी
८८. मेरी आत्मकहानी	डॉ० श्यामसुन्दरदास
८९. मेरी आत्मकहानी	चतुरसेन शास्त्री
९०. यात्रा के पन्ने	राहुल साकृत्यायन
९१. ये और वे	जैनेन्द्र
९२. राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ	सं० ऋषि जैमिनी कौशिक
९३. रेखाचित्र	प्रकाशचन्द्र गुप्त
९४. रेखाचित्र	बनारसीदास चतुर्वेदी
९५. रेखाएँ बोल उठी	देवेन्द्र सत्यार्थी
९६. रेखाचित्र	प्रेमनारायण टडन
९७ रेखाएँ और चित्र	उपेन्द्रनाथ अश्क
९८ राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह व्यक्तित्व और कृतित्व	डॉ० कमलेश
९९ लाल तारा	रामवृक्ष बेनीपुरी
१००. वे जीते कैसे है	श्रीराम शर्मा 'राम'
१०१ शिवसिंह सुरोज	शिवसिंह सेंगर
१०२. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त	गोविन्द त्रिगुणायत
१०३ शिवपूजन रचनावली चौथा खण्ड	
१०४ शैली और कौशल	मीताराम चतुर्वेदी
१०५. सिद्धातालोचन	धर्मचन्द सत बलदेव कृष्ण
१०६. साहित्य की झाँकी	गौरीशकर सत्येन्द्र
१०७ सुमित्रानन्दन पत स्मृति चित्र	
१०८. सत्यनारायण कविरत्न की जीवनी	बनारसीदास चतुर्वेदी
१०९ सामनीसमा	राजा राधिकारमणप्रसादसिंह
११० सूरदास	वही
१११ सिंहावलोकन भाग १ से ३ तक	यशपाल
११२. साहित्यिक जीवन के अनुभव और संस्मरण	किशोरीदास वाजपेयी

११३. साहित्यिकों के संस्मरण	म० ज्योतिलाल भार्गव
११४. सस्मरण	बनारसीदास चतुर्वेदी
११५ साधना के पथ पर	हरिभाऊ उपाध्याय
११६. समीक्षा शास्त्र	डॉ० दशरथ ओझा
११७ सीधी चढान	कन्हैयालाल माणिकलाल मुशी
११८ स्मृति की रेखाएँ	महादेवी
११९ सुकवि सकीर्तन	महावीरप्रसाद द्विवेदी
१२०. स्तालिन	राहुल साकृत्यायन
१२१. साहित्य की मान्यताएँ	भगवतीचरण वर्मा
१२२. साहित्य विवेचन	क्षेमेन्द्र सुमन
१२३ साहित्य चिन्तन	इलाचन्द्र जोशी
१२४. सिद्धान्त और अध्ययन	गुलाबराय
१२५. हिन्दी साहित्य मे जीवन चरित का विकास	चन्द्रावती सिंह
१२६. हरी घाटी	रघुवश
१२७. हिन्दी साहित्य के विकास की रूपरेखा	डॉ० रामअवध द्विवेदी
१२८ हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
१२९. हिन्दी साहित्य की परम्परा	हसराज अग्रवाल
१३० हिन्दी साहित्य का इतिहास	ग्रियर्सन
१३१. हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्यामसुन्दरदास
१३२. हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास	अयोध्यासिंह उपाध्याय
१३३. हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास	सूर्यकान्त शास्त्री
१३४. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डॉ० रामकुमार वर्मा
१३५. हिन्दी पुस्तक साहित्य	माताप्रसाद गुप्त
१३६. हिन्दी साहित्य का इतिहास	हजारीप्रसाद द्विवेदी
१३७ हमारे नेता	रामनाथ सुमन
१३८. हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास	रामबहोरी शुक्ल

ENGLISH

1. Dictionary of World Literature by Shiply.
2. Design and Truth in Autobiography by Ray Pascal.
3. Encyclopaedia Britannica.
4 History of World Literature by Hudson.
5. Literary Biography by Leou Edol.
6 One Mighty Torrent by Edgar Johnson.
7. Personality by Gardener Murphy.
8. The Making of a Healthy Personality by Helen Leland Witmer Ruth Kotinsty.
9. Theory of Criticism by Wallock.
10. The Art of Writing by Andre Maurais.
11. Development of English Biography by Harold Nicolson.
12. Experiment in Autobiography by H.G. Wells.
13 Samuel Pepys in the Diary by Percival Hunt.